मार्क्स
एंगेल्स
लेनिन

लेनिन

क्या करें?

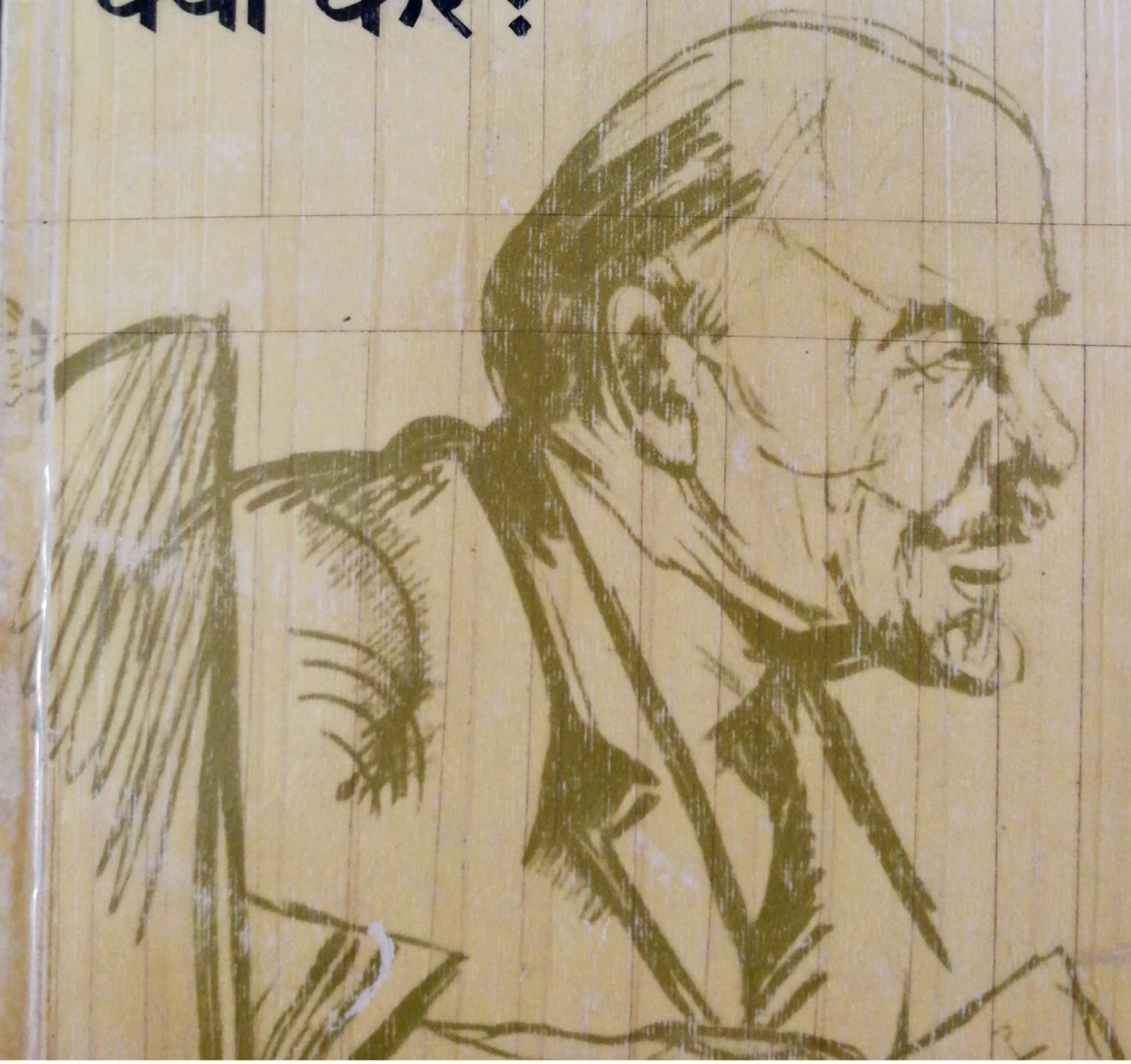

Scanned by CamScanner

दुनिया के मज़दूरो, एक हो!

लेनिन

क्या करें?

E.U. BOOK CENTRE
29, Rajpur Road,
DEHRADUN - 248 001.

प्रगति प्रकाशन · मास्को

पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड
५ ई, रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-११००५५

राजस्थान पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि.
चमेलीवाला मार्केट, एम. आई. रोड, जयपुर-302001

Scanned by CamScanner

В. И. Ленин

ЧТО ДЕЛАТЬ?

На языке хинди

V. I. Lenin

WHAT IS TO BE DONE?

in Hindi

© हिन्दी अनुवाद ● प्रगति प्रकाशन ● १९७३

पहला संस्करण: १९७३

दूसरा संस्करण: १९९०

सोवियत संघ में मुद्रित

Л $\frac{0101020000\text{-}069}{014(01)\text{-}90}$ 304-90

ISBN 5-01-002370-9

Scanned by CamScanner

विषय-सूची

प्रकाशक की ओर से ५

क्या करें? हमारे आंदोलन के तात्कालिक प्रश्न ११

भूमिका १३

१. जड़सूत्रवाद और "आलोचना की स्वतंत्रता" १७

(क) "आलोचना की स्वतंत्रता" क्या है? १७

(ख) "आलोचना की स्वतंत्रता" के नये समर्थक . . २१

(ग) रूस में आलोचना २८

(घ) सैद्धांतिक संघर्ष के महत्व पर एंगेल्स के विचार ३७

२. जनता की स्वयंस्फूर्ति और सामाजिक-जनवादियों की चेतना ४४

(क) स्वयंस्फूर्त उभार की शुरूआत ४५

(ख) स्वयंस्फूर्ति की पूजा। *राबोचाया मीस्ल* ५०

(ग) 'आत्म-मुक्ति दल' और *राबोचेये देलो* ६२

३. ट्रेड-यूनियनवादी और सामाजिक-जनवादी राजनीति ७५

(क) राजनीतिक आंदोलन और अर्थवादियों द्वारा उसे संकुचित किया जाना ७६

(ख) एक कहानी—मार्तीनोव ने प्लेख़ानोव को और गूढ़ कैसे बनाया ८६

(ग) राजनीतिक भंडाफोड़ और "क्रांतिकारी क्रियाशीलता का प्रशिक्षण" ९४

(घ) अर्थवाद और आतंकवाद में क्या समानता है? १०१

Scanned by CamScanner

(ङ) जनवाद के लिए सबसे आगे बढ़कर लड़नेवाले के रूप में मज़दूर वर्ग १०६
(च) एक बार फिर "मिथ्या प्रचारक", एक बार फिर "ढकोसलेबाज़" १२६
४. अर्थवादियों का नौसिखुआपन और क्रांतिकारियों का संगठन १३१
(क) नौसिखुआपन किसे कहते हैं? १३२
(ख) नौसिखुआपन और अर्थवाद १३६
(ग) मज़दूरों का संगठन और क्रांतिकारियों का संगठन १४५
(घ) संगठनात्मक कार्य का विस्तार १६५
(ङ) "षड्यंत्रकारी" संगठन और "जनवाद" . . . १७३
(च) स्थानीय तथा अखिल रूसी कार्य १८५
५. एक अखिल रूसी राजनीतिक अख़बार की "योजना" १९८
(क) *कहां से शुरू करें?* शीर्षक लेख किसको बुरा लगा? १९९
(ख) क्या अख़बार सामूहिक संगठनकर्त्ता हो सकता है? २०७
(ग) हमें किस प्रकार के संगठन की आवश्यकता है? २२३
निष्कर्ष २३२
परिशिष्ट। *ईस्क्रा* और *राबोचेये देलो* को एक करने का प्रयत्न २३७
क्या करें? में संशोधन २४६
टिप्पणियां २४८
नाम-निर्देशिका २८६

Scanned by CamScanner

प्रकाशक की ओर से

व्ला० इ० लेनिन की रचना *क्या करें? हमारे आंदोलन के तात्कालिक प्रश्न* १९०१ की शरद ऋतु—१९०२ की फ़रवरी के बीच लिखी गयी थी।

उस समय रूस में क्रांतिकारी संकट और गहन तथा तीव्र होता जा रहा था; राजतंत्र एवं ज़मींदारी-प्रथा के विरुद्ध क्रांतिकारी आंदोलन अधिक से अधिक सर्वव्यापी बनता जा रहा था। फ़रवरी-मार्च, १९०२ में पीटर्सबर्ग, येकातेरिनोस्लाव, दोन तटीय रोस्तोव, बातूम के मज़दूरों के प्रदर्शन और हड़तालें, सरातोव, वील्नो, बाकू, निज्नी नोव्गोरोद तथा अन्य नगरों में पहली मई के प्रदर्शन मज़दूर वर्ग की बढ़ती सक्रियता और राजनीतिक परिपक्वता का ज्वलंत प्रमाण थे। किसान भी ज़मींदारों के विरुद्ध उठ खड़े हो गये। रूस की बहुत सी गुबेर्नियाओं (प्रांतों) में "किसान दंगे" हुए। "किसानों ने निश्चय किया—और ठीक ही निश्चय किया—कि उत्पीड़कों से लड़कर मरना बिना लड़े ही भूखों मरने से कहीं अच्छा है" (व्ला० इ० लेनिन, *गांव के ग़रीबों से*, संकलित रचनाएं, खंड २, मास्को: प्रगति प्रकाशन, १९८१, पृ० ३७१)।

इस परिस्थिति में रूस के सामाजिक-जनवादियों के क्रांतिकारी मार्क्सवादी तत्वों की वैचारिक तथा संगठनात्मक एकजुटता के लिए, अवसरवाद के प्रति अडिग, गुट्टबाज़ी और दलबंदी से मुक्त एक नये प्रकार की पार्टी—एक ऐसी पार्टी, जो मज़दूर वर्ग का राजनीतिक नेतृत्व, राजतंत्र और पूंजीवाद के विरुद्ध क्रांतिकारी संघर्ष का संगठन और संचालन करे—के निर्माण के लिए लेनिनीय समाचारपत्र *ईस्क्रा* का संघर्ष बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ।

Scanned by CamScanner

मार्च, १९०२ में प्रकाशित व्ला० इ० लेनिन की पुस्तक *क्या करें?* ने मार्क्सवादी मज़दूर पार्टी के लिए संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। रूसी सामाजिक-जनवादियों ने क्रांतिकारी मार्क्सवाद की इस उत्कृष्ट कृति में अपने लिए महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर पाये। ये प्रश्न मज़दूर आंदोलन के सचेत एवं स्वयंस्फूर्त तत्वों के सहसंबंध, सर्वहारा वर्ग के राजनीतिक नेता के रूप में पार्टी, आनेवाली बुर्जुआ-जनवादी क्रांति में रूसी सामाजिक-जनवादी पार्टी की भूमिका, एक जुझारू क्रांतिकारी सर्वहारा पार्टी के निर्माण के तौर-तरीक़ों तथा संगठनात्मक रूपों के बारे में थे।

क्या करें? पुस्तक ने "अर्थवाद" को वैचारिक रूप से पराजित किया, जिसे लेनिन रूसी परिस्थितियों में अंतर्राष्ट्रीय अवसरवाद (बर्नस्टीनवाद) का एक रूप मानते थे। लेनिन ने सामाजिक-जनवाद में अवसरवाद के मूल प्रदर्शित किये। ये मूल थे—मज़दूर वर्ग पर बुर्जुआ वर्ग तथा बुर्जुआ विचारधारा का प्रभाव, मज़दूर आंदोलन की स्वयंस्फूर्ति की पूजा, उसमें समाजवादी चेतना की भूमिका को कम करके आंकना। उन्होंने लिखा कि १९वीं शताब्दी के अंत—२०वीं शताब्दी के आरंभ में अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक-जनवाद में गठित अवसरवादी प्रवृत्ति ने, जिसने "आलोचना की स्वतंत्रता" के झंडे तले मार्क्सवाद का संशोधन करने की कोशिश की, अपने "सिद्धांतों" को पूर्णतया बुर्जुआ साहित्य से ग्रहण किया था, कि कुख्यात "आलोचना की स्वतंत्रता" इसके अलावा और कुछ नहीं है कि "सामाजिक-जनवाद को सुधारों की जनवादी पार्टी में बदल डालने की स्वतंत्रता है और समाजवाद के अंदर बुर्जुआ विचार तथा बुर्जुआ तत्व डाल देने की स्वतंत्रता है" (प्रस्तुत पुस्तक, पृ० २०)।

लेनिन ने दिखाया कि सर्वहारा वर्ग की समाजवादी और बुर्जुआ विचारधारा के बीच निरंतर एवं अडिग संघर्ष चल रहा है।

अपनी कृति में लेनिन ने पूंजीवाद के ज़माने में मज़दूर वर्ग की विचारधारा के विकास की नियमसंगतता की समस्या का ठोस रूप से विवेचन किया और समाजवाद को मज़दूर वर्ग के स्वयंस्फूर्त आंदोलन के बाहर उत्पन्न विचारधारा माना। लेनिन ने "अर्थवादियों" की इस असत्य प्रस्थापना की आलोचना की कि समाजवादी चेतना स्वयं मज़दूर आंदोलन से ही स्वयंस्फूर्त रूप

Scanned by CamScanner

से पैदा होती है और स्वयंस्फूर्त रूप से ही मज़दूर वर्ग के बीच फैलती है। इस संबंध में लेनिन ने मज़दूर आंदोलन में स्वयंस्फूर्ति तथा चेतना के सह-संबंध, स्वयंस्फूर्त मज़दूर आंदोलन में समाजवादी विचारधारा के प्रवेश की समस्या पर प्रकाश डाला। उन्होंने यह सिद्ध किया कि मज़दूर आंदोलन में समाजवादी विचारधारा "बाहर से ही लायी जा सकती है, याने केवल आर्थिक संघर्ष के बाहर से" (पृ० १०७)। और "चूंकि स्वतंत्र, खुद आम मज़दूरों द्वारा अपने आंदोलन की प्रक्रिया के दौरान विकसित विचारधारा का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता, इसलिए **केवल** ये रास्ते ही रह जाते हैं: या तो बुर्जुआ विचारधारा को चुना जाये या समाजवादी विचारधारा को। बीच का कोई रास्ता नहीं है... अतएव समाजवादी विचारधारा के महत्व को **किसी भी तरह** कम करके आंकने, उससे **ज़रा भी मुंह मोड़ने** का मतलब बुर्जुआ विचारधारा को मज़बूत करना है" (पृ० ५७-५८)। उन्होंने स्पष्ट किया कि समाजवादी चेतना स्वयंस्फूर्त मज़दूर आंदोलन में से पैदा नहीं होती, वह क्रांतिकारी मार्क्सवादी पार्टी द्वारा मज़दूर आंदोलन में लायी जाती है। सर्वहारा वर्ग की पार्टी का एक सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य समाजवादी विचारधारा की शुद्धता के लिए, मज़दूर वर्ग पर बुर्जुआ प्रभाव के विरुद्ध, अवसरवादियों—मज़दूर आंदोलन में बुर्जुआ विचारधारा के वाहकों—के विरुद्ध संघर्ष है।

लेनिन ने मज़दूर आंदोलन, मज़दूर वर्ग की क्रांतिकारी मार्क्सवादी पार्टी के सारे क्रियाकलाप के लिए वैज्ञानिक समाजवाद के सिद्धांत का विशाल महत्व दिखाया: "**...हरावल दस्ते की भूमिका केवल वही पार्टी अदा कर सकती है, जो सबसे उन्नत सिद्धांत से निदेशित होती है**" (पृ० ४०)। लेनिन ने लिखा कि अपने विकास की ऐतिहासिक विशेषताओं तथा अपने क्रांतिकारी लक्ष्यों के कारण रूसी सामाजिक-जनवाद के लिए अग्रणी सिद्धांत की भूमिका विशेष रूप से बड़ी है।

क्या करें? पुस्तक में रूस के सर्वहारा और उसकी पार्टी की कार्यनीति पर बड़ा ध्यान दिया गया। लेनिन ने लिखा कि मज़दूर वर्ग को राजतंत्र एवं ज़मींदारों की व्यवस्था के विरुद्ध सर्वजनीन जनवादी आंदोलन का नेतृत्व करना चाहिए और वह यह कर सकता था, रूसी समाज की सब क्रांतिकारी और विपक्षीय

Scanned by CamScanner

शक्तियों का हरावल बन सकता था। इसलिए राजतंत्र के आम राजनीतिक दोषों के भंडाफोड़ का आयोजन रूस के सामाजिक-जनवाद का सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य, सर्वहारा वर्ग के राजनीतिक प्रशिक्षण की एक अनिवार्य शर्त था। यह रूस में सामाजिक-जनवादी आंदोलन के "तात्कालिक प्रश्नों" में से एक था।

पश्चिम में बर्नस्टीनवादी और रूस में "अर्थवादी" प्रक्रिया की "स्वयंस्फूर्ति" पर ज़ोर देते थे, मज़दूर वर्ग के राजनीतिक संघर्ष की क्रियाशीलता कम करके आंकते थे। वे इस संघर्ष को केवल आर्थिक मांगों तक, केवल आर्थिक, व्यावसायिक संघर्ष के क्षेत्र तक संकुचित करते थे। ऐसी ट्रेड-यूनियनवादी नीति का अवश्यंभावी परिणाम यह हुआ कि मज़दूर आंदोलन बुर्जुआ विचारधारा तथा नीति के अधीन हो गया। इस अवसरवादी नीति के विरोध में लेनिन ने समाज के विकास में, समाजवाद के लिए सर्वहारा वर्ग के संघर्ष में राजनीतिक संघर्ष के अत्यंत महत्व के संबंध में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की एक प्रमुख प्रस्थापना प्रस्तुत और प्रमाणित की: "...वर्गों के सबसे आवश्यक, 'निर्णायक' हित तो आम तौर पर **केवल** आमूल **राजनीतिक** परिवर्तनों से ही पूरे हो सकते हैं। सर्वहारा वर्ग का बुनियादी आर्थिक हित तो खास तौर पर केवल ऐसी राजनीतिक क्रांति से ही पूरा हो सकता है, जो बुर्जुआ वर्ग के अधिनायकत्व के स्थान पर सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व क़ायम करे" (पृ० ६६)।

सर्वहारा वर्ग के संगठनात्मक कार्य में स्वयंस्फूर्ति की "अर्थवादियों" की पूजा, पार्टी की स्थापना के कार्य में उनके "नौसिखुएपन" से रूस में सामाजिक-जनवादी आंदोलन को भारी हानि पहुंची। लेनिन ने सामाजिक जनवाद के कार्यों को ट्रेड-यूनियनवाद तक सीमित करना, मज़दूर वर्ग के संगठन के दो प्रकारों—मज़दूरों का आर्थिक संघर्ष संगठित करने के लिए ट्रेड-यूनियनें और मज़दूरों के वर्गीय संगठन के उच्चतम प्रकार के रूप में राजनीतिक पार्टी—में फ़र्क न करना "अर्थवादियों" के नौसिखुएपन का स्रोत माना। लेनिन यह मानते थे कि रूसी सामाजिक-जनवादियों का सर्वप्रथम और प्रमुख लक्ष्य क्रांतिकारियों का अखिल रूसी केंद्रीकृत संगठन स्थापित करना याने ऐसी राजनीतिक पार्टी स्थापित करना है, जो जन-साधारण से अटूट

Scanned by CamScanner

रूप से संबंधित हो और मज़दूर वर्ग के क्रांतिकारी संघर्ष का नेतृत्व करने में सक्षम हो। पार्टी को स्वयंस्फूर्त मज़दूर आंदोलन के आगे चलना चाहिए, उसका मार्ग-दर्शन करना चाहिए, उन सारे सैद्धांतिक, राजनीतिक और संगठनात्मक प्रश्नों का उत्तर देना चाहिए, जो सर्वहाराओं के सामने स्वयंस्फूर्त ढंग से उठ खड़े होते हैं। लेनिन ने स्पष्ट किया: "...जब तक सर्वहारा के इस स्वयंस्फूर्त संघर्ष का नेतृत्व क्रांतिकारियों का एक मज़बूत संगठन नहीं करेगा, यह संघर्ष सच्चा 'वर्ग संघर्ष' नहीं बन सकता" (पृ० १७५)। इस प्रकार के संगठन बनाना कैसे शुरू करना चाहिए, कौनसा रास्ता अपनाना चाहिए—इस के बारे में लेनिन अपनी पुस्तक *क्या करें?* में ब्योरेवार बताते हैं।

Scanned by CamScanner

क्या करें?
हमारे आंदोलन के तात्कालिक प्रश्न[1]

"...पार्टी संघर्षों से पार्टी में शक्ति और जीवन आता है; किसी पार्टी की कमज़ोरी का सबसे बड़ा सबूत उसका बिखराव और स्पष्टत: निर्धारित सीमा-रेखाओं का धुंधला पड़ना है; कोई भी पार्टी अपनी शुद्धि करके ही मज़बूत होती है..."

(मार्क्स के नाम लासाल के
पत्र से, २४ जून, १८५२)

१९०१ की पतझड़ और
फ़रवरी, १९०२ के बीच
लिखित।

खंड ६, पृ० १-१९२

Scanned by CamScanner

Scanned by CamScanner

भूमिका

लेखक की मूल योजना के अनुसार इस पुस्तिका में उन विचारों की विस्तार से विवेचना की जानेवाली थी, जो *कहां से शुरू करें?*[2] शीर्षक लेख में व्यक्त किये गये थे (*ईस्क्रा*[3], अंक ४, मई, १९०१)। और सबसे पहले हमें उस लेख में किये गये वादे को (और जो कई लोगों की निजी पूछताछ और पत्रों के जवाब में दोहराया गया था) पूरा करने में देरी के लिए पाठक से क्षमा मांगनी चाहिए। इस देरी की एक वजह गत जून, १९०१ में विदेशों में स्थित सभी सामाजिक-जनवादी संगठनों को ऐक्यबद्ध करने की कोशिश थी।[4] इसकी प्रतीक्षा करना स्वाभाविक था कि इस कोशिश के क्या नतीजे निकलेंगे, क्योंकि यदि वह सफल हो जाती, तो संगठन के प्रश्न पर *ईस्क्रा* के विचारों को शायद थोड़ा भिन्न दृष्टिकोण से पेश करना पड़ता; और हर हालत में ऐसी सफलता से रूस के सामाजिक-जनवादी आंदोलन में दो धाराओं का अस्तित्व शीघ्र ही मिट जाने की आशा पैदा हो जाती। पर जैसा कि पाठक जानते हैं, वह कोशिश नाकामयाब रही, और जैसा हम आगे सिद्ध करने का प्रयत्न करेंगे, *राबोचेये देलो*[5] के अंक १० में उसके "अर्थवाद"[6] की ओर नये मोड़ के बाद तो इस कोशिश का नाकामयाब होना अवश्यंभावी ही था। इस बिखरी हुई, अस्पष्ट, पर इसी कारण और भी स्थिर तथा नाना रूपों में बारंबार उभर पड़ने में सक्षम धारा के खिलाफ़ दृढ़तापूर्ण संघर्ष करना नितांत आवश्यक हो गया था। अतएव शुरू में इस पुस्तिका की जो रूपरेखा सोची गयी थी, उसे बदलना और उसके कलेवर को काफ़ी बढ़ाना पड़ा।

इस पुस्तिका का मुख्य विषय हम उन तीन प्रश्नों को बनाना चाहते थे, जो *कहां से शुरू करें?* शीर्षक लेख में उठाये गये थे, याने

Scanned by CamScanner

हमारे राजनीतिक प्रचार का स्वरूप और प्रधान तत्व, हमारे संगठनात्मक कार्य और एकसाथ अलग-अलग दिशाओं से शुरू करके एक जुझारू अखिल रूसी संगठन बनाने की योजना। इन प्रश्नों पर लेखक बहुत दिनों से सोच रहा है; जब *राबोचाया गाज़ेता*[7] को फिर से ज़िंदा करने की एक असफल कोशिश की गयी थी, तो लेखक ने इन सवालों को उठाने का प्रयत्न भी किया था (देखें अध्याय ५)। परंतु हमारी इस पुस्तिका को केवल इन तीन प्रश्नों के विश्लेषण तक ही सीमित रखने और वाद-विवाद में पड़े बिना, या कम से कम हद तक पड़कर, जहां तक संभव हो, अपने विचार सकारात्मक रूप में पेश करने की मूल योजना दो कारणों से बिलकुल अव्यवहार्य सिद्ध हुई। एक तो इसलिए कि जितना हम समझते थे, "अर्थवाद" उससे कहीं ज़्यादा तगड़ा निकला ("अर्थवाद" शब्द का प्रयोग हम व्यापक अर्थ में कर रहे हैं, जैसा कि *ईस्क्रा* के अंक १२, दिसंबर, १९०१ में *अर्थवाद के समर्थकों से एक वार्ता* शीर्षक लेख में, जो इस पुस्तिका का मानो सारांश था, स्पष्ट किया जा चुका है)। इस बात में ज़रा भी संदेह नहीं रह गया था कि इन तीन सवालों पर जो मतभेद हैं, वे तफ़सील की बातों को लेकर उतने नहीं हैं, जितने कि रूस के सामाजिक-जनवादी आंदोलन की दो धाराओं में बुनियादी विरोध के कारण। दूसरा कारण यह था कि *ईस्क्रा* में हमारे विचारों की व्यावहारिक क्रियान्विति के बारे में "अर्थवादियों" ने जो घबराहट ज़ाहिर की थी, उससे यह बिलकुल साफ़ हो गया था कि बहुधा हम लोग शब्दश: एकदम अलग-अलग ज़बानों में बोलते हैं, कि जब तक हम एकदम ab ovo* अपनी बात आरंभ नहीं करेंगे, तब तक हम एक-दूसरे को **नहीं समझ सकेंगे**, और यह कि **सभी** "अर्थवादियों" से हमारे मतभेद की **सभी** बुनियादी बातों पर यथासंभव सरलतम शैली में और अनेक ठोस उदाहरणों के साथ **सुव्यवस्थित ढंग से "प्रकाश" डालने** की कोशिश की जानी चाहिए। मैंने तमाम मतभेदों पर प्रकाश डालने का प्रयत्न करने का निश्चय किया, यह बात अच्छी तरह जानते हुए कि इससे पुस्तिका का आकार बहुत बढ़ जायेगा और उसके प्रकाशन में देरी हो जायेगी, पर साथ ही *कहां से शुरू करें?*

* शुरू से ही।—सं०

Scanned by CamScanner

शीर्षक लेख में मैंने जो वादा किया था, उसे पूरा करने का **कोई और तरीक़ा** मुझे नहीं दिखायी देता था। अतएव देरी के लिए क्षमा मांगने के अलावा मुझे पुस्तिका की अनेक साहित्यिक त्रुटियों के लिए भी क्षमा मांगनी चाहिए: मुझे **हद से ज़्यादा जल्दी में** यह काम करना पड़ा है और इसके अलावा अकसर दूसरे काम भी बीच में आ जाते थे।

इस पुस्तिका का मुख्य विषय अब भी उपरोक्त तीन प्रश्नों की विवेचना है, परंतु शुरू में मुझे ज़्यादा आम ढंग के दो सवालों पर भी विचार करने की ज़रूरत महसूस हुई: याने एक तो यह कि "आलोचना की स्वतंत्रता" जैसा "सरल" और "स्वाभाविक" नारा हमारे लिए इतनी ज़बरदस्त चुनौती क्यों बन गया है? और दूसरा यह कि स्वयंस्फूर्त जन-आंदोलन के संबंध में सामाजिक-जनवादियों की भूमिका के इतने बुनियादी सवाल पर भी हम लोगों के बीच मतैक्य क्यों नहीं हो पा रहा है? इसके अलावा राजनीतिक आंदोलन के स्वरूप तथा विषय-वस्तु के संबंध में विचारों की व्याख्या ट्रेड-यूनियनवादी नीति और सामाजिक-जनवादी नीति के बीच अंतर का स्पष्टीकरण बन गयी, जबकि संगठनात्मक कार्यों के संबंध में विचारों की व्याख्या "अर्थवादियों" को संतुष्ट करनेवाले नौसिखुए तरीक़ों और क्रांतिकारियों के संगठन के बीच, जो हमारी राय में अपरिहार्य है, अंतर का स्पष्टीकरण बन गयी। इसके अलावा मैं एक अखिल रूसी राजनीतिक अख़बार की "योजना" को और भी ज़ोरदार ढंग से यहां इसलिए पेश कर रहा हूं कि उसके ख़िलाफ़ जितने एतराज़ किये गये हैं, वे बहुत ही लचर हैं और *कहां से शुरू करें?* शीर्षक लेख में मैंने जो यह सवाल उठाया था कि हमें जिस प्रकार के संगठन की ज़रूरत है, उसे एकसाथ चारों तरफ़ से कैसे खड़ा किया जाये, उसका अभी तक कोई वास्तविक जवाब नहीं दिया गया है। आख़िरकार पुस्तिका के अंतिम भाग में मैंने यह दिखाने की कोशिश की है कि "अर्थवादियों" से निर्णायक संबंध-विच्छेद को रोकने के लिए हम जितनी कोशिशें कर सकते थे, हमने सब कीं, पर वह फिर भी अवश्यंभावी सिद्ध हुआ; और यह कि *राबोचेये देलो* ने एक विशेष महत्व—आप चाहें तो कह सकते हैं, "ऐतिहासिक" महत्व—प्राप्त कर लिया है, क्योंकि उसने सुसंगत "अर्थवाद" को तो नहीं, पर उस मतिभ्रम और ढुलमुलपन को ज़रूर पूर्णतम और ठोस रूप में व्यक्त किया है, जो रूसी

Scanned by CamScanner

सामाजिक-जनवादी आंदोलन के इतिहास में **एक पूरे काल** की लाक्षणिक विशेषता हैं; और यह कि इसलिए *राबोचेये देलो* के साथ हम लोगों की बहस भी, जिसके बारे में शायद पहली नज़र में यह लगे कि उसमें तफ़सीलें ही ज़्यादा हैं, महत्व प्राप्त कर लेती है, क्योंकि जब तक हम इस काल को अंतिम रूप से समाप्त नहीं कर देते, तब तक हम किसी प्रकार की प्रगति नहीं कर सकते।

न० लेनिन

फ़रवरी, १९०२

Scanned by CamScanner

१

जड़सूत्रवाद और "आलोचना की स्वतंत्रता"

(क) "आलोचना की स्वतंत्रता" क्या है?

"आलोचना की स्वतंत्रता" निस्संदेह आज का सबसे ज़्यादा फ़ैशनेबुल और सभी देशों के समाजवादियों और जनवादियों के बीच चलनेवाली बहसों में सबसे अधिक प्रयुक्त नारा है। पहली नज़र में इससे ज़्यादा अजीब बात कोई नहीं मालूम हो सकती कि बहस में भाग लेनेवाला कोई पक्ष बार-बार आलोचना की स्वतंत्रता की दुहाई दे। क्या अग्रणी पार्टियों में अधिकतर यूरोपीय देशों के उस संवैधानिक क़ानून के ख़िलाफ़ कोई आवाज़ उठी है, जो विज्ञान तथा वैज्ञानिक खोज की स्वतंत्रता की गारंटी देता है? जिस दर्शक ने अभी तक बहस करनेवालों के मतभेदों के सारतत्व को पूरी तरह नहीं समझा है, पर जिसने हर चौराहे पर इस फ़ैशनेबुल नारे को बार-बार सुना है, वह यही कहने पर मजबूर होगा कि "इसमें ज़रूर कुछ गड़बड़ है!" वह इसी नतीजे पर पहुंचेगा कि "यह नारा उन सांकेतिक शब्दों में से है, जो उपनामों की तरह चलन में आ जाने के कारण प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेते हैं और लगभग नाम का ही हिस्सा बन जाते हैं।"

वस्तुत: यह कोई छिपी बात नहीं है कि वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय*

---

* प्रसंगवश, आधुनिक समाजवाद के इतिहास में शायद यह एकमात्र अवसर है, जब समाजवादी आंदोलन में विभिन्न प्रवृत्तियों का विवाद पहली बार राष्ट्रीय से अंतर्राष्ट्रीय विवाद बन गया है, और यह बात अपने ढंग से बड़ी उत्साहवर्धक है। पहले लासालवादियों और आइज़ेनाख़वादियों[8], गेदवादियों और संभावनावादियों[9], फ़ेबियनों और सामाजिक-जनवादियों[10] तथा 'नरोदनाया वोल्या' के सदस्यों और सामाजिक-जनवादियों[11] के झगड़े शुद्धत: राष्ट्रीय झगड़े ही थे, उनमें केवल राष्ट्रीय विशेषताएं नज़र आती थीं और वे मानो अलग-अलग स्तर पर चलते थे। पर इस समय (और अब यह बात बिलकुल साफ़ हो गयी है) इंगलैंड के फ़ेबियन, फ़्रांस के मंत्रालयवादी[12], जर्मनी के बर्नस्टीनवादी[13] और रूसी आलोचक[14]—सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे

Scanned by CamScanner

सामाजिक-जनवादी आंदोलन में दो प्रवृत्तियों ने मूर्त रूप ग्रहण कर लिया है। इन प्रवृत्तियों का संघर्ष कभी चमकती लपट की तरह भड़क उठता है, तो कभी मंद पड़ जाता है और "सुलह के" लंबे-चौड़े "प्रस्तावों" की राख के नीचे सुलगता रहता है। यह "नयी" प्रवृत्ति क्या है, जो "पुराने, जड़सूत्रवादी" मार्क्सवाद के प्रति एक "आलोचनात्मक" रुख अपनाती है, इसे बर्नस्टीन ने बहुत साफ़-साफ़ **बता दिया है** और मिलेरां ने **दिखा दिया है।**

सामाजिक-जनवाद को सामाजिक क्रांति की पार्टी न रहकर सामाजिक सुधारों की जनवादी पार्टी बन जाना चाहिए। बर्नस्टीन ने इस राजनीतिक मांग के साथ बड़े क़ायदे से सजायी गयी "नयी" दलीलों और एक पूरी तर्क-शृंखला जोड़ दी है। समाजवाद को वैज्ञानिक आधार पर खड़ा करने और इतिहास की भौतिकवादी अवधारणा के दृष्टिकोण से यह साबित करने की संभावना से इनकार किया गया कि समाजवाद आवश्यक तथा अवश्यंभावी है; इस बात से इनकार किया गया कि दरिद्रीकरण, सर्वहाराकरण और पूंजीवाद के अंतर्विरोधों के तीव्रीकरण में वृद्धि हो रही है; **"अंतिम लक्ष्य"** के पूरे विचार को ग़लत ठहरा दिया गया और सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व के विचार को पूरी तरह से ठुकरा दिया गया; इससे इनकार किया गया कि उदारतावाद और समाजवाद में कोई सैद्धांतिक वैपरीत्य है; **वर्ग संघर्ष के सिद्धांत** को इस आधार पर त्याग दिया गया कि उसे एक ऐसे पूर्णतया जनवादी समाज पर, जो बहुसंख्या की इच्छा के अनुसार शासित है, लागू नहीं किया जा सकता, इत्यादि।

इस प्रकार क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद से बुर्जुआ सामाजिक-सुधारवाद की ओर दृढ़तापूर्वक मोड़ की मांग के साथ-साथ मार्क्सवाद के सभी बुनियादी विचारों की बुर्जुआ आलोचना को भी उतनी ही दृढ़ता के साथ अपना लिया गया। और मार्क्सवाद की यह आलोचना चूंकि राजनीतिक सभाओं में,

---

हैं, सब एक-दूसरे की प्रशंसा करते हैं, एक-दूसरे से सीखते हैं और सब मिलकर "जड़सूत्रवादी" मार्क्सवाद का विरोध करते हैं। समाजवादी अवसरवाद के विरुद्ध सही माने में इस पहले अंतर्राष्ट्रीय संघर्ष में शायद अंतर्राष्ट्रीय क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद इतना मज़बूत हो जाये कि वह उस राजनीतिक प्रतिक्रियावाद का अंत कर सके, जो लंबे काल से यूरोप पर हावी है?

Scanned by CamScanner

विश्वविद्यालयों में, अनगिनत पुस्तिकाओं में और अनेक विद्वत्तापूर्ण निबंधों में बहुत दिनों से चल रही है, और चूंकि पढ़े-लिखे वर्गों की पूरी नयी पीढ़ी दसियों बरस से इसी आलोचना द्वारा शिक्षित हो रही है, इसलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि सामाजिक-जनवादी आंदोलन के अंदर यह "नयी आलोचनात्मक" प्रवृत्ति बनी-बनायी और एकदम तैयार उसी प्रकार पैदा हो गयी, जैसे जुपिटर के शीश से मिनर्वा पैदा हो गयी थी[15]। इस नयी प्रवृत्ति के सारतत्व को बढ़ने और विकसित होने की आवश्यकता नहीं हुई: बुर्जुआ साहित्य से उसे सशरीर उठाकर समाजवादी साहित्य में डाल दिया गया।

और आगे चलिये। यदि बर्नस्टीन की सैद्धांतिक आलोचना और राजनीतिक आकांक्षाओं को किसी ने अभी तक साफ़-साफ़ नहीं समझा है, तो फ़्रांसीसियों ने "नयी प्रणाली" को बड़े सजीव ढंग से पेश कर दिया है। इस मामले में भी फ़्रांस ने एक ऐसा देश होने की अपनी पुरानी ख्याति का औचित्य साबित कर दिया है, "जिसके इतिहास में वर्ग संघर्षों को अन्य किसी भी जगह की अपेक्षा निर्णायक पराकाष्ठा तक लड़ा गया है" (मार्क्स की पुस्तक *Der 18 Brumaire* की एंगेल्स द्वारा लिखित भूमिका)। फ़्रांसीसी समाजवादियों ने सिद्धांत बघारना नहीं, अमल करना शुरू कर दिया है; फ़्रांस में जनवाद के दृष्टिकोण से राजनीतिक परिस्थिति चूंकि अधिक विकसित थी, इसलिए उन्हें तुरंत "व्यावहारिक बर्नस्टीनवाद" पर अमल करने का मौक़ा मिल गया है और उसके सारे नतीजे भी सामने आ गये हैं। मिलेरां ने व्यावहारिक बर्नस्टीनवाद की एक बहुत बढ़िया मिसाल पेश कर दी है। यह अकारण नहीं था कि बर्नस्टीन और फ़ोल्मार ने इतनी मुस्तैदी से मिलेरां का समर्थन और तारीफ़ें करना शुरू कर दिया! सचमुच यदि सामाजिक-जनवाद मूलत: केवल सुधार की ही पार्टी है और उसमें इसे खुलेआम स्वीकार करने का साहस होना चाहिए, तो हर समाजवादी को न सिर्फ़ बुर्जुआ मंत्रिमंडल में शामिल होने का अधिकार है, बल्कि उसे सदा इसकी कोशिश करनी चाहिए। यदि जनवाद का अर्थ सारत: वर्ग प्रभुत्व का ख़ात्मा है, तो फिर समाजवादी मंत्री को वर्ग सहयोग पर भाषणों की झड़ी लगाकर पूरे बुर्जुआ संसार का मन क्यों नहीं मोह लेना चाहिए? भले ही मज़दूरों पर राजनीतिक पुलिस द्वारा चलायी गयी गोलियों ने सौ

Scanned by CamScanner

बार और हज़ार बार वर्गों के जनवादी सहयोग के वास्तविक स्वरूप की क़लई क्यों न खोल दी हो, पर समाजवादी मंत्री को मंत्रिमंडल में ही क्यों नहीं बने रहना चाहिए? उसे ज़ार का, जिसके लिए फ़्रांसीसी समाजवादियों के पास अब फ़ांसी, कोड़े और जलावतनी (knouteur, pendeur et déportateur) के महारथी के सिवा और कोई नाम नहीं है, अभिनंदन करने में ख़ुद क्यों नहीं भाग लेना चाहिए? और सारी दुनिया की आंखों के सामने समाजवाद को इस तरह अपमानित और कलंकित करने का, उस मज़दूर जनता की समाजवादी चेतना को, जो हमारी विजय का एकमात्र निश्चित आधार है, भ्रष्ट करने का इनाम है छोटे-मोटे सुधारों की लंबी-चौड़ी **योजनाएं**, वास्तव में ऐसे टुच्चे सुधार कि उनसे कहीं ज़्यादा बुर्जुआ सरकारों से हासिल किया जा चुका है!

जो जान-बूझकर अपनी आंखें बंद नहीं कर लेता, वह यह देखे बिना नहीं रह सकता कि समाजवाद की यह नयी "आलोचनात्मक" प्रवृत्ति **अवसरवाद** की एक नयी क़िस्म के सिवाय और कुछ नहीं है। और यदि लोगों के बारे में हम उनके बढ़िया कपड़ों को देखकर, जिन्हें उन्होंने स्वयं पहन लिया है, या उनकी लंबी-चौड़ी उपाधियों को सुनकर, जिन्हें उन्होंने स्वयं अपने को दिया है, नहीं, बल्कि उनके कामों को और यह देखकर अपनी राय बनाते हैं कि सचमुच ये लोग किन बातों का प्रचार करते हैं, तो यह बात साफ़ हो जायेगी कि "आलोचना की स्वतंत्रता" का मतलब सामाजिक-जनवाद के अंदर अवसरवादी प्रवृत्ति की स्वतंत्रता है, सामाजिक-जनवाद को सुधारों की जनवादी पार्टी में बदल डालने की स्वतंत्रता है और समाजवाद के अंदर बुर्जुआ विचार तथा बुर्जुआ तत्व डाल देने की स्वतंत्रता है।

स्वतंत्रता एक बहुत शानदार शब्द है, लेकिन स्वतंत्र उद्योग के झंडे के नीचे अत्यंत लुटेरे युद्ध चलाये गये हैं, स्वतंत्र श्रम के झंडे की आड़ में मेहनतकशों को लूटा गया है। "आलोचना की स्वतंत्रता" शब्दावली के आधुनिक उपयोग में भी यही अंतर्निहित झूठ छिपा हुआ है। जिनको सही माने में यह विश्वास है कि उन्होंने विज्ञान का विकास किया है, वे नये विचारों के पुराने विचारों के साथ-साथ जीवित रहने की स्वतंत्रता की नहीं, बल्कि पुराने विचारों की नये विचारों द्वारा प्रतिस्थापना की मांग करेंगे। "आलोचना की स्वतंत्रता ज़िंदाबाद!" का जो नारा

Scanned by CamScanner

आज सुनायी देता है, वह "थोथा चना बाजे घना" की कहावत की बड़ी तीव्रता से याद दिलाता है।

हम एक सुसंहत टुकड़ी के रूप में एक बहुत कठिन चढ़ाई पर एक-दूसरे का हाथ पकड़े बढ़े जा रहे हैं। हम चारों ओर से दुश्मनों से घिरे हुए हैं और हमें लगातार उनकी गोलियों की बौछार के बीच से आगे बढ़ना पड़ रहा है। हम अपनी इच्छा से और ठीक यही उद्देश्य लेकर इस टुकड़ी में शामिल हुए हैं कि दुश्मन से लड़ें और पड़ोस की उस दलदल में न गिर पड़ें, जहां के रहनेवाले शुरू से ही हमारी इसलिए निंदा कर रहे हैं कि हमने अपना एक अलग अनन्य गुट बना लिया है और समझौते के रास्ते के बजाय संघर्ष का रास्ता चुना है। और अब हममें से ही कुछ लोग यह चिल्लाना शुरू कर देते हैं: चलो, उस दलदल में चलें! और जब हम उन्हें शरमिंदा करने लगते हैं, तो वे तड़ाक से जवाब देते हैं: आप भी कैसे रूढ़िवादी हैं! क्या आप लोगों को शरम नहीं आती कि आप हमें एक बेहतर रास्ता सुझाने की भी स्वतंत्रता नहीं देना चाहते!—हां, हां, महानुभावो! आपको न केवल रास्ता सुझाने की स्वतंत्रता है, बल्कि आपको जहां चाहें, वहां चले जाने की, दलदल में घुस जाने की भी स्वतंत्रता है। दरअसल, हमारे विचार से तो दलदल ही आपके लिए उपयुक्त स्थान है, और वहां पहुंचाने के लिए हम हर तरह से **आपकी** मदद करने को तैयार हैं। लेकिन बस हमारा हाथ छोड़ दीजिये, हमारा पल्ला न पकड़िये और शानदार शब्द स्वतंत्रता को कीचड़ में न घसीटिये, क्योंकि हम भी जहां चाहें, वहां जाने के लिए "स्वतंत्र" हैं, हम भी न केवल दलदल में रहनेवालों के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए स्वतंत्र हैं, बल्कि उन लोगों के ख़िलाफ़ भी लोहा लेने के लिए स्वतंत्र हैं, जो दलदल की ओर रुख़ कर रहे हैं!

(ख) "आलोचना की स्वतंत्रता" के नये समर्थक

अभी हाल में विदेशों में स्थित 'रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ'[16] के मुखपत्र *राबोचेये देलो* ने अपने १०वें अंक में बड़ी गंभीरता से इस नारे ("आलोचना की स्वतंत्रता") को बुलंद किया है। उसने यह नारा एक सैद्धांतिक अभिधारणा के रूप

Scanned by CamScanner

में नहीं, बल्कि एक राजनीतिक मांग के रूप में और इस प्रश्न के उत्तर के रूप में पेश किया है कि "क्या विदेशों में काम करनेवाले सामाजिक-जनवादी संगठनों में एकता क़ायम करना संभव है?" और उसने कहा है कि "एकता टिकाऊ हो, इसके लिए आवश्यक है कि आलोचना की स्वतंत्रता रहे" (पृ० ३६)।

इस कथन से दो बिलकुल निश्चित निष्कर्ष निकलते हैं: १. *राबोचेये देलो* ने अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक-जनवादी आंदोलन की अवसरवादी प्रवृत्ति को अपने संरक्षण में ले लिया है; २. *राबोचेये देलो* रूसी सामाजिक-जनवाद में अवसरवाद के लिए स्वतंत्रता चाहता है। आइये, अब हम इन निष्कर्षों की परीक्षा करें।

राबोचेये देलो इस बात से "ख़ास तौर पर" नाख़ुश है कि "*ईस्क्रा* और *ज़ार्या*[17] अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक-जनवाद में **पर्वत दल** और **जिरौंद दल**[18] के बीच संबंध-विच्छेद हो जाने की भविष्यवाणी करने का झुकाव" रखते हैं।*

राबोचेये देलो के संपादक बो० क्रिचेव्स्की लिखते हैं, "आम तौर पर सामाजिक-जनवादी आंदोलन में **पर्वत दल** और **जिरौंद दल** की जो चर्चा सुनायी पड़ती है, वह इतिहास की दृष्टि से बहुत ही सतही तुलना है। एक मार्क्सवादी की क़लम से ऐसी बात का निकलना बड़ी अजीब बात है। पर्वत दल और जिरौंद दल विभिन्न मनोवृत्तियों या बौद्धिक प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व नहीं करते थे, जैसा कि सिद्धांतवादी इतिहासकारों का ख़याल हो सकता है; वे तो विभिन्न वर्गों अथवा स्तरों का प्रतिनिधित्व करते थे—एक मंझोले बुर्जुआ वर्ग का प्रतिनिधि था और दूसरा टुटपुंजिये वर्ग तथा सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधि था। परंतु आधुनिक समाजवादी आंदोलन के अंदर वर्ग हितों की कोई टक्कर नहीं है। कुल मिलाकर पूरा समाजवादी आंदोलन, भिन्न-भिन्न प्रकार के उसके **सभी** रूप," (शब्द पर ज़ोर बो० क्रिचेव्स्की का है) "और यहां तक कि सबसे कट्टर बर्नस्टीनवादी भी, सर्वहारा वर्ग के वर्ग हितों को और

---

* *ईस्क्रा* के दूसरे अंक (फ़रवरी, १९०१) के एक अग्रलेख में क्रांतिकारी सर्वहारा वर्ग की दो प्रवृत्तियों (क्रांतिकारी तथा अवसरवादी) की तुलना अठारहवीं सदी के क्रांतिकारी बुर्जुआ वर्ग की दो प्रवृत्तियों से (जैकोबिन, जो पर्वत भी कहलाता था, और जिरौंद से) की गयी। यह लेख प्लेख़ानोव ने लिखा था। कैडेट[19], "बेज़्ज़ग्लाव्त्सी" दल[20] और मेंशेविक[21] आज भी रूसी सामाजिक-जनवाद में पाये जानेवाले "जैकोबिनवाद" का ज़िक्र करना बहुत पसंद करते हैं। पर वे इस बात के बारे में ख़ामोश रहते हैं... या इस बात को भूल जाना पसंद करते हैं कि प्लेख़ानोव ने सबसे पहले सामाजिक-जनवाद की दक्षिणपंथी प्रवृत्ति के ख़िलाफ़ इस अवधारणा का प्रयोग किया था। (१९०७ के संस्करण में लेखक की टिप्पणी।—**सं०**)

Scanned by CamScanner

परिस्थितियों की गणतांत्रिक संसदवाद की परिस्थितियों से तुलना करने की, पेरिस कम्यून[22] तथा समाजवादियों के विरुद्ध असाधारण क़ानून[23] के प्रभावों का विश्लेषण करने की, आर्थिक जीवन तथा आर्थिक विकास की तुलना करने की या इस बात की याद दिलाने की कोई आवश्यकता नहीं है कि "जर्मन सामाजिक-जनवाद का अभूतपूर्व विकास" न केवल ग़लत सिद्धांतों (म्यूलबर्गर, ड्यूहरिंग*, कैथेडेर-समाजवादी[26]) के ख़िलाफ़, बल्कि ग़लत कार्यनीति (लासाल) के ख़िलाफ़ एक ऐसे संघर्ष के दौरान में हुआ है, जिसका समाजवाद के इतिहास में उदाहरण नहीं मिलता, आदि, आदि। उनकी राय में ये सब बेकार की बातें हैं! फ़्रांसीसी इसलिए आपस में लड़ते हैं कि वे असहनशील हैं और जर्मनों में इसलिए एकता है कि वे भले लड़के हैं।

और ज़रा ग़ौर कीजिये, यह बेमिसाल और गूढ़ तर्क उस तथ्य का "खंडन" करने के लिए पेश किया गया है, जो बर्नस्टीनवादियों के हिमायतियों का मुंहतोड़ जवाब है। क्या बर्नस्टीनवादी सर्वहारा के वर्ग संघर्ष के आधार पर **खड़े** हैं? इस प्रश्न का उत्तर तो केवल ऐतिहासिक अनुभव ही पूर्णत: और निर्णायक ढंग से दे सकता है। अतएव इस मामले में फ़्रांस

---

* जिस समय एंगेल्स ने ड्यूहरिंग पर करारा प्रहार किया था, उस समय जर्मन सामाजिक-जनवाद के बहुत-से प्रतिनिधियों का ड्यूहरिंग के मत की ओर झुकाव था और पार्टी कांग्रेस में एंगेल्स पर रुखाई का प्रदर्शन करने, दूसरों के विचारों के प्रति सहनशीलता न बरतने, और भाईचारे के ढंग को छोड़कर साथियों की आलोचना करने, आदि के आरोप खुलेआम लगाये गये थे। (१८७७ की कांग्रेस में[24]) मोस्त और उनके समर्थकों ने यह प्रस्ताव पेश किया कि *Vorwärts*[25] में एंगेल्स के लेखों को प्रकाशित करने पर पाबंदी लगा दी जाये, क्योंकि "अधिकतर पाठकों को उनमें कोई दिलचस्पी नहीं है," और वाल्टीख़ (Vahlteich) ने घोषणा की कि इन लेखों के प्रकाशन से पार्टी को सख़्त नुक़सान पहुंचा है और यह कि ड्यूहरिंग ने भी सामाजिक-जनवाद की सेवाएं की हैं: "हमें हर आदमी का पार्टी के हित में उपयोग करना चाहिए, अगर प्रोफ़ेसर लोग बहस करना चाहते हैं, तो *Vorwärts* उसके लिए उपयुक्त स्थान नहीं है" (*Vorwärts*, अंक ६५, ६ जून, १८७७)। जैसा कि आप यहां देखते हैं, "आलोचना की स्वतंत्रता" की हिमायत का यह एक और उदाहरण है, और अच्छा होगा यदि हमारे क़ानूनी आलोचक तथा ग़ैर-क़ानूनी अवसरवादी, जो जर्मनों का उदाहरण देने के इतने शौक़ीन हैं, इस उदाहरण पर भी ज़रा गंभीरता से विचार करें!

Scanned by CamScanner

के उदाहरण का सबसे अधिक महत्व है, क्योंकि वही एक ऐसा देश है, जहां बर्नस्टीनवादियों ने स्वतंत्र रूप से अपने पैरों पर **खड़ा होने** की कोशिश की थी, और उनके जर्मन साथियों ने (और कुछ हद तक रूसी अवसरवादियों ने भी, देखिये *राबोचेये देलो*, अंक २-३, पृ० ८३-८४) उनकी इस कोशिश का हार्दिक समर्थन किया था। फ़्रांसीसियों की "असहनशीलता" का हवाला—अपने "ऐतिहासिक" महत्व (नोज़्दर्योव[27] के अर्थ में) के अलावा—कुछ बहुत ही अप्रिय सचाइयों को क्रोधभरे शब्दों के द्वारा छिपाने की कोशिश ही बन जाता है।

न ही हम इसके लिए क़तई तैयार हैं कि बो० क्रिचेव्स्की को और "आलोचना की स्वतंत्रता" के दूसरे बहुत-से हिमायतियों को जर्मनों के नाम का दुरुपयोग करने दें। यदि "सबसे कट्टर बर्नस्टीनवादियों" को अब भी जर्मन पार्टी में रहने दिया जाता है, तो सिर्फ़ उसी हद तक, जिस हद तक वे हैनोवर के प्रस्ताव[28] को जिसमें बर्नस्टीन के "संशोधनों" को एकदम ठुकरा दिया गया था, और लूबेक के प्रस्ताव[29] को **मानते हैं**, जिसमें (उसकी कूटनीतिक भाषा के बावजूद) बर्नस्टीन को प्रत्यक्ष चेतावनी दी गयी थी। यह विवादास्पद बात है कि क्या जर्मन पार्टी के हित की दृष्टि से कूटनीति बरतना ठीक था, और क्या इस मामले में एक ख़राब सुलह एक अच्छे झगड़े से बेहतर है। सारांश यह है कि बर्नस्टीनवाद को ठुकराने का कौन-सा **ढंग** अधिक उपयुक्त है, इस पर मतभेद हो सकता है, परंतु इस बात को कोई भी अनदेखा नहीं कर सकता कि जर्मन पार्टी दो बार बर्नस्टीनवाद को **ठुकरा चुकी है**। इसलिए यह समझना कि जर्मन मिसाल से इस प्रस्थापना की पुष्टि होती है कि "सबसे कट्टर बर्नस्टीनवादी भी सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक तथा आर्थिक मुक्ति के लिए उसके वर्ग संघर्ष को अपना आधार बनाते हैं"—आंखों के सामने होनेवाली बातों को भी न समझने के समान है*।

* यह बताना आवश्यक है कि जर्मन पार्टी में पाये जानेवाले बर्नस्टीनवाद के बारे में *राबोचेये देलो* ने अपने आपको सदा तथ्यों को पेश कर देने तक ही सीमित रखा है और इन तथ्यों के बारे में अपना मत प्रकट नहीं किया है। उदाहरण के लिए, अंक २-३ (पृ० ६६) में छपी स्टुटगार्ट कांग्रेस[30] की रिपोर्टों को देखिये, जिनमें तमाम मतभेदों को "कार्यनीति" संबंधी मतभेद बना दिया गया है और केवल यह कहकर

Scanned by CamScanner

और बात इतनी ही नहीं है। जैसा हम ऊपर कह चुके हैं, *राबोचेये देलो* **रूसी** सामाजिक-जनवाद के सामने "आलोचना की स्वतंत्रता" की मांग और बर्नस्टीनवाद की हिमायत करता है। ज़ाहिर है कि वह इस नतीजे पर पहुंचा है कि हमने अपने "आलोचकों" तथा बर्नस्टीनवादियों के साथ न्याय नहीं किया। ठीक किनके साथ? किसने उनके साथ न्याय नहीं किया? कहां और कब उनके साथ अन्याय किया गया? यह अन्याय किस बात में प्रकट होता है? इस सबके बारे में एक शब्द भी नहीं मिलता। *राबोचेये देलो* एक भी रूसी आलोचक या बर्नस्टीनवादी का नाम नहीं लेता! ऐसी हालत में हमारे लिए दो संभव बातों में से एक को मानने के अलावा और कोई रास्ता नहीं रह जाता है: **या** तो जिसके साथ अन्याय हुआ है, वह *राबोचेये देलो* के सिवा और कोई नहीं है (और यह इस बात से और पक्का हो जाता है कि १०वें अंक के दो लेखों में केवल उस अन्याय का ज़िक्र किया गया है, जो *ज़ार्या* और *ईस्क्रा* ने *राबोचेये देलो* के साथ किया है)। यदि यही मामला है, तो इस अजीबोग़रीब बात की क्या वजह है कि *राबोचेये देलो*, जो हमेशा बड़े ज़ोरदार शब्दों में यह कहता रहता है कि वह बर्नस्टीनवाद की कभी हिमायत नहीं करता, इस बार "सबसे कट्टर बर्नस्टीनवादियों" की तथा आलोचना की स्वतंत्रता की हिमायत किये बग़ैर अपने मत की पुष्टि न कर सका? **या**

संतोष कर लिया गया है कि पार्टी का अधिकांश भाग अब भी पुरानी क्रांतिकारी कार्यनीति का ही समर्थक है। या अंक ४-५ (पृ० २५ और उसके बाद के पृष्ठ) को लीजिये, जहां हैनोवर कांग्रेस में दिये गये भाषणों को केवल दूसरे शब्दों में प्रकाशित कर दिया गया है और बेबेल के प्रस्ताव को ज्यों का त्यों छाप दिया गया है। बर्नस्टीन के विचारों की विवेचना और आलोचना को इस बार भी "एक विशेष लेख" का वादा करके (जैसा अंक २-३ में किया गया था) टाल दिया गया है। अजीब बात है कि अंक ४-५ (पृ० ३३) में हम यह पढ़ते हैं: "...बेबेल ने जो विचार पेश किये थे, उनका कांग्रेस के प्रबल बहुमत ने समर्थन किया" और उसके चंद लाइनें बाद: "डेविड ने बर्नस्टीन के विचारों का समर्थन किया... सबसे पहले उन्होंने यह दिखाने की कोशिश की कि सब कुछ कहने-करने के बाद भी" (जी हां!) "बर्नस्टीन और उनके दोस्त वर्ग संघर्ष को अपना आधार बनाते हैं..." यह दिसंबर, १८९९ में लिखा गया था और सितंबर, १९०१ में *राबोचेये देलो* प्रकटत: बेबेल के विचारों के सही होने में विश्वास खो चुकने के बाद डेविड के मत को अपने मत के रूप में पेश कर रहा है!

Scanned by CamScanner

फिर कुछ अन्य व्यक्तियों के साथ अन्याय हुआ है। यदि यह बात है, तो इन लोगों के नाम न बताने का क्या कारण हो सकता है?

इस तरह हम देखते हैं कि *राबोचेये देलो* अब भी आंख-मिचौनी का वही खेल खेल रहा है, जो वह (जैसा कि हम आगे दिखायेंगे) अपने जन्म से ही खेलता आ रहा है। जिस "आलोचना की स्वतंत्रता" का इतना ढोल पीटा जाता है, उसके **पहले** व्यावहारिक प्रयोग पर आप ग़ौर कीजिये। वस्तुत: न केवल हर प्रकार की आलोचना से हाथ खींच लिया गया है, बल्कि किसी भी तरह के स्वतंत्र विचार प्रकट करना भी बंद कर दिया गया है। वही *राबोचेये देलो,* जो रूसी बर्नस्टीनवाद का नाम लेने से इस तरह कतराता है मानो वह (स्तारोवेर के अत्यंत उपयुक्त शब्दों में) कोई शर्मनाक बीमारी हो, उसके इलाज के लिए जर्मनी के उस सबसे ताज़ा नुसख़े की **हूबहू नक़ल करने** की सलाह देता है, जो इस बीमारी के जर्मन रूप के विरुद्ध सुझाया जा रहा है! आलोचना की स्वतंत्रता नहीं, ग़ुलामों की तरह, इससे भी बदतर—बंदरों की तरह की नक़ल! आधुनिक अंतर्राष्ट्रीय अवसरवाद का सामाजिक तथा राजनीतिक सारतत्व हर जगह एक है, पर अलग-अलग स्थानों में वह अपनी राष्ट्रीय विशेषताओं के अनुसार विविध प्रकार के रूपों में प्रकट होता है। एक देश में अवसरवादी बहुत दिन हुए एक अलग झंडे के नीचे इकट्ठा हो गये थे, दूसरे देश में उन्होंने सिद्धांत की अवहेलना की और व्यवहार में रेडिकल-समाजवादियों की नीति का अनुसरण किया, तीसरे देश में क्रांतिकारी पार्टी के कुछ सदस्य भागकर अवसरवाद के ख़ेमे में चले गये हैं और वे सिद्धांतों तथा नयी कार्यनीति के लिए खुले संघर्ष द्वारा नहीं, बल्कि अपनी पार्टी के धीरे-धीरे, अप्रत्यक्ष और, यदि यह कहना उपयुक्त समझा जाये, तो अदंडनीय भ्रष्टीकरण द्वारा अपने उद्देश्य प्राप्त करने की कोशिश कर रहे हैं, चौथे देश में इसी प्रकार के भगोड़े लोग राजनीतिक दासता के अंधकार का फ़ायदा उठाकर इन्हीं तरीक़ों का प्रयोग करते हैं और "क़ानूनी" तथा "ग़ैर क़ानूनी" कार्रवाइयों को एकदम निराले ढंग से मिलाकर चलते हैं, इत्यादि, इत्यादि। **रूसी** सामाजिक-जनवादियों को संयुक्त करने की शर्त के तौर पर आलोचना की और बर्नस्टीनवाद की

Scanned by CamScanner

स्वतंत्रता के बारे में बातें करना और इस बात को स्पष्ट तरीक़े से न बताना कि **रूसी** बर्नस्टीनवाद किस में प्रकट हुआ है और उसके क्या विशेष फल निकले हैं, यह कुछ न कहने के मक़सद से बात करने के बराबर है।

आइये, हम ख़ुद, कुछ शब्दों में ही सही, वह बात बताने की कोशिश करें, जो *राबोचेये देलो* नहीं बताना चाहता था (या शायद जिसे उसने समझा तक नहीं था)।

(ग) रूस में आलोचना

जिस विषय की हम यहां विवेचना कर रहे हैं; उसके संबंध में रूस की प्रमुख लाक्षणिक विशेषता यह है कि यहां एक ओर तो स्वयंस्फूर्त मज़दूर आंदोलन के और दूसरी ओर प्रगतिशील जनमत के मार्क्सवाद की ओर मुड़ने के **आरंभ में ही** स्पष्टतया पंचमेल तत्व एक झंडे के नीचे जमा हो गये, जिनका उद्देश्य एक समान शत्रु से (पिछड़े सामाजिक एवं राजनीतिक विश्वदृष्टिकोण से) लड़ना भी था। हम "क़ानूनी मार्क्सवाद"[31] के उभार के दिनों की चर्चा कर रहे हैं। मोटे तौर पर यह सचमुच एक विचित्र घटना थी, जिसे पिछली शताब्दी के नौवें दशक में या दसवें दशक के आरंभ में कोई भी संभव नहीं मान सकता था। एक ऐसे देश में, जहां निरंकुश शासन है, जहां के समाचारपत्र बंधनों में पूरे तौर पर जकड़े हुए हैं, एक ऐसे काल में, जब घोर राजनीतिक प्रतिक्रियावाद का दौर-दौरा था और राजनीतिक असंतोष तथा विरोध के अंकुर को फूटते ही कुचल दिया जाता था, यकायक क्रांतिकारी मार्क्सवाद का सिद्धांत **सेंसर द्वारा पास किये गये** साहित्य में प्रवेश करने में सफल हो जाता है; और यद्यपि उसका विवेचन अन्योक्तिपरक भाषा में किया जाता है, पर उसे सभी "दिलचस्पी लेनेवाले" समझ जाते हैं। सरकार केवल क्रांतिकारी 'नरोदनाया वोल्या' वाद के सिद्धांत को ख़तरनाक समझने की आदी हो गयी थी। जैसा कि आम तौर पर होता है, वह उसके अंदरूनी विकास को नहीं देखती थी और उसकी **कैसी भी** आलोचना हो, उससे ख़ुश होती थी। (हमारे रूसी हिसाब के अनुसार) काफ़ी समय बीत जाने के बाद ही सरकार को एहसास हुआ कि क्या हो गया है और सेंसर व राजनीतिक पुलिस

Scanned by CamScanner

की भारी-भरकम फ़ौज को नये दुश्मन का पता चला और वह उस पर टूट पड़ी। इस बीच एक के बाद दूसरी मार्क्सवादी पुस्तकें प्रकाशित होती गयीं, मार्क्सवादी पत्र-पत्रिकाओं की स्थापना हुई, लगभग हर आदमी मार्क्सवादी बन बैठा, मार्क्सवादियों की खुशामदें की जाती थीं, मार्क्सवादियों का आदर-सत्कार किया जाता था और मार्क्सवादी साहित्य की असाधारण, हाथों हाथ बिक्री से प्रकाशक खुशियां मनाते थे। ऐसी हालत में यह स्वाभाविक था कि उन नौसिखुए मार्क्सवादियों में, जो आंधी में बहकर इधर चले आये थे, अनेक "ऐसे लेखक भी हों, जिनका दिमाग़ चढ़ गया था"...[32]

अब वह ज़माना एक बीती हुई बात है और उसके बारे में हम लोग शांत भाव से चर्चा कर सकते हैं। यह कोई छिपी हुई बात नहीं है कि छोटे-से काल में हमारे साहित्य की सतह पर मार्क्सवाद की समृद्धि का कारण था बहुत गरम और बहुत ही नरम विचारवाले लोगों का सहयोग। सच तो यह है कि ये नरम विचारवाले लोग बुर्जुआ जनवादी थे; और जब यह "सहयोग" क़ायम था, उस वक़्त भी कुछ लोग इस नतीजे पर पहुंच गये थे (बाद में इन नरम विचारवालों के "आलोचनात्मक" विकास ने इस नतीजे की पूरी तरह पुष्टि कर दी थी)।*

यदि बात ऐसी थी, तो क्या बाद में जो "मतिभ्रम" पैदा हुआ, उसकी ज़िम्मेदारी मुख्यतया क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादियों पर नहीं है, जिन्होंने भावी "आलोचकों" के साथ सहयोग किया था? यह सवाल कभी-कभी ज़रूरत से ज़्यादा लकीर के फ़क़ीर लोगों के मुंह से सुना जाता है और वे इसका जवाब "हां" में देते हैं। पर ये लोग बिल्कुल ग़लती करते हैं। केवल वे ही लोग अविश्वसनीय लोगों तक से अस्थायी तौर पर सहयोग करने से डर सकते हैं, जिनको अपने ऊपर विश्वास नहीं होता; कोई राजनीतिक पार्टी बिना ऐसे सहयोग के जीवित नहीं रह सकती। क़ानूनी मार्क्सवादियों के साथ मिलकर रूसी सामाजिक-जनवादियों

---

* यह इशारा स्त्रूवे के विरुद्ध क० तूलिन के उपरिलिखित लेख की ओर है। यह लेख *बुर्जुआ साहित्य में मार्क्सवाद का प्रतिबिंब* शीर्षक निबंध के आधार पर तैयार किया गया था। देखिये *भूमिका*। (१९०७ के संस्करण में लेखक की टिप्पणी।—**सं०**)

Scanned by CamScanner

ने एक तरह से सही माने में पहला राजनीतिक सहयोग किया था। इसी सहयोग की बदौलत नरोदवाद पर आश्चर्यजनक तेजी से विजय हुई और मार्क्सवादी विचार (कुछ विकृत शक्ल में ही सही) दूर-दूर तक फैल गये। इसके अलावा यह सहयोग बिना किसी "शर्त" के नहीं किया गया था। इसका सबूत है १८९५ में *रूस के आर्थिक विकास की समस्या से संबंधित सामग्री*[33] शीर्षक मार्क्सवादी लेख-संग्रह का सरकारी सेंसर द्वारा जला दिया जाना। क़ानूनी मार्क्सवादियों के साथ जो साहित्यिक समझौता हुआ था, यदि उसे हम एक राजनीतिक सहयोग कह सकते हैं, तो इस पुस्तक की तुलना एक राजनीतिक संधि से की जा सकती है।

निस्संदेह सहयोग इस कारण नहीं भंग हुआ कि हमारे "मित्र" बुर्जुआ जनवादी साबित हुए। इसके विपरीत, जहां तक सामाजिक-जनवादी आंदोलन के जनवादी कार्यभारों का, जिनका महत्व रूस की वर्तमान स्थिति के कारण बढ़ जाता है, संबंध है, बुर्जुआ-जनवादी प्रवृत्ति के प्रतिनिधि सामाजिक-जनवादी आंदोलन के स्वाभाविक और वांछनीय मित्र हैं। परंतु इस प्रकार के सहयोग की एक आवश्यक शर्त यह होनी चाहिए कि समाजवादियों को मज़दूर वर्ग को यह बताने का पूर्ण अवसर रहे कि उसके हित बुर्जुआ वर्ग के हितों के एकदम विरुद्ध हैं। परंतु बर्नस्टीनवादी और "आलोचक" प्रवृत्ति ने, जिसकी ओर अधिकतर क़ानूनी मार्क्सवादियों का झुकाव था, समाजवादियों को यह अवसर नहीं दिया और उसने मार्क्सवाद को विकृत करके, इस सिद्धांत का प्रचार करके कि सामाजिक विरोध कम होते जा रहे हैं, यह ऐलान करके कि सामाजिक क्रांति तथा सर्वहारा वर्ग के अधिनायकत्व का विचार बिलकुल बेहूदा है, मज़दूर वर्ग के आंदोलन तथा वर्ग संघर्ष को संकुचित ट्रेड-यूनियन आंदोलन तथा छोटे-छोटे, धीरे-धीरे होनेवाले सुधारों के लिए चलनेवाले "यथार्थवादी" संघर्ष में बदलकर समाजवादी चेतना को भ्रष्ट कर दिया। यह बात बुर्जुआ जनवाद द्वारा समाजवाद की स्वतंत्रता के और फलस्वरूप उसके अस्तित्व के अधिकार की अस्वीकृति का पर्यायवाची थी; व्यवहार में इसका मतलब मज़दूर वर्ग के नवजात आंदोलन को उदारपंथियों का पुच्छल्ला बनाने की कोशिश था।

Scanned by CamScanner

स्वाभाविक है कि ऐसी परिस्थिति में सहयोग का भंग होना आवश्यक था। परंतु रूस की "ख़ास" विशेषता इस बात में प्रकट हुई कि इस सहयोग के टूटने का सीधे-सीधे मतलब था "क़ानूनी" साहित्य के क्षेत्र से, जिसका बहुत प्रचार था और जो सबसे ज़्यादा हद तक जनता की पहुंच के अंदर था, सामाजिक-जनवादियों का सफ़ाया। इस साहित्य में अब वे "भूतपूर्व मार्क्सवादी" जम गये, जिन्होंने "आलोचना" का झंडा उठा लिया था और जिन्हें अब मार्क्सवाद का "ध्वंस करने" का मानो एकाधिकार मिल गया था। "कट्टरता मुर्दाबाद!" और "आलोचना की स्वतंत्रता ज़िंदाबाद!" जैसे नारे (अब जिन्हें *राबोचेये देलो* दुहरा रहा है) तुरंत फ़ैशन में आ गये और यह बात कि न तो सरकारी सेंसर और न राजनीतिक पुलिसवाले ही इस नये फ़ैशन के मुक़ाबले में खड़े रह सके, इससे स्पष्ट हो जाती है कि प्रसिद्ध (हेरोस्ट्रेटस के अर्थ में प्रसिद्ध) बर्नस्टीन की पुस्तक[34] के अभी तक **तीन** रूसी संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं, और इसका सबूत यह भी है कि बर्नस्टीन, श्री प्रोकोपोविच और दूसरों की पुस्तकों की ज़ुबातोव ने सिफ़ारिश की थी (*ईस्क्रा*, अंक १०)। अब सामाजिक-जनवादियों के ज़िम्मे एक ऐसा कार्यभार आ गया था, जो स्वयं भी काफ़ी कठिन था और जिसे हर तरह की बाहरी रुकावटों ने और कठिन बना दिया था, यह था इस नयी प्रवृत्ति से लड़ने का कार्यभार। और इस प्रवृत्ति ने अपने आपको केवल साहित्य के क्षेत्र तक ही सीमित नहीं रखा था। "आलोचना" की ओर जो झुकाव देखा जा रहा था, उसके साथ-साथ सामाजिक-जनवाद के अमली कार्यकर्त्ताओं में "अर्थवाद" की ओर झुकने की प्रवृत्ति भी उत्पन्न हो रही थी।

क़ानूनी आलोचना और ग़ैर-क़ानूनी "अर्थवाद" के संबंध और अंत:निर्भरता का जन्म और विकास किस तरह हुआ, यह एक दिलचस्प सवाल है और वह एक विशेष लेख का विषय बन सकता था। यहां केवल इतना ध्यान में रख लेना काफ़ी होगा कि यह संबंध बिला शक मौजूद था। *Credo** ने जो कुख्याति प्राप्त की थी, वह उसका अधिकारी था, और उसकी वजह वह

---

* *Credo*—आस्था का प्रतीक, कार्यक्रम, विश्वदृष्टिकोण का निरूपण।—**सं०**

Scanned by CamScanner

साफ़गोई थी, जिससे *Credo* ने इस संबंध को निरूपित किया था और "अर्थवाद" की मूल राजनीतिक प्रवृत्ति को उगल दिया था, अर्थात मज़दूर आर्थिक संघर्ष (ट्रेड-यूनियन संघर्ष कहना ज़्यादा सही होगा, क्योंकि मज़दूर वर्ग की ख़ास राजनीति भी उसमें आ जाती है) चलाते रहें और मार्क्सवादी बुद्धिजीवी राजनीतिक "संघर्ष" चलाने के लिए उदारपंथियों के साथ मिल जायें। इस प्रकार "जनता के बीच" ट्रेड-यूनियन कार्य का मतलब इस कार्यभार के पहले अंश की और क़ानूनी आलोचना का मतलब दूसरे अंश की पूर्ति था। यह वक्तव्य "अर्थवाद" के विरुद्ध एक इतना अच्छा हथियार था कि यदि *Credo* न भी होता, तो शायद उसको गढ़ डालना भी उपयोगी साबित होता।

Credo को गढ़कर तैयार नहीं किया गया था, लेकिन वह उसके लेखकों से इजाज़त लिये बिना और यहां तक कि शायद उनकी मरज़ी के भी ख़िलाफ़ अवश्य प्रकाशित किया गया था। कुछ भी हो, इस पुस्तक के लेखक ने, जिसने नये "कार्यक्रम" को प्रकाश में लाने में योग दिया था,* ये शिकायतें और उलाहने अकसर सुने हैं कि वक्ताओं के विचारों के सारांश की प्रतियां बांटी गयी थीं; उस सारांश को *Credo* लेबल मिला तथा उसे अख़बारों में विरोध के साथ तक प्रकाशित कर दिया गया था! हम इस घटना का ज़िक्र इसलिए कर रहे हैं कि उससे "अर्थवादियों" की एक बहुत दिलचस्प ख़ासियत पर प्रकाश पड़ता है—प्रचार से भय। यह ख़ासियत केवल *Credo* के लेखकों की ही नहीं, बल्कि आम तौर पर सभी "अर्थवादियों" की है। इस ख़ासियत को "अर्थवाद" का सबसे खरा और ईमानदार पैरोकार *राबोचाया मीस्ल*[37], *राबोचेये देलो* (जो *Vademecum*** में "अर्थवादी" दस्तावेज़ों के प्रकाशन पर बहुत नाराज़ हुआ था), कीयेव समिति, जिसने दो साल पहले

* यहां इशारा *Credo* के विरुद्ध **सत्रह व्यक्तियों** द्वारा **विरोध** की ओर है। इस विरोध को तैयार करने में इस पुस्तक के लेखक ने भी भाग लिया था (१८९९ के अंत में)।[35] यह विरोध और *Credo* १९०० के वसंत में विदेश से प्रकाशित हुए थे। श्रीमती कुस्कोवा ने शायद *बिलोये*[36] पत्रिका में जो लेख लिखा है, उससे अब यह बात स्पष्ट हो गयी है कि *Credo* की लेखिका वही थीं और उस समय विदेशों में रहनेवाले "अर्थवादियों" में श्री प्रोकोपोविच का बहुत प्रमुख स्थान था। (१९०७ के संस्करण में लेखक की टिप्पणी।—**सं०**)

** मार्गदर्शिका।[38]—**सं०**

Scanned by CamScanner

अपने परचे *Profession de foi*[39] को एक विरोधी वक्तव्य के साथ नहीं छपने दिया था,* और "अर्थवाद" के बहुत-से दूसरे प्रतिनिधि प्रकट कर चुके हैं।

आलोचना की स्वतंत्रता के समर्थक आलोचना से इतना क्यों डरते हैं, इसकी वजह सिर्फ़ उनकी चालाकी ही नहीं हो सकती। (हालांकि कभी-कभी चालाकी का भी निस्संदेह उससे कुछ संबंध होता है: नयी प्रवृत्ति के नवजात और अभी कोमल अंकुरों को विरोधियों के थपेड़ों के आगे डालना बुद्धिमानी की बात नहीं होगी!)। नहीं, अधिकतर "अर्थवादी" सचमुच दिली तौर पर हर तरह की सैद्धांतिक बहसों, गुटों के मतभेदों, आम राजनीतिक सवालों, क्रांतिकारियों का संगठन करने की योजनाओं, आदि को भर्त्सना की दृष्टि से देखते हैं (और "अर्थवाद" की प्रकृति ही ऐसी है कि उनको ऐसा देखना चाहिए)। "इन सब पचड़ों को विदेशों में पड़े हुए लोगों के लिए छोड़ दो!"—एक बहुत सुसंगत "अर्थवादी" ने एक दिन मुझसे यह कहा था, और इस प्रकार एक बहुत प्रचलित (और सौ फ़ीसदी ट्रेड-यूनियनवादी) मत को व्यक्त किया था: हमारा काम यहां, अपने इलाक़ों के मज़दूर आंदोलन में, मज़दूर संगठनों में है, और बाक़ी चीज़ें मताग्रहियों की मनगढ़ंत बातें, "विचारधारा के महत्व को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर बताने" की बातें हैं, जैसा कि *राबोचेये देलो* के अंक १० में प्रकाशित हुए भावों को प्रतिध्वनित करते हुए *ईस्क्रा* के अंक १२ में प्रकाशित एक पत्र के लेखकों ने कहा था।

अब यह सवाल उठता है: रूसी "आलोचना" तथा रूसी बर्नस्टीनवाद की इन खासियतों को ध्यान में रखते हुए उन लोगों का क्या कर्त्तव्य होना चाहिए था, जो केवल ज़बानी तौर पर नहीं, बल्कि अमली तौर पर भी अवसरवाद का विरोध करना चाहते थे? सबसे पहले, उन्हें उस सैद्धांतिक काम को फिर से जारी करने का प्रयत्न करना चाहिए था, जो क़ानूनी मार्क्सवाद के काल में शुरू हो हुआ था और जिसकी ज़िम्मेदारी अब फिर ग़ैर क़ानूनी कार्यकर्त्ताओं के कंधों पर आ पड़ी है; बिना इस काम को किये आंदोलन की सफलतापूर्ण उन्नति असंभव थी। दूसरे,

* जहां तक हमारी जानकारी है, कीयेव समिति की सदस्यता-संरचना तब से बदल चुकी है।

Scanned by CamScanner

उन्हें उस क़ानूनी "आलोचना" का सक्रिय रूप से मुक़ाबला करना चाहिए था, जो जनता के दिमाग़ को बहुत भ्रष्ट किये जा रही थी। तीसरे, उन्हें व्यावहारिक आंदोलन में फैले हुए मतिभ्रम और ढुलमुलपन का सक्रिय विरोध करना चाहिए था और हमारे कार्यक्रम तथा कार्यनीति को अवमानित करने के हर सचेतन अथवा अचेतन प्रयत्न का भंडाफोड़ तथा खंडन करना चाहिए था।

सब जानते हैं कि *राबोचेये देलो* ने इनमें से एक भी काम नहीं किया और आगे हम इस सुविदित तथ्य के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से विचार करेंगे। परंतु इस समय हम केवल यह दिखाना चाहते हैं कि "आलोचना की स्वतंत्रता" की मांग में और हमारी देशी आलोचना तथा रूसी "अर्थवाद" की ख़ासियतों में कितना बड़ा विरोध है। ज़रा उस प्रस्ताव के शब्दों पर एक नज़र डालिये, जिसमें 'विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' ने *राबोचेये देलो* के दृष्टिकोण का समर्थन किया था:

"सामाजिक-जनवाद के और अधिक सैद्धांतिक विकास के लिए हम यह नितांत आवश्यक समझते हैं कि जिस हद तक कोई आलोचना सामाजिक-जनवादी सिद्धांत के वर्गीय एवं क्रांतिकारी स्वरूप के ख़िलाफ़ नहीं जाती, उस हद तक पार्टी साहित्य में इस सिद्धांत की आलोचना करने की स्वतंत्रता रहनी चाहिए" (*दो कांग्रेसें*, पृ० १०)।

और इस मत के पक्ष में यह दलील पेश की जाती है: प्रस्ताव का "पहला भाग लूबेक पार्टी कांग्रेस के बर्नस्टीन संबंधी प्रस्ताव से मिलता है"... इन "संघवालों" ने अपने भोलेपन में यह भी नहीं देखा कि इस तरह के नक़लचीपन द्वारा उन्होंने कितने स्पष्ट रूप में ख़ुद अपने testimonium paupertatis दारिद्र्य का प्रमाणपत्र को ज़ाहिर किया है!.. "लेकिन... अपने दूसरे भाग में यह प्रस्ताव आलोचना की स्वतंत्रता को उससे कहीं अधिक सीमित कर देता है, जितना लूबेक पार्टी कांग्रेस ने किया था।"

तो क्या 'संघ' का प्रस्ताव रूसी बर्नस्टीनवादियों के ख़िलाफ़ था? यदि नहीं, तो लूबेक पार्टी कांग्रेस का ज़िक्र करना एकदम बेतुकापन होता है! परंतु यह कहना सच नहीं है कि वह "आलोचना की स्वतंत्रता को... सीमित कर देता है"। अपना

Scanned by CamScanner

हैनोवर का प्रस्ताव पास करके जर्मनों ने एक-एक करके **उन्हीं** संशोधनों को ठुकरा दिया था, जिन्हें बर्नस्टीन ने पेश किया था, और अपने लूबेक के प्रस्ताव में उन्होंने बर्नस्टीन का नाम लेकर **उन्हें व्यक्तिगत रूप से** चेतावनी दी थी। परंतु हमारे ये "स्वतंत्र" नक़लची **एक बार भी** विशेषत: रूसी "आलोचना" तथा रूसी "अर्थवाद" की **एक भी** अभिव्यक्ति की ओर इशारा नहीं करते, ऐसा न करके महज़ सिद्धांत के वर्गीय एवं क्रांतिकारी स्वरूप की चर्चा करना ग़लत व्याख्या की बहुत बड़ी गुंजाइश छोड़ देता है, ख़ास तौर पर ऐसी हालत में, जब 'संघ' "तथाकथित अर्थवाद" और अवसरवाद को एक चीज़ मानने से इनकार करता है (*दो कांग्रेसें*, पृ० ८, पैरा १)। पर यह सब तो प्रसंगवश ही है। ध्यान देने योग्य मुख्य बात यह है कि क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादियों के प्रति अवसरवादियों के रुख़ में जर्मनी और रूस में सोलहों आना विरोध है। जैसा कि हम जानते हैं, जर्मनी के क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादी जो कुछ है, उसको, याने पुराने कार्यक्रम और उस कार्यनीति को बरक़रार रखना चाहते हैं, जो सर्वविदित है और कई दशकों का अनुभव जिसका पूरे विस्तार के साथ स्पष्टीकरण कर चुका है। "आलोचक" परिवर्तन लाना चाहते हैं, और चूंकि ये आलोचक एक बहुत ही नगण्य अल्पमत हैं और चूंकि ये लोग अपने संशोधनवादी प्रयत्नों में बड़े संकोची हैं, इसलिए पार्टी के बहुमत ने यदि अपने आपको केवल इन "नयी बातों" को ठुकराने तक ही सीमित रखा है, तो कारण समझ में आता है। लेकिन रूस में जो कुछ पहले से मौजूद है, आलोचक तथा "अर्थवादी" उसे बरक़रार रखने के पक्ष में हैं। "आलोचक" चाहते हैं कि हम उन्हें मार्क्सवादी समझते रहें और उन्हें "आलोचना की उस स्वतंत्रता" की गारंटी दें, जो उन्हें पूरी तौर से मिली हुई थी (क्योंकि सच्ची बात यह है कि इन लोगों ने कभी भी किसी तरह के **पार्टी** संबंध को नहीं माना है,* और इसके

* खुले पार्टी संबंधों और पार्टी परंपराओं के अभाव से ही रूस और जर्मनी में इतना बुनियादी अंतर प्रकट होता है कि सभी बुद्धिमान समाजवादियों को आंखें बंद करके नक़ल करने से सावधान रहना चाहिए था। परंतु रूस में "आलोचना की स्वतंत्रता" किस हद तक जाती है, उसकी एक मिसाल यहां दी जा सकती है। रूसी आलोचक श्री बुल्गाकोव

Scanned by CamScanner

अलावा हमारे यहां पार्टी की ऐसी कोई सर्वमान्य संस्था कभी नहीं रही है, जो चाहे अपनी सलाह देकर ही आलोचना की स्वतंत्रता को "सीमित" कर सकती); "अर्थवादी" चाहते हैं कि क्रांतिकारी "वर्तमान आंदोलन की सम्पूर्ण सत्ता" को स्वीकार करें (*राबोचेये देलो*, अंक १०, पृ० २५), अर्थात जो कुछ मौजूद है, उसकी वैधता को मानें; वे चाहते हैं कि "सिद्धांतकार" आंदोलन को उस मार्ग से "हटाने" का यत्न न करें, जो "भौतिक तत्वों और भौतिक वातावरण की परस्पर क्रिया द्वारा निर्धारित किया जाता है" (*ईस्क्रा* के अंक १२ में प्रकाशित *पत्र*); वे चाहते हैं कि उसी संघर्ष को वांछनीय वस्तु के रूप में मान्यता दी जाये, "जो मज़दूरों के लिए वर्तमान परिस्थितियों में सचमुच थोड़ा-बहुत संभव है", और एकमात्र संभव संघर्ष उस संघर्ष को माना जाये, "जिसे वे आजकल सचमुच चला रहे हैं" (*राबोचाया मीस्ल का विशेष परिशिष्ट*[40], पृ० १४)। इसके विपरीत, हम क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादी स्वयंस्फूर्ति की पूजा करने, याने जो कुछ "इस समय" मौजूद है, उसकी पूजा करने से असंतुष्ट हैं; हम मांग करते हैं कि पिछले कुछ बरसों से जिस कार्यनीति का चलन रहा है, उसे बदलना चाहिए; हम ऐलान करते हैं कि "संयुक्त होने के पहले और संयुक्त होने के लिए ज़रूरी है कि हम सबसे पहले मज़बूत और निश्चित सीमा-रेखाएं खींच दें" (देखिये *ईस्क्रा* के प्रकाशन की

ने आस्ट्रिया के आलोचक हेट्ज़ को डांटते हुए लिखा है: "हेट्ज़ कुछ स्वतंत्र परिणामों पर भी पहुंचे हैं, पर उसके बावजूद इस प्रश्न पर (सहकारी समितियों के प्रश्न पर) हेट्ज़ अपनी पार्टी के मत से बहुत ज़्यादा बंधे हुए नज़र आते हैं, और यद्यपि वह इस मत की कुछ तफ़सीली बातों से सहमत नहीं हैं, फिर भी वह उसके आम सिद्धांत को त्यागने का साहस नहीं कर पाते" (*पूंजीवाद और कृषि*, खंड २, पृ० २८७)। राजनीतिक दृष्टि से दासता के बंधनों में जकड़े हुए एक ऐसे राज्य का, जिसकी आबादी के हज़ार में से नौ सौ निनानवे लोगों को राजनीतिक दासता ने और पार्टी सम्मान और पार्टी संबंधों की पूर्ण अज्ञानता ने हृदय के अंतरतम तक भ्रष्ट कर दिया है—ऐसे राज्य का एक नागरिक बड़े तिरस्कार के साथ एक संवैधानिक राज्य के नागरिक को इसलिए डांट रहा है कि वह "अपनी पार्टी के मत से बहुत ज़्यादा बंधा हुआ है"! ज़ाहिर है कि हमारे ग़ैर क़ानूनी संगठनों के पास इसके सिवा और कोई काम नहीं हैं कि आलोचना की स्वतंत्रता के विषय में प्रस्ताव तैयार करते रहें...

Scanned by CamScanner

घोषणा)*। सारांश यह कि जर्मन उसके समर्थक हैं, जो कुछ पहले से मौजूद है और वे उसमें कोई परिवर्तन नहीं चाहते और हम परिवर्तनों की मांग करते हैं और जो कुछ पहले से मौजूद है, उसकी पूजा करने या उससे समझौता करने से हम इनकार करते हैं।

जर्मन प्रस्तावों के हमारे "स्वतंत्र" नक़लचियों ने इस "छोटे-से" अंतर को नहीं देखा है!

(घ) सैद्धांतिक संघर्ष के महत्व पर एंगेल्स के विचार

"आलोचना की स्वतंत्रता" के वीर रक्षकों ने *राबोचेये देलो* के कालमों में जिन शत्रुओं के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए हथियार उठाये हैं, वे ये हैं: "जड़सूत्रवाद, मतवाद", "पार्टी में जड़ता का पैदा हो जाना, जो विचारों को ज़बरदस्ती ज़ंजीरों में जकड़ने का अवश्यंभावी दंड है"। हमें बहुत ख़ुशी है कि यह सवाल आज बहस के लिए उठाया गया है और हम उसके साथ केवल एक सवाल और जोड़ना चाहेंगे। वह सवाल यह है:

न्यायकर्त्ता कौन हैं?

हमारे सामने प्रकाशकों के दो ऐलान पड़े हुए हैं। एक है *रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ के नियतकालिक मुखपत्र राबोचेये देलो का कार्यक्रम (राबोचेये देलो* के अंक १ से मुद्रित) और दूसरा *श्रम-मुक्ति दल*[41] *के प्रकाशन कार्य को फिर से शुरू करने की घोषणा* है। दोनों पर १८९९ की तारीख़ पड़ी है। यह वह समय था, जब "मार्क्सवाद के संकट" पर बहस चलते हुए काफ़ी वक़्त बीत चुका था। और हम पाते क्या हैं? पहली कृति में चाहे जितनी तलाश कीजिये, पर आपको न इस परिघटना का कोई ज़िक्र मिलेगा और न कोई निश्चित कथन कि इस सवाल पर यह नया मुखपत्र क्या रुख़ अपनानेवाला है। न तो इस कार्यक्रम में और न उन परिशिष्टों में, जो १९०१ में 'संघ' की तीसरी कांग्रेस[42] में स्वीकार किये गये थे (*दो कांग्रेसें*, पृ० १५-१८), सैद्धांतिक कार्यों तथा उन आवश्यक समस्याओं के बारे में, जो इस समय उसके सामने हैं, एक शब्द भी कहा गया है। सैद्धांतिक प्रश्नों ने यद्यपि इस काल में सारे संसार के सामाजिक-जनवादियों

---

* व्ला० इ० लेनिन, *ईस्क्रा के संपादकमंडल की घोषणा*। — सं०

Scanned by CamScanner

के दिमाग़ों में हलचल पैदा कर रखी थी, पर उसके बावजू
राबोचेये देलो का संपादकमंडल इन प्रश्नों की अवहेलना करत
रहा है।

इसके विपरीत, दूसरा ऐलान सबसे पहले यह कहता है कि
कुछ वर्षों से सिद्धांत के प्रश्नों में बहुत कम दिलचस्पी ली ज
रही है; वह ज़ोर देकर मांग करता है कि "सर्वहारा वर्
के क्रांतिकारी आंदोलन के सैद्धांतिक पहलू की ओर सतर्कता
के साथ ध्यान दिया जाये" और इस बात की अपील करता
है कि हमारे आंदोलन में पायी जानेवाली "बर्नस्टीनवादी तथा
अन्य क्रांति विरोधी प्रवृत्तियों की निर्मम आलोचना" की जाये।
ज़ार्या के अभी तक जो अंक प्रकाशित हुए हैं, उनसे पता चलता
है कि इस कार्यक्रम पर किस तरह अमल किया गया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विचारों में जड़ता आ जाने, आदि
के विरुद्ध जो लंबी-चौड़ी बातें की गयी हैं, उनके पीछे सैद्धांतिक
विचारों के विकास के प्रति उदासीनता तथा बेबसी छिपी हुई हैं।
रूसी सामाजिक-जनवादियों के उदाहरण से यह आम यूरोपीय बात
विशेष रूप से स्पष्ट हो जाती है (जिसे जर्मन मार्क्सवादियों ने
भी बहुत दिन हुए देख लिया था) कि जिस आलोचना की
स्वतंत्रता का इतना शोर है, उसका मतलब एक सिद्धांत की जगह
पर दूसरे सिद्धांत की स्थापना करना नहीं, बल्कि पूरे समेकित
तथा सुविचारित सिद्धांत से छुटकारा पाना होता है, उसका
मतलब होता है कहीं की ईंट और कहीं का रोड़ा जमा करके
कुनबा जोड़ना, उसका मतलब होता है सिद्धांतहीनता। जिसको
हमारे आंदोलन की वास्तविक स्थिति की थोड़ी-सी भी जानकारी
है, उसके लिए इस सत्य को न देखना असंभव है कि मार्क्सवाद
का व्यापक प्रसार होने के साथ-साथ आंदोलन का सैद्धांतिक
स्तर कुछ नीचा हो गया था। काफ़ी संख्या में ऐसे लोग, जिनको
बहुत कम सैद्धांतिक शिक्षा मिली थी या जिनको ज़रा भी शिक्षा
नहीं मिली थी, आंदोलन के व्यावहारिक महत्व तथा उसकी
व्यावहारिक सफलताओं को देखकर उसमें शामिल हो गये थे।
इससे स्पष्ट हो जाता है कि *राबोचेये देलो* कितनी
व्यवहार-अकुशलता का परिचय देता है, जब वह जीत की मुद्रा
के साथ मार्क्स का यह कथन उद्धृत करता है कि "वास्तविक
आंदोलन का प्रत्येक क़दम एक दर्जन कार्यक्रमों से अधिक महत्वपूर्ण

Scanned by CamScanner

होता है"[43]। सैद्धांतिक अव्यवस्था के काल में इन शब्दों को दुहराना किसी की अंत्येष्टि के समय शोक मनानेवालों से यह कहने के समान है कि "भगवान करे, यह दिन आपके लिए बार-बार आये!" इसके अलावा मार्क्स के ये शब्द गोथा कार्यक्रम[44] संबंधी उनके उस पत्र से लिये गये हैं, जिसमें उन्होंने सिद्धांतों की स्थापना करने में कहीं की ईंट और कहीं का रोड़ा जमा करने की प्रवृत्ति की **तीव्र निंदा की है।** मार्क्स ने पार्टी के नेताओं को लिखा था कि यदि आप लोग संयुक्त होना ही चाहते हैं, तो आंदोलन के व्यावहारिक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए समझौते कीजिये, पर उसूलों के सवाल पर कभी कोई सौदेबाज़ी मत होने दीजिये, सिद्धांतों के सवाल पर कोई "रिआयत" मत कीजिये। यह था मार्क्स का विचार, लेकिन फिर भी हमारे बीच ऐसे लोग हैं, जो उनके नाम की आड़ में सिद्धांत के महत्व को कम करने की कोशिश कर रहे हैं!

क्रांतिकारी सिद्धांत के बिना क्रांतिकारी आंदोलन असंभव है। ऐसे समय में, जब अवसरवाद के फ़ैशनेबुल प्रचार और व्यावहारिक काम के अत्यंत संकुचित रूपों के प्रति मोह का दामन-चोली का साथ है, इस विचार पर जितना भी ज़ोर दिया जाये थोड़ा है। रूसी सामाजिक-जनवादियों के लिए तो तीन अन्य कारणों से सिद्धांत का महत्व ख़ास तौर पर बढ़ जाता है, जिन्हें लोग अकसर भूल जाते हैं: पहला कारण यह है कि हमारी पार्टी अभी बन रही है, उसकी रूपरेखा अभी तैयार ही हो रही है और अभी तक वह क्रांतिकारी विचारधारा की उन दूसरी प्रवृत्तियों से निपट नहीं पायी है, जिनसे यह ख़तरा है कि वे आंदोलन को सही मार्ग से हटा देंगी। इसके विपरीत, अभी हाल में ही ग़ैर सामाजिक-जनवादी क्रांतिकारी प्रवृत्तियों में नये सिरे से जान आयी है (अक्सेलरोद ने बहुत पहले "अर्थवादियों" को आगाह किया था कि यह होनेवाला है)। ऐसी हालत में पहली दार देखने में एक "महत्वहीन" मालूम पड़नेवाली ग़लती आगे चलकर बहुत शोचनीय परिणाम पैदा कर सकती है, और केवल अत्यंत अदूरदर्शी लोग ही गुटों के झगड़ों को तथा विभिन्न प्रवृत्तियों में सख़्ती के साथ फ़र्क़ करने को असामयिक या बेकार की चीज़ समझ सकते हैं। रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन का आनेवाले एक बहुत ही लंबे काल में क्या भविष्य होगा, यह इस बात पर

Scanned by CamScanner

निर्भर कर सकता है कि आज उसमें कौन-सी "प्रवृत्ति" ज़ोर पकड़ती है।

दूसरे, सामाजिक-जनवादी आंदोलन सारतः एक अंतर्राष्ट्रीय आंदोलन है। इसका मतलब न सिर्फ़ यह है कि हमें राष्ट्रीय अंधराष्ट्रवाद का मुक़ाबला करना चाहिए, बल्कि इसका मतलब यह भी है कि एक नये देश में शुरू होनेवाला आंदोलन केवल उसी हालत में सफल हो सकता है, जब वह दूसरे देशों के अनुभव का उपयोग करे। इस अनुभव का उपयोग करने के लिए केवल उसकी जानकारी रखना या नवीनतम प्रस्तावों की नक़ल कर लेना ही काफ़ी नहीं है। इसके लिए ज़रूरत इस बात की है कि इस अनुभव को आलोचनात्मक दृष्टि से अंगीकार किया जाये और उसे स्वतंत्र रूप से परखा जाये। आधुनिक मज़दूर आंदोलन कितना बढ़ चुका है और कितनी शाखा-प्रशाखाओं में फैल चुका है, इसका जिसे थोड़ा भी ज्ञान है, वह यह समझ लेगा कि इस काम को पूरा करने के लिए सैद्धांतिक शक्तियों तथा राजनीतिक (और साथ ही क्रांतिकारी) अनुभव के कितने विशाल संचित कोष की आवश्यकता है।

तीसरे, रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन के सामने ऐसे राष्ट्रीय कार्यभार हैं, जैसे आज तक संसार की किसी समाजवादी पार्टी के सामने नहीं आये हैं। समस्त जनता को निरंकुशता के जुए से मुक्त करने के कार्यभार हम पर जिन राजनीतिक तथा संगठनात्मक ज़िम्मेदारियों को थोपते हैं, उनके बारे में कहने का मौक़ा हमें आगे मिलेगा। यहां हम केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि **हरावल दस्ते की भूमिका केवल वही पार्टी अदा कर सकती है, जो सबसे उन्नत सिद्धांत से निदेशित होती है।** इस बात का मतलब मूर्त रूप में समझने के लिए पाठक हर्ज़ेन, बेलींस्की, चेर्निशेव्स्की तथा गत शताब्दी के आठवें दशक के क्रांतिकारियों के उज्ज्वल नक्षत्रपुंज जैसे रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन के अग्रजों को याद करें; वे सोचें कि आज रूसी साहित्य सारे संसार के लिए कितना बड़ा महत्व प्राप्त करता जा रहा है, वे... लेकिन इतना काफ़ी है!

सामाजिक-जनवादी आंदोलन में सिद्धांत के महत्व के विषय पर हम एंगेल्स की वह बात उद्धृत करेंगे, जो उन्होंने १८७४ में कही थी। एंगेल्स की राय में सामाजिक-जनवाद के महान संघर्ष के दो

Scanned by CamScanner

रूप (राजनीतिक और आर्थिक) **नहीं** हैं, जैसा कि हम लोग समझने के आदी हैं, **बल्कि उसके तीन रूप हैं, और एंगेल्स सैद्धांतिक संघर्ष को पहले दो रूपों के जितना ही महत्व देते हैं।** उन्होंने व्यावहारिक तथा राजनीतिक दृष्टि से शक्तिशाली बन चुके जर्मन मज़दूर आंदोलन को जो परामर्श दिया था, वह हमारी आजकल की समस्याओं और बहस के सवालों के दृष्टिकोण से इतना शिक्षाप्रद है कि हमें आशा है कि एंगेल्स की पुस्तिका *Der deutsche Bauernkrieg** के प्राक्कथन से, जो बहुत दिनों से एक दुर्लभ पुस्तक बन गयी है, एक लंबा उद्धरण देने के लिए पाठक हमसे नाराज़ नहीं होंगे।

"जर्मन मज़दूरों को बाक़ी यूरोप के मज़दूरों के मुक़ाबले दो महत्वपूर्ण लाभ हैं। पहला यह है कि वे यूरोप के सबसे अधिक सिद्धांतवादी लोगों में से हैं और उन्होंने सिद्धांत की उस समझ को जीवित रखा है, जो जर्मनी के तथाकथित 'शिक्षित' वर्गों में लगभग एकदम मर चुकी है। संसार में अभी तक केवल एक वैज्ञानिक समाजवाद हुआ है, याने जर्मन वैज्ञानिक समाजवाद, और वह अभी अस्तित्व में न आता, यदि उसके पहले जर्मन दर्शन, विशेषकर हेगेल का दर्शन न पैदा हो चुका होता। मज़दूरों में यदि सिद्धांत की समझ न होती, तो यह वैज्ञानिक समाजवाद उनकी नस-नस में उस तरह कभी न समा पाता, जिस तरह वह आज समा गया है। यह कितना बेहिसाब लाभ है, इसका अंदाज़ा एक तरफ़ तो हर प्रकार के सिद्धांतों के प्रति उदासीनता से लगाया जा सकता है, जो इस बात का मुख्य कारण है कि अंग्रेज़ मज़दूरों का आंदोलन अलग-अलग यूनियनों के शानदार संगठन के बावजूद इतने धीरे-धीरे रेंगता हुआ बढ़ रहा है। दूसरी तरफ़, इसका अंदाज़ा उस भ्रम और उन गड़बड़ियों से भी लगाया जा सकता है, जिन्हें प्रूदोंवाद[45] ने अपने मूल रूप में फ़्रांसीसी और बेल्जियन मज़दूरों के बीच तथा बकूनिन द्वारा विकृत रूप में स्पेन और इटली के मज़दूरों के बीच फैला दिया था।

"दूसरा लाभ यह है कि यदि काल-क्रम के अनुसार देखा जाये, तो जर्मन लोग मज़दूरों के आंदोलन में सबसे आख़िर

---

* Dritter Abdruck. Leipzig, 1875. Verlag der Genossenschaftsbuchdruckerei (*जर्मनी में किसान युद्ध*। तीसरा संस्करण। लाइपज़िग, १८७५। सहकारी प्रकाशक।—**सं०**)।

Scanned by CamScanner

में शामिल हुए हैं। जिस प्रकार जर्मनी का सैद्धांतिक समाजवाद यह कभी नहीं भूल सकता कि वह सेंट-सीमोन, फ़ुरिये तथा ओवेन के कंधों पर टिका हुआ है—उन तीन विचारकों के कंधों पर, जिन्हें उनकी शिक्षाओं के तमाम ऊटपटांग विचारों और समस्त यूटोपियनवाद के बावजूद तमाम युगों के महान विचारकों में गिना जायेगा, जिनकी विलक्षण प्रतिभा ने ऐसी कितनी ही बातों को पहले से ही देख लिया था, जिनके औचित्य को अब हम वैज्ञानिक ढंग से प्रमाणित कर रहे हैं—उसी प्रकार जर्मन मज़दूरों के व्यावहारिक आंदोलन को भी यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि वह अंग्रेज़ और फ़्रांसीसी मज़दूरों के आंदोलनों के कंधों पर बढ़ा और विकसित हुआ है, कि इन आंदोलनों ने बड़ी क़ीमत देकर जो अनुभव प्राप्त किया था, जर्मन आंदोलन ने उससे केवल लाभ उठाया है, कि वह अब उनकी ग़लतियों से बच सका है, जिनसे बचना उस समय प्राय: असंभव ही था। ज़रा सोचिये कि यदि अंग्रेज़ ट्रेड-यूनियनों तथा फ़्रांसीसी मज़दूरों के राजनीतिक संघर्षों की पृष्ठभूमि हमारे पास न होती, ख़ास तौर पर यदि हमारे पास वह महान प्रेरणा न होती, जो हमें पेरिस कम्यून से प्राप्त हुई है, तो आज हम कहां होते?

"जर्मन मज़दूरों की तारीफ़ में यह कहना पड़ेगा कि अपनी विशेष परिस्थिति का लाभ उठाने में उन्होंने असाधारण समझ का परिचय दिया है। जबसे मज़दूर वर्ग का आंदोलन शुरू हुआ है, तबसे यह पहला मौका है जबकि संघर्ष उसके तीनों समन्वित तथा परस्पर संबंधित पहलुओं में, अर्थात सैद्धांतिक, राजनीतिक तथा व्यावहारिक-आर्थिक (पूंजीपतियों का प्रतिरोध) पहलुओं में बड़े सुनियोजित ढंग से चलाया जा रहा है। जर्मन आंदोलन का बल, उसकी अजेय शक्ति, यों कहिये, इसी चतुर्मुखी हमले में निहित है।

"एक ओर तो इस लाभदायक परिस्थिति के कारण और दूसरी ओर, अंग्रेज़ों के आंदोलन की ख़ास द्वीपीय विशेषताओं और फ़्रांसीसी आंदोलन के बलात् दमन के कारण फ़िलहाल जर्मन मज़दूरों को सर्वहारा वर्ग के संघर्ष की सबसे अगली पंक्ति में स्थान मिल गया है। घटना-चक्र उन्हें कितने दिन तक इस सम्मानप्रद स्थान पर रहने देगा, यह पहले से नहीं कहा जा सकता। परंतु हमें आशा करनी चाहिए कि जब तक वे इस स्थान

Scanned by CamScanner

पर रहेंगे, वे सौंपे गये दायित्वों की उचित रूप में पूर्ति करते रहेंगे। इसके लिए आवश्यक है कि संघर्ष और आंदोलन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने प्रयत्नों को दुगुना ज़ोरदार बनाया जाये। ख़ास तौर से नेताओं पर इसकी ज़िम्मेदारी है कि वे सभी सैद्धांतिक सवालों की दिन प्रति दिन अधिक स्पष्ट समझ प्राप्त करें, पुराने विश्वदृष्टिकोण से विरासत में मिली परंपरागत शब्दावलियों के प्रभाव से अपने को अधिकाधिक मुक्त करें और इस बात को सदा याद रखें कि समाजवाद चूंकि अब एक विज्ञान बन गया है, इसलिए ज़रूरी है कि एक विज्ञान के रूप में उसका उपयोग किया जाये, याने अध्ययन किया जाये। हमारा काम यह होगा कि इस प्रकार जो अधिकाधिक स्पष्ट समझ हमें प्राप्त हो, हम उसे और भी ज़्यादा जोश से आम मज़दूरों के बीच फैलायें और पार्टी तथा ट्रेड-यूनियन, दोनों के संगठनों को अधिकाधिक मज़बूत बनाते और जमाते चलें...

"...यदि जर्मन मज़दूर इस ढंग से बढ़ेंगे, तो वे आंदोलन की सबसे आगेवाली पंक्ति में तो नहीं होंगे—और इस आंदोलन के हित में यह क़तई ज़रूरी नहीं है कि किसी देश विशेष के मज़दूर उसकी अगली पंक्ति में हों—फिर भी संघर्ष के मैदान में उन्हें सदा सम्मान का स्थान मिलेगा, और जब कभी कोई कठिन और अप्रत्याशित परीक्षा की घड़ी आयेगी या असाधारण घटनाएं उनसे और अधिक साहस, दृढ़तर संकल्प तथा अधिक क्रियाशीलता की मांग करेंगी, तब वे अपने को संघर्ष में निहत्था नहीं पायेंगे।"

एंगेल्स के शब्द भविष्यवाणी जैसे सिद्ध हुए। चंद सालों के बाद ही जर्मन मज़दूरों के सामने समाजवादियों के विरुद्ध असाधारण क़ानून के रूप में बहुत कठिन परीक्षा की घड़ी आयी। और जर्मन मज़दूरों ने सचमुच पूरी तैयारी के साथ उसका मुक़ाबला किया और वे विजयी हुए।

रूसी सर्वहारा वर्ग को उससे कई गुना कठिन परीक्षाओं में से गुज़रना पड़ेगा, उसे एक ऐसे दैत्य से लड़ना पड़ेगा, जिसकी तुलना में एक संवैधानिक देश में समाजवादियों के विरुद्ध असाधारण क़ानून बौने जैसा ही लगता है। अब हमारे सामने इतिहास ने एक ऐसा तात्कालिक कार्यभार पेश कर दिया है, जो दूसरे किसी देश के सर्वहारा वर्ग के सभी **तात्कालिक** कार्यभारों

Scanned by CamScanner

में **सबसे अधिक क्रांतिकारी** है। इस कार्यभार की पूर्ति, यूरोप के ही नहीं, बल्कि (अब यह बात कही जा सकती है) एशिया के भी प्रतिक्रियावाद के सबसे शक्तिशाली गढ़ का विनाश रूसी मज़दूर वर्ग को अंतर्राष्ट्रीय क्रांतिकारी मज़दूर वर्ग का अग्रदल बना देगा। हमारे पूर्वज—पिछली शताब्दी के आठवें दशक के क्रांतिकारी—यह सम्मानित स्थान प्राप्त कर चुके हैं। यदि हम अपने आंदोलन में—जो उनके आंदोलन से हज़ार गुना अधिक व्यापक और गहरा है—वही संकल्प और उत्साह फूंक सकें, तो हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि हम भी वही सम्मानित स्थान प्राप्त करने में सफल होंगे।

२

जनता की स्वयंस्फूर्ति और सामाजिक-जनवादियों की चेतना

हम कह चुके हैं कि हमारा आंदोलन, जो पिछली शताब्दी के आठवें दशक के आंदोलन से कहीं अधिक व्यापक और गहरा है, उसी संकल्प और उत्साह से अनुप्राणित होना चाहिए, जिससे उस ज़माने का आंदोलन प्रेरित हुआ था। वस्तुतः, ऐसा लगता है कि अभी तक किसी ने इस बात में संदेह नहीं किया है कि वर्तमान आंदोलन की शक्ति जनता की (प्रधानतया औद्योगिक मज़दूर वर्ग की) जागृति में निहित है और उसकी कमज़ोरी यह है कि क्रांतिकारी नेताओं में चेतना तथा पहलक़दमी की कमी है।

परंतु अभी हाल में एक अत्यंत आश्चर्यजनक खोज हुई है, जो इस सवाल पर अभी तक जितने मत थे, उन सबका तख़्ता पलटने का ख़तरा पेश करती है। यह खोज *राबोचेये देलो* ने की है। *ईस्क्रा* और *ज़ार्या* के साथ बहस चलाते हुए *राबोचेये देलो* ने अपने को अलग-अलग सवालों पर एतराज़ करने तक ही सीमित नहीं रखा, बल्कि "आम मतभेदों" का एक और गहरा कारण बताने की भी कोशिश की। उसने कहा कि इन मतभेदों का कारण यह है कि "स्वयंस्फूर्त तथा सचेत ढंग से 'पद्धतिबद्ध' तत्वों के **तुलनात्मक** महत्व का अलग-अलग ढंग से मूल्यांकन किया

Scanned by CamScanner

जाता है।" *राबोचेये देलो* ने विपक्षियों पर आरोप लगाया है कि वे **"विकास के वस्तुगत अथवा स्वयंस्फूर्त तत्व के महत्व को कम करके आंकते हैं।"*** हम इसके जवाब में कहते हैं: यह प्रस्थापना इतनी महत्वपूर्ण है और वह रूस के सामाजिक-जनवादियों के बीच आजकल पाये जानेवाले सैद्धांतिक एवं राजनीतिक मतभेदों के सारतत्व पर प्रकाश डालकर उसे इतना स्पष्ट कर देती है कि यदि *ईस्क्रा* और *ज़ार्या* के साथ चलनेवाली बहस से इससे ज़्यादा और कोई नतीजा न भी निकलता कि *राबोचेये देलो* को इन "आम मतभेदों" की टोह लग गयी, तो भी अकेले इस परिणाम पर ही हमें बड़ा संतोष होता।

इसीलिए चेतना और स्वयंस्फूर्ति के बीच क्या संबंध है, यह सवाल सभी लोगों के लिए इतनी भारी दिलचस्पी का है और इसीलिए ज़रूरी है कि इस सवाल पर विस्तार से विचार किया जाये।

(क) स्वयंस्फूर्त उभार की शुरूआत

पिछले अध्याय में हम बता चुके हैं कि गत शताब्दी के अंतिम दशक के मध्य में रूस के पढ़े-लिखे नौजवान मार्क्सवाद के सिद्धांतों में कितनी **सार्विक** दिलचस्पी रखते थे। १८९६ में पीटर्सबर्ग के विख्यात औद्योगिक संग्राम[46] के बाद जो मज़दूर हड़तालें हुईं, उन्होंने भी इसी प्रकार सर्वव्यापी रूप धारण कर लिया था। इस बात ने कि ये हड़तालें सारे रूस में फैल गयीं, इस चीज़ को बिलकुल साफ़ कर दिया कि नये उठते हुए जन-आंदोलन की जड़ें कितनी गहरी थीं, और यदि हमें "स्वयंस्फूर्त तत्व" की चर्चा करनी है, तो ज़ाहिर है कि सबसे पहले हमें इस हड़ताल आंदोलन को स्वयंस्फूर्त समझना होगा। परंतु स्वयंस्फूर्ति भी कई प्रकार की होती है। पिछली शताब्दी के आठवें और सातवें दशकों में (और यहां तक कि उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्ध में भी) रूस में हड़तालें हुई थीं और उनके साथ मशीनों, आदि को "स्वयंस्फूर्त" ढंग से तोड़फोड़ डाला गया था। इन "उपद्रवों" की तुलना में दसवें दशक की हड़तालों को हम

* *राबोचेये देलो*, अंक १०, सितंबर, १९०१, पृ० १७ और १८। शब्दों पर ज़ोर *राबोचेये देलो* का है।

Scanned by CamScanner

"सचेतन" भी कह सकते हैं, क्योंकि उनसे ज़ाहिर होता था कि उस काल में मज़दूर आंदोलन ने कितनी ज़बर्दस्त प्रगति कर ली थी। इससे प्रकट होता है कि मूलतः "स्वयंस्फूर्त तत्व" चेतना के **बीज-रूप** के सिवा और कुछ नहीं है। अविकसित उपद्रव भी तो किसी हद तक चेतना के उभार की ओर इंगित करते ही थे: जो व्यवस्था मज़दूरों का उत्पीड़न कर रही थी, उसके स्थायित्व में उनका परंपरागत विश्वास नष्ट होने लगा था। मैं यह तो नहीं कहूंगा कि मज़दूर उस समय सामूहिक प्रतिरोध की आवश्यकता को समझने लगे थे, पर वे उसे महसूस ज़रूर करने लगे थे और अपने से बड़ों के सामने गुलामों की तरह सिर झुका देने की आदत को तो उन्होंने निश्चय ही त्याग दिया था। फिर भी यह उतना **संघर्ष** नहीं था, जितना कि निराशा और प्रतिहिंसा की अभिव्यक्ति। दसवें दशक में होनेवाली हड़तालों में चेतना की कौंधें अधिक स्पष्ट थीं: उनमें निश्चित मांगें पेश की जाती थीं, सोच-विचारकर हड़तालों का समय तय किया जाता था, दूसरी जगहों की ज्ञात घटनाओं तथा अन्य उदाहरणों पर बहस की जाती थी, इत्यादि। उपद्रव जबकि पीड़ितों के विद्रोह मात्र थे, सुनियोजित हड़तालें बीज-रूप में वर्ग संघर्ष का प्रतिनिधित्व करती थीं, पर केवल बीज-रूप में। अपने में ये हड़तालें महज़ ट्रेड-यूनियन संघर्षों की गिनती में आती थीं और अभी सामाजिक-जनवादी संघर्षों का रूप धारण नहीं कर पायी थीं। वे मज़दूरों और मालिकों में विरोधी भावना के जागरण का प्रमाण थीं, परंतु अभी मज़दूरों में यह चेतना नहीं पैदा हुई थी और न हो सकती थी कि आधुनिक काल की पूरी राजनीतिक तथा सामाजिक व्यवस्था और उनके हितों के बीच एक ऐसा विरोध है, जो कभी दूर नहीं हो सकता, मतलब यह कि अभी तक उनकी चेतना सामाजिक-जनवादी चेतना नहीं थी। और इस अर्थ में दसवें दशक की हड़तालें "उपद्रवों" की तुलना में बहुत उन्नति की सूचक होते हुए भी शुद्धतः एक स्वयंस्फूर्त आंदोलन ही रहीं।

हम कह चुके हैं कि मज़दूरों में सामाजिक-जनवादी चेतना का पैदा होना अभी **असंभव था।** यह चेतना उनमें बाहर से ही लायी जा सकती थी। सभी देशों का इतिहास यह बताता है कि मज़दूर वर्ग मात्र अपने प्रयत्नों से केवल ट्रेड-यूनियन चेतना पैदा करने में सफल होता है, याने यह धारणा पैदा कर पाता है कि

Scanned by CamScanner

यूनियनों के रूप में अपना संगठन करना, मालिकों से लड़ना और आवश्यक श्रम-क़ानून बनवाने के लिए सरकार पर दबाव डालना ज़रूरी है, इत्यादि।* परंतु समाजवाद का सिद्धांत उन दार्शनिक, ऐतिहासिक एवं आर्थिक सिद्धांतों से उत्पन्न हुआ है, जिनका संपत्तिवान वर्गों के शिक्षित प्रतिनिधियों, बुद्धिजीवियों ने प्रतिपादन किया था। आधुनिक वैज्ञानिक समाजवाद के संस्थापक, स्वयं मार्क्स और एंगेल्स, अपनी सामाजिक हैसियत की दृष्टि से, बुर्जुआ बुद्धिजीवी लोग थे। इसी प्रकार रूस में सामाजिक-जनवाद की सैद्धांतिक शिक्षा का जन्म मज़दूर वर्ग के आंदोलन के स्वयंस्फूर्त विकास से बिलकुल स्वतंत्र ढंग से हुआ है, उसका जन्म क्रांतिकारी-समाजवादी बुद्धिजीवियों में विचारों के विकास के स्वाभाविक और अवश्यंभावी परिणाम के रूप में हुआ। जिस ज़माने की हम चर्चा कर रहे हैं, याने दसवें दशक के मध्य में, यह शिक्षा न केवल 'श्रम-मुक्ति' दल का पूर्णतया स्थापित कार्यक्रम थी, बल्कि वह रूस के अधिकतर क्रांतिकारी युवकों को भी अपनी ओर खींच चुकी थी।

इस प्रकार हमारे यहां आम मज़दूरों की स्वयंस्फूर्त जागृति, सचेतन जीवन और सचेतन संघर्ष के प्रति जागृति और साथ ही मज़दूरों से संपर्क स्थापित करने के लिए उत्सुक और सामाजिक-जनवादी सिद्धांत से लैस क्रांतिकारी युवक समुदाय दोनों ही चीज़ें थीं। इस संबंध में यहां इस तथ्य को, जिसे आजकल लोग अकसर भुला देते हैं (और जिसकी जानकारी अपेक्षाकृत कम लोगों को है), बताना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है कि इस ज़माने के **पहले** सामाजिक-जनवादी **बड़ी लगन के साथ आर्थिक आंदोलन चलाते थे** (और इस काम में *आंदोलन के संबंध में* नामक पुस्तिका में, जो उस वक़्त तक हस्तलिखित रूप में ही मिलती थी, दी गयी उपयोगी हिदायतें उनका पथप्रदर्शन करती थीं)। परंतु वे इसे ही अपना एकमात्र कार्यभार नहीं समझते थे। इसके विपरीत, वे **शुरू से ही** आम तौर पर रूसी सामाजिक-जनवाद

---

* ट्रेड-यूनियनवाद हर प्रकार की "राजनीति" से, जैसा कुछ लोग सोचते हैं, एकदम अलग नहीं रहता। कुछ (पर सामाजिक-जनवादी नहीं) राजनीतिक प्रचार और संघर्ष ट्रेड-यूनियनें हमेशा करती रहती थीं। ट्रेड-यूनियन तथा सामाजिक-जनवादी राजनीति में क्या अंतर है, इसे हम अगले अध्याय में बतायेंगे।

Scanned by CamScanner

के व्यापकतम ऐतिहासिक कार्यभारों को और ख़ास तौर पर निरंकुश शासन का तख़्ता उलटने के कार्यभार को सामने लाते थे। उदाहरण के लिए, १८९५ के अंत में ही सामाजिक-जनवादियों के उस पीटर्सबर्गवाले दल ने, जिसने 'मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करनेवाली लीग'[47] की स्थापना की थी, *राबोचेये देलो* नामक समाचारपत्र का पहला अंक तैयार किया था। यह अंक प्रेस में छपने के लिए जाने ही वाला था कि ८ दिसंबर, १८९५ की रात को राजनीतिक पुलिस ने दल के एक सदस्य अनातोली अलेक्सान्द्रोविच वानेयेव* के घर पर छापा मारकर उसे ज़ब्त कर लिया, और इस प्रकार मूल *राबोचेये देलो* के नसीब में कभी प्रकाशित होना न लिखा था। इस अंक के संपादकीय लेख में (संभव है कि तीसेक बरस में कोई *रूस्स्काया स्तारिना*[48] पुलिस विभाग के अभिलेखागार से इस अंक को खोज निकाले) रूस में मज़दूर वर्ग के ऐतिहासिक कार्यभारों का वर्णन किया गया था, जिनमें राजनीतिक स्वतंत्रता की प्राप्ति को सबसे महत्वपूर्ण माना गया था। इस अंक में *हमारे मंत्रिमंडल के सदस्य क्या सोच रहे हैं?* शीर्षक एक लेख भी था, जो पुलिस द्वारा प्राथमिक शिक्षा समितियों के तोड़े जाने के बारे में था। इसके अलावा इसमें न केवल पीटर्सबर्ग, बल्कि रूस के अन्य भागों से आये कुछ समाचार भी थे (मिसाल के लिए, यारोस्लाव्ल गुबेर्निया में मज़दूरों के पीटे जाने का समाचार[49] था)। यदि हम ग़लती नहीं कर रहे हैं, तो दसवें दशक के रूसी सामाजिक-जनवादियों का यह "पहला प्रयत्न" कोई संकुचित, स्थानीय पत्र नहीं था और "अर्थवादी" पत्र तो निश्चय ही नहीं था, बल्कि वह एक ऐसा पत्र था, जो हड़ताल आंदोलन को निरंकुशता के विरुद्ध चलनेवाले क्रांतिकारी आंदोलन के साथ जोड़ना चाहता था और उन तमाम लोगों को सामाजिक-जनवादी आंदोलन की तरफ़ खींच लाना चाहता था, जिन्हें प्रतिक्रियावादी रूढ़िवाद की नीति सता

* अ० अ० वानेयेव को निर्वासन का दंड मिलने से पहले जेलख़ाने में एकांत कारावास के दौरान तपेदिक़ हो गया और १८९९ में पूर्वी साइबेरिया में इसी रोग से उनकी मृत्यु हो गयी। इसीलिए हमारे लिए उपरोक्त समाचार छापना संभव हुआ है, जिसकी सचाई की हम गारंटी करते हैं, क्योंकि यह सूचना हमें ऐसे व्यक्तियों से मिली है, जिनका अ० अ० वानेयेव से घनिष्ठ और प्रत्यक्ष परिचय था।

Scanned by CamScanner

रही थी। उस काल के आंदोलन की अवस्था का जिसे तनिक भी ज्ञान है, वह इस बात में शक नहीं कर सकता कि ऐसे समाचारपत्र का राजधानी के मज़दूरों और क्रांतिकारी बुद्धिजीवियों में हार्दिक स्वागत और काफ़ी प्रसार होता। किंतु इस प्रयास की असफलता से केवल यही प्रकट होता है कि उस काल के सामाजिक-जनवादी अपने क्रांतिकारी अनुभव तथा व्यावहारिक प्रशिक्षा में कमी के कारण समय की तात्कालिक ज़रूरतों को पूरा करने में असमर्थ थे। *संक्त-पेतेरबूर्गस्की रावोची लिस्तोक*[50] और ख़ास तौर से *रावोचाया गाज़ेता* तथा १८९८ के वसंत में स्थापित रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी के *घोषणापत्र*[51] के बारे में भी यही बात सच है। ज़ाहिर है कि प्रशिक्षा के इस अभाव के लिए उस काल के सामाजिक-जनवादियों को कोसने की बात हम सपने में भी नहीं सोचेंगे। परंतु उस आंदोलन के अनुभव से लाभ उठाने तथा उससे अमली सबक़ लेने के लिए ज़रूरी है कि हम अलग-अलग त्रुटियों के कारणों को और उनके महत्व को अच्छी तरह समझें। इसलिए इस बात को सिद्ध करने का बहुत महत्व है कि १८९५-१८९८ में जो सामाजिक-जनवादी काम कर रहे थे, उनमें से कुछ (शायद अधिकतर) उस समय भी, "स्वयंस्फूर्त" आंदोलन के बिलकुल शुरू में भी एक बहुत ही व्यापक कार्यक्रम तथा जुझारू कार्यनीति लेकर सामने आना संभव समझते थे और उनकी समझ बिलकुल सही थी।* अधिकतर क्रांतिकारियों में प्रशिक्षा का

* 'रूसी सामाजिक-जनवादी संगठनों के मुखपत्रों के नाम' अपने 'खत' में (*ईस्क्रा*, अंक १२) "अर्थवादियों" ने कहा है: "दसवें दशक के अंतिम दिनों की सामाजिक-जनवादियों की कार्रवाइयों के प्रति विरोधी रुख अपनाते समय *ईस्क्रा* यह भुला देता है कि उस समय ऐसी परिस्थितियों का अभाव था, जो छोटी-छोटी मांगों के लिए संघर्ष करने के अलावा किसी और तरह के काम की भी इजाजत देतीं।" ऊपर हमने जो तथ्य बताये हैं, उनसे सिद्ध हो जाता है कि यह कथन कि "ऐसी परिस्थितियों का अभाव था", **सत्य के बिलकुल विपरीत है।** दसवें दशक के अंतिम दिनों में ही नहीं, बल्कि बीच के दिनों में भी छोटी-छोटी मांगों के लिए लड़ने के अलावा **दूसरे** कामों के लिए भी जितनी परिस्थितियां आवश्यक थीं, वे सब मौजूद थीं, सारी परिस्थितियां मौजूद थीं—अलावा इसके कि नेताओं की पर्याप्त प्रशिक्षा नहीं हुई थी। हम लोगों में, सिद्धांतकारों में, नेताओं में पर्याप्त प्रशिक्षा के अभाव को साफ़-साफ़ स्वीकार करने के बजाय, "अर्थवादी" सारा दोष "परिस्थितियों के अभाव" और उस

Scanned by CamScanner

अभाव चूंकि एक स्वाभाविक बात थी, इसलिए उससे कोई विशेष भय पैदा नहीं हो सकता था। जो कार्यभार थे, उनकी चूंकि सही-सही व्याख्या हो चुकी थी, और चूंकि इन कार्यभारों को पूरा करने के लिए बार-बार प्रयत्न करने की शक्ति भी मौजूद थी, इसलिए अस्थायी असफलताएं बहुत बड़ी दुर्घटनाएं नहीं समझी जाती थीं। क्रांतिकारी अनुभव और संगठन की कला ऐसी चीज़ें हैं, जो प्राप्त की जा सकती हैं, बशर्ते कि उनको प्राप्त करने की इच्छा हो और बशर्ते कि हम अपनी त्रुटियों को पहचानते हों, जो क्रांतिकारी कार्य में आधी से ज़्यादा त्रुटियों को दूर कर देने के बराबर होता है!

परंतु उस काल में जो बदक़िस्मती बहुत बड़ी नहीं थी, वह बाद में सचमुच एक बड़ी बदक़िस्मती बन गयी, जबकि यह चेतना मंद पड़ने लगी (उपरोक्त दलों के कार्यकर्त्ताओं में यह चेतना बहुत जागरूक थी), जबकि ऐसे लोग—और यहां तक कि ऐसे सामाजिक-जनवादी संगठन भी—सामने आने लगे, जो त्रुटियों को गुण समझने को तैयार थे और जिन्होंने **स्वयंस्फूर्ति की पूजा करने और दासवत् गिड़गिड़ाने** के लिए एक **सैद्धांतिक** आधार तैयार करने की भी कोशिश की। अब समय आ गया है कि इस प्रवृत्ति से, जिसके सारतत्व को व्यक्त करने के लिए "अर्थवाद" का ग़लत और अत्यधिक संकुचित नाम दिया जाता है, निष्कर्ष निकाले जायें।

(ख) स्वयंस्फूर्ति की पूजा।
राबोचाया मीस्ल

इस तरह पूजा करने की साहित्यिक अभिव्यक्ति पर विचार करने से पहले हम निम्नलिखित लाक्षणिक तथ्य का ज़िक्र करना चाहेंगे (जो हमें उपरोक्त स्रोत से मिला है), जिससे उन परिस्थितियों पर कुछ प्रकाश पड़ता है, जिनमें पीटर्सबर्ग में काम

भौतिक वातावरण के प्रभावों के मत्थे डाल देना चाहते हैं, जो वह मार्ग निर्धारित करता है, जिससे आंदोलन को हटाना किसी भी सिद्धांतकार के लिए असंभव होता है। यह स्वयंस्फूर्ति की दासवत् पूजा करना नहीं, तो और क्या है? यह "सिद्धांतकारों" का स्वयं अपनी त्रुटियों के मोह में पड़ जाना नहीं, तो और क्या है?

Scanned by CamScanner

करनेवाले साथियों में रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन की दो भावी परस्पर विरोधी प्रवृत्तियां पैदा हुईं और बढ़ीं। १८९७ के शुरू में, अपनी जलावतनी के ठीक पहले अ० अ० वानेयेव और उनके कई दूसरे साथियों ने एक अनौपचारिक बैठक[52] में भाग लिया, जिसमें *मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करनेवाली लीग* के "पुराने" और "तरुण" सदस्य शामिल हुए थे। बैठक में बातचीत मुख्यतया संगठन के प्रश्न पर और विशेषकर *मज़दूर हितकारी कोष के नियमों* के बारे में हुई, जो अपने अंतिम रूप में *लिस्तोक 'राबोत्निका'*[53] के अंक ९-१० में पृष्ठ ४६ पर प्रकाशित हुए थे। "पुराने" सदस्यों में (जिन्हें उस समय पीटर्सबर्ग के सामाजिक-जनवादी मज़ाक़ में "दिसंबरवादी" कहते थे) और अनेक "तरुण" सदस्यों में (जिन्होंने बाद में *राबोचाया मीस्ल* निकालने में सक्रिय सहयोग दिया) तीव्र मतभेद तुरंत ही प्रकाश में आये और उनमें बहुत गरम बहस हुई। जिस रूप में नियम प्रकाशित हुए थे, उसी रूप में "तरुण" सदस्यों ने उनके मुख्य सिद्धांतों का समर्थन किया। "पुराने" सदस्यों ने कहा कि सबसे बड़ी आवश्यकता इस चीज़ की नहीं है, बल्कि इसकी है कि 'संघर्ष करनेवाली लीग' को क्रांतिकारियों के संगठन के रूप में मज़बूत किया जाये और विभिन्न मज़दूर हितकारी कोषों तथा विद्यार्थियों के बीच प्रचारमंडलों, आदि को इस संगठन के मातहत रखा जाये। कहने की आवश्यकता नहीं कि बहस में भाग लेनेवालों को इसका तनिक भी आभास न था कि ये मतभेद अलगाव की शुरूआत थे। इसके विपरीत वे तो यह समझते थे कि ये मतभेद इक्के-दुक्के और आकस्मिक ढंग के हैं। परंतु इस तथ्य से यह प्रकट होता है कि रूस में भी "अर्थवाद" "पुराने" सामाजिक-जनवादियों से लड़े बिना पैदा नहीं हुआ और न बढ़ा है (आजकल के "अर्थवादी" यह बात अकसर भूल जाते हैं)। और यदि इस संघर्ष के लगभग कोई चिह्न "दस्तावेज़ों" के रूप में नहीं रहते, तो इसका **एकमात्र** कारण यही है कि उस काल में जो छोटे-छोटे मंडल काम करते थे, उनमें भाग लेनेवाले लोग इतनी तेज़ी के साथ तबदील होते रहते थे कि उनके काम का सिलसिला कभी क्रमबद्ध नहीं हो पाता था और इसलिए उनमें जो मतभेद प्रकट होते थे, वे कभी दस्तावेज़ों में दर्ज नहीं किये जाते थे।

Scanned by CamScanner

जब *राबोचाया मीस्ल* का प्रकाशन आरंभ हुआ, तो "अर्थवाद" प्रकाश में आया, पर यह बात भी एकबारगी नहीं हो गयी। हमें अपने दिमाग़ में इस बात की एक ठोस तसवीर बनानी चाहिए कि उस ज़माने में अधिकतर रूसी मंडल किन परिस्थितियों में काम करते थे और कितने कम समय तक जीवित रह पाते थे (और यह तसवीर ठीक-ठीक केवल वे लोग ही बना सकते हैं जो उस अनुभव से गुज़र चुके हैं), ताकि हम समझ सकें कि विभिन्न शहरों में नयी प्रवृत्ति की सफलताओं या असफलताओं में आकस्मिकता का कितना हाथ था और कितने दिनों तक इस "नयी" प्रवृत्ति के समर्थकों और विरोधियों, दोनों ही के लिए यह निश्चित करना संभव नहीं हुआ—बल्कि सच तो यह है कि यह निश्चित करने का उनको कोई अवसर ही नहीं मिला—कि यह सचमुच कोई अलग प्रवृत्ति है या महज़ कुछ व्यक्तियों में शिक्षा का अभाव इस रूप में प्रकट हो रहा है। उदाहरण के लिए, *राबोचाया मीस्ल* की साइक्लोस्टाइल मशीन पर छपकर जो पहली प्रतियां निकलीं, वे अधिकतर सामाजिक-जनवादियों तक पहुंचीं ही नहीं, और हम यदि यहां पहले अंक के अग्रलेख की चर्चा कर पा रहे हैं, तो सिर्फ़ इसलिए कि उसे व० इ० के एक लेख[54] में पुन:प्रस्तुत किया गया था (देखें *लिस्तोक 'राबोत्निका'*, अंक ९-१०, पृ० ४७ और उसके बाद के पृष्ठ), जिन्होंने निश्चय ही नये पत्र का, जो उपरोक्त पत्रों और पत्रों की योजनाओं से बहुत भिन्न था, विवेक से ज़्यादा जोश से गुणगान करने में चूक नहीं की थी।* यह संपादकीय लेख चर्चा करने के योग्य है, क्योंकि वह *राबोचाया मीस्ल* और आम तौर पर "अर्थवाद" की **मूल भावना** को सशक्त रूप में व्यक्त करता है।

यह कहने के बाद कि नीली वरदीधारी लोग[55] मज़दूर आंदोलन की प्रगति को कभी नहीं रोक सकते, अग्रलेख में आगे

* यहां चलते-चलते यह भी बता दिया जाये कि नवंबर, १८९८ में, जब ख़ास तौर पर विदेशों में "अर्थवाद" ने एक पूर्णतया अलग प्रवृत्ति का रूप धारण कर लिया था, *राबोचाया मीस्ल* की तारीफ़ इन्हीं व० इ० नामक सज्जन ने की थी, जो उसके थोड़े ही दिन बाद *राबोचेये देलो* के संपादकमंडल के सदस्य हो गये थे। फिर भी *राबोचेये देलो* इस बात से इनकार करता था और आज भी करता है कि रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन में दो प्रवृत्तियां हैं!

Scanned by CamScanner

कहा गया है: "...मज़दूर आंदोलन की शक्ति का कारण यह है कि मज़दूर अंततः अपनी क़िस्मत को नेताओं के हाथों से ख़ुद अपने हाथों में ले रहे हैं" और आगे इस बुनियादी प्रस्थापना को और विस्तार के साथ विकसित किया गया है। सच बात यह थी कि नेताओं को (याने सामाजिक-जनवादियों को, 'संघर्ष करनेवाली लीग' के संगठनकर्त्ताओं को) पुलिस ने मज़दूरों के हाथों से ज़बरदस्ती छीन लिया था,* परंतु इस लेख में बात इस तरह पेश की गयी है, मानो मज़दूर इन नेताओं से लड़ रहे थे और अंत में वे उनके जुए से छुटकारा पाने में सफल हो गये! बजाय यह नारा बुलंद करने के कि आगे बढ़ो, क्रांतिकारी संगठन को मज़बूत बनाओ और राजनीतिक काम को और फैलाओ, **पीछे हटने** का, शुद्ध ट्रेड-यूनियन संघर्ष तक ही अपने को सीमित रखने का नारा बुलंद किया गया। ऐलान किया गया कि "राजनीतिक लक्ष्य को कभी न भूलने के प्रयत्न में आंदोलन का आर्थिक आधार पृष्ठभूमि में पड़ जाता है", कि मज़दूर आंदोलन का मुख्य नारा यह है कि "आर्थिक परिस्थितियों के लिए लड़ो" (!) या इससे भी बेहतर यह कि "मज़दूरों के साथी मज़दूर हैं"। घोषणा की गयी कि "आंदोलन के लिए" हड़ताल फ़ंड "दूसरे सौ संगठनों से अधिक मूल्यवान होते हैं" (अक्तूबर, १८९७ के इस वक्तव्य की उस बहस से तुलना कीजिये, जो "दिसंबरवादियों" तथा "तरुण" सदस्यों के बीच १८९७ के शुरू में हुई थी), इत्यादि, इत्यादि। अब ऐसे नारों का फ़ैशन हो गया, जैसे: हमें "सबसे अच्छे" मज़दूर पर नहीं, बल्कि आम, "औसत" मज़दूरों पर अपना ध्यान केंद्रित करना चाहिए, "राजनीति सदा आज्ञाकारी भाव से अर्थनीति के पीछे-पीछे चलती है,"** इत्यादि, इत्यादि, और ये नारे उन नौजवानों के विशाल

---

* यह बात बिलकुल सही है जैसा कि नीचे लिखी घटना से स्पष्ट हो जाता है। जब "दिसंबरवादियों" की गिरफ़्तारी के बाद श्लीसेलबुर्ग सड़क के मज़दूरों में यह ख़बर फैल गयी कि उनकी गिरफ़्तारी नि० नि० मिख़ाइलोव नामक दंत-चिकित्सक की मदद से हुई है, जो ख़ुफ़िया पुलिस का एजेंट था और जिसका संपर्क एक ऐसे दल से था, जो "दिसंबरवादियों" से संबंधित था, तो मज़दूरों को इतना ग़ुस्सा आया कि उन्होंने इस आदमी को मार डालने का फ़ैसला कर लिया।

** ये वाक्य *राबोचाया मीस्ल* के पहले अंक के उसी अग्रलेख से उद्धृत किये गये हैं। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि "रूसी

Scanned by CamScanner

समूह पर ज़बरदस्त प्रभाव डाल रहे थे, जो आंदोलन की ओर तो आकर्षित हो गये थे, पर जिन्हें प्राय: मार्क्सवाद के केवल ऐसे टुकड़ों की ही जानकारी थी, जिनका क़ानूनी ढंग के प्रकाशनों में प्रतिपादन किया जाता था।

चेतना पर पूरी तरह स्वयंस्फूर्ति ने क़ाबू पा लिया था—उन "सामाजिक-जनवादियों" की स्वयंस्फूर्ति ने, जो श्री व० व० के "विचारों" को दुहराते थे, उन मज़दूरों की स्वयंस्फूर्ति ने, जो इस तरह के तर्कों के चक्कर में आ गये थे, जैसे: एक रूबल में एक कोपेक की बढ़ती समाजवाद और राजनीति से अधिक मूल्य रखती है और मज़दूरों को "यह समझकर लड़ना चाहिए कि वे किसी भावी पीढ़ी के लिए नहीं, बल्कि स्वयं अपने लिए और अपने बच्चों के लिए लड़ रहे हैं" (*राबोचाया मीस्ल*, अंक १ का अग्रलेख)। इस तरह के नारे पश्चिमी यूरोप के उन बुर्जुआ लोगों के सदा प्रिय अस्त्र रहे हैं, जो समाजवाद से घृणा करने के कारण अंग्रेज़ ट्रेड-यूनियनवाद के पौधे को अपनी धरती पर (जर्मन "सामाजिक-राजनीतिज्ञ" हिर्श की भांति) लगाने की कोशिश कर रहे थे और जो मज़दूरों को उपदेश दे रहे थे कि वे शुद्ध ट्रेड-यूनियन संघर्ष* में भाग लेकर ही अपने लिए और अपने बच्चों के लिए लड़ेंगे, न कि किसी भावी समाजवादवाली किसी भावी पीढ़ी के लिए। और इन बुर्जुआ नारों को "रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन के व० व० जैसे महाशय"[56] दुहराने लगे हैं। यहां पर तीन बातों को नोट करना ज़रूरी है, क्योंकि **आजकल के** मतभेदों का और ज़्यादा विश्लेषण करने में हमें उनसे मदद मिलेगी।**

सामाजिक-जनवादी आंदोलन के इन व० व० जैसे महाशयों" में कितनी सैद्धांतिक शिक्षा थी, जो उस समय "आर्थिक भौतिकवाद" की भोंड़ी विकृतियों को दुहराने में व्यस्त थे, जबकि मार्क्सवादी असली श्री व० व० के ख़िलाफ़ साहित्यिक युद्ध चला रहे थे, जिन्हें राजनीति तथा अर्थनीति के संबंध के प्रश्न पर **इसी प्रकार** का मत रखने के कारण बहुत दिन पहले ही "प्रतिक्रियावादी हरकतों का उस्ताद" घोषित किया जा चुका था!

* जर्मनों के पास तो इसके लिए विशेष शब्द भी है: Nur-Gewerkschaftler, जिसका मतलब होता है "शुद्ध ट्रेड-यूनियन" संघर्ष का समर्थक।

** हमने **आजकल** शब्द पर उन लोगों के हितार्थ ज़ोर दिया है, जो बगुलाभगतों की तरह कंधे बिचकाकर कहते हैं: *राबोचाया मीस्ल* पर अब

Scanned by CamScanner

सबसे पहली बात यह है कि यदि, जैसा कि हमने ऊपर कहा है, चेतना पर स्वयंस्फूर्ति ने क़ाबू पा लिया है, तो यह बात भी **स्वयंस्फूर्त ढंग से** हुई है। हो सकता है कि सुनने में यह बात तुक मिलाने जैसी लगती हो, पर खेद के साथ कहना पड़ता है कि यह एक कटु सत्य है। एक-दूसरे के एकदम विरोधी दो दृष्टिकोणों के बीच खुला संघर्ष चले और उसमें एक दृष्टिकोण दूसरे पर विजय प्राप्त करे—उपरोक्त बात इस तरह नहीं, बल्कि इस तरह हुई कि "पुराने" क्रांतिकारियों की एक बढ़ती हुई संख्या को ज़ार की राजनीतिक पुलिस "छीन ले गयी" और उनकी जगह "रूसी सामाजिक-जनवाद के व० व० जैसे" अनेक "तरुण" लोग मैदान में आते गये। हर वह आदमी, जो—मैं नहीं कहता कि **आजकल के** रूसी आंदोलन में भाग ले चुका है, बल्कि कम से कम उसके वातावरण में सांस ले चुका है, वह अच्छी तरह जानता है कि यह बात सोलहों आने सच है। फिर भी यदि हम इस बात के लिए ज़ोर डाल रहे हैं कि पाठक इस सर्वविदित सत्य के बारे में अपना दिमाग़ बिलकुल साफ़ कर लें, और यदि उसे स्पष्ट करने के लिए हम *राबोचेये देलो* के प्रथम प्रकाशन का पूरा हाल और १८९७ के शुरू के दिनों में "पुराने" तथा "तरुण" सदस्यों की बहसों का पूरा विवरण पाठकों के सामने रख रहे हैं, तो इसका कारण यह है कि आम लोग (या बहुत ही कम उम्र के नौजवान) इस तथ्य को नहीं जानते और अपने "जनवाद" की शेख़ी बघारनेवाले कुछ लोग उनके इस अज्ञान से फ़ायदा उठाने की कोशिश कर रहे हैं। हम आगे फिर इस बात की चर्चा करेंगे।

दूसरे, "अर्थवाद" के सबसे पहले साहित्यिक प्रकाशन में ही हमें यह बहुत ही अजीबोग़रीब बात दिखायी पड़ती है, जो आजकल के सामाजिक-जनवादियों में पाये जानेवाले तमाम मतभेदों को समझने के लिए बहुत लाक्षणिक है, कि "शुद्ध मज़दूर आंदोलन" के समर्थक, सर्वहारा संघर्ष के साथ सबसे घनिष्ठतम और सबसे "सजीव" (*राबोचेये देलो* ने इसी शब्द का प्रयोग किया है) संपर्क

हमले करना बड़ा आसान है, पर क्या यह गड़े मुर्दे उखाड़ना नहीं है? इन बगुलाभगतों को हम जवाब देते हैं: Mutato nomine de te fabula narratur (नाम बदल दो, बस तुम्हारी कहानी बन जायेगी—**सं०**)। ये लोग पूरी तरह *राबोचाया मीस्ल* के विचारों के ग़ुलाम हैं—इसे हम आगे **साबित** करेंगे।

Scanned by CamScanner

के पुजारी, हर तरह के ग़ैर मज़दूर बुद्धिजीवियों के (भले ही वे समाजवादी बुद्धिजीवी हों) विरोधी जब अपने मत के समर्थन में बोलते हैं, तो उन्हें "शुद्ध ट्रेड-यूनियनवाद" के **बुर्जुआ** समर्थकों के तर्कों का सहारा लेना पड़ता है। इससे प्रकट होता है कि *राबोचाया मीस्ल* अनजाने में शुरू से ही *Credo* के कार्यक्रम पर अमल करने लगा था। इससे प्रकट होता है (जिस बात को *राबोचेये देलो* क़तई नहीं समझ सकता) कि जो कोई भी मज़दूर आंदोलन की स्वयंस्फूर्ति की पूजा करता है, जो कोई भी "सचेतन तत्व" की भूमिका को, सामाजिक-जनवाद की भूमिका को कम करके आंकता है, **वह चाहे ऐसा करना चाहता हो या न चाहता हो, पर असल में वह मज़दूरों पर बुर्जुआ विचारधारा के असर को मज़बूत करता है।** वे तमाम लोग, जो "विचारधारा के महत्व को बढ़ाकर आंकने"* और सचेतन तत्व की भूमिका की अतिरंजना करने,** आदि की बातें करते हैं, वे समझते हैं कि शुद्ध मज़दूर वर्ग का आंदोलन अपने लिए ख़ुद कोई स्वतंत्र विचारधारा विकसित कर सकता है और कर लेगा, बशर्ते कि मज़दूर "अपनी क़िस्मत को नेताओं के हाथों से छीनकर अपने हाथों में ले लें"। परंतु इस तरह सोचना बहुत बड़ी ग़लती है। ऊपर जो कुछ कहा जा चुका है, उसे पूरा करने के लिए हम नीचे आस्ट्रिया की सामाजिक-जनवादी पार्टी के नये कार्यक्रम के मसौदे पर कार्ल काउत्स्की की सर्वथा न्यायोचित तथा अत्यंत महत्वपूर्ण टिप्पणी को उद्धृत करेंगे:***

"हमारे बहुत-से संशोधनवादी आलोचकों का विश्वास है कि मार्क्स ने यह कहा था कि आर्थिक विकास तथा वर्ग संघर्ष न केवल समाजवादी उत्पादन की परिस्थितियों को ही पैदा कर देते हैं, बल्कि वे प्रत्यक्षत: उसकी आवश्यकता की **चेतना**" (शब्दों पर ज़ोर काउत्स्की ने दिया है) "को भी उत्पन्न कर देते हैं। और ये आलोचक ज़ोर देकर कहते हैं कि इंगलैंड, याने पूंजीवादी दृष्टि से सबसे ज़्यादा विकसित देश इस चेतना से दूसरे तमाम देशों की अपेक्षा अधिक दूर है। यदि कोई मसौदे के आधार पर

* *ईस्क्रा* के अंक १२ में "अर्थवादियों" का पत्र।

** *राबोचेये देलो*, अंक १०।

*** *Neue Zeit*,[57] १९०१-१९०२, खंड २०, प्रथम भाग, अंक ३, पृ० ७९। काउत्स्की ने समिति के जिस मसौदे का जिक्र किया है, वह कुछ संशोधनों के साथ (पिछले वर्ष के अंत में) वियेना कांग्रेस[58] में स्वीकार किया गया था।

Scanned by CamScanner

अपनी राय क़ायम करे, तो उसे लगेगा कि जिस समिति ने आस्ट्रियाई पार्टी कार्यक्रम तैयार किया है, वह भी इस तथाकथित कट्टर मार्क्सवादी मत को मानती है, जिसका ऊपर खंडन किया गया है। कार्यक्रम के मसौदे में कहा गया है: 'पूंजीवादी विकास से सर्वहारा वर्ग की संख्या में जितनी बढ़ती होती जाती है, उतना ही अधिक वह पूंजीवाद से लड़ने के लिए बाध्य और समर्थ होता जाता है। सर्वहारा वर्ग में यह चेतना पैदा हो जाती है' कि समाजवाद संभव और आवश्यक है। यहां ऐसा मालूम पड़ता है, मानो समाजवादी चेतना सर्वहारा के वर्ग संघर्ष का आवश्यक और प्रत्यक्ष परिणाम है। पर यह बिलकुल झूठी बात है। निस्संदेह, एक सिद्धांत के रूप में समाजवाद की जड़ें सर्वहारा के वर्ग संघर्ष की जड़ों की भांति आधुनिक आर्थिक संबंधों में हैं और सर्वहारा के वर्ग संघर्ष की तरह समाजवाद पूंजीवाद द्वारा पैदा की गयी जनता की ग़रीबी और बदहाली के ख़िलाफ़ चलनेवाले संघर्ष से उत्पन्न होता है। परंतु समाजवाद और वर्ग संघर्ष साथ-साथ ही उभरते हैं और एक-दूसरे में से नहीं निकलते, दोनों भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में से उत्पन्न होते हैं। आधुनिक समाजवादी चेतना केवल गहन वैज्ञानिक ज्ञान के आधार पर ही उत्पन्न हो सकती है। सच तो यह है कि समाजवादी उत्पादन के लिए आधुनिक आर्थिक विज्ञान उतना ही ज़रूरी है, जितनी कि आधुनिक प्रौद्योगिकी, और सर्वहारा वर्ग लाख चाहने पर भी इन दोनों चीज़ों में से कोई भी पैदा नहीं कर सकता; दोनों ही आधुनिक सामाजिक प्रक्रिया से पैदा होते हैं। विज्ञान का वाहक सर्वहारा वर्ग नहीं, बल्कि **बुर्जुआ बुद्धिजीवी** हैं" (शब्दों पर जोर काउत्स्की का है): "आधुनिक समाजवाद ने सबसे पहले इसी स्तर के चंद व्यक्तियों के दिमाग़ों में जन्म लिया था और इन लोगों ने ही बौद्धिक दृष्टि से अधिक विकसित कुछ मज़दूरों को उससे परिचित कराया था, और जहां कहीं परिस्थितियां इस बात की इजाज़त देती हैं, वहां ये मज़दूर समाजवाद को सर्वहारा के वर्ग संघर्ष में शामिल कर देते हैं। इस प्रकार समाजवादी चेतना एक ऐसी चीज़ है, जो सर्वहारा के वर्ग संघर्ष में बाहर से लायी जाती है (von aussen Hineingetragenes) और वह कोई ऐसी चीज़ नहीं है, जो इस संघर्ष के अंदर से स्वयंस्फूर्त रूप से (urwüchsig) पैदा हो जाती हो। अतएव पुराने हाइनफ़ेल्ड कार्यक्रम में बिलकुल ठीक कहा गया था कि सामाजिक-जनवाद का कर्तव्य यह है कि सर्वहारा के अंदर वह उसकी अपनी स्थिति की **चेतना** तथा उसके कर्त्तव्य की चेतना ला दे (शब्दशः—सर्वहारा को भर दे)। यदि वर्ग संघर्ष से यह चेतना अपने आप पैदा हो जाया करती, तो उसकी कोई ज़रूरत न थी। नये मसौदे ने पुराने कार्यक्रम की यह प्रस्थापना नक़ल कर ली और उसे उपरोक्त प्रस्थापना के साथ जोड़ दिया। लेकिन इससे विचारों का क्रम बिलकुल भंग हो गया..."

चूंकि स्वतंत्र, ख़ुद आम मज़दूरों द्वारा अपने आंदोलन की प्रक्रिया के दौरान विकसित विचारधारा का कोई सवाल ही पैदा

Scanned by CamScanner

नहीं होता,* इसलिए **केवल ये रास्ते ही** रह जाते हैं: या तो बुर्जुआ विचारधारा को चुना जाये या समाजवादी विचारधारा को। बीच का कोई रास्ता नहीं है (क्योंकि मानव-जाति ने कोई "तीसरी" विचारधारा पैदा नहीं की है, और इसके अलावा जो समाज वर्ग विरोधों के कारण बंटा हुआ है, उसमें कोई ग़ैर वर्गीय या वर्गोपरि विचारधारा कभी नहीं हो सकती)। अतएव समाजवादी विचारधारा के महत्व को **किसी भी** तरह कम करके आंकने, उससे **ज़रा भी मुंह मोड़ने** का मतलब बुर्जुआ विचारधारा को मज़बूत करना होता है। स्वयंस्फूर्ति की बहुत चर्चा हो रही है, परंतु मज़दूर आंदोलन के **स्वयंस्फूर्त** विकास का परिणाम यह होता है कि यह आंदोलन बुर्जुआ विचारधारा के अधीन हो जाता है, उसका विकास *Credo* के **कार्यक्रम के अनुसार ही** होने लगता है, क्योंकि स्वयंस्फूर्त मज़दूर आंदोलन ट्रेड-यूनियनवाद होता है, जर्मन भाषा में कहें तो वह Nur-Gewerkschaftlerei होता है, और ट्रेड-यूनियनवाद का मतलब मज़दूरों को विचारधारा के मामले में बुर्जुआ वर्ग का दास बनाकर रखना होता है। इसलिए हमारा कार्यभार, सामाजिक-जनवादियों का कार्यभार है **स्वयंस्फूर्ति**

---

* बेशक, इसका मतलब यह नहीं है कि इस प्रकार की विचारधारा पैदा करने में मज़दूर कोई भाग नहीं लेते। पर वे उसमें मज़दूरों की हैसियत से नहीं, बल्कि समाजवादी सिद्धांतकारों की हैसियत से, प्रूदों और वाइटलिंग जैसे लोगों की हैसियत से भाग लेते हैं, दूसरे शब्दों में, विचारधारा को उत्पन्न करने में मज़दूर केवल उसी समय और उसी हद तक भाग लेते हैं, जिस समय और जिस हद तक वे अपने युग के ज्ञान पर न्यूनाधिक रूप में अधिकार प्राप्त करने तथा उस ज्ञान को और विकसित करने में समर्थ होते हैं। और यदि हम चाहते हैं कि मज़दूरों में यह काम कर पाने की **समर्थता** बढ़े, तो हमें आम मज़दूरों की चेतना के स्तर को ऊपर उठाने की हर मुमकिन कोशिश करनी पड़ेगी; मज़दूरों को यह करना पड़ेगा कि वे अपने को **"मज़दूरों के साहित्य"** की बनावटी संकुचित सीमाओं में बंद न रखें और **आम साहित्य** पर अधिकाधिक अधिकार प्राप्त करना सीखें। "अपने को बंद न रखें" की जगह "उन्हें बंद न रखा जाये" कहना ज़्यादा सही होगा, क्योंकि मज़दूर खुद वह सारा साहित्य पढ़ते हैं और पढ़ना चाहते हैं, जो बुद्धिजीवियों के लिए लिखा जाता है और यह चंद (बुरे) बुद्धिजीवियों का ही विचार है कि कारखानों की हालत के बारे में दो-चार बातों को बता देना और पुरानी जानी हुई बातों को बार-बार दुहराते रहना ही "मज़दूरों के लिए" काफ़ी है।

Scanned by CamScanner

के ख़िलाफ़ लड़ना, मज़दूर वर्ग के आंदोलन के उस स्वयंस्फूर्त, ट्रेड-यूनियनवादी रुझान को, जो उसे बुर्जुआ वर्ग के साये में ले जाता है, **मोड़ना** और उसे क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद के साये में लाना। *ईस्क्रा* के अंक १२ में प्रकाशित "अर्थवादी" पत्र के लेखकों ने जो यह बयान दिया है कि अत्यंत तेजस्वी सिद्धांतकारों की कोशिशें भी मज़दूर आंदोलन को उस पथ से नहीं मोड़ सकतीं, जो भौतिक तत्वों तथा भौतिक वातावरण की परस्पर क्रिया से निश्चित होता है, इसका **पूर्ण रूप से यह मतलब** होता है कि इन सज्जनों ने **समाजवाद को त्याग दिया है,** और यदि इस पत्र के लेखकों में निडर होकर सुसंगत ढंग से और बात की तह में जाकर यह सोचने की शक्ति होती कि वे क्या कह रहे हैं, जैसे कि साहित्यिक तथा सार्वजनिक कार्य के क्षेत्र में प्रवेश करनेवाले हर व्यक्ति को करना चाहिए, तो उनके लिए इसके सिवा और कोई काम न बचता कि वे "अपनी खोखली छाती पर अपने बेकार हाथ बांधकर खड़े हो जायें" और... कार्य-क्षेत्र को या तो स्त्रूवे और प्रोकोपोविच जैसे उन महानुभावों के लिए, जो मज़दूर आंदोलन को "कम से कम विरोध के मार्ग पर", अर्थात बुर्जुआ ट्रेड-यूनियनवाद के मार्ग पर खींचे ले जा रहे हैं, या ज़ुबातोव जैसे लोगों के लिए ख़ाली छोड़ दें, जो मज़दूर आंदोलन को पादरियों और राजनीतिक पुलिसमैनों की "विचारधारा" के मार्ग पर ले जा रहे हैं।[59]

जर्मनी के उदाहरण को याद कीजिये। लासाल ने जर्मन मज़दूर आंदोलन की कौन-सी ऐतिहासिक सेवा की? यही कि उन्होंने आंदोलन को प्रगतिवादी ट्रेड-यूनियनवाद तथा सहकारितावाद के उस रास्ते से **मोड़ दिया,** जिस पर आंदोलन स्वयंस्फूर्त ढंग से **(और शुल्ज़े-डेलिच तथा उनकी तरह के अन्य लोगों की परम हितकारी सहायता से)** बढ़ रहा था। इस तरह के काम को पूरा करने के लिए स्वयंस्फूर्त तत्व को कम करके आंकने की, एक-प्रक्रिया-के-रूप-में-कार्यनीति की और तत्वों तथा वातावरण की परस्पर क्रिया, आदि की चर्चा करने के बजाय कुछ बिलकुल ही दूसरी बात करना ज़रूरी था। इसके लिए **स्वयंस्फूर्ति के ख़िलाफ़ ज़ोरदार संघर्ष** चलाना ज़रूरी था, और अनेक वर्षों तक ऐसा संघर्ष चलाने के परिणामस्वरूप ही, उदाहरणतः, बर्लिन की श्रमजीवी जनता को प्रगतिवादी दल के एक स्तंभ के बजाय

Scanned by CamScanner

सामाजिक-जनवाद का एक सर्वोत्तम गढ़ बनाना संभव हुआ था। और यह संघर्ष आज भी ख़त्म नहीं हुआ है (जैसा कि शायद वे लोग समझते हों, जो जर्मन आंदोलन का इतिहास प्रोकोपोविच से और उसका दर्शन स्त्रूवे से सीखते हैं)। जर्मन मज़दूर वर्ग आज भी, कहा जाये तो, कई विचारधाराओं में बंटा हुआ है। मज़दूरों का एक भाग कैथोलिक तथा राजतंत्रवादी यूनियनों में संगठित है, दूसरा भाग हिर्श और डुंकेर की ट्रेड-यूनियनों[60] में शामिल है, जिनकी स्थापना आंग्ल ट्रेड-यूनियनवाद के बुर्जुआ उपासकों ने की थी, और तीसरा हिस्सा सामाजिक-जनवादी यूनियनों में संगठित है। तीसरा हिस्सा संख्या में बाक़ी सबसे कहीं बड़ा है, परंतु सामाजिक-जनवादी विचारधारा यह प्रधानता दूसरी तमाम विचारधाराओं के विरुद्ध दृढ़तापूर्वक संघर्ष चलाकर ही प्राप्त कर सकी है और इसे क़ायम रख सकेगी।

पाठक प्रश्न करेंगे कि आख़िर स्वयंस्फूर्त आंदोलन का, कम से कम विरोध के मार्ग पर विकसित होनेवाले आंदोलन का यह परिणाम क्यों होता है कि बुर्जुआ विचारधारा का प्रभुत्व हो जाता है? इसका कारण केवल यह है कि उत्पत्ति की दृष्टि से बुर्जुआ विचारधारा समाजवादी विचारधारा से बहुत पुरानी है, वह अधिक विकसित है और उसे फैलने की **कहीं** अधिक सुविधाएं मिली हुई हैं।* तथा किसी देश का समाजवादी आंदोलन जितना नया हो, उसे ग़ैर समाजवादी विचारधाराओं की जड़ों को मज़बूत करने की तमाम कोशिशों के ख़िलाफ़ उतने ही ज़्यादा ज़ोर से लड़ना चाहिए

---

* अकसर कहा जाता है: मज़दूर वर्ग **स्वयंस्फूर्त ढंग से** समाजवाद की ओर खिंचता है। यह इस माने में बिलकुल सच है कि समाजवादी सिद्धांत अन्य सब सिद्धांतों से अधिक गहराई और सचाई के साथ मज़दूर वर्ग की ग़रीबी और तबाही के कारणों की व्याख्या करता है, और इस कारण से मज़दूर इतनी आसानी से उसे ग्रहण कर लेते हैं, **बशर्ते** कि समाजवादी सिद्धांत ख़ुद स्वयंस्फूर्ति के सामने सिर न झुका दे, बशर्ते कि वह स्वयंस्फूर्ति को अपने अधीन बना ले। आम तौर पर इस बात को पहले से ही निश्चित मान लिया जाता है, पर यह वही बात है, जिसे *राबोचेये देलो* भूल जाता है या तोड़-मरोड़कर पेश करता है। मज़दूर वर्ग स्वयंस्फूर्त ढंग से समाजवाद की ओर खिंचता है, परंतु फिर भी अधिक व्यापक रूप से फैली हुई बुर्जुआ विचारधारा (जो नाना रूपों में लगातार पुनर्जीवित की जाती रहती है) स्वयंस्फूर्त ढंग से अपने को मज़दूर वर्ग के ऊपर और भी ज़्यादा मात्रा में लादती रहती है।

Scanned by CamScanner

और उतनी ही अधिक दृढ़ता से मज़दूरों को उन बुरे सलाहकारों के ख़िलाफ़ आगाह करना चाहिए, जो "सचेतन तत्व का मूल्य अधिक आंकने", आदि के ख़िलाफ़ चिल्लाया करते हैं। *राबोचेये देलो* के सुर में सुर मिलाकर "अर्थवादी" पत्र के लेखक उस असहनशीलता की निंदा करते हैं, जो आंदोलन के बचपन का लक्षण है। हमारा जवाब यह है: हां, हमारा आंदोलन सचमुच अभी अपने बचपन में है और उसके अधिक तेज़ी से बढ़ने के लिए ज़रूरी है कि वह उन लोगों के प्रति असहनशीलता से ओत-प्रोत हो, जो स्वयंस्फूर्ति की पूजा करके आंदोलन का विकास रोके हुए हैं। इससे अधिक हास्यास्पद और हानिकारक कोई बात नहीं हो सकती कि हम "पुराने लोग" होने का ढोंग रचें और दावा करें कि हम संघर्ष की सभी निर्णायक अवस्थाओं का अनुभव बहुत पहले ही हासिल कर चुके हैं!

तीसरे, *राबोचाया मीस्ल* के पहले अंक से मालूम होता है कि "अर्थवाद" नाम (ज़ाहिर है कि हम इस नाम का प्रयोग करना बंद नहीं करेंगे, क्योंकि जैसे भी हो, अब यह चलन में आ गया है) नयी प्रवृत्ति का सारतत्व पूरी तरह प्रकट नहीं करता। *राबोचाया मीस्ल* राजनीतिक संघर्ष से एकदम इनकार नहीं करता: उसके पहले अंक में प्रकाशित मज़दूर हितकारी कोष के नियम में सरकार से लड़ने का भी ज़िक्र है। परंतु *राबोचाया मीस्ल* का विश्वास है कि "राजनीति सदा आज्ञाकारी भाव से अर्थनीति के पीछे-पीछे चलती है" (और *राबोचेये देलो* ने इसी प्रस्थापना का एक नया संस्करण दिया है; उसने अपने कार्यक्रम में यह कहा है कि "रूस में यह बात और किसी भी देश से अधिक सत्य है कि आर्थिक संघर्ष को राजनीतिक संघर्ष से **अलग नहीं** किया जा सकता")। **यदि राजनीति का मतलब सामाजिक-जनवादी राजनीति से है,** तो *राबोचाया मीस्ल* तथा *राबोचेये देलो* की ये प्रस्थापनाएं बिलकुल ग़लत हैं। जैसा कि हम पहले देख चुके हैं, मज़दूरों का आर्थिक संघर्ष बहुधा बुर्जुआ राजनीति, पादरीवादी राजनीति, आदि से जुड़ा हुआ होता है (हालांकि ऐसा नहीं है कि उसे इनसे अलग न किया जा सके)। यदि राजनीति का मतलब ट्रेड-यूनियन राजनीति से, याने सभी मज़दूरों की उस कोशिश से है, जिसका उद्देश्य सरकार पर दबाव डालकर अपनी स्थिति की कुछ लाक्षणिक विपदाओं को दूर करना

Scanned by CamScanner

होता है, पर जिससे मज़दूरों की यह स्थिति बदलती नहीं, यानी जिससे पूंजी की अधीनता से श्रम मुक्त नहीं होता, तो *राबोचेये देलो* की प्रस्थापनाएं सही हैं। ज़ाहिर है कि यह कोशिश सभी करते हैं, चाहे वे इंगलैंड के ट्रेड-यूनियनवादी हों, जो समाजवाद के विरोधी हैं, या कैथोलिक मज़दूर हों, या "ज़ुबातोव" यूनियनों के मज़दूर हों, आदि, आदि। राजनीति राजनीति में अंतर होता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि *राबोचाया मीस्ल* राजनीतिक संघर्ष से उतना इनकार नहीं करता, जितना वह इस संघर्ष की **स्वयंस्फूर्ति** की, उसमें वर्ग चेतना के अभाव की पूजा करता है। उस राजनीतिक संघर्ष को (यह कहना ज़्यादा सही होगा कि मज़दूरों की राजनीतिक आकांक्षाओं और मांगों को) पूरी तरह मानते हुए भी, जो ख़ुद मज़दूर आंदोलन में से स्वयंस्फूर्त ढंग से पैदा होता है, वह समाजवाद के आम कार्यभारों तथा रूस की वर्तमान परिस्थितियों के मुताबिक़ **स्वतंत्र रूप से** एक ठेठ **सामाजिक-जनवादी नीति निर्धारित करने** से सरासर इनकार करता है। आगे हम बतायेंगे कि *राबोचेये देलो* भी यही ग़लती करता है।

(ग) 'आत्म-मुक्ति दल'[61] और *राबोचेये देलो*

राबोचाया मीस्ल के पहले अंक के अग्रलेख की, जिसकी बहुत कम लोगों को जानकारी थी और जिसे अब लोग लगभग भूल गये हैं, हमने इतने विस्तार से इसलिए चर्चा की कि उसमें वह सामान्य धारा, जो बाद में असंख्य छोटे-छोटे झरनों के रूप में सामने आयी, सबसे पहले और सबसे स्पष्ट रूप में व्यक्त हुई थी। व० इ० ने *राबोचाया मीस्ल* के पहले अंक तथा अग्रलेख की प्रशंसा करते हुए जब यह मत प्रकट किया था कि वह लेख "एक उग्र और चुनौती देनेवाली शैली" में लिखा गया था (*लिस्तोक 'राबोत्निका'*, अंक ९-१०, पृ० ४९), तो बिलकुल ठीक ही कहा था। हर वह आदमी, जिसका अपना कुछ दृढ़ मत होता है और जो समझता है कि उसके पास कोई नयी बात कहने के लिए है, वह सदा "चुनौती देनेवाली शैली" में ही लिखता है और अपने विचार इस तरह प्रकट करता है, जिससे वे एकदम स्पष्ट हो जायें। "चुनौती" की शैली का अभाव केवल उन लोगों में होता है, जो दो नावों पर एक साथ चढ़ने की कोशिश करते हैं, केवल

Scanned by CamScanner

इसी प्रकार के लोगों में यह क्षमता होती है कि वे एक रोज़ तो *राबोचाया मीस्ल* की चुनौती की प्रशंसा करें और अगले रोज़ उसके विरोधियों के "विवादोत्तेजक चुनौती" की निंदा करने लगें।

हम *राबोचाया मीस्ल के विशेष परिशिष्ट* की यहां चर्चा नहीं करेंगे (हमें आगे चलकर कई बातों पर इस कृति का हवाला देना पड़ेगा, जो "अर्थवादियों" के विचारों को अधिक सुसंगत ढंग से व्यक्त करती है), बल्कि *मज़दूर आत्म-मुक्ति दल के घोषणापत्र* (मार्च, १८९९, जो लंदन के *नकानूने*[62] नामक पत्र के अंक ७ में, जुलाई, १८९९ में पुन: छपा था) का संक्षेप में ज़िक्र करेंगे। इस घोषणापत्र के लेखकों ने बिलकुल सही ही कहा है कि "रूस के मज़दूरों में **अभी जागृति पैदा हो ही रही है**, उन्होंने अभी-अभी सिर उठाकर अपने चारों ओर देखना शुरू ही किया है, और उन्हें संघर्ष का जो **पहला उपाय दिखायी पड़ता है, वे सहज भाव से उसी पर लपक पड़ते हैं।**" परंतु इससे ये लोग वही ग़लत निष्कर्ष निकाल लेते हैं, जो *राबोचाया मीस्ल* ने निकाला है, और यह भूलते हैं कि यह सहज भाव वह अचेतनता (स्वयंस्फूर्ति) है, जिसकी सहायता करना समाजवादियों का काम है, कि आधुनिक समाज में मज़दूरों को "संघर्ष का जो पहला उपाय दिखायी पड़ेगा", वह सदा ट्रेड-यूनियन संघर्ष का उपाय होगा, और "जो पहली विचारधारा दिखायी पड़ेगी", वह बुर्जुआ (ट्रेड-यूनियन) विचारधारा होगी। इसी तरह ये लेखक राजनीति से भी "इनकार" नहीं करते, वे तो श्री व० व० के सुर में सुर मिलाकर महज़ (महज़!) यह कहते हैं कि राजनीति ऊपरी ढांचा है और इसलिए "राजनीतिक आंदोलन को आर्थिक संघर्ष के हित में चलाये जानेवाले आंदोलन का ऊपरी ढांचा होना चाहिए, उसे इसी संघर्ष से पैदा होना चाहिए और उसके पीछे-पीछे चलना चाहिए।"

जहां तक *राबोचेये देलो* का संबंध है, उसने अपना जीवन "अर्थवादियों" की "हिमायत" से शुरू किया था। उसने अपने पहले ही अंक में (अंक १, पृ० १४१-१४२) एक **सफ़ेद झूठ** का सहारा लिया, जब उसने यह कहा कि वह "नहीं जानता कि अक्सेलरोद ने", जिन्होंने अपनी मशहूर पुस्तिका* में "अर्थवादियों"

---

* *रूसी सामाजिक-जनवादियों के वर्तमान कार्यभार और कार्यनीति*, जेनेवा, १८९८। १८९७ में *राबोचाया गाज़ेता* के नाम लिखे गये दो पत्र।

Scanned by CamScanner

को चेतावनी दी थी, "किन नौजवान साथियों का ज़िक्र किया है"। इस झूठ को लेकर *राबोचेये देलो* की अक्सेलरोद तथा प्लेख़ानोव से जो बहस छिड़ी, उसमें उसे यह मानना पड़ा कि "अपनी हैरानी की बात करके वह विदेशों में रहनेवाले सभी नौजवान सामाजिक-जनवादियों की इस अन्यायपूर्ण आरोप से रक्षा करना चाहता था" (अक्सेलरोद ने "अर्थवादियों" पर संकुचित दृष्टिकोण रखने का आरोप लगाया था)। बात यह है कि यह आरोप सर्वथा न्यायपूर्ण था, और *राबोचेये देलो* अच्छी तरह जानता है कि अन्य व्यक्तियों के साथ-साथ यह आरोप व० इ० पर भी लागू होता था, जो उसके संपादकीय विभाग के सदस्य थे। यहां चलते-चलते मैं यह भी कह दूं कि इस बहस के दौरान मेरी पुस्तिका *रूसी सामाजिक-जनवादियों के कार्यभार* का अक्सेलरोद ने जो मतलब लगाया था, वह बिलकुल सही था, और *राबोचेये देलो* ने जो मतलब लगाया था, वह बिलकुल ग़लत था। यह पुस्तिका १८९७ में, *राबोचाया मीस्ल* के निकलने के पहले लिखी गयी थी, जब मैं समझता था और सही समझता था कि सेंट पीटर्सबर्ग की 'संघर्ष करनेवाली लीग' की प्रारंभिक प्रवृत्ति, जिसका मैंने ऊपर वर्णन किया है, अधिक प्रभाव रखती है। और वह प्रवृत्ति उस समय सचमुच अधिक प्रभाव रखती थी, कम से कम १८९८ के मध्य तक। अतएव "अर्थवाद" के अस्तित्व और उसके ख़तरे को मिथ्या साबित करने की अपनी कोशिश में *राबोचेये देलो* को एक ऐसी पुस्तिका का ज़िक्र करने का कोई अधिकार न था, जो उस मत को प्रकट करती थी, जिसका स्थान सेंट पीटर्सबर्ग में १८९७-१८९८ में "अर्थवादी" मत ने ले लिया।*

---

* *राबोचेये देलो* ने जो पहला असत्य कहा था ("हम नहीं जानते कि पा० बो० अक्सेलरोद ने किन नौजवान साथियों का ज़िक्र किया है"), उसको निभाने में उसने एक दूसरा असत्य और कह डाला, जब उसने उत्तर में लिखा: "*रूसी सामाजिक-जनवादियों के कार्यभार* की समीक्षा प्रकाशित होने के उपरांत कुछ रूसी सामाजिक-जनवादियों में आर्थिक एकांगीपन की प्रवृत्तियां पैदा हो गयी हैं या न्यूनाधिक स्पष्टता के साथ उभर आयी हैं; ये प्रवृत्तियां हमारे आंदोलन की उस अवस्था की तुलना में, जिसका वर्णन *कार्यभार* में किया गया है, पीछे की ओर एक क़दम की द्योतक हैं" (पृ० ९)। १९०० में प्रकाशित उत्तर में यही कहा गया है। परंतु *राबोचेये देलो* का पहला अंक (जिसमें यह समीक्षा प्रकाशित हुई थी) अप्रैल, १८९९

Scanned by CamScanner

परंतु *राबोचेये देलो* ने न केवल "अर्थवादियों" की "हिमायत" की, बल्कि वह ख़ुद भी लगातार उनकी बुनियादी ग़लतियों को दुहराता रहा। इन ग़लतियों का कारण *राबोचेये देलो* के कार्यक्रम की निम्नलिखित प्रस्थापना की व्याख्या में अस्पष्टता है: "हमारे विचार से रूसी जीवन की सबसे महत्वपूर्ण परिघटना, जो 'संघ' के **कार्यभारों को** और उसकी प्रकाशन संबंधी कार्रवाइयों के स्वरूप को **निर्धारित करेगी** (शब्दों पर ज़ोर हमारा है), वह **जनव्यापी मज़दूर वर्ग-आंदोलन** है (शब्दों पर ज़ोर *राबोचेये देलो* ने दिया है), जो हाल के वर्षों में उठ खड़ा हुआ है।" जनव्यापी आंदोलन एक अत्यधिक महत्वपूर्ण परिघटना है, यह तथ्य विवाद से परे है। किंतु मूल प्रश्न यह है कि मज़दूर वर्ग के जनव्यापी आंदोलन द्वारा "कार्यभारों को निर्धारित करने" की बात का कोई क्या मतलब लगाये। उसके दो मतलब लगाये जा सकते हैं: **या तो** उसका यह मतलब है कि हमें इस आंदोलन की स्वयंस्फूर्ति की पूजा करनी चाहिए, याने सामाजिक-जनवादी संगठन की भूमिका केवल इतनी रह जानी चाहिए कि वह मज़दूर आंदोलन की चाटुकारी करे (*राबोचाया मीस्ल*, 'आत्म-मुक्ति दल' और दूसरे "अर्थवादी" इसका यही अर्थ लगाते हैं); **या** उसका मतलब यह है कि जनव्यापी आंदोलन हमारे सामने ऐसे **नये** सैद्धांतिक, राजनीतिक तथा संगठनात्मक कार्यभार पेश कर देता है, जो उनसे कहीं अधिक पेचीदे हैं, जिनसे हम जनव्यापी आंदोलन के उठने के पहलेवाले काल में संतोष कर सकते थे। *राबोचेये देलो* का झुकाव पहले मतलब की ओर था और अब भी है, क्योंकि उसने किन्हीं नये कार्यभारों के बारे में कोई निश्चित बात नहीं कही है, बल्कि वह सदा इस प्रकार तर्क करता रहा है, मानो यह "जनव्यापी आंदोलन" हमें उन कार्यभारों को साफ़-साफ़ समझने व पूरा करने

में प्रकाशित हुआ था। तो क्या "अर्थवाद" ने केवल १८९९ में जन्म लिया था? नहीं, १८९९ वह वर्ष है, जब **रूसी** सामाजिक-जनवादियों ने पहली बार "अर्थवाद" का विरोध किया था (*Credo* के ख़िलाफ़ विरोध)। "अर्थवाद" का जन्म १८९७ में हुआ था और *राबोचेये देलो* को यह बात अच्छी तरह मालूम है, क्योंकि व० इ० ने तो **नवंबर, १८९८ में** ही *राबोचाया मीस्ल* की प्रशंसा करनी शुरू कर दी थी (देखें *लिस्तोक 'राबोत्निका'*, अंक ९-१०)।

Scanned by CamScanner

की आवश्यकता से **मुक्त कर देता है**, जो इस आंदोलन के कार्य हमारे सामने आ गये हैं। यहां केवल इतना बता देना काफ़ी होगा कि *राबोचेये देलो* के मतानुसार निरंकुश शासन का तख़्ता उलटने को मज़दूर वर्ग के जनव्यापी आंदोलन के सामने **पहले** कार्यभार के रूप में पेश करना सर्वथा असंभव है, और उसने इस कार्यभार को (जनव्यापी आंदोलन के हित में) नीचे उतारकर तात्कालिक राजनीतिक मांगों की लड़ाई में बदल दिया है (उत्तर, पृ० २५)।

हम *राबोचेये देलो* के संपादक बो० क्रिचेव्स्की के *आंदोलन में आर्थिक तथा राजनीतिक संघर्ष* शीर्षक लेख की चर्चा नहीं करेंगे, जो उस पत्र के सातवें अंक में छपा है और जिसमें ये ही ग़लतियां* फिर दुहरायी गयी हैं, हम सीधे-सीधे *राबोचेये*

---

* उदाहरण के लिए, इस लेख में राजनीतिक संघर्ष में "मंज़िलोंवाला सिद्धांत" या "थोड़ा हटकर बढ़ने" का सिद्धांत इस रूप में व्यक्त किया गया है: "किंतु राजनीतिक मांगों को, जिनका स्वरूप सारे रूस में एक सा है, शुरू में" (यह अगस्त, १९०० में लिखा गया था!) "उस अनुभव के अनुरूप होना चाहिए, जो मज़दूरों के संबंधित स्तर ने" (जी हां!) "आर्थिक संघर्ष में प्राप्त किया है। केवल (!) इस अनुभव के आधार पर ही राजनीतिक आंदोलन शुरू किया जा सकता है और किया जाना चाहिए", इत्यादि (पृ० ११)। पृ० ४ पर लेखक उस चीज़ का विरोध करते हुए, जो उनके मतानुसार अर्थवादी अपसिद्धांत का सरासर निराधार आरोप है, बड़े दुखी भाव से कहते हैं: "सामाजिक-जनवादियों में कौन यह नहीं जानता कि मार्क्स और एंगेल्स के सिद्धांत के अनुसार विभिन्न वर्गों के आर्थिक हितों की इतिहास में निर्णायक भूमिका रहती है और **इसलिए** ख़ास तौर पर अपने आर्थिक हितों के लिए सर्वहारा वर्ग के संघर्ष को उसके वर्गीय विकास तथा मुक्ति संग्राम के लिए पहले दरजे का महत्व प्राप्त होना चाहिए?" (शब्द पर ज़ोर हमारा है)। यहां "इसलिए" शब्द का बिलकुल ग़लत प्रयोग किया गया है। आर्थिक हितों की निर्णायक भूमिका का यह **क़तई मतलब नहीं होता** कि आर्थिक (अर्थात ट्रेड-यूनियन) संघर्ष का महत्व सबसे अधिक है, क्योंकि वर्गों के सबसे आवश्यक, "निर्णायक" हित तो **केवल** आम तौर पर आमूल **राजनीतिक** परिवर्तनों से ही पूरे हो सकते हैं। सर्वहारा वर्ग का बुनियादी आर्थिक हित तो ख़ास तौर पर केवल ऐसी राजनीतिक क्रांति से ही पूरा हो सकता है, जो बुर्जुआ वर्ग के अधिनायकत्व के स्थान पर सर्वहारा वर्ग का अधिनायकत्व क़ायम करे। बो० क्रिचेव्स्की तो "रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन के व० व० जैसे महाशयों" के तर्कों को (अर्थात राजनीति सदा अर्थनीति के पीछे-पीछे चलती है, इत्यादि) और जर्मन सामाजिक-जनवाद के बर्नस्टीनवादियों के तर्कों को (उदाहरण के लिए, इस तरह के तर्कों के द्वारा वोल्टमान ने यह साबित करने की कोशिश की

Scanned by CamScanner

देलो के दसवें अंक पर आ जाते हैं। बो० क्रिचेव्स्की और मार्तीनोव ने *ज़ार्या* और *ईस्क्रा* पर जो बहुत-से एतराज़ किये हैं, निस्संदेह हम उनकी तफ़सील में नहीं जायेंगी। यहां हमारी दिलचस्पी केवल सिद्धांत संबंधी उस स्थिति में है, जो *राबोचेये देलो* के दसवें अंक में अपनायी गयी है। उदाहरण के लिए, हम इस अजीबोग़रीब बात पर विचार नहीं करेंगे कि नीचे दी गयी दो प्रस्थापनाओं में *राबोचेये देलो* को "मौलिक विरोध" दिखायी देता है।

पहली प्रस्थापना यह है:

"सामाजिक-जनवाद राजनीतिक संघर्ष के किसी एक पूर्वकल्पित तरीक़े या योजना द्वारा अपने हाथ नहीं बांधता, अपनी गतिविधियों को सीमित नहीं रखता। वह संघर्ष के सभी उपायों को, जिस हद तक कि वे पार्टी को उपलब्ध साधनों के अनुरूप हैं, मानता है," इत्यादि (*ईस्क्रा*, अंक १)।*

और दूसरी प्रस्थापना यह है:

"अगर सभी परिस्थितियों में और सभी अवधियों में राजनीतिक संघर्ष चलाने में कुशल कोई मज़बूत संगठन नहीं है, तो कार्रवाई की ऐसी व्यवस्थित, पक्के उसूलों से आलोकित तथा दृढ़तापूर्वक प्रचारित योजना का कोई सवाल ही नहीं पैदा होता, जो एकमात्र कार्यनीति कहलाने की हक़दार हो सके" (*ईस्क्रा*, अंक ४)।**

संघर्ष के सभी उपायों को, सभी योजनाओं और तरीक़ों को, जिस हद तक वे उपयोगी हों, **सिद्धांततः** स्वीकार करने और किसी **विशेष राजनीतिक परिस्थिति** में किसी कार्यनीति की बात कर सकने के लिए किसी योजना का सख़्ती से पालन करने की मांग के अंतर को न देखना चिकित्साविज्ञान द्वारा बीमारियों का इलाज करने के विभिन्न तरीक़ों को मान्यता देने और किसी ख़ास बीमारी के इलाज के लिए किसी निश्चित तरीक़े का उपयोग करने को एक ही बात समझने के बराबर है। परंतु असली बात यह

थी कि मज़दूरों को राजनीतिक क्रांति की बात सोचने के पहले सर्वप्रथम "आर्थिक शक्ति" प्राप्त करनी चाहिए) दुहराते हैं।

* देखें व्ला० इ० लेनिन, *हमारे आंदोलन के फ़ौरी कार्यभार*। — **सं०**

** देखें *कहां से शुरू करें?* — **सं०**

Scanned by CamScanner

है कि *राबोचेये देलो*, जो ख़ुद **उस** मर्ज़ से बीमार है, जिसे हमें स्वयंस्फूर्ति की पूजा करने का नाम दिया है, इस बीमारी के लिए "इलाज के किसी तरीक़े" को नहीं मानता। इसीलिए उसने यह विलक्षण आविष्कार किया है कि "योजना-के-रूप-में-कार्यनीति की बात मार्क्सवाद की मौलिक भावना के ख़िलाफ़ है" (अंक १०, पृ० १८), कि कार्यनीति तो **"पार्टी कार्यभारों के, जो पार्टी के विकास के साथ-साथ चलते हैं, विकास की प्रक्रिया है"** (पृ० ११, शब्दों पर ज़ोर *राबोचेये देलो* का है)। इस बात की पूरी संभावना है कि बाद का यह वाक्य एक प्रसिद्ध उक्ति और *राबोचेये देलो* की "प्रवृत्ति" का स्थायी स्मृतिस्तंभ बन जाये। **"किस ओर चलें?"**—इस प्रश्न के उत्तर में एक प्रमुख पत्र कहता है: जिस बिंदु से हम चले हैं, उसके तथा बाद में आनेवाले बिंदु के बीच के फ़ासले को बदलते जाने की प्रक्रिया को ही गति कहते हैं। फिर भी गूढ़ता का यह अनुपम उदाहरण केवल एक अनोखी वस्तु ही नहीं है (इतना ही होता, तो उसकी विस्तार से चर्चा करने की आवश्यकता नहीं होती), वह **एक पूरी प्रवृत्ति का कार्यक्रम है**, अर्थात यह वही कार्यक्रम है, जिसे र० म० ने (*राबोचाया मीस्ल के विशेष परिशिष्ट* में) इन शब्दों में व्यक्त किया था: वही संघर्ष वांछित है, जो संभव है, और संभव संघर्ष वह होता है, जो इस समय सचमुच चल रहा हो। यही सीमाहीन अवसरवाद की प्रवृत्ति है, जो अपने को चुपचाप स्वयंस्फूर्ति के अनुरूप ढाल लेता है।

"योजना-के-रूप-में-कार्यनीति की बात मार्क्सवाद की मौलिक भावना के ख़िलाफ़ है!" पर यह तो मार्क्सवाद पर लांछन है; यह मार्क्सवाद को उसी व्यंगचित्र में बदल देना है, जिसे नरोदवादियों[63] ने हमसे लड़ने के समय प्रदर्शित किया था। इसका मतलब है वर्ग सजग कार्यकर्त्ताओं की पहल तथा क्रियाशीलता के महत्व को कम कर देना, जबकि इसके विपरीत मार्क्सवाद सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ताओं की पहल तथा क्रियाशीलता को महान प्रेरणा देता है, उनके सामने व्यापकतम संभावनाओं के द्वार खोल देता है और (यदि ऐसा कहना उचित हो, तो) उन करोड़ों-करोड़ मज़दूरों की प्रचंड शक्ति को उनके हाथों में सौंप देता है, जो "स्वयंस्फूर्त ढंग से" संघर्ष के मैदान में उतर रहे हैं! अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक-जनवादी आंदोलन का पूरा इतिहास ऐसी

Scanned by CamScanner

योजनाओं से भरा पड़ा है, जिन्हें अलग-अलग समय पर अलग-अलग राजनीतिक नेताओं ने पेश किया था। इनमें से कुछ योजनाएं ऐसी थीं, जिनसे उनके रचयिताओं की दूरदर्शिता और उनके सही राजनीतिक तथा संगठनात्मक दृष्टिकोण की पुष्टि होती थी और कुछ ऐसी थीं, जो अपने रचयिताओं की अदूरदर्शिता तथा ग़लत राजनीतिक दृष्टिकोण को स्पष्ट कर देती थीं। जिस समय जर्मनी अपने इतिहास के एक सबसे महत्वपूर्ण मोड़ पर खड़ा था—जब साम्राज्य स्थापित हो चुका था, राइख़्सटाग का उद्घाटन हो गया था और सार्विक मताधिकार मिल चुका था—उस समय आम तौर पर लीबक्नेख़्त के पास सामाजिक-जनवादी नीति तथा काम के लिए एक योजना और श्वीट्ज़र के पास दूसरी योजना थी। जब जर्मनी के समाजवादियों के सर पर समाजवादियों के विरुद्ध असाधारण क़ानून का प्रहार हुआ, तो उस समय मोस्ट और हैस्सेलमैन्न के पास एक योजना थी—वे तुरंत हिंसा और आतंक से जवाब देने को तैयार थे और ह्योख़बर्ग, श्रम्म तथा (कुछ हद तक) बर्नस्टीन के पास दूसरी योजना थी: इन लोगों ने सामाजिक-जनवादियों को यह सीख देनी शुरू कर दी थी कि उन्होंने ग़लत ढंग की कटुता तथा क्रांतिकारीपन का प्रदर्शन करके इस क़ानून की मुसीबत ख़ुद मोल ली है और अब उन्हें अपने व्यवहार को सुधारकर क्षमा प्राप्त करनी चाहिए। तीसरी योजना उन लोगों ने रखी, जिन्होंने एक ग़ैर क़ानूनी अख़बार[64] निकालने की तैयारी की और बाद में उसे निकाला भी। इनमें से कौन-सा मार्ग चुना जाये, इस सवाल को लेकर जो संघर्ष चला, उसके समाप्त हो जाने के अनेक वर्षों बाद, जबकि ख़ुद इतिहास ने निर्वाचित पथ की उपयोगिता के बारे में अपना निर्णय दे दिया है, अब पार्टी के विकास के साथ-साथ विकास करनेवाले पार्टी-कार्यभारों के विषय में गूढ़ प्रवचन देना बहुत आसान है। परंतु जब चारों ओर मतिभ्रम* फैला हुआ है, जब रूसी "आलोचक" और "अर्थवादी" सामाजिक-जनवाद को ट्रेड-

* मेहरिंग ने अपनी पुस्तक *जर्मन सामाजिक-जनवाद का इतिहास* के उस अध्याय को Ein Jahr der Verwirrung *(मतिभ्रम का वर्ष)* शीर्षक दिया है, जिसमें उन्होंने यह बताया है कि नयी परिस्थिति के लिए अनुकूल "योजना-के-रूप-में-कार्यनीति" चुनने में समाजवादियों ने शुरू में कैसी हिचकिचाहट तथा संकल्प के अभाव का परिचय दिया था।

Scanned by CamScanner

यूनियनवाद के स्तर पर उतारे दे रहे हैं और जब आतंकवादी "योजना-के-रूप-में-कार्यनीति" को अपनाने के लिए ज़ोर दे रहे हैं, जिससे पुरानी ग़लतियां बनी ही रहती हैं, तो ऐसे समय में इस तरह के गूढ़ प्रवचन देने तक ही सीमित रहना वास्तव में स्वयं अपने को "विचार-दारिद्र्य का प्रमाणपत्र" दे देना है। जब अनेकों रूसी सामाजिक-जनवादियों में पहल और क्रियाशीलता का, "राजनीतिक प्रचार, आंदोलन और संगठन के विस्तार" का अभाव हो,* जब उनके पास क्रांतिकारी कार्य के अधिक व्यापक संगठन की कोई "योजनाएं" न हों, तो ऐसे समय में यह कहना कि "योजना-के-रूप-में-कार्यनीति की बात मार्क्सवाद की मौलिक भावना के ख़िलाफ़ है" न केवल सिद्धांत के क्षेत्र में मार्क्सवाद को विकृत करना है, बल्कि व्यवहार के क्षेत्र में भी **पार्टी को पीछे घसीटना** है।

राबोचेये देलो अपना उपदेश जारी रखते हुए कहता है:

"क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादी का कार्यभार केवल यह है कि वह अपने सचेतन काम से वस्तुगत विकास की गति को तेज़ कर दे, इस विकास को बंद कर देना या उसकी जगह ख़ुद अपनी मनोगत योजनाओं को स्थापित करना उसका काम नहीं है। *ईस्क्रा* सिद्धांततः यह सब जानता है, परंतु सचेतन क्रांतिकारी कार्य को मार्क्सवाद जो उचित ही रूप से बेहद महत्व देता है, उसके कारण *ईस्क्रा* कार्यनीति के मामले में अपने कठमुल्लेपन के वशीभूत होकर व्यवहारतः **विकास के वस्तुगत अथवा स्वयंस्फूर्त तत्व के महत्व को कम करके आंकने लगता है**" (पृ० १८)।

श्री व० व० और उनकी बिरादरी में सिद्धांतों के मामले में कैसा घोर मतिभ्रम फैला हुआ है, उसका यह एक और उदाहरण है। हम अपने दार्शनिक से प्रश्न करेंगे: मनोगत योजनाएं गढ़नेवाला वस्तुगत विकास के महत्व को कैसे "कम करके आंकता" है? ज़ाहिर है इस बात को भुलाकर कि यह वस्तुगत विकास कुछ वर्गों, स्तरों और दलों, कुछ जातियों या जाति-समूहों, आदि की रचना करता है या उन्हें मज़बूत बनाता है, उन्हें नष्ट कर देता है या कमज़ोर बना देता है, और इस प्रकार एक ख़ास तरह के अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक शक्ति-संयोजन को और क्रांतिकारी पार्टियों की स्थिति को निर्धारित करता है,

* *ईस्क्रा*, अंक १ का अग्रलेख (देखें व्ला० इ० लेनिन का *हमारे आंदोलन के फ़ौरी कार्यभार* शीर्षक लेख।—सं०)

Scanned by CamScanner

इत्यादि। यदि योजनाएं गढ़नेवाला यह करता है, तो उसका अपराध यह नहीं होगा कि उसने स्वयंस्फूर्त तत्व के महत्व को कम करके आंका, बल्कि इसके विपरीत उसका अपराध यह होगा कि उसने **सचेतन** तत्व के महत्व को कम करके आंका, क्योंकि उसमें वस्तुगत विकास को सही-सही समझने की "चेतना" नहीं थी। अतएव इस बात से ही स्वयंस्फूर्ति तथा चेतना के "**तुलनात्मक** (शब्द पर ज़ोर *रावोचेये देलो* का है) महत्व को आंकने" की "चेतना" का पूर्ण अभाव प्रकट होता है। यदि "विकास के स्वयंस्फूर्त तत्वों" को मनुष्य की समझ सचमुच पकड़ सकती है, तो उनके महत्व को ग़लत आंकना "सचेतन तत्व के महत्व को कम करके आंकने" के समान है। और यदि ये तत्व मनुष्य की समझ के बाहर हैं, तो हम उन्हें नहीं जानते और उनकी चर्चा नहीं कर सकते। फिर वो० क्रिचेव्स्की जिस बात को लेकर झगड़ रहे हैं? यदि वह समझते हैं कि *ईस्क्रा* की "मनोगत योजनाएं" ग़लत हैं (जैसा कि उनके बारे में वह सचमुच ऐलान करते हैं), तो उन्हें यह बताना चाहिए कि इन योजनाओं में किन वस्तुगत तथ्यों को भुला दिया गया है, और तब उन्हें *ईस्क्रा* पर यह आरोप लगाना चाहिए कि उसने इन तथ्यों को भुलाकर **चेतना के अभाव** का परिचय दिया है, या उन्हीं के शब्दों में, "सचेतन तत्व के महत्व को कम करके आंका" है। परंतु यदि वो० क्रिचेव्स्की मनोगत योजनाओं से नाराज़ तो होते हैं, लेकिन इसके सिवा और कोई तर्क नहीं पेश कर सकते कि इन योजनाओं में "स्वयंस्फूर्त तत्व के महत्व को कम करके आंका" गया है (!!), तो उससे केवल यह प्रकट होता है: कि (१) जहां तक सिद्धांत का सवाल है, मार्क्सवाद की उनकी समझ कारेयेव तथा मिखाइलोव्स्की जैसे लोगों की सी है, जिनका बेल्तोव[65] द्वारा काफ़ी मज़ाक़ उड़ाया जा चुका है, और (२) जहां तक व्यवहार का संबंध है, वह "विकास के उन स्वयंस्फूर्त तत्वों" से खुश हैं, जो हमारे क़ानूनी मार्क्सवादियों को बर्नस्टीनवाद की तरफ़ और हमारे सामाजिक-जनवादियों को "अर्थवाद" की तरफ़ घसीट ले गये हैं, और वह उन लोगों पर "गुस्से से आग-बबूला" हैं, जिन्होंने किसी भी क़ीमत पर रूसी सामाजिक-जनवाद को "स्वयंस्फूर्त" विकास के पथ से **हटाने** का पक्का इरादा कर लिया है।

और उसके बाद ऐसी बातें आती हैं, जिनसे सचमुच हंसी

Scanned by CamScanner

आती है। "जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानों के तमाम आविष्कारों के बावजूद मनुष्य अपनी वंशवृद्धि पुराने ढंग से ही करता रहेगा, उसी प्रकार सामाजिक विज्ञानों के तमाम आविष्कारों तथा सचेतन लड़ाकों की संख्या में बढ़ती के बावजूद नयी सामाजिक व्यवस्था भविष्य में भी **मुख्यतया** स्वयंस्फूर्त विस्फोटों के द्वारा ही जन्म लेगी" (पृ० १६)। जिस तरह हमारे बाप-दादा अपनी पुरानी अक़्ल के मुताबिक़ यह कहा करते थे कि "बच्चे तो कोई भी बेवक़ूफ़ पैदा कर सकता है," उसी तरह (नरसिस तुपोरीलोव[००] जैसे) "आधुनिक समाजवादी" अपनी अक़्ल के मुताबिक़ कहते हैं: नयी सामाजिक व्यवस्था के स्वयंस्फूर्त जन्म में तो कोई भी बेवक़ूफ़ भाग ले सकता है। हमारा भी यही मत है। इस प्रकार के भाग लेने के लिए तो बस इतना आवश्यक है कि जब "अर्थवाद" का बोलबाला हो, तब "अर्थवाद" के सामने, और जब आतंकवाद का बोलबाला हो, तब आतंकवाद के सामने **हथियार डाल दिये जायें।** मिसाल के लिए, इस साल के वसंत में, जब आतंकवाद के आकर्षण के ख़िलाफ़ लोगों को चेतावनी देना नितांत महत्वपूर्ण था, तब *राबोचेये देलो* ऐसी समस्या के सामने अचंभे में खड़ा रह गया, जो उसके लिए "नयी" थी। और अब छः महीने बाद, जब समस्या का सामयिक महत्व कम हो गया है, तब वह हमारे सामने यह घोषणा प्रस्तुत करता है कि "हमारे विचार से आतंकवादी भावनाओं के विकास को रोकना सामाजिक-जनवाद का काम नहीं है और न होना चाहिए" (*राबोचेये देलो*, अंक १०, पृ० २३) और साथ ही कांग्रेस का यह प्रस्ताव पेश करता है कि "कांग्रेस व्यवस्थित तथा आक्रामक आतंक को असामयिक समझती है" (*दो कांग्रेसें*, पृ० १८)। कितनी स्पष्ट और सुसंगत बात है! आतंक को रोकना ठीक नहीं है, पर उसे असामयिक घोषित करना सही है, और यह घोषणा इस तरह की गयी है, जिससे अव्यवस्थित तथा रक्षात्मक आतंक "प्रस्ताव" की लपेट में न आये। मानना पड़ेगा कि इस प्रकार का प्रस्ताव सरासर निरापद है तथा ग़लती न होने देने की पूरी गारंटी करता है, जैसे उस मनुष्य द्वारा ग़लती न किये जाने की गारंटी, जो इसलिए बोलता था कि कुछ न कहे! और इस तरह का प्रस्ताव तैयार करने के लिए बस इतना ही आवश्यक है कि सदा आंदोलन के **पीछे-पीछे** चलने की योग्यता हो। जब *राबोचेये*

Scanned by CamScanner

देलो ने आतंक के सवाल को एक नया सवाल कहा और *ईस्क्रा* ने उसका मज़ाक़ उड़ाया, तो *राबोचेये देलो* ने बड़े क्रोध के साथ *ईस्क्रा* पर यह आरोप लगाया कि वह "पार्टी संगठन पर कार्यनीति संबंधी प्रश्नों के कुछ ऐसे हल लादने का दुस्साहस कर रहा है, जिन्हें विदेशों में जा बसे लेखकों के एक दल ने पंद्रह बरस पहले पेश किया था" (पृ० २४)। सचमुच दुस्साहस है और सचेतन तत्व को कितना बढ़ा-चढ़ाकर आंकना है—पहले तो समस्याओं के सैद्धांतिक हल ढूंढ़ निकालना और फिर संगठन के, पार्टी के और जनता के सामने यह साबित करने की कोशिश करना कि ये हल सही हैं!* इससे यह कितना ज़्यादा बेहतर है कि हम पहले से रटी-रटायी बातें सदा दोहराते रहें और किसी पर कोई चीज़ "लादे" बिना हर "झोंके" के साथ—फिर चाहे वह "अर्थवाद" की दिशा में हो, या आतंकवाद की दिशा में—बहते जायें। *राबोचेये देलो* सांसारिक ज्ञान के इस महान सिद्धांत का भी सामान्यीकरण कर डालता है और *ईस्क्रा* तथा *ज़ार्या* पर आरोप लगाता है कि उन्होंने "अपने कार्यक्रम को आंदोलन के विरुद्ध ऐसे खड़ा कर रखा है, मानो वह आकारहीन अव्यवस्था पर मंडराती कोई प्रेतात्मा हो" (पृ० २९)। परंतु सामाजिक-जनवाद का इसके सिवा और क्या काम है कि वह एक ऐसी "प्रेतात्मा" बने, जो न सिर्फ़ स्वयंस्फूर्त आंदोलन पर मंडराये, बल्कि उस आंदोलन को **"अपने कार्यक्रम" के स्तर तक उठाने** का प्रयत्न करे? निश्चय ही, आंदोलन के **पीछे-पीछे** घिसटना उसका काम नहीं है: बेहतरीन सूरत में, उससे आंदोलन की कोई सेवा न होगी, बदतरीन सूरत में, उससे बहुत बड़ा नुक़सान हो जायेगा। किंतु *राबोचेये देलो* न केवल इस "प्रक्रिया-के-रूप-में-कार्यनीति" का अनुसरण करता है, बल्कि उसे ऊंचा उठाकर एक सिद्धांत के स्तर पर पहुंचा देता है, अतएव इस प्रवृत्ति को अवसरवाद नहीं, बल्कि **पुछल्लावाद** कहना ज़्यादा सही होगा। और हमें यह मानना पड़ेगा कि जिन लोगों ने सदा

---

* यहां यह भी नहीं भूलना चाहिए कि आतंक की समस्या का "सैद्धांतिक" हल निकालकर 'श्रम-मुक्ति' दल ने पुराने क्रांतिकारी आंदोलन के अनुभव का **सामान्यीकरण** किया था।

Scanned by CamScanner

आंदोलन के पीछे-पीछे चलने और उसका पुछल्ला बने रहने का फ़ैसला कर लिया है, वे "विकास के स्वयंस्फूर्त तत्व के महत्व को कम करके आंकने" की ग़लती कभी कर ही नहीं सकते।

* * *

इस प्रकार हमने देखा है कि रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन की "नयी प्रवृत्ति" की बुनियादी ग़लती यह है कि वह स्वयंस्फूर्ति की पूजा करती है और यह नहीं समझती कि जनता की स्वयंस्फूर्ति हम सामाजिक-जनवादियों से बहुत अधिक चेतना की मांग करती है। जनता में जितना ही अधिक स्वयंस्फूर्त उभार होता है, आंदोलन का विस्तार जितना ही बढ़ जाता है, सामाजिक-जनवाद के सैद्धांतिक, राजनीतिक तथा संगठनात्मक काम में चेतना की मांग उतनी ही अधिक अतुलनीय द्रुत गति से बढ़ जाती है।

रूस में जनता का स्वयंस्फूर्त उभार इतनी तेज़ी से आया (और अब भी आ रहा है) कि नौजवान सामाजिक-जनवादी इतने विराट कार्यभारों को निभाने के लिए अतत्पर साबित हुए। यह अतत्परता हम सब का, रूस के **सभी** सामाजिक-जनवादियों का दुर्भाग्य है। जनता का उभार निर्बाध गति से और लगातार बढ़ता गया, वह न केवल उन जगहों में जारी रहा, जहां वह शुरू हुआ था, बल्कि नयी जगहों में और आबादी के नये हिस्सों में फैल गया (मज़दूर आंदोलन के प्रभाववश विद्यार्थियों में, आम तौर पर बुद्धिजीवियों में और यहां तक कि किसानों में भी बेचैनी पैदा हो गयी)। परंतु क्रांतिकारी अपने "सिद्धांतों" और अपने काम—दोनों ही में इस उभार के **पीछे-पीछे घिसटते रहे;** वे एक ऐसा शृंखलाबद्ध संगठन नहीं बना सके, जिसका बीते हुए काल से अटूट संबंध हो और जो पूरे आंदोलन का **नेतृत्व करने** में सक्षम हो।

पहले अध्याय में हमने यह साबित किया था कि *राबोचेये देलो* हमारे सैद्धांतिक कामों के महत्व को कम करके आंकता है और "आलोचना की स्वतंत्रता" के फ़ैशनेबुल नारे को बड़े "स्वयंस्फूर्त ढंग से" दुहराता रहता है: जो लोग इस नारे की रट लगाते थे, उनमें इस "चेतना" का अभाव था कि जर्मनी तथा रूस में अवसरवादी "आलोचकों" तथा क्रांतिकारियों की स्थिति में कितना ज़मीन-आसमान का अंतर है।

Scanned by CamScanner

आनेवाले अध्यायों में हम यह बतायेंगे कि स्वयंस्फूर्ति की पूजा करने की यह भावना सामाजिक-जनवादी आंदोलन के राजनीतिक कार्यभारों तथा संगठनात्मक काम के क्षेत्र में किस तरह प्रकट हुई।

३

ट्रेड-यूनियनवादी और सामाजिक-जनवादी राजनीति

एक बार फिर शुरूआत हम *राबोचेये देलो* की प्रशंसा से करेंगे। *ईस्क्रा* के साथ अपने मतभेदों के विषय में मार्तीनोव ने *राबोचेये देलो* के दसवें अंक में जो लेख लिखा है, उसे उन्होंने यह शीर्षक दिया है: *भंडाफोड़ करनेवाला साहित्य और सर्वहारा संघर्ष*। इन मतभेदों का सारतत्व उन्होंने इस तरह पेश किया है: "हम अपने को केवल उस व्यवस्था का भंडाफोड़ करने तक ही सीमित नहीं रख सकते, जो उसके" (मज़दूर वर्ग की पार्टी के) "विकास के रास्ते में खड़ी है। हमें सर्वहारा के तात्कालिक तथा मौजूदा हितों के प्रति प्रतिक्रियाशील होना चाहिए" (पृ० ६३)। "... *ईस्क्रा*... वास्तव में क्रांतिकारी विरोध-पक्ष का मुखपत्र है, जो हमारे देश की वर्तमान व्यवस्था का, ख़ासकर राजनीतिक व्यवस्था का भंडाफोड़ करता है... लेकिन हम सर्वहारा संघर्ष के साथ घनिष्ठ और सप्राण संपर्क क़ायम रखते हुए मज़दूर वर्ग के हित के लिए काम करते हैं और करते रहेंगे" (पृ० ६३)। इस सूत्र के लिए हम मार्तीनोव के प्रति कृतज्ञता प्रकट किये बिना नहीं रह सकते। यह सूत्र सभी के लिए बहुत दिलचस्पी रखता है, क्योंकि वह न केवल *राबोचेये देलो* के साथ हमारे मतभेदों को, बल्कि राजनीतिक संघर्ष के बारे में हम लोगों और "अर्थवादियों" के बीच मोटे तौर पर सभी मतभेदों को भी सार रूप में अपने अंदर समेट लेता है। हम पहले बता चुके हैं कि "अर्थवादी" लोग "राजनीति" को एकदम नहीं त्याग देते, बल्कि वे सदा राजनीति की सामाजिक-जनवादी समझ की ओर से ट्रेड-यूनियनवादी समझ की ओर भटकते रहते हैं। मार्तीनोव भी ठीक इसी तरह भटकते हैं, और इसलिए हम उनके मत को इस प्रश्न पर अर्थवादी ग़लती का **नमूना** मानकर चलेंगे। जैसा कि हम आगे सिद्ध करने की कोशिश करेंगे, *राबोचाया मीस्ल के विशेष परिशिष्ट* के लेखकों को, या

Scanned by CamScanner

'आत्म-मुक्ति दल' द्वारा प्रकाशित घोषणापत्र के रचयिताओं को, या *ईस्क्रा* के १२ वें अंक में छपे "अर्थवादी" पत्र के लिखनेवालों को इस चुनाव के बारे में शिकायत करने का कोई अधिकार नहीं होगा।

(क) राजनीतिक आंदोलन और अर्थवादियों द्वारा उसे संकुचित किया जाना

हर आदमी जानता है कि रूसी मज़दूरों के आर्थिक* संघर्ष में जो व्यापक फैलाव और मज़बूती आयी है, वह आर्थिक (कारख़ानों से संबद्ध और व्यवसायगत) दशा का भंडाफोड़ करनेवाले "साहित्य" की रचना के साथ-साथ आयी है। "परचों" में ज़्यादातर कारख़ानों की हालत का भंडाफोड़ रहता था, और शीघ्र ही मज़दूरों में इस तरह के भंडाफोड़ की धुन पैदा हो गयी। जैसे ही मज़दूरों को यह महसूस हुआ कि सामाजिक-जनवादी मंडल उन्हें एक नयी तरह के परचे देना चाहते हैं और दे सकते हैं, जिनमें ग़रीबी से ग्रस्त उनके जीवन के बारे में, उनकी कमरतोड़ मेहनत और अधिकारों के अभाव के विषय में पूरा सत्य लिखा रहेगा, वैसे ही कारख़ानों और फ़ैक्टरियों से पत्रों का तांता बंध गया। इस "भंडाफोड़ करनेवाले साहित्य" से न सिर्फ़ उस ख़ास कारख़ाने में, जिसकी हालत का उसमें भंडाफोड़ किया गया था, बल्कि जहां कहीं भी उस भंडाफोड़ की ख़बर पहुंचती थी, उन तमाम कारख़ानों में भी सनसनी पैदा हो जाती थी। चूंकि अलग-अलग उद्योगों तथा अलग-अलग पेशों के मज़दूरों की आवश्यकताएं और विपत्तियां मोटे तौर पर एकसमान ही हैं, इसलिए "मज़दूरों की ज़िंदगी के बारे में सचाई" **सभी** मज़दूरों को आंदोलित करती थी। सबसे ज़्यादा पिछड़े मज़दूरों में भी यह जोश पैदा हो गया कि उनकी बात भी "छापे में आये" — उनमें लूट और

* ग़लतफ़हमी से बचने के लिए यहां यह बता देना आवश्यक है कि यहां पर, और इस पुस्तिका में हर जगह, आर्थिक संघर्ष से हमारा मतलब (इस शब्द के उस अर्थ के अनुसार, जो हम लोगों के बीच स्वीकृत है) उस "व्यावहारिक आर्थिक संघर्ष" से है, जिसे एंगेल्स ने ऊपर उद्धृत अंश में "पूंजीपतियों का विरोध" कहा है और जो स्वतंत्र देशों में व्यावसायिक, श्रमिक-संघीय अथवा ट्रेड-यूनियन संघर्ष कहलाता है।

Scanned by CamScanner

ज़ुल्म की बुनियाद पर खड़ी आज की पूरी सामाजिक व्यवस्था के ख़िलाफ़ युद्ध के इस प्रारंभिक रूप की पवित्र भावना फैल गयी। और ज़्यादातर उदाहरणों में ये "परचे" सचमुच युद्ध की घोषणा के समान थे, क्योंकि उनके द्वारा जो भंडाफोड़ होता था, वह मज़दूरों को बहुत उत्तेजित करता था, उनसे मज़दूरों के बीच सबसे ज़्यादा स्पष्ट बुराइयों को दूर करने की संयुक्त मांगें पैदा होती थीं और इन मांगों के समर्थन में हड़तालें करने की तत्परता होती थी। ख़ुद मालिकों को आख़िरकार युद्ध की घोषणा के रूप में इन परचों का महत्व स्वीकार करना पड़ता था, यहां तक कि अकसर वे संघर्ष शुरू होने का भी इंतज़ार नहीं करते थे। जैसा कि हमेशा होता है, भंडाफोड़ करनेवाले परचों का प्रकाशन ही उनको कारगर बना देता था और वे एक बड़े नैतिक बल का महत्व प्राप्त कर लेते थे। कई बार तो एक परचे का प्रकाशन ही काफ़ी साबित हुआ और उसी से मज़दूरों की सारी या थोड़ी मांगें पूरी हो गयीं। सारांश यह कि आर्थिक (कारख़ानों की हालत का) भंडाफोड़ करनेवाले परचे आर्थिक संघर्ष का एक बड़ा साधन थे और अब भी हैं। और जब तक पूंजीवाद मौजूद है, जो मज़दूरों को अपनी हिफ़ाज़त के वास्ते लड़ने के लिए मजबूर करता है, तब तक उनका यह महत्व बना रहेगा। यूरोप के सबसे अधिक उन्नत देशों में हम आज भी यह देखते हैं कि जब किसी पिछड़े हुए "व्यवसाय" या घरेलू उद्योग की किसी भूली हुई शाखा में बुराइयों का भंडाफोड़ किया जाता है, तो वह कार्य वर्ग चेतना के उदय, ट्रेड-यूनियन संघर्ष की शुरूआत तथा समाजवाद के प्रसार का प्रस्थान-बिंदु बन जाता है।*

* इस अध्याय में हम केवल **राजनीतिक** संघर्ष की, उसके अधिक व्यापक या अधिक संकुचित अर्थ में, चर्चा कर रहे हैं। इसलिए यहां पर हम *ईस्क्रा* के विरुद्ध *राबोचेये देलो* के इस आरोप का उल्लेख केवल लगे हाथों और एक अजीब बात के रूप में करेंगे कि आर्थिक संघर्ष के मामले में वह "हद से ज़्यादा ज़ब्त" से काम लेता है (*दो कांग्रेसें*, पृ० २७; मार्तीनोव ने इस बात की अपनी पुस्तिका *सामाजिक-जनवाद और मज़दूर वर्ग* में विस्तारपूर्वक व्याख्या की)। जो लोग यह आरोप लगाते हैं, वे यदि हंड्रेडवेटों में या काग़ज़ के रीमों में यह हिसाब लगाते (जिस तरह हिसाब लगाने का उनको इतना शौक़ है) कि *ईस्क्रा* के औद्योगिक स्तंभ में एक साल के अंदर आर्थिक संघर्ष के बारे में कितना कहा गया है और उसकी तुलना इससे करते कि *राबोचेये देलो* तथा *राबोचाया मीस्ल*, दोनों

Scanned by CamScanner

रूस के अधिकतर सामाजिक-जनवादी इधर कुछ समय से कारख़ानों की हालत का भंडाफोड़ करने के काम को संगठित करने में पूरी तरह डूबे हुए हैं। *राबोचाया मीस्ल* की याद ताज़ा करते ही यह बात साफ़ हो जायेगी कि वे इस काम में किस हद तक डूब गये थे। यहां तक कि वे इस बात को भी भूल गये कि यह काम अभी तक **ख़ुद अपने में,** अपने सारतत्व की दृष्टि से, सामाजिक-जनवादी काम नहीं, बल्कि ट्रेड-यूनियनवादी काम है। सचाई यह है कि इन भंडाफोड़ों में महज़ किसी **ख़ास व्यवसाय** के मज़दूरों तथा मालिकों के संबंधों की चर्चा रहती थी और उनका केवल यह परिणाम निकलता था कि अपनी श्रम-शक्ति को बेचनेवाले अपना "माल" ज़्यादा बेहतर दामों में बेचना और एक शुद्ध व्यापारिक सौदे को लेकर ख़रीदारी से लड़ना-झगड़ना सीखते थे। इन भंडाफोड़ों से (यदि क्रांतिकारियों का संगठन उनका सही उपयोग करता, तो) सामाजिक-जनवादी कार्य का श्रीगणेश किया जा सकता था और वे इस काम का एक अंग बन सकते थे। परंतु उनके फलस्वरूप "शुद्ध ट्रेड-यूनियनवादी" संघर्ष और ग़ैर सामाजिक-जनवादी मज़दूर आंदोलन भी खड़ा हो सकता था (और स्वयंस्फूर्ति की पूजा करने की हालत में यह नतीजा निकलना लाज़िमी था)। सामाजिक-जनवाद केवल श्रम-शक्ति की बिक्री के वास्ते बेहतर दाम हासिल करने के लिए ही नहीं, बल्कि उस सामाजिक व्यवस्था को मिटाने के लिए भी मज़दूर वर्ग के संघर्ष का नेतृत्व करता है, जो संपत्तिहीन लोगों को धनिकों के हाथ बिकने के लिए मजबूर करती है। सामाजिक-जनवाद मज़दूर वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है केवल मालिकों के किसी एक

के औद्योगिक स्तंभों में मिलाकर कितना कहा गया है, तो उन्हें बड़ी आसानी से पता लग जाता कि वे इस मामले में भी पीछे हैं। ज़ाहिर है कि इस साधारण-सी सचाई का आभास उन्हें ऐसे तर्क देने के लिए मजबूर करता है, जिनसे उनकी उलझन स्पष्ट हो जाती है। ये लोग लिखते हैं: "*ईस्क्रा* को न चाहते हुए भी (!) ज़िंदगी के लाज़िमी तक़ाज़ों के सामने झुकना पड़ता है और कम से कम (!!) मज़दूर आंदोलन के बारे में चिट्ठियां छापने पर मजबूर (!) होना पड़ता है" (*दो कांग्रेसें*, पृ० २७)। ज़ाहिर है कि इस तर्क के सामने हमारा मुंह बंद हो जाता है!

Scanned by CamScanner

दल विशेष के साथ उसके संबंध के मामले में ही नहीं, बल्कि आधुनिक समाज के सभी वर्गों के साथ और एक संगठित राजनीतिक शक्ति के रूप में राज्यसत्ता के साथ उसके संबंध के मामले में भी। यहां यह स्पष्ट है कि सामाजिक-जनवादी केवल आर्थिक संबंध पर नहीं रुक सकते, वे तो आर्थिक भंडाफोड़ों को संगठित करने के काम को अपनी गतिविधियों का प्रमुख अंग बनने की इजाज़त भी नहीं दे सकते। हमें मज़दूर वर्ग को राजनीतिक शिक्षा देने और उसकी राजनीतिक चेतना को विकसित करने के काम को बहुत सक्रिय रूप से हाथ में लेना होगा। **अब**, जबकि *ज़ार्या* और *ईस्क्रा* "अर्थवाद" पर पहली चोट कर चुके हैं, "सब लोग इस बात से सहमत हैं" (गोकि कुछ लोग, जैसा कि हम जल्द ही आगे देखेंगे, केवल शब्दों में ही इससे सहमत हैं)।

सवाल यह पैदा होता है: राजनीतिक शिक्षा में क्या होना चाहिए? क्या उसे केवल निरंकुश शासन के प्रति मज़दूर वर्ग की शत्रुता के प्रचार तक ही सीमित रखा जा सकता है? हरगिज़ नहीं। मज़दूरों को उनका राजनीतिक उत्पीड़न **समझाना** काफ़ी नहीं है (जिस प्रकार मज़दूरों को यह **समझाना** काफ़ी नहीं था कि उनके हितों और मालिकों के हितों में परस्पर विरोध है)। इस उत्पीड़न की प्रत्येक ठोस मिसाल को लेकर आंदोलन करना चाहिए (जिस प्रकार हमने आर्थिक उत्पीड़न की ठोस मिसालों को लेकर आंदोलन करना शुरू कर दिया है)। और **यह** उत्पीड़न चूंकि समाज के विभिन्नतम वर्गों पर असर डालता है और चूंकि यह जीवन तथा कार्य के व्यवसायगत, नागरिक, वैयक्तिक, पारिवारिक, धार्मिक, वैज्ञानिक, आदि विभिन्न क्षेत्रों में प्रकट होता है, इसलिए क्या यह स्पष्ट नहीं है कि जब तक **हम** निरंकुश शासन का **सर्वांगीण राजनीतिक भंडाफोड़ संगठित** नहीं करेंगे, तब तक **हम** मज़दूरों की राजनीतिक चेतना को विकसित करने के **अपने काम को पूरा नहीं कर सकेंगे?** जुल्म की ठोस मिसालों को लेकर आंदोलन करने के वास्ते ज़रूरी है कि इन मिसालों का भंडाफोड़ किया जाये (जिस प्रकार आर्थिक आंदोलन चलाने के वास्ते ज़रूरी था कि कारख़ानों की बुराइयों का भंडाफोड़ किया जाये)।

Scanned by CamScanner

कोई समझेगा कि यह तो बहुत सीधी और साफ़ बात है। पर पता यह चलता है कि राजनीतिक चेतना के **सर्वांगीण** विकास की आवश्यकता को "सब लोग" केवल शब्दों में ही मानते हैं। पता यह चलता है कि, मिसाल के लिए, *राबोचेये देलो* सर्वांगीण राजनीतिक भंडाफोड़ संगठित करना (या संगठन की शुरूआत करना) तो दूर रहा, उलटे *ईस्क्रा* को भी, जो यह काम शुरू कर चुका है, इस काम से **पीछे घसीटने** की कोशिश कर रहा है। सुनिये: "मजदूर वर्ग का राजनीतिक संघर्ष महज़" (असल में यह "महज़" ही तो नहीं है) "आर्थिक संघर्ष का ही सबसे विकसित, सबसे व्यापक और सबसे कारगर रूप है" (अंक १ में, पृ० ३ पर प्रकाशित *राबोचेये देलो* का कार्यक्रम)। "सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ताओं के सामने अब यह कार्यभार है कि, जहां तक संभव हो, वे आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप दें" (मार्तीनोव, *राबोचेये देलो*, अंक १०, पृ० ४२)। "आर्थिक संघर्ष जनता को सक्रिय राजनीतिक संघर्ष में खींचने का वह तरीक़ा है, जिसका सबसे अधिक व्यापक रूप में उपयोग किया जा सकता है" ("संघ'67 की कांग्रेस का प्रस्ताव और उसमें किये गये "संशोधन": *दो कांग्रेसें*, पृ० ११ और १७)। जैसा कि पाठक देखते हैं, पहले अंक से लेकर "संपादकों के नाम हिदायतें" नामक सबसे नयी दस्तावेज़ तक *राबोचेये देलो* इन प्रस्थापनाओं से कूट-कूटकर भरा हुआ है, और राजनीतिक आंदोलन तथा संघर्ष के बारे में उन सबसे स्पष्टत: एक ही मत प्रकट होता है। इस मत पर सभी "अर्थवादियों" में पाये जानेवाले इस दृष्टिकोण से विचार कीजिये कि राजनीतिक आंदोलन को आर्थिक आंदोलन के पीछे **चलना** चाहिए। क्या यह सच है कि आम तौर पर* आर्थिक संघर्ष जनता को राजनीतिक संघर्ष में खींचने का "वह तरीक़ा है, जिसका सबसे अधिक व्यापक ढंग से उपयोग किया जा सकता है"? यह बिलकुल ग़लत है। पुलिस के ज़ोरज़ुल्म और निरंकुशता के अत्याचार की **छोटी-बड़ी** अभिव्यक्तियां—और केवल आर्थिक संघर्ष से संबंधित अभिव्यक्तियां ही नहीं—जनता को "खींचने"

---

* "आम तौर पर" हम इसलिए कहते हैं कि *राबोचेये देलो* आम सिद्धांतों और पूरी पार्टी के सामान्य कार्यभारों की चर्चा कर रहा है। निस्संदेह, व्यवहार में कभी-कभी ऐसा भी होता है कि राजनीति को

Scanned by CamScanner

के लिए रत्ती भर कम "व्यापक उपयोगयोग्य" तरीक़ा नहीं हैं। ज़ेम्स्त्वो के अधिकारी[०४] और किसानों पर कोड़ों की मार, अफ़सरों की घूसखोरी और शहरों में "साधारण लोगों" के साथ पुलिस का व्यवहार, अकाल-पीड़ित लोगों पर अत्याचार और जनता के ज्ञान एवं शिक्षा प्राप्त करने के प्रयत्नों का दमन, ज़ोर-ज़बरदस्ती से टैक्सों की वसूली और धार्मिक संप्रदायों का दमन, फ़ौजी सिपाहियों का अपमानजनक बरताव और विद्यार्थियों तथा उदारपंथी बुद्धिजीवियों के साथ ऐसा व्यवहार मानो वे फ़ौज के सिपाही हों—ज़ुल्म की ये और ऐसी ही हज़ारों दूसरी मिसालें "आर्थिक" संघर्ष के साथ प्रत्यक्ष रूप से संबंधित न होते हुए भी क्या राजनीतिक आंदोलन चलाने और जनता को राजनीतिक संघर्ष में खींचने के आम तौर पर **कम** "व्यापक उपयोगयोग्य" तरीक़ों और अवसरों की द्योतक हैं? सत्य इसके बिलकुल विपरीत है। मज़दूरों पर (ख़ुद उन पर या उन लोगों पर, जिनसे उनका घनिष्ठ संबंध है) जितने अत्याचार और ज़ुल्म होते हैं और उन्हें जितने तरीक़ों से अधिकारों से वंचित रखा जाता है, उन सबको यदि जोड़ा जाये, तो इसमें शक नहीं कि पुलिस के ऐसे ज़ुल्मों का हिस्सा बहुत छोटा रहेगा, जिनका केवल व्यवसायगत संघर्ष से संबंध है। तब फिर हम पहले से ही अपने राजनीतिक आंदोलन के क्षेत्र को यह कहकर क्यों **सीमित** कर दें कि उसका केवल एक ही तरीक़ा ऐसा है, जिसका "सबसे अधिक व्यापक ढंग से उपयोग किया जा सकता है", जबकि सामाजिक-जनवादियों के पास आम तौर पर उसके अलावा भी अनेक ऐसे तरीक़े होने चाहिए, जो इससे कम "व्यापक उपयोगयोग्य" नहीं हैं?

बहुत, बहुत दिन हुए (एक वर्ष हुआ!...) *राबोचेये देलो*

सचमुच अर्थनीति के पीछे-पीछे चलना ही **पड़ता है**, परंतु जो प्रस्ताव सारे रूस पर लागू करने के लिए बनाया गया है, उसमें ऐसी बात केवल "अर्थवादी" ही कह सकते हैं। ऐसी सूरतें भी पैदा होती हैं, जब "बिलकुल शुरू से ही" "महज़ आर्थिक आधार पर" राजनीतिक आंदोलन करना संभव होता है; *राबोचेये देलो* को फिर भी यह बात आख़िरकार सूझी कि इसकी "कोई आवश्यकता नहीं है" (*दो कांग्रेसें*, पृ० ११)। अगले अध्याय में हम दिखायेंगे कि "राजनीतिवादियों" व क्रांतिकारियों की कार्यनीति न सिर्फ़ सामाजिक-जनवाद के ट्रेड-यूनियन कार्यभारों को भुलाती नहीं है, बल्कि इसके विपरीत केवल उसी कार्यनीति से इन कार्यभारों को सुसंगत ढंग से **पूरा** किया जा सकता है।

Scanned by CamScanner

ने लिखा था: "जैसे ही सरकार पुलिस और राजनीतिक पुलिस को मज़दूरों के ख़िलाफ़ इस्तेमाल करने लगती है", "जनता एक या अधिक से अधिक चंद हड़तालों के बाद तात्कालिक राजनीतिक मांगों को समझने लगती है" (अंक ७, पृ० १५, अगस्त, १९००)। पर यह अवसरवादी मंज़िलोंवाला सिद्धांत 'संघ' ने अब त्याग दिया है और कुछ हद तक हमारे साथ रिआयत करते हुए कहा है: "शुरू से ही महज़ आर्थिक आधार पर राजनीतिक आंदोलन चलाने की क़तई कोई आवश्यकता नहीं है" (दो कांग्रेसें, पृ० ११)। हमारे "अर्थवादियों" ने समाजवाद को पतन के कितने गहरे गढ़ में ढकेल दिया है, यह बात रूसी सामाजिक-जनवाद के भावी इतिहासकार के सामने लंबी-लंबी बहसों से उतनी स्पष्ट नहीं होगी, जितनी इस बात से कि अपनी पुरानी ग़लतियों में से कुछ को खुद 'संघ' ने त्यागने की कोशिश की थी! परंतु 'संघ' सचमुच बहुत भोला है, यदि वह समझता है कि राजनीति को संकुचित करने के रूप को त्याग देने पर हम संकुचित करने के उसके दूसरे रूप को मानने के लिए तैयार हो जायेंगे! क्या इस मामले में भी यह कहना अधिक तर्कसंगत न होगा कि आर्थिक संघर्ष को अधिक से अधिक व्यापक आधार पर चलाना चाहिए, उसका हमेशा राजनीतिक आंदोलन के लिए उपयोग करना चाहिए, लेकिन यह समझने की "क़तई कोई आवश्यकता नहीं है" कि जनता को सक्रिय राजनीतिक संघर्ष में खींचने के लिए आर्थिक संघर्ष ही **सबसे अधिक** व्यापक ढंग से उपयोग किया जा सकनेवाला तरीक़ा है?

'संघ' इस बात को बड़ा महत्व देता है कि उसने यहूदी मज़दूर संघ (बुंद)[69] की चौथी कांग्रेस के एक प्रस्ताव में इस्तेमाल किये गये "सबसे अच्छा तरीक़ा" शब्दों की जगह इन शब्दों का इस्तेमाल किया है: "वह तरीक़ा... जिसका सबसे अधिक व्यापक ढंग से उपयोग किया जा सकता है"। हम तसलीम करते हैं कि हमारे लिए यह कहना कठिन है कि इन दोनों प्रस्तावों में कौन-सा बेहतर है। हमारी राय में **दोनों ही बदतर** हैं। 'संघ' और बुंद, दोनों ही राजनीति को आर्थिक, ट्रेड-यूनियनवादी जामा पहनाने की ग़लती करते हैं (कुछ हद तक शायद अनजाने में, परंपरा के वशीभूत होकर)। इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि यह ग़लती "सबसे अच्छा" शब्दों का इस्तेमाल करके की गयी है, या

Scanned by CamScanner

"जिसका सबसे अधिक व्यापक ढंग से उपयोग किया जा सकता है" शब्दों का इस्तेमाल करके। यदि 'संघ' ने यह कहा होता कि "आर्थिक आधार पर राजनीतिक आंदोलन" एक ऐसी तरीक़ा है, जिसका सबसे अधिक व्यापक ढंग से उपयोग किया जाता है (न कि "किया जा सकता है"), तो हमारे सामाजिक-जनवादी आंदोलन के विकास के एक ख़ास समय के लिए उसकी यह बात सही होती। उसकी यह बात "**अर्थवादियों**" के बारे में और १८९८-१९०१ के (यदि अधिकांश नहीं, तो) बहुत-से व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं के बारे में बिलकुल सही होती, क्योंकि ये व्यावहारिक "अर्थवादी" राजनीतिक आंदोलन का **उपयोग** (जिस हद तक वे उसका उपयोग करते भी थे) **लगभग शुद्ध आर्थिक आधार पर ही** करते थे। **इस तरह** के राजनीतिक आंदोलन को तो *राबोचाया मीस्ल* और 'आत्म-मुक्ति दल' भी मानते थे, और जैसा कि हम देख चुके हैं, उसकी सिफ़ारिश तक करते थे! *राबोचेये देलो* को इसकी **सख़्त निंदा करनी** चाहिए थी कि आर्थिक आंदोलन का उपयोगी कार्य करने के साथ-साथ राजनीतिक संघर्ष को हानिकारक ढंग से संकुचित किया जा रहा था, लेकिन इसके बजाय उसने (**"अर्थवादियों" द्वारा**) जिस तरीक़े का सबसे अधिक व्यापक ढंग से **उपयोग किया जा रहा था**, उसे ऐसा तरीक़ा ठहराया, जिसका सबसे अधिक व्यापक ढंग से **उपयोग किया जा सकता था!** कोई आश्चर्य नहीं कि जब हम इन लोगों को "अर्थवादी" कहते हैं, तो वे इसके सिवा और कुछ नहीं कर सकते कि हम पर हर तरह की गालियों की बौछार करें, हमें "ढकोसलेबाज़", "फूट डालनेवाले", "पोप के दूत", "मिथ्या प्रचारक"*, आदि कहें और सारी दुनिया के सामने रोते फिरें कि हमने उनके साथ बड़ी ज़्यादती की है तथा लगभग क़समें खा-खाकर यह कहें कि "अब तो एक भी सामाजिक-जनवादी संगठन ऐसा नहीं है, जिसमें 'अर्थवाद' का ज़रा-सा भी रंग हो"**। अरे, ये दुष्ट, अकारण बदनाम करनेवाले राजनीतिवादी! मानव-जाति के प्रति घृणा की

---

* *दो कांग्रेसें* में ठीक उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया गया है। देखें पृ० ३१, ३२, २८ और ३०।

** *दो कांग्रेसें*, पृ० ३२।

Scanned by CamScanner

भावना के कारण ही इन लोगों ने जान-बूझकर केवल दूसरों को ठेस पहुंचाने के लिए "अर्थवाद" का आविष्कार किया होगा।

जब मार्तीनोव सामाजिक-जनवाद के सामने "आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देने" का काम प्रस्तुत करते हैं, तब उनके शब्दों का कौन-सा ठोस, असल अर्थ निकलता? अपनी **श्रम-शक्ति की बिक्री** में बेहतर दाम पाने के लिए, जीवन तथा श्रम की परिस्थितियां सुधारने के लिए अपने मालिकों के खिलाफ़ मज़दूरों का सामूहिक संघर्ष ही आर्थिक संघर्ष होता है। यह संघर्ष आवश्यक रूप से व्यवसायगत संघर्ष होता है, क्योंकि अलग-अलग व्यवसायों में श्रम की अवस्थाओं में बहुत फ़र्क़ होता है, और इसलिए इन अवस्थाओं को **सुधारने** की लड़ाई हरेक व्यवसाय में ही की जा सकती है (पश्चिमी देशों में ट्रेड-यूनियनों द्वारा, रूस में अलग-अलग व्यवसायों के मज़दूरों के अस्थायी संघों और परचों द्वारा, आदि)। इसलिए "आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देने" का मतलब यह है कि "वैधानिक तथा प्रशासनात्मक उपायों" द्वारा (मार्तीनोव ने अपने लेख के अगले पृष्ठ पर इन्हीं शब्दों का प्रयोग किया है—देखें पृ० ४३) अलग-अलग व्यवसायों के मज़दूरों की इन्हीं मांगों को पूरा कराने तथा अलग-अलग व्यवसायों में श्रम की अवस्थाओं को सुधारने की कोशिश की जाये। मज़दूरों की तमाम ट्रेड-यूनियनें ठीक यही करती हैं और सदा यही करती आयी हैं। पूर्णतया वैज्ञानिक (और "पूर्णतया" अवसरवादी) श्रीमान एवं श्रीमती वेब की रचना पढ़िये, तो आपको मालूम होगा कि ब्रिटेन की ट्रेड-यूनियनें बहुत दिनों से "आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देने" के काम का महत्व मानती आयी हैं और इसी काम को करती आयी हैं; वे बहुत दिनों से इस बात के लिए लड़ रही हैं कि हड़ताल करने का अधिकार माना जाये, सहकारी एवं ट्रेड-यूनियन आंदोलनों के रास्ते से तमाम क़ानूनी रुकावटें हटा ली जायें, स्त्रियों और बच्चों की रक्षा के लिए क़ानून बनाये जायें, स्वास्थ्य-सेवा तथा कारख़ानों के संबंध में क़ानून बनाकर मज़दूरों के श्रम की दशा में सुधार किया जाये, इत्यादि।

अतएव "आर्थिक संघर्ष को **ही** राजनीतिक रूप देने" का यह भड़कीला वाक्यांश, जो सुनने में "बेहद" गंभीर और क्रांतिकारी

Scanned by CamScanner

लगता है, वास्तव में सामाजिक-जनवादी राजनीति को गिराकर ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति के **स्तर पर ले आने** की परंपरागत कोशिश को छिपाने के लिए आड़ का ही काम देता है! कहा जाता है कि *ईस्क्रा* "जीवन में क्रांति पैदा करने से अधिक महत्व सूत्र में क्रांति पैदा करने को देता है"*; और ईस्क्रा के इस एकांगीपन को ठीक करने के बहाने **आर्थिक सुधारों का संघर्ष** हमारे सामने कुछ इस तरह पेश किया जाता है, मानो वह कोई बिलकुल नयी चीज़ हो। सच्ची बात यह है कि "आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देने" का मतलब आर्थिक सुधारों के लिए संघर्ष के सिवा और कुछ नहीं है। और यदि मार्तीनोव अपने ही शब्दों के महत्व पर थोड़ा विचार करते, तो वह खुद इसी सीधे-सादे नतीजे पर पहुंच जाते। अपनी सबसे बड़ी तोपों का मुंह *ईस्क्रा* के विरुद्ध मोड़ते हुए वह कहते हैं, "आर्थिक शोषण, बेकारी, अकाल, आदि के खिलाफ़ वैधानिक और प्रशासनात्मक उपायों के लिए हमारी पार्टी सरकार के सामने ठोस मांगें पेश कर सकती थी और उसे ऐसा करना चाहिए था" (*राबोचेये देलो*, अंक १०, पृ० ४२-४३)। उपायों के लिए ठोस मांगें—क्या इसका मतलब सामाजिक सुधारों के लिए मांग करना नहीं है? और हम निष्पक्ष पाठकों से फिर प्रश्न करते हैं—जब *राबोचेये देलो*-पंथी (इस बेढंगे नाम के लिए मुझे क्षमा किया जाये!) *ईस्क्रा* से अपना **मतभेद** आर्थिक सुधारों के लिए लड़ने की आवश्यकता की अपनी प्रस्थापना को लेकर बताते हैं, तब हम यदि उन्हें छिपे हुए बर्नस्टीनवादी कहते हैं, तो क्या हम उन पर कोई मिथ्या आरोप लगाते हैं?

सुधारों के लिए लड़ना क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद की गतिविधियों में हमेशा शामिल रहा है और आज भी शामिल है।

---

* *राबोचेये देलो*, अंक १०, पृ० ६०। यह मार्तीनोव द्वारा इस प्रस्थापना को कि "वास्तविक आंदोलन का प्रत्येक क़दम एक दर्जन कार्यक्रमों से अधिक महत्वपूर्ण होता है", जिसके बारे में हम ऊपर अपना मत प्रकट कर चुके हैं, हमारे आंदोलन की वर्तमान अव्यवस्थित हालत पर अपने ढंग से लागू करने का प्रयत्न है। वास्तव में यह बर्नस्टीन के उस कुख्यात वाक्य का ही रूसी अनुवाद है कि "आंदोलन ही सब कुछ है, अंतिम लक्ष्य कुछ नहीं"।

Scanned by CamScanner

परंतु वह "आर्थिक" आंदोलन का इस्तेमाल सरकार के सामने तरह-तरह के क़दम उठाने की मांगें ही नहीं, बल्कि यह मांग भी (और मुख्यतया यही मांग) पेश करने के लिए करता है कि सरकार निरंकुश शासन करना छोड़ दे। इसके अलावा वह इसे अपना कर्त्तव्य समझता है कि यह मांग केवल आर्थिक संघर्ष के आधार पर ही नहीं, बल्कि सार्वजनिक तथा राजनीतिक जीवन की आम तौर पर सभी अभिव्यक्तियों के आधार पर भी सरकार के सामने पेश की जाये। सारांश यह कि क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद सुधारों के लिए संघर्ष को स्वतंत्रता और समाजवाद के क्रांतिकारी संघर्ष के अधीन उसी तरह रखता है, जैसे कोई एक भाग अपने पूर्ण के अधीन होता है। लेकिन मार्तीनोव मंजिलोंवाले सिद्धांत को एक नये रूप में फिर से जीवित करके राजनीतिक संघर्ष के विकास के लिए मानो एक शुद्ध आर्थिक पथ निर्धारित करने की कोशिश कर रहे हैं। इस समय, जब क्रांतिकारी आंदोलन उभार पर है, सुधारों के लिए लड़ने के एक तथाकथित विशेष "कार्यभार" को सामने लाकर वह पार्टी को पीछे घसीट रहे हैं और "अर्थवादी" तथा उदारपंथी, दोनों प्रकार के अवसरवाद के हाथों में खेल रहे हैं।

आगे चलें, "आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देने" की ऊपर से बड़ी गूढ़ लगनेवाली प्रस्थापना के पीछे सुधारों की लड़ाई को लजाते हुए छिपाकर मार्तीनोव ने **शुद्धतः आर्थिक** (वास्तव में केवल कारख़ानों की हालत में) **सुधारों** को इस तरह पेश किया है, मानो यह कोई ख़ास बात हो। उन्होंने ऐसा क्यों किया, यह हम नहीं जानते। शायद लापरवाही के कारण? पर यदि "कारख़ानों की हालत" में सुधारों के अलावा भी उनके दिमाग़ में कुछ होता, तो उनकी यह पूरी प्रस्थापना, जिसे हम ऊपर उद्धृत कर चुके हैं, अर्थहीन हो जाती। या शायद उन्होंने यह सोचकर ऐसा किया है कि सरकार केवल आर्थिक क्षेत्र में ही कुछ "रिआयतें" दे सकती है?* यदि ऐसी बात है, तो यह एक

---

* पृ० ४३: "ज़ाहिर है कि जब हम मज़दूरों को सरकार के सामने कुछ आर्थिक मांगें पेश करने की राय देते हैं, तो इसका कारण यह है कि आर्थिक क्षेत्र में निरंकुश सरकार आवश्यकतावश कुछ रिआयतें देने को तैयार है।"

Scanned by CamScanner

विचित्र आत्म-प्रवंचना है। कोड़ेबाज़ी, पासपोर्ट, मुआवज़े की अदायगी,[70] धार्मिक संप्रदायों, सेंसरशिप, आदि से संबंधित क़ानूनों के बारे में भी रिआयतें मिल सकती हैं और मिलती रहती हैं। "आर्थिक" रिआयतें (या झूठी रिआयतें), ज़ाहिर है, सरकार के दृष्टिकोण से सबसे सस्ती और सबसे अधिक लाभदायक होती हैं, क्योंकि उनके ज़रिए उसे आम मज़दूरों का विश्वास प्राप्त करने की आशा होती है। इसी कारण हम, सामाजिक-जनवादियों को किसी भी हालत में या किसी तरह भी कोई ऐसी बात **नहीं** करनी **चाहिए**, जिससे इस विश्वास (या ग़लतफ़हमी) के लिए आधार तैयार होता हो कि हम आर्थिक सुधारों को अधिक महत्व देते हैं या उन्हें विशेष रूप से महत्वपूर्ण समझते हैं, आदि। वैधानिक और प्रशासनात्मक उपायों के लिए जिन ठोस मांगों का ऊपर ज़िक्र किया गया है, उनके बारे में मार्तीनोव लिखते हैं: "इस प्रकार की मांगें कोरी नारेबाज़ी नहीं होंगी, क्योंकि उनसे कोई ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद होने की वजह से मज़दूर जन-साधारण उनका सक्रिय समर्थन कर सकते हैं"... हम "अर्थवादी" नहीं हैं, क़तई नहीं! हम तो सिर्फ़ स्पर्शनीय नतीजों के "ठोसपन" के सामने उसी आजिज़ी से गिड़गिड़ाते हैं, जैसे बर्नस्टीन, प्रोकोपोविच, स्त्रूवे, र० म० महाशय और tutti quanti* गिड़गिड़ाते हैं! हम तो केवल (नरसिस तुपोरीलोव के साथ) लोगों को यह समझाना चाहते हैं कि वे तमाम चीज़ें, जिनसे "कोई ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद नहीं है", महज़ "कोरी नारेबाज़ी" हैं। हम तो केवल इस तरह बोलते हैं, मानो आम मज़दूरों में निरंकुश शासन के ख़िलाफ़ **प्रत्येक** विरोध का—**भले ही उससे रत्ती भर भी कोई ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद न हो**—सक्रिय रूप से समर्थन करने की क्षमता न हो (और मानो आम मज़दूरों ने उन तमाम लोगों के बावजूद, जो ख़ुद अपना कूपमंडूकपन मज़दूरों पर लाद देते हैं, अपनी यह क्षमता कभी साबित न की हो)!

उदाहरण के लिए, बेकारी और अकाल के ख़िलाफ़ उन्हीं "उपायों" को ले लीजिये, जो ख़ुद मार्तीनोव ने पेश किये हैं। ऐसे वक़्त, जब *राबोचेये देलो*, उसके वादों के अनुसार जांचते

* उनके जैसे सभी लोग।—सं०

Scanned by CamScanner

हुए, "वैधानिक तथा प्रशासनात्मक उपायों के लिए", जिनसे "ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद हो", "ठोस" (विधेयकों के रूप में?) "मांगों को" तैयार और उनका विशदीकरण कर रहा है, उसी समय *ईस्क्रा* ने, जो "जीवन में क्रांति पैदा करने से अधिक महत्व सूत्र में क्रांति पैदा करने को निरंतर देता है", बेकारी और पूरी पूंजीवादी व्यवस्था के अटूट संबंध पर प्रकाश डालने की कोशिश की; उसने चेतावनी दी कि "अकाल आ रहा है", पुलिस का भंडाफोड़ किया कि वह "अकाल पीड़ियों से कैसे लड़ती है"[71] और "दंड के अस्थायी नियमों"[72] के घोर अन्यायपूर्ण रूप का पर्दाफ़ाश किया; उस समय *ज़ार्या* ने *घरेलू मामलों की समीक्षा* शीर्षक अकाल संबंधी लेख के एक हिस्से को एक आंदोलनकारी पुस्तिका के रूप में अलग से छापा। पर हे भगवान! ये कट्टर मतवादी कितने "एकांगी" थे; उनके कान इतने बहरे थे कि वे "स्वयं जीवन" की पुकार को भी नहीं सुन पाते! ज़रा सोचिये, ज़रा कल्पना कीजिये कि उनके लेखों में **एक भी**—क्या आप विश्वास कर सकते हैं?—एक भी "ठोस मांग" ऐसी नहीं थी, जिससे "कोई ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद हो"! बेचारे मतवादी! इन लोगों को तो क्रिचेव्स्की और मार्तीनोव के पास भेजना चाहिए ताकि वे यह सीख सकें कि कार्यनीति विकास की एक प्रक्रिया है, उसकी, जोकि विकसित होता है, इत्यादि, और यह कि स्वयं आर्थिक संघर्ष को **ही** राजनीतिक रूप देना आवश्यक है!

"अपने तात्कालिक क्रांतिकारी महत्व के अलावा मालिकों तथा सरकार के खिलाफ़ मज़दूरों के आर्थिक संघर्ष का" ("सरकार के खिलाफ़ **आर्थिक** संघर्ष"!!) "यह महत्व भी है कि वह लगातार मज़दूरों को अपने राजनीतिक अधिकारों के अभाव के बारे में सोचने की प्रेरणा देता है" (मार्तीनोव, पृ० ४४)। हम इस अंश को उद्धृत कर रहे हैं तो इसलिए नहीं कि जो कुछ पहले ही कहा जा चुका है, उसे सौवीं या हज़ारवीं बार फिर दुहरायें, बल्कि इसलिए कि "मालिकों तथा सरकार के खिलाफ़ मज़दूरों के आर्थिक संघर्ष" के इस विलक्षण एवं नवीन सूत्र के लिए मार्तीनोव को धन्यवाद दिया जाये। क्या हीरे जैसा सूत्र है! "अर्थवादियों" में पाये जानेवाले तमाम छोटे-मोटे, आंशिक मतभेदों और अलग-अलग रंगों को कैसे चातुर्य से दूर करके इस

Scanned by CamScanner

स्पष्ट तथा संक्षिप्त सूत्र में "अर्थवाद" के **सारतत्व** को कैसे अनुपम कौशल से व्यक्त किया गया है—मज़दूरों का यह आह्वान करने से शुरू करके कि उन्हें उस "राजनीतिक संघर्ष में शामिल होना चाहिए, जिसे वे सबके सामान्य हित में इस उद्देश्य से चलाते हैं कि सभी मज़दूरों की हालत में सुधार हो",* मंज़िलोंवाले सिद्धांत से होते हुए "सबसे अधिक व्यापक ढंग से उपयोग", आदि के बारे में कांग्रेस के प्रस्ताव तक। "सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" सरासर ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति है, जिसमें और सामाजिक-जनवादी राजनीति में ज़मीन-आसमान का फ़र्क़ है।

(ख) एक कहानी—मार्तीनोव ने प्लेख़ानोव को और गूढ़ कैसे बनाया

"हाल में हमारे बीच कितनी बड़ी संख्या में सामाजिक-जनवादी लोमोनोसोव पैदा हो गये हैं!"—एक साथी ने एक रोज़ यह कहा; वह "अर्थवाद" की ओर झुकाव रखनेवाले बहुत से लोगों की इस आश्चर्यजनक प्रवृत्ति की ओर संकेत कर रहे थे कि वे "अपनी ही बुद्धि के बल पर" महान सत्यों तक पहुंच जाते हैं (जैसे यह कि आर्थिक संघर्ष मज़दूरों को अपने अधिकारों के अभाव के बारे में सोचने की प्रेरणा देता है) और ऐसा करते समय वे जन्मजात मेधावी पुरुषों की भांति परम तिरस्कार के साथ वह सब भुला देते हैं, जो क्रांतिकारी विचार और क्रांतिकारी आंदोलन के सारे पूर्ववर्ती विकास के दौरान पैदा किया गया है। लोमोनोसोव-मार्तीनोव बिलकुल ऐसे ही जन्मजात मेधावी पुरुष हैं। उनके *तात्कालिक प्रश्न* शीर्षक लेख पर नज़र डालिये और आप देखेंगे कि वह कैसे "अपनी ही बुद्धि के बल पर" उस बात तक **पहुंच जाते हैं**, जिसे अक्सेलरोद बहुत दिन पहले कह चुके हैं (ज़ाहिर है कि उनके बारे में हमारे लोमोनोसोव एक शब्द भी नहीं कहते), कि मिसाल के लिए, वह किस तरह यह समझना **शुरू ही कर रहे हैं** कि हम बुर्जुआ वर्ग के विभिन्न स्तरों के विरोध की अवहेलना नहीं कर सकते (*राबोचेये देलो*, अंक ९, पृ० ६१, ६२, ७१; इसकी तुलना अक्सेलरोद के नाम

* *राबोचाया मीस्ल*, 'विशेष परिशिष्ट', पृ० १४।

Scanned by CamScanner

राबोचेये देलो के उत्तर से कीजिये, पृ० २२, २३-२४), इत्यादि। लेकिन अफ़सोस यह है कि वह केवल लगभग "पहुंच जाते हैं" और अभी "शुरू ही कर रहे हैं", इससे ज़्यादा नहीं, क्योंकि अक्सेलरोद के विचारों को उन्होंने इतना कम समझा है कि वह "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" की बात करते हैं। *राबोचेये देलो* ने तीन साल से (१८९८-१९०१) अक्सेलरोद को समझने की जी-तोड़ कोशिश की है, पर... पर अभी तक नहीं समझ पाया है! इसका शायद एक कारण यह है कि "मानव-जाति की भांति" सामाजिक-जनवाद भी सदा अपने सामने केवल ऐसे ही कार्यभार रखता है, जिन्हें वह पूरा कर सकता है?

परंतु हमारे इन लोमोनोसोवों की यही एक विशेषता नहीं है कि बहुत-सी बातों के विषय में वे घोर अज्ञानी हैं (यह तो आधे दुर्भाग्य की बात होती!), उनकी एक विशेषता यह भी है कि अपने अज्ञान का उन्हें तनिक भी आभास नहीं है। और यह सचमुच बड़े दुर्भाग्य की बात है; और इसी दुर्भाग्य का प्रताप है कि वे झटपट प्लेख़ानोव को "और गूढ़" बनाने की कोशिश करने लगते हैं।

लोमोनोसोव-मार्तीनोव कहते हैं:

"जिस समय प्लेख़ानोव ने यह पुस्तक" *(रूस में अकाल के विरुद्ध संघर्ष में समाजवादियों के कार्यभार)* "लिखी थी, तब से दरिया में बहुत-सारा पानी बह चुका है। सामाजिक-जनवादी, जो दस वर्षों से मज़दूर वर्ग के आर्थिक संघर्ष का नेतृत्व कर रहे थे... अभी तक पार्टी की कार्यनीति के लिए कोई व्यापक सैद्धांतिक आधार निर्धारित नहीं कर पाये हैं। अब यह सवाल बहुत ज़रूरी बन गया है, और यदि हम ऐसा सैद्धांतिक आधार निर्धारित करना चाहें, तो एक समय प्लेख़ानोव ने कार्यनीति के जिन सिद्धांतों को विकसित किया था, हमें निश्चय ही उनको और काफ़ी गूढ़ बनाना होगा... प्रचार और आंदोलन के अंतर की हमारी वर्तमान परिभाषा को प्लेख़ानोव की परिभाषा से भिन्न होना होगा" (मार्तीनोव ने इसके कुछ ही पहले प्लेख़ानोव के इन शब्दों को उद्धृत किया था: "प्रचारक एक या चंद आदमियों के सामने अनेक विचार पेश करता है, आंदोलनकर्त्ता केवल एक या चंद विचार पेश करता है, परंतु वह उन्हें आम जनता के सामने रखता है")। "हम प्रचार उसे कहेंगे, जब पूरी वर्तमान व्यवस्था का या उसके आंशिक रूपों का क्रांतिकारी ढंग से स्पष्टीकरण किया जाये, चाहे वह चंद व्यक्तियों के लिए या आम जनता के लिए सुगम भाषा में किया जाये। आंदोलन, यदि उसके बिलकुल सही

Scanned by CamScanner

अर्थ को लिया जाये" (जी हां!), "तो हम उसे कहेंगे, जब जनता का कुछ ठोस कार्रवाइयों के लिए आवाहन किया जाये और सामाजिक जीवन में सर्वहारा वर्ग के सीधे क्रांतिकारी हस्तक्षेप के लिए प्रेरणा दी जाये।"

इस नयी मार्तीनोव शब्दावली के लिए, जो अधिक चुस्त और अधिक गूढ़ है, हम रूसी—और अंतर्राष्ट्रीय—सामाजिक-जनवाद को बधाई देते हैं। अभी तक (प्लेख़ानोव की भांति, और अंतर्राष्ट्रीय मज़दूर वर्ग के आंदोलन के सभी नेताओं की भांति) हम भी यही समझते थे कि जब, मिसाल के लिए, बेकारी के उसी प्रश्न पर प्रचारक बोलता है, तो उसे आर्थिक संकटों के पूंजीवादी स्वरूप को समझाना चाहिए, उसे बताना चाहिए कि वर्तमान समाज में इस प्रकार के संकटों का आना क्यों अवश्यंभावी है और इसलिए क्यों इस समाज को समाजवादी समाज में बदलना ज़रूरी है, आदि। सारांश यह कि प्रचारक को सुननेवालों के सामने "बहुत-से विचार" पेश करने चाहिए, इतने सारे विचार कि केवल (अपेक्षाकृत) थोड़े-से लोग ही उन्हें एक अविभाज्य और संपूर्ण इकाई के रूप में समझ सकेंगे। परंतु इसी प्रश्न पर जब कोई आंदोलनकर्त्ता बोलेगा, तो वह किसी ऐसी बात का उदाहरण देगा, जो सबसे अधिक ज्वलंत हो और जिसे उसके सुननेवाले सबसे व्यापक रूप से जानते हों—मसलन, भूख से किसी बेरोज़गार मज़दूर के परिवारवालों की मौत, बढ़ती हुई ग़रीबी, आदि—और फिर इस मिसाल का इस्तेमाल करते हुए, जिससे सभी लोग अच्छी तरह परिचित हैं, वह "आम जनता" के सामने बस **एक विचार** रखने की कोशिश करेगा, याने यह कि यह अंतर्विरोध कितना बेतुका है कि एक तरफ़ तो दौलत और दूसरी तरफ़, ग़रीबी बढ़ती जा रही है। इस घोर अन्याय के विरुद्ध आंदोलनकर्त्ता जनता में असंतोष और ग़ुस्सा **पैदा करने** की कोशिश करेगा तथा इस अंतर्विरोध का और पूर्ण स्पष्टीकरण करने का काम वह प्रचारक के लिए छोड़ देगा। अतएव प्रचारक मुख्यतया **छपी हुई** सामग्री का उपयोग करता है और आंदोलनकर्त्ता **जीवित** शब्दों का प्रयोग करता है। प्रचारक में आंदोलनकर्त्ता से भिन्न गुण होने चाहिए। उदाहरण के लिए, काउत्स्की और लफ़ार्ग को हम प्रचारक कहते हैं तथा बेबेल और गेद को हम आंदोलनकर्त्ता का नाम देते हैं। व्यावहारिक कार्य का

Scanned by CamScanner

एक तीसरा अलग क्षेत्र या तीसरा अलग कार्य बनाना और इस कार्य में "कुछ ठोस कार्रवाइयों के लिए जनता का आह्वान करने" को शामिल करना—यह सरासर बकवास है, क्योंकि एक अकेले कार्य के रूप में यह "आह्वान" या तो स्वाभाविक एवं अवश्यंभावी रूप से सैद्धांतिक पुस्तक, प्रचार पुस्तिका और आंदोलनकारी भाषण के पूरक का काम करता है या वह केवल कार्यकारी भूमिका अदा करता है। मिसाल के लिए, उस संघर्ष को लीजिये, जो आजकल जर्मनी के सामाजिक-जनवादी अनाज-चुंगी के ख़िलाफ़ चला रहे हैं। सिद्धांतकार लोग शुल्क नीति के विषय में शोध पुस्तकें लिखते हैं और, उदाहरण के लिए, व्यापारिक संधियों तथा स्वतंत्र व्यापार के समर्थन के संघर्ष का "आह्वान" करते हैं। प्रचारक यही काम पत्रों में करता है और आंदोलनकर्त्ता—सार्वजनिक भाषणों में। जनता की "ठोस कार्रवाइयां" इस मामले में अनाज-चुंगी बढ़ाने के ख़िलाफ़ राइख़्सटाग के नाम प्रार्थना-पत्रों पर हस्ताक्षर करने का रूप ले लेती हैं। इन कार्रवाइयों के लिए आह्वान अप्रत्यक्ष ढंग से सिद्धांतकारों, प्रचारकों और आंदोलनकर्त्ताओं से और प्रत्यक्ष ढंग से उन मज़दूरों से आता है, जो प्रार्थना-पत्र की प्रतियां लेकर कारख़ानों में और अलग-अलग घरों में उन पर दस्तख़त कराते घूम रहे हैं। "मार्तीनोव शब्दावली" के अनुसार काउत्स्की और बेबेल, दोनों ही प्रचारक हैं और जो लोग हस्ताक्षर करा रहे हैं, वे आंदोलनकर्त्ता हैं, यही मतलब है न?

जर्मन उदाहरण से मुझे जर्मन शब्द Verballhornung की याद आ गयी, जिसका शाब्दिक अर्थ "बाल्लहोर्नीकरण" है। सोलहवीं सदी में लाइपज़िग में जोहान्न बाल्लहोर्न नामक एक प्रकाशक था। उसने बच्चों की एक पाठ्य-पुस्तक प्रकाशित की थी, जिसमें उस ज़माने की प्रथा के अनुसार उसने मुरग़े का चित्र भी दिया था, लेकिन इस चित्र में टांगों पर खांगवाले साधारण मुरग़े की जगह बिना खांगवाला मुरग़ा था, जिसके पास दो अंडे पड़े हुए थे। और इस पाठ्य-पुस्तक के आवरण पर छपा था: "जोहान्न बाल्लहोर्न द्वारा **संशोधित** संस्करण"। बस तभी से जब कभी कोई ऐसा "संशोधन" करता है, जिससे चीज़ पहले से भी बिगड़ जाये, तो उसे जर्मन लोग "बाल्लहोर्नीकरण" कहते हैं। और जब हम देखते हैं कि मार्तीनोव लोग प्लेख़ानोव को किस तरह "और गूढ़"

Scanned by CamScanner

बनाने की कोशिश कर रहे हैं, तो हमें बरबस बाल्लहोर्न की याद आ जाती है।

हमारे लोमोनोसोव ने इस गड़बड़-घोटाले का "आविष्कार" क्यों किया? यह बताने के लिए कि "जिस प्रकार डेढ़ दशाब्दी पहले प्लेख़ानोव ने किया था, उसी प्रकार अब *ईस्क्रा* मामले के सिर्फ़ एक पहलू की तरफ़ ध्यान दे रहा है" (पृ० ३९)। "*ईस्क्रा* में, कम से कम वर्तमान समय में, प्रचारात्मक कार्यभार आंदोलनात्मक कार्यभारों को पृष्ठभूमि में धकेल देते हैं" (पृ० ५२)। यदि हम इस नवीनतम प्रस्थापना का अनुवाद मार्तीनोव की भाषा से साधारण मनुष्यों की भाषा में करें (क्योंकि अभी मानव-जाति इस नयी शब्दावली को नहीं सीख पायी है), तो हमारे सामने यह बात आयेगी: *ईस्क्रा* में राजनीतिक प्रचार तथा राजनीतिक आंदोलन के कार्यभार "वैधानिक और प्रशासनात्मक उपायों के लिए सरकार के सामने ऐसी ठोस मांगें पेश करने" का काम पृष्ठभूमि में धकेल देते हैं, जिनसे "कोई ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद हो" (यदि हमें केवल एक बार फिर पुरानी मानव-जाति की, जो अभी तक मार्तीनोव के स्तर तक नहीं उठ पायी है, पुरानी शब्दावली का प्रयोग करने की अनुमति मिल सके, तो इन मांगों को सामाजिक सुधारों की मांग भी कहा जा सकता है)। हम पाठकों को सुझाव देंगे कि वे इस प्रस्थापना की तुलना आगे लिखे अंश से करें:

"इन कार्यक्रमों में" (क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादियों के कार्यक्रमों में) "जो बात हमें अचंभे में डाल देती है, वह यह है कि उनमें संसद के अंदर (जो रूस में है ही नहीं) मज़दूरों की हलचल के फ़ायदों पर लगातार ज़ोर दिया जाता है, हालांकि (अपने क्रांतिकारी निषेधवाद के कारण) वे कारख़ानों के मामलों के संबंध में मिल-मालिकों की विधान सभाओं में (जो रूस में मौजूद हैं) मज़दूरों के भाग लेने के महत्व को... या कम से कम नगरपालिका-निकायों में मज़दूरों के भाग लेने के महत्व को बिलकुल भुला देते हैं..."

इस निंदोक्ति के लेखक ने उसी विचार को किसी क़दर ज़्यादा दो टूक, ज़्यादा सफ़ाई के साथ और ज़्यादा खुले दिल से पेश किया है, जिस तक हमारे लोमोनोसोव-मार्तीनोव अपनी ही

Scanned by CamScanner

बुद्धि से पहुंच गये थे। लेखक का नाम है र० म० और यह लेख छपा था *राबोचाया मीस्ल* के *विशेष परिशिष्ट* में (पृ० १५)।

(ग) राजनीतिक भंडाफोड़ और "क्रांतिकारी क्रियाशीलता का प्रशिक्षण"

ईस्क्रा के मुक़ाबले में "आम मज़दूरों की क्रियाशीलता को बढ़ाने" का अपना "सिद्धांत" पेश करके मार्तीनोव ने वास्तव में इस क्रियाशीलता का महत्व **कम करके आंकने** की प्रवृत्ति का परिचय दिया, क्योंकि उन्होंने उसी आर्थिक संघर्ष को, जिसके गुण सारे "अर्थवादी" गाते रहे हैं, इस क्रियाशीलता को बढ़ाने का अधिक वांछनीय, सबसे महत्वपूर्ण और "सबसे अधिक व्यापक उपयोगयोग्य" उपाय तथा उसके लिए सबसे व्यापक क्षेत्र बताया। यह ग़लती बहुत लाक्षणिक है, ठीक इसलिए कि अकेले मार्तीनोव ने ही यह ग़लती नहीं की है। सच्ची बात यह है कि "आम मज़दूरों की क्रियाशीलता को" **केवल** इस शर्त पर "बढ़ाया" जा सकता है कि हम अपने को सिर्फ़ "आर्थिक आधार पर राजनीतिक आंदोलन चलाने" तक ही **सीमित न रखें।** और राजनीतिक आंदोलन के आवश्यक विस्तार की एक बुनियादी शर्त यह है कि **सर्वांगीण** राजनीतिक भंडाफोड़ का संगठन किया जाये। इस तरह के भंडाफोड़ के अलावा और किसी तरीक़े से जनता की राजनीतिक चेतना और क्रांतिकारी क्रियाशीलता पोषित नहीं **की जा सकतीं।** अतएव इस प्रकार का काम पूरे अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक-जनवादी आंदोलन के सबसे महत्वपूर्ण कामों में से एक है, क्योंकि राजनीतिक स्वतंत्रता मिलने पर भी इस प्रकार का भंडाफोड़ नहीं हटाया जाता, उससे केवल इन भंडाफोड़ों की दिशा का क्षेत्र बदल जाता है। उदाहरण के लिए, जर्मन पार्टी ख़ास तौर पर अपनी स्थिति को मज़बूत कर रही है और अपना असर फैला रही है, और इसका कारण यही है कि वह अथक उत्साह के साथ राजनीतिक भंडाफोड़ कर रही है। मज़दूर वर्ग की चेतना उस वक़्त तक सच्ची राजनीतिक चेतना नहीं बन सकती, जब तक कि मज़दूरों को अत्याचार, उत्पीड़न, हिंसा और अनाचार के **सभी** मामलों का जवाब देना, चाहे उनका संबंध **किसी**

Scanned by CamScanner

भी वर्ग से क्यों न हो, नहीं सिखाया जाता। और उनको सामाजिक-जनवादी दृष्टिकोण से जवाब देना चाहिए, न कि किसी और दृष्टिकोण से। आम मज़दूरों की चेतना उस समय तक सच्ची वर्ग चेतना नहीं बन सकती, जब तक कि मज़दूर ठोस और सामयिक (फ़ौरी) राजनीतिक तथ्यों और घटनाओं से दूसरे **प्रत्येक** सामाजिक वर्ग का उसके बौद्धिक, नैतिक एवं राजनीतिक जीवन की **सभी** अभिव्यक्तियों में अवलोकन करना नहीं सीखते, जब तक कि मज़दूर आबादी के **सभी** वर्गों, स्तरों और समूहों के जीवन तथा कार्यों के **सभी** पहलुओं का भौतिकवादी विश्लेषण और भौतिकवादी मूल्यांकन व्यवहार में इस्तेमाल करना नहीं सीखते। जो लोग मज़दूर वर्ग को अपना ध्यान, अवलोकन और चेतना पूर्णतया या मुख्यतया भी, केवल अपने पर केंद्रित करना सिखाते हैं, वे सामाजिक-जनवादी नहीं हैं, क्योंकि मज़दूर वर्ग के आत्मज्ञान का अटूट संबंध आधुनिक समाज के **सभी** वर्गों के बीच पारस्परिक संबंधों की मात्र पूर्णत: स्पष्ट सैद्धांतिक समझदारी से ही नहीं है, ज़्यादा सही कहें तो, इतना सैद्धांतिक समझदारी से नहीं है, जितना कि राजनीतिक जीवन के अनुभव से प्राप्त व्यावहारिक समझदारी से है। यही कारण है कि हमारे "अर्थवादी" जिस विचार का प्रचार करते हैं, याने यह कि आर्थिक संघर्ष जनता को राजनीतिक आंदोलन में खींचने का वह तरीक़ा है, जिसका सबसे अधिक व्यापक रूप में उपयोग किया जा सकता है, वह अपने व्यावहारिक महत्व में बहुत अधिक हानिकारक और घोर प्रतिक्रियावादी विचार है। सामाजिक-जनवादी बनने के लिए ज़रूरी है कि मज़दूर के दिमाग़ में ज़मींदार और पादरी, बड़े सरकारी अफ़सर और किसान, विद्यार्थी और आवारा आदमी की आर्थिक प्रकृति का और उनके सामाजिक तथा राजनीतिक गुणों का एक स्पष्ट चित्र हो। उसे इन लोगों के गुणों और अवगुणों को जानना चाहिए, उसे उन नारों और बारीक सूत्रों का मतलब समझना चाहिए, जिनकी आड़ में प्रत्येक वर्ग तथा प्रत्येक स्तर अपना स्वार्थ और अपने "दिल की बात" **छुपाते हैं**, उसे समझना चाहिए कि विभिन्न संस्थाएं तथा क़ानून किन स्वार्थों को और किस प्रकार व्यक्त करते हैं। परंतु यह "स्पष्ट चित्र" किसी किताब से नहीं मिल सकता: वह केवल उसके सजीव दृश्य प्रस्तुत करके तथा भंडाफोड़ करके हासिल

Scanned by CamScanner

हो सकता है, जो संबद्ध घड़ी में हमारे चारों ओर घटित हो रहा है, जिसके बारे में सभी अपने ढंग से, शायद फुसफुसाते हुए, बातें करते हैं, जो अमुक-अमुक घटनाओं में, अमुक-अमुक आंकड़ों में, अमुक-अमुक अदालती सज़ाओं, आदि, आदि में अभिव्यक्त होता है। जनता को क्रांतिकारी क्रियाशीलता का प्रशिक्षण देने की एक ज़रूरी और **बुनियादी** शर्त यह है कि इस प्रकार के सर्वांगीण राजनीतिक भंडाफोड़ किये जायें।

जनता के साथ पुलिस पाशविक दुर्व्यवहार करती है, धार्मिक संप्रदायों को बुरी तरह सताया जाता है, किसानों को कोड़ों से पीटा जाता है, सेंसर की निंदनीय व्यवस्था क़ायम की जाती है, सिपाहियों को यातनाएं दी जाती हैं, निर्दोष से निर्दोष सांस्कृतिक संगठनों या कार्रवाइयों का दमन किया जाता है, आदि—परंतु रूसी मज़दूर इन तमाम बातों को लेकर कोई ख़ास क्रांतिकारी कार्रवाई नहीं करते, आख़िर इसका क्या कारण है? क्या यह बात इसलिए नहीं है कि "आर्थिक संघर्ष" इस प्रकार की कार्रवाई के लिए उन्हें "प्रेरणा" नहीं देता, इसलिए नहीं कि इस तरह के काम से कोई "ठोस नतीजे" निकलने की "उम्मीद" नहीं होती, इसलिए नहीं कि इससे बहुत कम "सकारात्मक" चीज़ प्राप्त होती है? नहीं, हम फिर कहते हैं कि इस तरह का मत फैलाना महज़ उन लोगों के मत्थे दोष मढ़ना है, जिनका कोई दोष नहीं है, यह ख़ुद अपने कूपमंडूकपन (जो बर्नस्टीनवाद भी है) के लिए आम मज़दूरों को दोषी क़रार देना है। हमें अपने को, जन-आंदोलन से हमारे पीछे रह जाने को, इस बात के लिए दोषी ठहराना होगा कि अभी तक हम इन तमाम घृणित अनाचारों का काफ़ी व्यापक, ज़ोरदार और शीघ्र भंडाफोड़ संगठित नहीं कर सके। जब हम यह काम करेंगे (और हमें यह काम करना चाहिए तथा हम कर सकते हैं), तब पिछड़े से पिछड़ा मज़दूर भी समझने लगेगा **या महसूस करने लगेगा** कि विद्यार्थियों और धार्मिक संप्रदायों के सदस्यों पर, किसानों और लेखकों पर वे ही प्रतिक्रियावादी शक्तियां दमन और अत्याचार कर रही हैं, जो ख़ुद मज़दूर को जीवन के पग-पग पर उत्पीड़ित और दलित कर रही हैं, और जब वह इस बात को महसूस करने लगेगा, तो उसमें स्वयं इन तमाम अनाचारों का विरोध करने की प्रबल इच्छा पैदा होगी, और तब वह एक रोज़ सेंसर विभाग

Scanned by CamScanner

के अधिकारियों पर फ़िक़रे कसेगा, तो दूसरे रोज़ उस गवर्नर के महल के सामने प्रदर्शन करेगा, जिसने बेरहमी से किसानों के विद्रोह को कुचला है, और तीसरे रोज़ पादरियों के कपड़े पहने उन पुलिसवालों को सबक़ सिखायेगा, जिनके अत्याचारों को देखकर मध्ययुगीन धार्मिक न्यायालयों की याद ताज़ा हो जाती है, आदि। आम मज़दूरों के सामने नित नया और सर्वांगीण **भंडाफोड़ करने** के सिलसिले में हमने अभी बहुत कम, लगभग नहीं के बराबर काम किया है। हममें से बहुत से लोग अभी भी इसे नहीं समझते कि यह हमारा **कर्त्तव्य** है और अब भी हम कारख़ानों के जीवन की संकुचित सीमाओं के अंदर बंद हैं और स्वयंस्फूर्त ढंग से "नीरस दैनिक संघर्ष" के पीछे-पीछे घिसटते चलते हैं। ऐसी हालत में यह कहना कि "*ईस्क्रा* में आकर्षक एवं पूर्ण विचारों के प्रचार की तुलना में नीरस दैनिक संघर्ष की प्रगति के महत्व को कम करके आंकने की प्रवृत्ति दिखायी पड़ती है" (मार्तीनोव, पृ० ६१) पार्टी को पीछे घसीटना और तैयारी के हमारे अभाव तथा पिछड़ेपन को उचित ठहराना तथा उसकी प्रशंसा करना है।

जहां तक कुछ कार्रवाइयों के लिए जनता का आह्वान करने का प्रश्न है, जैसे ही तेज़ राजनीतिक आंदोलन शुरू होगा और सजीव तथा प्रभावोत्पादक ढंग से राजनीतिक भंडाफोड़ किया जायेगा, वैसे ही यह काम अपने आप होने लगेगा। किसी अपराधी को रंगे हाथों पकड़ लेना और उसे तुरंत जनता के सामने अपराधी घोषित कर देना, यह अपने आप में ऐसे कितने ही "आह्वानों" से कहीं अधिक कारगर होता है; अकसर उसका ऐसा असर होता है कि यह बताना भी असंभव हो जाता है कि भीड़ का किसने "आह्वान" किया था और किसने प्रदर्शन, आदि की अमुक योजना सुझायी थी। आह्वान—यदि हम आम हवाई आह्वान नहीं करना चाहते, बल्कि उसके ठोस अर्थ में इस शब्द का प्रयोग कर रहे हैं—तो केवल घटनास्थल पर ही किया जा सकता है; इस तरह का आह्वान केवल वे लोग ही कर सकते हैं, जो ख़ुद मैदान में कूद पड़ते हैं, और फ़ौरन कूद पड़ते हैं। सामाजिक-जनवादी पत्रकारों के रूप में हमारा काम यह है कि राजनीतिक भंडाफोड़ तथा राजनीतिक आंदोलन को हम और गहरा, विस्तृत तथा तेज़ बनायें।

Scanned by CamScanner

चलते-चलते दो-एक शब्द "आह्वान" के बारे में भी कह दिये जायें। वह **एकमात्र पत्र**, जिसने वसंत की घटनाओं[73] के **पहले** एक ऐसे मामले में सक्रिय रूप से हस्तक्षेप करने के लिए मज़दूरों का **आह्वान किया था**, जिससे निश्चय ही मज़दूरों के लिए कोई **ठोस नतीजे** निकलने की **उम्मीद** न थी, अर्थात फ़ौज में विद्यार्थियों की जबरन भरती, ***ईस्क्रा* था**। ११ जनवरी को जैसे ही "१८३ विद्यार्थियों को फ़ौज में भरती करने" का हुक्म जारी हुआ, वैसे ही *ईस्क्रा* ने (अपने फ़रवरी के अंक २ में) इस विषय पर एक लेख प्रकाशित किया, और किसी प्रदर्शन के शुरू होने के **पहले** ही उसने "विद्यार्थियों की मदद करने के लिए मज़दूरों का" खुलेआम **आह्वान किया**, उसने "जनता" का आह्वान किया कि उसे सरकार की इस दंभपूर्ण चुनौती का खुलेआम जवाब देना चाहिए। हम सभी लोगों से पूछते हैं: इस अनोखी बात का आख़िर क्या कारण है कि यद्यपि मार्तीनोव "आह्वानों" की इतनी चर्चा करते हैं, और यहां तक कि "आह्वानों" को एक ख़ास ढंग का काम बताते हैं, फिर भी उन्होंने **इस** आह्वान के बारे में एक शब्द तक नहीं कहा? इसके बाद क्या मार्तीनोव का यह आरोप सरासर कूपमंडूकता का परिचय नहीं देता कि *ईस्क्रा* **एकांगीपन** का दोषी है, क्योंकि वह किन्हीं ऐसी मांगों के वास्ते संघर्ष करने का काफ़ी "आह्वान" नहीं करता, जिनसे "कोई ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद" हो?

हमारे "अर्थवादियों" को, जिनमें *राबोचेये देलो* भी शामिल है, सफलता इसलिए मिली कि उन्होंने अपने को पिछड़े हुए मज़दूरों के अनुसार ढाल लिया था। लेकिन ऐसी मांगों के लिए लड़ने की इन तमाम बातों को, जिनसे कि "कोई ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद", आदि हो, सामाजिक-जनवादी मज़दूर, क्रांतिकारी मज़दूर (और ऐसे मज़दूरों की संख्या बढ़ रही है) क्रोध के साथ ठुकरा देगा, क्योंकि वह समझेगा कि वह रूबल में एक कोपेक की बढ़ती के पुराने राग का ही एक नया संस्करण है। ऐसा मज़दूर *राबोचाया मीस्ल* तथा *राबोचेये देलो* के अपने सलाहकारों से कहेगा: सज्जनो, आप लोग एक ऐसे काम में हद से ज़्यादा जोश-ख़रोश के साथ दख़ल देकर, जिसे हम ख़ुद बख़ूबी कर सकते हैं, अपना अमूल्य समय बेकार में नष्ट कर रहे हैं, और जो काम आपको सचमुच करना चाहिए, उसे आप नहीं कर रहे हैं। आपने

Scanned by CamScanner

यह कहकर कोई बड़ी होशियारी की बात नहीं कही है कि सामाजिक-जनवादियों का कार्यभार आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देना है; यह तो केवल पहला क़दम है, यह सामाजिक-जनवादियों का मुख्य कार्यभार नहीं है, क्योंकि दुनिया भर में और रूस में भी आर्थिक संघर्ष को राजनीतिक रूप देने की **शुरूआत तो अकसर ख़ुद पुलिस ही कर देती है**, और उससे मज़दूर ख़ुद इस बात को समझना सीखते हैं कि सरकार किसके पक्ष में है।* "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ मज़दूरों के जिस आर्थिक संघर्ष" का आप लोग इतना शोर मचा रहे हैं, उससे ऐसा लगता है, मानो आपने किसी नये अमरीका को खोज निकाला हो, वैसा संघर्ष इस समय रूस के अनेक दूरस्थ स्थानों में स्वयं मज़दूरों द्वारा चलाया जा रहा है, जिन्होंने हड़तालों का तो नाम सुना है, पर समाजवाद के बारे में लगभग कुछ भी नहीं सुना है। ऐसी ठोस मांगें उठाकर, जिनसे कोई ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद हो, आप हम मज़दूरों में जो "क्रियाशीलता" उत्प्रेरित करना चाहते हैं, उसका परिचय तो हम आज भी दे रहे हैं, अपने रोज़मर्रा के

* "आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देने" की मांग राजनीतिक कार्य के क्षेत्र में **स्वयंस्फूर्ति की पूजा करने** की प्रवृति को सबसे स्पष्ट रूप में व्यक्त करती है। बहुधा आर्थिक संघर्ष **स्वयंस्फूर्त** ढंग से, अर्थात "क्रांतिकारी कीटाणुओं, याने बुद्धिजीवियों" के हस्तक्षेप के बिना ही, वर्ग-चेतन सामाजिक-जनवादियों के हस्तक्षेप के बिना ही, राजनीतिक रूप धारण कर लेता है। उदाहरण के लिए, समाजवादियों के कोई हस्तक्षेप न करने पर भी ब्रिटिश मज़दूरों के आर्थिक संघर्ष ने राजनीतिक रूप धारण कर लिया। लेकिन सामाजिक-जनवादियों का कार्यभार यहीं ख़त्म नहीं हो जाता कि वे आर्थिक आधार पर राजनीतिक आंदोलन करें; उनका कार्यभार इस ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति को सामाजिक-जनवादी राजनीतिक संघर्ष में **बदलना** और आर्थिक संघर्ष से मज़दूरों में राजनीतिक चेतना की जो चिनगारियां पैदा होती हैं, उनका **इस्तेमाल** इस मक़सद से करना है कि मज़दूरों को **सामाजिक-जनवादी** राजनीतिक चेतना के स्तर तक **उठाया जा सके**। किंतु मार्तीनोव जैसे लोग मज़दूरों की अपने आप उठती हुई राजनीतिक चेतना को और ऊपर उठाने तथा बढ़ाते जाने के बजाय **स्वयंस्फूर्ति के सामने शीश झुकाते हैं** और उबा देने की हद तक बार-बार यही बात दोहराते रहते हैं कि आर्थिक संघर्ष मज़दूरों को अपने राजनीतिक अधिकारों के अभाव के बारे में सोचने की "प्रेरणा देता है"। सज्जनो, यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि अपने आप उठती हुई ट्रेड-यूनियनवादी राजनीतिक चेतना आपको यह **प्रेरणा** नहीं दे पाती कि सामाजिक-जनवादी होने के नाते आपके क्या कार्यभार हैं।

Scanned by CamScanner

व्यवसायगत छोटे-मोटे कामों में हम स्वयं ये ठोस मांगें पेश कर रहे हैं, बहुधा बुद्धिजीवी की किसी भी सहायता के बिना। परन्तु यही क्रियाशीलता हमारे लिए काफ़ी नहीं है। हम बच्चे नहीं हैं कि केवल "आर्थिक" राजनीति की पतली लपसी से ही संतुष्ट हो जायें: हम तो हर वह चीज़ जानना चाहते हैं, जो दूसरे लोग जानते हैं, हम राजनीतिक जीवन के **तमाम** पहलुओं को विस्तार से समझना और प्रत्येक राजनीतिक घटना में सक्रिय भाग लेना चाहते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि बुद्धिजीवी लोग हमें वे बातें कम बतायें, जो हम पहले से जानते हैं,* और

---

* यह साबित करने के लिए कि "अर्थवादियों" से मज़दूरों का यह काल्पनिक वार्तालाप सत्य पर आधारित है, हम दो ऐसे गवाहों का हवाला देंगे, जिन्हें असंदिग्ध रूप में मज़दूर आंदोलन का प्रत्यक्ष अनुभव है और जिन पर हम "मतवादियों" का पक्ष लेने का सबसे कम संदेह किया जा सकता है, क्योंकि उनमें से एक गवाह तो एक "अर्थवादी" हैं (जो *राबोचेये देलो* को भी एक राजनीतिक मुखपत्र समझते हैं!), और दूसरे गवाह एक आतंकवादी हैं। पहले गवाह ने एक बहुत ही सच्चा और सजीव लेख लिखा है, जिसका शीर्षक है *पीटर्सबर्ग का मज़दूर आंदोलन और सामाजिक-जनवादी आंदोलन के व्यावहारिक कार्यभार* और जो *राबोचेये देलो* के अंक ६ में प्रकाशित हुआ था। लेखक ने मज़दूरों को तीन श्रेणियों में बांटा है: (१) वर्ग-चेतन क्रांतिकारी, (२) बीच का स्तर और (३) बाक़ी सब। उनका कहना है कि बीच के इस स्तर को "अकसर अपने उन तात्कालिक आर्थिक हितों की अपेक्षा राजनीतिक जीवन के मसलों में कहीं ज़्यादा दिलचस्पी होती है, जिनका आम सामाजिक परिस्थितियों से संबंध बहुत पहले से समझ लिया गया है"... *राबोचाया मीस्ल* की "सख्त आलोचना की गयी है": "वह सदा उन्हीं बातों को बार-बार दुहराता रहता है, जिनके बारे में हम बहुत दिन पहले जानकारी प्राप्त कर चुके हैं, जिनके विषय में हम बहुत पहले पढ़ चुके हैं", "राजनीतिक समीक्षा में फिर कुछ नहीं है" (पृ० ३०-३१)। लेकिन तीसरा स्तर भी: "अपेक्षाकृत युवा और अधिक संवेदनशील मज़दूर, जिनको शराबख़ाना और गिरजाघर अभी कम भ्रष्ट कर पाये हैं, जिन्हें शायद ही कभी कोई राजनीतिक साहित्य पाने का मौक़ा मिलता है, कुछ अस्पष्ट ढंग से राजनीतिक घटनाओं के बारे में बहस करते हैं और विद्यार्थी उपद्रवों की उन्हें जो भी थोड़ी-बहुत ख़बरें मिल जाती हैं, उन पर विचार करते हैं", आदि। आतंकवादी लिखते हैं: "...अपने शहर के तो नहीं, पर दूसरे शहरों के कारख़ानों की ज़िंदगी की छोटी-छोटी बातों को वे एकाध बार पढ़ लेते हैं और फिर उन्हें नहीं पढ़ते... ये बातें उन्हें नीरस लगती हैं... मज़दूरों के किसी अख़बार में राज्यसत्ता के बारे में कुछ न कहना... मज़दूरों को

Scanned by CamScanner

वे बातें ज़्यादा बतायें, जो हम अभी नहीं जानते और जो हम अपने कारख़ाने के और "आर्थिक" अनुभव से कभी नहीं सीख सकते, मतलब यह कि आप लोग हमें राजनीतिक ज्ञान दीजिये। आप, बुद्धिजीवी लोग, यह ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और आपका **कर्त्तव्य** है कि अभी तक आपने हमें जो ज्ञान दिया है, उससे सौ गुनी और हज़ार गुनी अधिक मात्रा में यह ज्ञान आप हमें दें; और आप यह ज्ञान हमें केवल उन दलीलों, पुस्तिकाओं और लेखों के रूप में ही न दें (जो अकसर काफ़ी नीरस होते हैं—हमें स्पष्टवादिता के लिए माफ़ करें!), बल्कि हमारी सरकार और हमारे शासक वर्ग जीवन के तमाम क्षेत्रों में इस समय जो कुछ कर रहे हैं, उसका सजीव **भंडाफोड़** करते हुए आप हमें यह ज्ञान दें। अपनी इस ज़िम्मेदारी को पूरा करने में थोड़ा और जोश दिखाइये और **"आम मज़दूरों की क्रियाशीलता को बढ़ाने" की बातें थोड़ी कम कीजिये।** आप जितना समझते हैं, हम उससे कहीं अधिक क्रियाशील हैं और हम उन मांगों तक के लिए भी सड़कों पर खुलेआम लड़ने में समर्थ हैं, जिनसे कोई "ठोस नतीजे" निकलने की उम्मीद नहीं है! और हमारी क्रियाशीलता को "बढ़ाना" आपका काम नहीं है, क्योंकि **आप में तो ख़ुद क्रियाशीलता ही का अभाव है।** सज्जनो, स्वयंस्फूर्ति की पूजा थोड़ी कम कीजिये और **ख़ुद अपनी** क्रियाशीलता को बढ़ाने की चिंता ज़्यादा कीजिये!

(घ) अर्थवाद और आतंकवाद में क्या समानता है?

पिछली टिप्पणी में हमने एक "अर्थवादी" का और एक ऐसे ग़ैर सामाजिक-जनवादी आतंकवादी का मत उद्धृत किया था, जो संयोग से उनसे सहमत था। परंतु मोटे तौर पर कहा जाये, तो इन दोनों में कोई आकस्मिक नहीं, बल्कि एक अनिवार्य आंतरिक संबंध है, जिसकी हमें आगे चलकर तो चर्चा करनी ही पड़ेगी और जिस पर क्रांतिकारी क्रियाशीलता के प्रशिक्षण के सवाल

छोटा बच्चा समझना है... मज़दूर दुधमुंहे बच्चे नहीं हैं" *(स्वोबोदा,*[74] क्रांतिकारी-समाजवादी दल द्वारा प्रकाशित, पृ० ६९-७०)।

Scanned by CamScanner

के संबंध में ही थोड़ा विचार कर लेना चाहिए। "अर्थवादियों" और आजकल के आतंकवादियों की एकसमान जड़ है और वह है **स्वयंस्फूर्ति की पूजा करना**, जिसकी चर्चा एक आम घटना के रूप में हम पिछले अध्याय में कर चुके हैं और जिस पर यहां हम इस दृष्टि से विचार करेंगे कि राजनीतिक गतिविधि तथा राजनीतिक संघर्ष पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है। जो लोग "नीरस दैनिक संघर्ष" पर ज़ोर देते हैं और जो लोग अलग-अलग व्यक्तियों से बड़े से बड़े आत्मबलिदानभरे संघर्ष करने का आह्वान करते हैं, उनमें इतना बड़ा अंतर है कि पहली नज़र में पाठक को हमारी बात में विरोधाभास दिखायी देगा। परंतु यह कोई विरोधाभास नहीं है। "अर्थवादी" और आतंकवादी स्वयंस्फूर्ति के दो अलग-अलग छोरों की पूजा करते हैं: "अर्थवादी" "शुद्ध मज़दूर आंदोलन" की स्वयंस्फूर्ति की पूजा करते हैं, जबकि आतंकवादी उन बुद्धिजीवियों के प्रज्ज्वलित क्रोध की स्वयंस्फूर्ति की पूजा करते हैं, जिनमें क्रांतिकारी कार्य को मज़दूर आंदोलन से जोड़ने की या तो क्षमता नहीं होती या इसका अवसर नहीं मिलता। जो लोग इस बात की संभावना में विश्वास खो चुके हैं, या जिन्होंने कभी इस पर विश्वास नहीं किया, उनके लिए अपने क्रोध तथा क्रांतिकारी क्रियाशीलता को व्यक्त करने के लिए आतंक के सिवा कोई दूसरा मार्ग ढूंढ़ना सचमुच कठिन है। इस प्रकार स्वयंस्फूर्ति की उपरोक्त दोनों प्रकार की पूजाएं *Credo* के कुख्यात कार्यक्रम के **क्रियान्वयन के प्रारंभ** के अलावा और कुछ नहीं हैं: मज़दूरों को "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ अपना आर्थिक संघर्ष चलाने दो" (*Credo* के लेखक से हम इस बात की माफ़ी चाहते हैं कि हम उनके विचारों को मार्तीनोव के शब्दों में व्यक्त कर रहे हैं! हमारे विचार से हमें ऐसा करने का अधिकार है, क्योंकि *Credo* भी यही कहता है कि आर्थिक संघर्ष में मज़दूर "राजनीतिक व्यवस्था से टकराते हैं"), और राजनीतिक संघर्ष बुद्धिजीवियों को अपने बलबूते पर चलाने दो—ज़ाहिर है, आतंकवाद की सहायता से! यह एक पूर्णतया तर्कसंगत और अवश्यंभावी **निष्कर्ष** है, जिस पर ज़ोर देना ज़रूरी है, **हालांकि जो लोग** इस कार्यक्रम को कार्यान्वित करना आरंभ कर रहे हैं, **वे खुद यह नहीं महसूस करते** कि यह चीज अवश्यंभावी है। राजनीतिक गतिविधि का अपना तर्क होता है, जो उन लोगों की चेतना पर बिलकुल निर्भर

Scanned by CamScanner

नहीं होता, जो अच्छे से अच्छे इरादों के साथ आतंक का या आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देने का नारा देते हैं। नरक का रास्ता अच्छे इरादों से तैयार किया गया है और इस मामले में अच्छे इरादों के बावजूद कोई "कम से कम विरोध के मार्ग" पर, *Credo* के **शुद्ध बुर्जुआ** कार्यक्रम के मार्ग पर स्वयंस्फूर्त ढंग से खिंचते जाने से नहीं बच सकता। निश्चय ही यह कोई आकस्मिक घटना नहीं है कि बहुत-से रूसी उदारपंथी—वे, जो खुलेआम अपने को उदारपंथी कहते हैं, और साथ ही वे भी, जिन्होंने मार्क्सवाद का नक़ाब चेहरे पर डाल रखा है—आतंकवाद से हार्दिक सहानुभूति रखते हैं और आतंकवादी भावनाओं की वर्तमान लहर को बनाये रखने की कोशिश कर रहे हैं।

'क्रांतिकारी-समाजवादी स्वोबोदा दल' के निर्माण से, जिसने अपना उद्देश्य मज़दूर आंदोलन की हर तरह से मदद करना घोषित किया है, पर साथ ही जिसने अपने **कार्यक्रम** में आतंक को और सामाजिक-जनवाद से अपने को मानो मुक्त करने के काम को भी शामिल किया है, पा० बो० अक्सेलरोद की भविष्य को देख सकने की विलक्षण शक्ति एक बार फिर प्रमाणित हो जाती है, जिन्होंने **१८९७ के अंत में ही** (*वर्तमान कार्यभार और कार्यनीति* में) अपने विख्यात "भविष्य के दो मार्गों" की रूपरेखा सामने रखते समय सामाजिक-जनवाद के ढुलमुलपन के इन परिणामों के बारे में **अक्षरशः सही भविष्यवाणी कर दी थी।** रूस के सामाजिक-जनवादियों के बीच बाद में जितने मतभेद और झगड़े हुए, वे सब के सब भविष्य के इन दो मार्गों में मौजूद थे, जिस तरह बीज में पौधा मौजूद रहता है।*

* मार्तीनोव ने "दूसरी, अधिक यथार्थवादी (?) दुविधा" की कल्पना की है (*सामाजिक-जनवाद और मज़दूर वर्ग*, पृ० १९): "या तो सामाजिक-जनवाद सर्वहारा के आर्थिक संघर्ष का नेतृत्व प्रत्यक्ष रूप से अपने हाथ में ले लेगा और ऐसा करके (!) उसे एक क्रांतिकारी वर्ग संघर्ष में बदल देगा"... शायद "ऐसा करके" का मतलब है प्रत्यक्ष रूप से आर्थिक संघर्ष का नेतृत्व करके। क्या मार्तीनोव ऐसा एक भी उदाहरण दे सकते हैं, जहां **केवल** व्यवसायगत संघर्ष का नेतृत्व करने से **ही** कोई ट्रेड-यूनियन आंदोलन क्रांतिकारी वर्ग आंदोलन में परिवर्तित हो? क्या उनकी समझ में यह बात नहीं आती कि ऐसा "परिवर्तन" कर सकने के लिए हमें **सर्वांगीण** राजनीतिक आंदोलन का सक्रिय रूप से "प्रत्यक्ष नेतृत्व" करना होगा?.. "या दूसरी संभावना यह है कि सामाजिक-जनवाद मजदूरों

Scanned by CamScanner

इस दृष्टिकोण से यह बात भी साफ़ हो जाती है कि *राबोचेये देलो*, जो "अर्थवाद" की स्वयंस्फूर्ति के सामने खड़ा न रह सका, आतंकवाद की स्वयंस्फूर्ति के सामने भी खड़ा नहीं रह पाया है। यहां उन ख़ास दलीलों का उल्लेख करना दिलचस्प है, जिन्हें 'स्वोबोदा' आतंकवाद के समर्थन में पेश करता है। यह आतंकवाद की भयकारक भूमिका से "बिलकुल इनकार करता है" (*क्रांतिवाद का पुनरुत्थान*, पृ० ६४), इसके बजाय वह उसके "उत्तेजना पैदा करनेवाले महत्व" पर ज़ोर देता है। यह एक लाक्षणिक बात है, पहले, परंपरागत (सामाजिक-जनवाद के पहले के) उस विचारक्रम के, जो आतंकवाद पर ज़ोर देता था, छिन्न-भिन्न होने और ह्रास की मंज़िलों में से एक के रूप में। यह स्वीकार करना कि सरकार को अब "आतंकित" नहीं किया जा सकता और इसलिए आतंक के द्वारा उसे छिन्न-भिन्न भी नहीं किया जा सकता है, यह तो संघर्ष की एक प्रणाली के रूप में, या कार्यक्रम द्वारा स्वीकृत एक कार्यक्षेत्र के रूप में आतंकवाद को बिलकुल निकम्मा घोषित कर देने के बराबर है। दूसरे, यह और भी लाक्षणिक है "जनता को क्रांतिकारी क्रियाशीलता का प्रशिक्षण देने" के हमारे फ़ौरी कार्यभार को समझने में असफलता के एक उदाहरण के रूप में। 'स्वोबोदा' आतंकवाद का इसलिए प्रचार करता है कि वह मज़दूर आंदोलन को "उत्तेजित करने" और "ज़ोरों के साथ उकसाने" का एक तरीक़ा है। किसी ऐसी दलील की कल्पना करना मुश्किल है, जो ख़ुद इस तरह अपनी काट करती हो! क्या रूसी जीवन में यों ही काफ़ी अत्याचार नहीं होते कि ख़ास "उत्तेजकों" का आविष्कार करने की ज़रूरत पड़े? दूसरी ओर, क्या यह स्पष्ट नहीं है कि जो लोग रूसी अत्याचारों से भी उत्तेजित नहीं होते और न हो सकते हैं, वे इने-गिने

के आर्थिक संघर्ष का नेतृत्व अपने हाथ में न ले और इस प्रकार... ख़ुद अपने ही डैने काट डाले"... *राबोचेये देलो* की राय में, जिसे हम ऊपर उद्धृत कर चुके हैं, यह *ईस्क्रा* है, जो "आर्थिक संघर्ष का नेतृत्व अपने हाथ में नहीं लेता"। परंतु हम देख चुके हैं कि *ईस्क्रा* आर्थिक संघर्ष का नेतृत्व करने की कोशिश ***राबोचेये देलो* से कहीं अधिक** करता है, पर वह अपने को उसी तक सीमित नहीं रखता और उसके नाम पर अपने राजनीतिक कार्यभारों को **संकुचित नहीं करता।**

Scanned by CamScanner

(ङ) जनवाद के लिए सबसे आगे बढ़कर लड़नेवाले के रूप में मज़दूर वर्ग

हम देख चुके हैं कि अधिक से अधिक व्यापक राजनीतिक आंदोलन चलाना और इसलिए सर्वांगीण राजनीतिक भंडाफोड़ का संगठन करना गतिविधि का एक बिलकुल ज़रूरी और **सबसे ज़्यादा तात्कालिक** ढंग से ज़रूरी कार्यभार है, बशर्ते कि यह गतिविधि सचमुच सामाजिक-जनवादी ढंग की हो। परंतु हम इस नतीजे पर **केवल** इस आधार पर पहुंचे थे कि मज़दूर वर्ग को राजनीतिक शिक्षा और राजनीतिक ज्ञान की फ़ौरन ज़रूरत है। लेकिन यह सवाल को पेश करने का एक बहुत संकुचित ढंग है, कारण कि यह आम तौर पर हर सामाजिक-जनवादी आंदोलन के और ख़ास तौर पर वर्तमान काल के रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन के आम जनवादी कार्यभारों को भुला देता है। अपनी बात को और ठोस ढंग से समझाने के लिए हम मामले के उस पहलू को लेंगे, जो "अर्थवादियों" के सबसे ज़्यादा "नज़दीक" है, याने हम व्यावहारिक पहलू को लेंगे। "हर आदमी यह मानता है" कि मज़दूर वर्ग की राजनीतिक चेतना को बढ़ाना ज़रूरी है। सवाल यह है कि यह काम **कैसे** किया जाये, इसे करने के लिए क्या आवश्यक है? आर्थिक संघर्ष मज़दूरों को केवल मज़दूर वर्ग के प्रति सरकार के रवैये से संबंधित सवाल उठाने की "प्रेरणा देता है" और इसलिए हम "आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देने" की चाहे **जितनी भी कोशिश करें**, इस लक्ष्य की सीमाओं के अंदर-अंदर रहते हुए हम मज़दूरों की राजनीतिक चेतना को **कभी नहीं उठा पायेंगे**, कारण कि **ये सीमाएं बहुत संकुचित हैं**। मार्तीनोव का सूत्र हमारे लिए थोड़ा-बहुत महत्व रखता है, इसलिए नहीं कि उससे चीज़ों को उलझा देने की मार्तीनोव की योग्यता प्रकट होती है, बल्कि इसलिए कि उससे वह बुनियादी ग़लती साफ़ हो जाती है, जो सारे "अर्थवादी" करते हैं, अर्थात उनका यह विश्वास कि मज़दूरों की राजनीतिक वर्ग चेतना को उनके आर्थिक संघर्ष के **अंदर से** बढ़ाया जा सकता है, अर्थात इस संघर्ष को एकमात्र (या कम

Scanned by CamScanner

से कम मुख्य) प्रारंभिक बिंदु मानकर, उसे अपना एकमात्र (या कम से कम मुख्य) आधार बनाकर राजनीतिक वर्ग चेतना बढ़ायी जा सकती है। यह दृष्टिकोण बुनियादी तौर पर ग़लत है। "अर्थवादी" लोग उनके ख़िलाफ़ हमारे वाद-विवाद से नाराज़ होकर इन मतभेदों के मूल कारणों पर गंभीरतापूर्वक विचार करने से इनकार करते हैं, जिसका यह परिणाम होता है कि हम एक-दूसरे को क़तई नहीं समझ पाते, दो अलग-अलग ज़बानों में बोलते हैं।

मज़दूरों में राजनीतिक वर्ग चेतना **बाहर से ही** लायी जा सकती है, याने केवल आर्थिक संघर्ष के बाहर से, मज़दूरों और मालिकों के संबंधों के क्षेत्र के बाहर से। वह जिस एकमात्र क्षेत्र से आ सकती है, वह राज्यसत्ता तथा सरकार के साथ **सभी** वर्गों तथा स्तरों के संबंधों का क्षेत्र है, वह **सभी** वर्गों के आपसी संबंधों का क्षेत्र है। इसलिए इस सवाल का जवाब कि मज़दूरों तक राजनीतिक ज्ञान ले जाने के लिए क्या करना चाहिए, केवल यह नहीं हो सकता कि "मज़दूरों के बीच जाओ"—अधिकतर व्यावहारिक कार्यकर्त्ता, विशेषकर वे लोग, जिनका झुकाव "अर्थवाद" की ओर है, यह जवाब देकर ही संतोष कर लेते हैं। **मज़दूरों** तक राजनीतिक ज्ञान ले जाने के लिए सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ताओं को **आबादी के सभी वर्गों के बीच जाना** चाहिए और अपनी सेना की टुकड़ियों को **सभी दिशाओं में** भेजना चाहिए।

हमने इस बेडौल सूत्र को जान-बूझकर चुना है, हमने जान-बूझकर अपना मत अति सरल, एकदम दो-टूक ढंग से व्यक्त किया है—इसलिए नहीं कि हम विरोधाभासों का प्रयोग करना चाहते हैं, बल्कि इसलिए कि हम "अर्थवादियों" को वे काम करने की "प्रेरणा देना" चाहते हैं, जिनको वे बड़े अक्षम्य ढंग से अनदेखा कर देते हैं, हम उन्हें ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति और सामाजिक-जनवादी राजनीति के बीच अंतर देखने की "प्रेरणा देना" चाहते हैं, जिसे समझने से वे इनकार करते हैं। अतएव हम पाठकों से यह प्रार्थना करेंगे कि वे झुंझलायें नहीं, बल्कि अंत तक ध्यान से हमारी बात सुनें।

पिछले चंद बरसों में जिस तरह का सामाजिक-जनवादी मंडल सबसे अधिक प्रचलित हो गया है, उसे ही ले लीजिये और उसके काम की जांच कीजिये। "मज़दूरों के साथ उसका संपर्क" रहता

Scanned by CamScanner

है और वह इससे संतुष्ट रहता है, वह परचे निकालता है, जिनमें कारख़ानों में होनेवाले अनाचारों, पूंजीपतियों के साथ सरकार के पक्षपात और पुलिस के ज़ुल्म की निंदा की जाती है। मज़दूरों की सभाओं में जो बहस होती है, वह इन विषयों की सीमा के बाहर कभी नहीं जाती या जाती भी है, तो बहुत कम। ऐसा बहुत कम देखने में आता है कि क्रांतिकारी आंदोलन के इतिहास के बारे में, हमारी सरकार की घरेलू तथा वैदेशिक नीति के प्रश्नों के बारे में, रूस तथा यूरोप के आर्थिक विकास की समस्याओं के बारे में और आधुनिक समाज में विभिन्न वर्गों की स्थिति के बारे में भाषणों या वाद-विवादों का संगठन किया जाता है। और जहां तक समाज के अन्य वर्गों के साथ सुनियोजित ढंग से संपर्क स्थापित करने और बढ़ाने की बात है, उसके बारे में तो कोई सपने में भी नहीं सोचता। वास्तविकता यह है कि इन मंडलों के अधिकतर सदस्यों की कल्पना के अनुसार आदर्श नेता वह है, जो एक समाजवादी राजनीतिक नेता के रूप में नहीं, बल्कि ट्रेड-यूनियन के सचिव के रूप में अधिक काम करता है, क्योंकि हर ट्रेड-यूनियन का, मिसाल के लिए, किसी ब्रिटिश ट्रेड-यूनियन का सचिव आर्थिक संघर्ष चलाने में हमेशा मज़दूरों की मदद करता है, वह कारख़ानों में होनेवाले अनाचारों का भंडाफोड़ करने में मदद करता है, उन क़ानूनों तथा पगों के अनौचित्य का परदाफ़ाश करता है, जिनसे हड़ताल करने और धरना देने (हर किसी को यह चेतावनी देने के लिए कि अमुक कारख़ाने में हड़ताल चल रही है) की स्वतंत्रता पर आघात होता है, वह मज़दूरों को समझाता है कि पंच-अदालत का जज, जो स्वयं बुर्जुआ वर्गों से आता है, पक्षपातपूर्ण होता है, आदि, आदि। सारांश यह कि "मालिकों तथा सरकार के खिलाफ़ आर्थिक संघर्ष" ट्रेड-यूनियन का प्रत्येक सचिव चलाता है और उसके संचालन में मदद करता है। पर इस बात को हम जितना ज़ोर देकर कहें थोड़ा है कि **बस इतने ही से** सामाजिक-जनवाद **नहीं** हो जाता, कि सामाजिक-जनवादी का आदर्श ट्रेड-यूनियन का सचिव नहीं, बल्कि एक ऐसा **जन-नायक** होना चाहिए, जिसमें अत्याचार और उत्पीड़न के प्रत्येक उदाहरण से, वह चाहे किसी भी स्थान पर हुआ हो और उसका चाहे किसी भी वर्ग या स्तर से संबंध हो, विचलित हो उठने की क्षमता हो; उसमें इन तमाम उदाहरणों का सामान्यीकरण करके पुलिस की हिंसा तथा पूंजीवादी

Scanned by CamScanner

शोषण का एक अविभाज्य चित्र बनाने की क्षमता होनी चाहिए; उसमें प्रत्येक घटना का, चाहे वह कितनी ही छोटी क्यों न हो, लाभ उठाकर अपने समाजवादी विश्वासों तथा अपनी जनवादी मांगों को **सभी लोगों** को समझा सकने और **सभी लोगों** को सर्वहारा के मुक्ति-संग्राम का विश्व-ऐतिहासिक महत्व समझा सकने की क्षमता होनी चाहिए। उदाहरण के लिए, (इंगलैंड की सबसे शक्तिशाली ट्रेड-यूनियनों में से एक, ब्वायलर-मेकर्स सोसाइटी के विख्यात सचिव एवं नेता) राबर्ट नाइट जैसे नेता की विल्हेल्म लीबक्नेख़्त जैसे नेता से तुलना करके देखिये और इन दोनों पर उन अंतरों को लागू करने की कोशिश कीजिये, जिनमें मार्तीनोव ने *ईस्क्रा* के साथ अपने मतभेदों को प्रकट किया है। आप पायेंगे—मैं मार्तीनोव के लेख पर नज़र डालना शुरू कर रहा हूं—कि जहां राबर्ट नाइट "जनता का कुछ ठोस कार्रवाइयों के लिए आह्वान" ज़्यादा करते थे (पृ०३६), वहां विल्हेल्म लीबक्नेख़्त "सारी वर्तमान व्यवस्था का या उसकी आंशिक अभिव्यक्तियों का क्रांतिकारी स्पष्टीकरण" करने की ओर अधिक ध्यान देते थे (पृ० ३८-३६); जहां राबर्ट नाइट "सर्वहारा की तात्कालिक मांगों को निर्धारित करते थे तथा उनकी पूर्ति के उपाय बताते थे" (पृ०४१), वहां विल्हेल्म लीबक्नेख़्त यह करने के साथ-साथ "विभिन्न विरोधी स्तरों की सक्रिय गतिविधियों का संचालन करने" तथा "उनके लिए काम का एक सकारात्मक कार्यक्रम निर्दिष्ट करने"* से नहीं हिचकते थे (पृ०४१); राबर्ट नाइट ही थे, जिन्होंने "जहां तक संभव हो, आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देने" की कोशिश की (पृ०४२) और वह "सरकार के सामने ऐसी ठोस मांगें रखने में, जिनसे कोई ठोस नतीजा निकलने की उम्मीद हो", बड़े शानदार ढंग से कामयाब हुए (पृ०४३); लेकिन लीबक्नेख़्त "एकांगी" ढंग का "भंडाफोड़" करने में अधिक मात्रा में लगे रहते थे (पृ०४०); जहां राबर्ट नाइट "नीरस दैनिक संघर्ष की प्रगति" को अधिक महत्व देते थे (पृ०६१), वहां लीबक्नेख़्त "आकर्षक एवं पूर्ण विचारों के प्रचार" को ज़्यादा

* मिसाल के लिए, फ़्रांस और प्रशा के युद्ध के समय लीबक्नेख़्त ने **पूरे जनवादी पक्ष** के लिए कार्रवाई का एक कार्यक्रम निर्दिष्ट किया था—और मार्क्स तथा एंगेल्स ने तो १८४८ में यह और भी बड़े पैमाने पर किया था।

Scanned by CamScanner

महत्वपूर्ण समझते थे (पृ०६१); जहां लीबक्नेख़्त ने अपनी देखरेख में निकलनेवाले पत्र को "क्रांतिकारी विरोध-पक्ष का एक ऐसा मुखपत्र बना दिया था, जिसने हमारे देश की अवस्था का, विशेषतया राजनीतिक अवस्था का, जहां तक वह आबादी के सबसे विविध स्तरों के हितों से टकराती थी, भंडाफोड़ किया" (पृ०६३), वहां राबर्ट नाइट "सर्वहारा वर्ग के संघर्ष के साथ घनिष्ठ और सजीव संपर्क रखते हुए मज़दूर वर्ग के ध्येय के लिए काम करते थे" (पृ०६३)—यदि "घनिष्ठ और सजीव संपर्क" रखने का मतलब स्वयंस्फूर्ति की पूजा करना है, जिस पर हम ऊपर क्रिचेव्स्की तथा मार्तीनोव के उदाहरण का उपयोग करते हुए विचार कर चुके हैं—और "अपने प्रभाव के क्षेत्र को सीमित कर लेते थे", क्योंकि मार्तीनोव की तरह उनका भी यह विश्वास था कि ऐसा करके वह "उस प्रभाव को और गहरा बना देते थे" (पृ०६३)। संक्षेप में, आप देखेंगे कि मार्तीनोव सामाजिक-जनवाद को de facto* ट्रेड-यूनियनवाद के स्तर पर उतार लाते हैं, हालांकि वह ऐसा स्वभावत: इसलिए नहीं करते कि वह सामाजिक-जनवाद का भला नहीं चाहते, बल्कि केवल इसलिए करते हैं कि प्लेख़ानोव को समझने की तकलीफ़ गवारा करने के बजाय उन्हें प्लेख़ानोव को और गूढ़ बनाने की जल्दी पड़ी हुई है।

लेकिन आइये, अपने बयान की ओर लौट आयें। हमने कहा था कि यदि कोई सामाजिक-जनवादी सचमुच सर्वहारा वर्ग की राजनीतिक चेतना को सर्वांगीण रूप से विकसित करना आवश्यक समझता है, तो उसे "आबादी के सभी वर्गों के बीच जाना" चाहिए। इससे नीचे लिखे ये सवाल पैदा होते हैं: यह कैसे किया जाये? क्या यह करने के लिए हमारे पास काफ़ी शक्तियां हैं? क्या सभी अन्य वर्गों में इस प्रकार का काम करने के लिए कोई आधार मौजूद है? क्या ऐसा करने का अर्थ या इसका नतीजा वर्गीय दृष्टिकोण से पीछे हटना नहीं होगा? आइये, इन सवालों पर थोड़ा विचार करें।

हमें सिद्धांतकारों के रूप में, प्रचारकों, आंदोलनकर्त्ताओं और संगठनकर्त्ताओं के रूप में "आबादी के सभी वर्गों के बीच जाना"

* वस्तुत:।—सं०

Scanned by CamScanner

चाहिए। इस बात में किसी को संदेह नहीं है कि सामाजिक-जनवादियों के सैद्धांतिक काम का लक्ष्य विभिन्न वर्गों की सामाजिक तथा राजनीतिक स्थिति की सभी विशेषताओं का अध्ययन होना चाहिए। परंतु कारख़ानों के जीवन की विशेषताओं का अध्ययन करने का जितना प्रयत्न किया जाता है, उसकी तुलना में इस प्रकार के अध्ययन का काम बहुत ही कम, हद दरजे तक कम, किया जाता है। समितियों और मंडलों में आपको कितने ही ऐसे लोग मिलेंगे, जो मसलन धातु-उद्योग की किसी विशेष शाखा के अध्ययन में ही डूबे हुए हैं, पर इन संगठनों में आपको ऐसे सदस्य शायद ही कभी ढूंढ़े मिलेंगे, जो (जैसा कि अकसर होता है, किसी कारणवश व्यावहारिक काम नहीं कर सकते) हमारे देश के सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन के किसी ऐसे तात्कालिक प्रश्न के संबंध में विशेष रूप से सामग्री एकत्रित कर रहे हों, जो आबादी के अन्य हिस्सों में सामाजिक-जनवादी काम करने का साधन बन सके। मज़दूर वर्ग के आंदोलन के वर्तमान नेताओं में से अधिकतर में प्रशिक्षा के अभाव की चर्चा करते हुए हम इस प्रसंग में भी प्रशिक्षा की बात का ज़िक्र किये बिना नहीं रह सकते, क्योंकि "सर्वहारा के संघर्ष के साथ घनिष्ठ और सजीव संपर्क" की "अर्थवादी" अवधारणा से इसका भी गहरा संबंध है। लेकिन निस्संदेह, मुख्य बात है जनता के सभी स्तरों के बीच **प्रचार** और **आंदोलन**। पश्चिमी यूरोप के सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ता को इस मामले में उन सार्वजनिक सभाओं और प्रदर्शनों से, जिनमें भाग लेने की **सबको** स्वतंत्रता होती है, और इस बात से बड़ी आसानी हो जाती है कि वह संसद के अंदर **सभी** वर्गों के प्रतिनिधियों से बातें करता है। हमारे यहां न तो संसद है और न सभा करने की आज़ादी, फिर भी हम वैसे मज़दूरों की बैठकें करने में समर्थ हैं, जो **सामाजिक-जनवादी** की बातों को सुनना चाहते हैं। हमें आबादी के उन सभी वर्गों के प्रतिनिधियों की सभाएं बुलाने में भी समर्थ होना चाहिए, जो किसी **जनवादी** की बातों को सुनना चाहते हैं, कारण कि वह आदमी सामाजिक-जनवादी नहीं है, जो व्यवहार में यह भूल जाता है कि "कम्युनिस्ट हर क्रांतिकारी आंदोलन का समर्थन करते हैं"[75], कि इसलिए हमारा कर्त्तव्य है कि अपने समाजवादी विश्वासों को एक क्षण के लिए भी न छिपाते हुए हम

Scanned by CamScanner

समस्त जनता के सामने आम जनवादी कार्यभारों की व्याख्या करें तथा उन पर ज़ोर दें। वह आदमी सामाजिक-जनवादी नहीं है, जो व्यवहार में यह भूल जाता है कि **सभी** आम जनवादी समस्याओं को उठाने, तीक्ष्ण बनाने और हल करने में उसे और **सब लोगों से आगे** रहना है।

"पर यह तो सब मानते हैं!"—अधीर पाठक कह उठेंगे। और 'संघ' की अंतिम कांग्रेस ने *रावोचेये देलो* के संपादकमंडल को जो नयी हिदायतें दी हैं, उनमें साफ़ तौर पर यह कहा गया है: "सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन की उन सभी घटनाओं को राजनीतिक प्रचार और आंदोलन करने का साधन बनना चाहिए, जिनका मज़दूर वर्ग पर या तो एक विशेष वर्ग के रूप में प्रत्यक्ष ढंग से, या **स्वतंत्रता के संघर्ष में सभी क्रांतिकारी शक्तियों के अग्रदल के रूप में** प्रभाव पड़ता हो" (*दो कांग्रेसें*, पृ० १७; शब्दों पर ज़ोर हमारा है)। हां, सचमुच ये बड़े सच्चे और बड़े सुंदर शब्द हैं और हम पूर्णतया संतुष्ट हो जाते, यदि *रावोचेये देलो* उन्हें **समझ जाता, यदि वह अगली ही सांस में ठीक इनकी उलटी बातें न कहने लगता।** कारण कि अपने को "अग्रदल" या आगे बढ़ा हुआ दस्ता कहना ही काफ़ी नहीं है; हमें इस तरह काम करना होगा, जिससे अन्य **सभी** दस्ते हमें देखें और यह मानने के लिए मजबूर हों कि हम सबके आगे-आगे चल रहे हैं। और हम पाठकों से पूछते हैं: क्या दूसरे "दस्तों" के प्रतिनिधि इतने मूर्ख हैं कि वे केवल हमारे यह कहने से ही यह मान लेंगे कि हम "अग्रदल" हैं? ज़रा इस दृश्य की कल्पना कीजिये कि एक सामाजिक-जनवादी पढ़े-लिखे रूसी आमूलवादियों या उदारपंथी संविधानवादियों के किसी "दस्ते" के पास जाता है और यह कहता है: हम अग्रदल हैं, "अब हमारे सामने कार्यभार यह है कि जहां तक संभव हो, आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप दें"। यदि आमूलवादी या संविधानवादी में थोड़ी भी बुद्धि है (और रूस के आमूलवादियों तथा संविधानवादियों में बहुत-से बुद्धिमान लोग हैं), तो वह इस भाषण को सुनकर केवल मुस्करायेगा और कहेगा (ज़ाहिर है, अपने से, क्योंकि प्राय: वह अनुभवी कूटनीतिज्ञ होता है): "मालूम पड़ता है कि आपके 'अग्रदल' में सब बड़े भोले लोग भरे हुए

Scanned by CamScanner

है! वे इतना भी नहीं समझते कि मजदूरों के आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देना तो हमारा काम है, बुर्जुआ जनवाद के प्रगतिशील प्रतिनिधियों का काम है। अरे, पश्चिमी यूरोप के तमाम बुर्जुआ लोगों की तरह हम भी तो मज़दूरों को राजनीति में खींचना चाहते हैं, **पर ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति ही में, न कि सामाजिक-जनवादी राजनीति में।** मज़दूर वर्ग की ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति वास्तव में मज़दूर वर्ग की **बुर्जुआ राजनीति** ही होती है, और यहां 'अग्रदल' ने अपने जो काम बताये हैं, वे ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति का सूत्र हैं! इसलिए यदि वे चाहते हैं, तो अपने को जी भरकर सामाजिक-जनवादी कह लें, पर मैं बच्चा नहीं हूं कि एक नाम पर भड़क जाऊं! लेकिन इन लोगों को उन लकीर के फ़क़ीर ख़तरनाक कट्टरपंथियों के असर में नहीं आना चाहिए और उन सब लोगों को 'आलोचना की स्वतंत्रता' देनी चाहिए, जो अनजान में सामाजिक-जनवाद को ट्रेड-यूनियनवादी दिशा में ढकेल रहे हैं!"

और जब हमारे संविधानवादी को यह पता चलेगा कि सामाजिक-जनवाद के अग्रदल की बात कहनेवाले सामाजिक-जनवादी ऐसे समय में, जब हमारे आंदोलन पर स्वयंस्फूर्ति का लगभग पूर्ण आधिपत्य है, किसी चीज़ से इतना ज़्यादा नहीं डरते, जितना कि "स्वयंस्फूर्त तत्व के महत्व को कम करके आंकने" और "आकर्षक एवं पूर्ण विचारों के प्रचार की तुलना में नीरस दैनिक संघर्ष की प्रगति के महत्व को कम करके आंकने", इत्यादि से डरते हैं, तब तो उसकी मंद मुसकान होमर की सी हंसी में बदल जायेगी। यह "अग्रदल" भी कैसा है, जो इस बात से डरता है कि कहीं चेतना स्वयंस्फूर्ति से आगे न निकल जाये, जो किसी ऐसी साहसी "योजना" को पेश करने में घबराता है, जिसे वे सभी लोग भी मानने को मजबूर होते हैं, जो उससे भिन्न ढंग से सोचते हैं! यह लोग "अग्रदल" का मतलब "चंडावल" तो नहीं समझ रहे हैं?

मार्तीनोव की दलीलों के ज़रा इस उदाहरण पर भी ग़ौर कीजिये। पृष्ठ ४० पर वह फ़रमाते हैं कि बुराइयों का भंडाफोड़ करने की *ईस्क्रा* की कार्यनीति एकांगी है, कि "सरकार के प्रति हम चाहे जितना अविश्वास और घृणा फैला दें, जब तक हम उसे

Scanned by CamScanner

उलटने के लिए पर्याप्त रूप से सक्रिय सामाजिक शक्ति का विकास नहीं करेंगे, तब तक हम अपने लक्ष्य तक नहीं पहुंच पायेंगे"। यहां चलते-चलते यह बता दिया जाये कि यह जनता की क्रियाशीलता को बढ़ाने की वह चिंता है, जिससे हम भली भांति परिचित हैं और जिसके साथ अपनी क्रियाशीलता को सीमित करते जाने की कोशिश जारी रहती है। लेकिन इस वक़्त मुख्य सवाल यह नहीं है। अतएव मार्तीनोव यहां **क्रांतिकारी** शक्ति ("उलटने के लिए") का ज़िक्र करते हैं। और वह इससे क्या नतीजा निकालते हैं? साधारण काल में चूंकि विभिन्न सामाजिक स्तर अनिवार्यत: अलग-अलग चलते हैं, "इसलिए स्पष्ट है कि हम, सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ता, विरोध-पक्ष के विभिन्न स्तरों की सक्रिय गतिविधि का एकसाथ संचालन नहीं कर सकते, हम उनके लिए काम का एक सकारात्मक कार्यक्रम निर्दिष्ट नहीं कर सकते, हम उनसे यह नहीं कह सकते कि अपने हितों के लिए उन्हें हर दिन किस तरह लड़ना चाहिए... उदारपंथी हिस्से अपने तात्कालिक हितों के लिए सक्रिय संघर्ष का खुद संचालन कर लेंगे और यह संघर्ष उन्हें हमारी राजनीतिक व्यवस्था के आमने-सामने लाकर खड़ा कर देगा" (पृ० ४१)। इस प्रकार क्रांतिकारी शक्ति की और निरंकुश शासन को उलटने के लिए सक्रिय संघर्ष की बातों से शुरू करके मार्तीनोव तुरंत व्यावसायिक शक्ति और तात्कालिक हितों के लिए सक्रिय संघर्ष की बात पर पहुंच जाते हैं! कहने की आवश्यकता नहीं कि हम लोग विद्यार्थियों, उदारपंथियों, आदि के संघर्ष का उनके "तात्कालिक हितों" के लिए नेतृत्व नहीं कर सकते, परंतु आदरणीय "अर्थवादी" महानुभाव, जिस बात पर हम बहस कर रहे थे, वह यह नहीं थी! जिस बात पर हम बहस कर रहे थे, वह थी निरंकुश शासन को उलटने के काम में समाज के विभिन्न स्तरों की संभव और आवश्यक शिरकत, और यदि हम "अग्रदल" बनना चाहते हैं, तो "विरोध-पक्ष के अलग-अलग स्तरों की" **इन** "सक्रिय गतिविधियों" का नेतृत्व करना न केवल हमारे लिए **संभव** है, बल्कि उनका नेतृत्व करना हमारा कर्त्तव्य है। न केवल हमारे विद्यार्थी और उदारपंथी, आदि खुद उस संघर्ष का ध्यान रखेंगे, जो उन्हें "हमारी राजनीतिक व्यवस्था के आमने-सामने लाकर खड़ा कर देगा", बल्कि निरंकुश सरकार की पुलिस और अफ़सर स्वयं सबसे पहले और सबसे ज़्यादा इसका

Scanned by CamScanner

ध्यान रखेंगे। परंतु यदि हम समुन्नत जनवादी बनना चाहते हैं, तो "हमें" इस बात का ध्यान रखना होगा कि उन लोगों को, जो अभी केवल विश्वविद्यालय या केवल ज़ेम्स्त्वो, आदि की हालत से असंतुष्ट हैं, यह बात सोचने की **प्रेरणा** दी जाये कि पूरी राजनीतिक व्यवस्था बेकार है। **हमें अपनी** पार्टी के नेतृत्व में एक सर्वांगीण राजनीतिक संघर्ष इस तरह संगठित करने का काम अपने हाथ में लेना होगा कि इस संघर्ष को तथा इस पार्टी को विरोध-पक्ष के सभी हिस्सों से अधिक से अधिक समर्थन मिले। **हमें** अपने सामाजिक-जनवादी व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं में से ऐसे राजनीतिक नेता प्रशिक्षित करने होंगे, जिनमें इस सर्वांगीण संघर्ष के प्रत्येक रूप का नेतृत्व करने की क्षमता हो और जो बेचैन विद्यार्थियों, ज़ेम्स्त्वो के असंतुष्ट सदस्यों, धार्मिक संप्रदायों के खिन्न लोगों, नाराज़ प्राथमिक शिक्षकों, आदि सभी लोगों के लिए सही समय पर "काम का एक सकारात्मक कार्यक्रम निर्दिष्ट" कर सकें। इस कारण मार्तीनोव का यह कहना **एकदम ग़लत** है कि "इन हिस्सों के मामले में हम केवल बुराइयों का भंडाफोड़ करनेवालों की **नकारात्मक** भूमिका **ही** अदा कर सकते हैं... हम **केवल** इन लोगों की उन आशाओं को समाप्त करने में मदद दे सकते हैं, जो उन्होंने सरकार के विभिन्न आयोगों से बांध रखी हैं" (शब्दों पर ज़ोर हमारा है)। यह कहकर मार्तीनोव इस बात को बिलकुल साफ़ कर देते हैं कि वह यह **क़तई नहीं समझते** कि क्रांतिकारी "अग्रदल" की असल में क्या भूमिका होनी चाहिए। यदि पाठक यह याद रखें, तो मार्तीनोव की इस अंतिम बात का असली मतलब उनके सामने बिलकुल साफ़ हो जायेगा: "*ईस्क्रा* क्रांतिकारी विरोध-पक्ष का एक ऐसा मुखपत्र है, जो हमारे देश की अवस्था का, विशेषतया राजनीतिक अवस्था का भंडाफोड़ करता है, जहां तक वह आबादी के सबसे विविध स्तरों के हितों से टकराती है। लेकिन हम लोग सर्वहारा वर्ग के संघर्ष के साथ घनिष्ठ और सजीव संपर्क रखते हुए मज़दूर वर्ग के हित के लिए काम करते हैं और आगे भी करते रहेंगे। अपने सक्रिय प्रभाव के क्षेत्र को सीमित करके हम इस प्रभाव को और गहरा बना देते हैं" (पृ०६३)। इस निष्कर्ष का असली मतलब यह होता है: *ईस्क्रा* मज़दूर वर्ग की ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति

Scanned by CamScanner

को (हमारे व्यावहारिक कार्यकर्त्ता अपनी नासमझी, प्रशिक्षण के अभाव या विश्वासों के कारण जिसकी सीमाओं में अकसर अपने को बांधे रखते हैं) सामाजिक-जनवादी राजनीति के स्तर तक **उठाना** चाहता है, जबकि *राबोचेये देलो* सामाजिक-जनवादी राजनीति को ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति के स्तर पर **उतार लाना** चाहता है। और इससे भी बड़ी बात यह है कि यह दुनिया को विश्वास दिलाता है कि "समान ध्येय के अंतर्गत इन दो स्थितियों का पूर्ण मेल है" (पृ०६३)। O, sancta simplicitas!*

आगे चलें: क्या हमारे पास आबादी के **सभी** वर्गों के बीच अपना प्रचार करने और आंदोलन चलाने के लिए पर्याप्त शक्तियां हैं? बेशक हैं। हमारे "अर्थवादी", जिनमें प्राय: इस बात से इनकार करने की प्रवृत्ति देखी जाती है, यह नहीं देखते कि हमारा आंदोलन (लगभग) १८९४ से १९०१ तक कितनी विराट प्रगति कर चुका है। सच्चे "पुछल्लावादियों" की तरह वे अकसर आंदोलन की शुरूआत की दूर अतीत की मंज़िलों में जीते हैं। उस समय सचमुच हमारे पास बहुत ही कम शक्तियां थीं, उस समय यदि हम केवल मज़दूरों के बीच ही काम करते थे और जो कोई इस पथ से हटता था, उसकी यदि हम सख्त निंदा करते थे, तो यह सर्वथा स्वाभाविक और उचित था, उस समय हमारा सारा कार्यभार मज़दूर वर्ग में अपनी स्थिति को सुदृढ़ बनाना था। परंतु अब विराट शक्तियां आंदोलन की ओर खिंच आयी हैं, शिक्षित वर्गों की नयी पीढ़ी के सभी सर्वोत्तम प्रतिनिधि हमारे पास आ रहे हैं, देश भर में ऐसे अनेक लोग हैं, जिन्हें मजबूर होकर सुदूर प्रांतों में रहना पड़ रहा है, जो पहले कभी आंदोलन में हिस्सा ले चुके हैं या अब उसमें हिस्सा लेना चाहते हैं, जो सामाजिक-जनवाद की ओर झुक रहे हैं (जबकि १८९४ में रूसी सामाजिक-जनवादियों को उंगलियों पर गिना जा सकता था)। हमारे आंदोलन की एक प्रमुख राजनीतिक और संगठनात्मक कमज़ोरी यह है कि हम यह **नहीं जानते** कि इन तमाम शक्तियों का कैसे उपयोग किया जाये और उन्हें उचित काम कैसे दिया जाये (अगले अध्याय में हम इस पर अधिक विस्तार से चर्चा करेंगे)।

* ओ, पवित्र भोलेपन!।—सं०

Scanned by CamScanner

इनमें से अधिकतर शक्तियां ऐसी हैं, जिनको "मज़दूरों में जाने" का ज़रा भी अवसर नहीं मिलता, इसलिए यह भय निराधार है कि हम शक्तियों को अपने मुख्य काम से हटा लेंगे। और मजदूरों को सच्चा, सर्वांगीण और सजीव राजनीतिक ज्ञान देने के लिए ज़रूरी है कि हर जगह, हर सामाजिक स्तर में और तमाम ऐसे स्थानों में, जिनसे हम राजकीय यंत्र की अंदरूनी प्रेरक शक्तियों को जान सकते हैं, "हमारे अपने आदमी", याने सामाजिक-जनवादी हों। ऐसे लोगों की न केवल प्रचार और आंदोलन के लिए, बल्कि उससे भी अधिक संगठन के लिए आवश्यकता है।

क्या आबादी के सभी वर्गों के बीच काम करने का आधार है? जिन लोगों को यह नहीं दिखायी देता, वे, एक बार फिर कहना पड़ता है, अपनी चेतना के मामले में जनता की स्वयंस्फूर्त जागृति से बहुत पिछड़े हुए हैं। मज़दूर आंदोलन ने कुछ लोगों में असंतोष, तो कुछ में विरोध-पक्ष के लिए समर्थन मिलने की आशा और कुछ में यह चेतना पैदा की तथा करता जा रहा है कि निरंकुश शासन अब असहनीय हो गया है और उसका पतन अवश्यंभावी है। हम केवल नाम के "राजनीतिज्ञ" और सामाजिक-जनवादी साबित होंगे (जैसा कि वास्तव में अकसर होता है), यदि हम यह नहीं महसूस करेंगे कि हमारा काम असंतोष की प्रत्येक अभिव्यक्ति को इस्तेमाल करना और यहां तक कि प्रारंभिक विरोध के भी प्रत्येक कण को एकत्रित करके उसका सर्वोत्तम उपयोग करना है। यह इस बात से बिलकुल अलग है कि लाखों और करोड़ों श्रमजीवी किसान, दस्तकार, छोटे-छोटे कारीगर, आदि थोड़े भी योग्य सामाजिक-जनवादियों की सीखों को सदा बड़ी उत्सुकता से सुनेंगे। वस्तुत: क्या आबादी का एक भी ऐसा वर्ग है, जिसमें अधिकारों के अभाव तथा अत्याचार से असंतुष्ट कोई व्यक्ति, दल या मंडल न हो, और इसलिए जो सबसे फ़ौरी आम जनवादी आवश्यकताओं के प्रवक्ताओं के रूप में सामाजिक-जनवादियों के प्रचार की पहुंच के भीतर न हो? जो लोग इसका एक ठोस चित्र चाहते हैं कि आबादी के **सभी** वर्गों और स्तरों के बीच किसी सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ता का राजनीतिक आंदोलन किस ढंग का होना चाहिए, उन्हें हम बतायेंगे कि इस आंदोलन का प्रधान (किंतु निस्संदेह एकमात्र नहीं) रूप

Scanned by CamScanner

राजनीतिक भंडाफोड़ है, बशर्ते कि हम इस शब्द को व्यापक अर्थ में लें।

मैंने अपने लेख *कहां से शुरू करें?* (*ईस्क्रा*, अंक ४, मई, १९०१) में, जिसकी मैं आगे और विस्तार से चर्चा करूंगा, लिखा था: "हमें जनता के हर उस हिस्से में, जो थोड़ा भी चेतनाशील है, **राजनीतिक** भंडाफोड़ का शौक़ पैदा करना चाहिए। हमें इस बात से निराश नहीं होना चाहिए कि अभी राजनीतिक भंडाफोड़ करनेवाली आवाज़ें कमज़ोर, इनी-गिनी और सहमी हुई सी हैं। इसका कारण यह नहीं है कि पुलिस के अत्याचार के सामने सबने सिर झुका दिया है, बल्कि इसका कारण यह है कि जो लोग भंडाफोड़ कर सकते हैं और करने को तैयार हैं, उनके पास ऐसा कोई मंच नहीं है, जहां से वे बोल सकें, उनके पास ऐसे सुननेवाले नहीं हैं, जो बोलनेवालों की बातों को उत्सुकता से सुनें और उनको प्रेरणा दें, और इसका कारण यह है कि बोलनेवालों को जनता में वे तत्व कहीं दिखायी नहीं देते, जिनके पास 'सर्वशक्तिमान' रूसी सरकार के ख़िलाफ़ अपनी शिकायत ले जाने से कोई फ़ायदा हो... हम अब इस स्थिति में हैं और यह हमारा कर्त्तव्य है कि ज़ारशाही सरकार का देशव्यापी पैमाने पर भंडाफोड़ करने के लिए हम एक मंच प्रस्तुत करें। ऐसा मंच एक सामाजिक-जनवादी पत्र को ही होना चाहिए।"

राजनीतिक भंडाफोड़ के लिए सबसे आदर्श श्रोता मज़दूर वर्ग होता है, जो सर्वांगीण तथा सजीव राजनीतिक ज्ञान की आवश्यकता के मामले में सबसे अव्वल और सबसे आगे है, और इस ज्ञान को सक्रिय संघर्ष में परिणत करने की क्षमता भी उसी में ही सबसे ज़्यादा होती है, भले ही उससे "कोई ठोस नतीजे" निकलने की उम्मीद न हो। **देशव्यापी** भंडाफोड़ का मंच केवल एक अखिल रूसी पत्र ही हो सकता है। "एक राजनीतिक मुखपत्र के बिना आधुनिक यूरोप में किसी ऐसे राजनीतिक आंदोलन की कल्पना नहीं की जा सकती, जो सचमुच इस नाम के योग्य हो," और इस मामले में हमें रूस को भी निस्संदेह आधुनिक यूरोप में ही रखना होगा। हमारे देश में समाचारपत्र बहुत दिनों से एक शक्ति बन चुके हैं, नहीं तो सरकार उन्हें रिश्वत देने में और काल्कोव तथा मेश्चेर्स्की जैसे लोगों की आर्थिक मदद करने में हज़ारों रूबल खर्च न करती। और एकतांत्रिक रूस में यह कोई

Scanned by CamScanner

अनोखी बात नहीं है कि गुप्त रूप से निकलनेवाले पत्र सेंसरशिप की दीवारों को तोड़ डालें और क़ानूनी तथा रूढ़िवादी पत्रों को खुलेआम अपने बारे में चर्चा करने के लिए **मजबूर** कर दें। पिछली शताब्दी के आठवें दशक में, यहां तक कि छठे दशक में भी यही बात देखने में आयी थी। उस समय की तुलना में आज जनता के ऐसे हिस्से बहुत अधिक व्यापक और अधिक मज़बूत हो गये हैं, जो गुप्त रूप से निकलनेवाले ग़ैर क़ानूनी पत्रों को पढ़ने के लिए और, *ईस्क्रा* (अंक ७) को पत्र लिखनेवाले एक मज़दूर के शब्दों में, उनसे "किस तरह जीयें और किस तरह मरें" सीखने के लिए तैयार हैं। जिस प्रकार आर्थिक भंडाफोड़ कारख़ानों के मालिकों के ख़िलाफ़ युद्ध की घोषणा करता है, उसी प्रकार राजनीतिक भंडाफोड़ **सरकार** के ख़िलाफ़ युद्ध की घोषणा करता है। और भंडाफोड़ का यह आंदोलन जितना ही अधिक व्यापक और शक्तिशाली होगा, वह सामाजिक **वर्ग, जिसने युद्ध आरंभ करने के उद्देश्य से युद्ध की घोषणा की है,** संख्या में जितना बड़ा और जितना दृढ़संकल्प होगा, युद्ध की इस घोषणा का नैतिक महत्व भी उतना ही अधिक होगा। अतएव स्वयं राजनीतिक भंडाफोड़ उस व्यवस्था को **छिन्न-भिन्न करने** का एक शक्तिशाली साधन हैं, जिसका हम विरोध करते हैं, वे दुश्मन से उसके आकस्मिक अथवा अस्थायी सहयोगियों को अलग करने का साधन हैं, वे निरंकुश सत्ता के स्थायी साझेदारों के बीच दुश्मनी और अविश्वास फैलाने का साधन हैं।

हमारे ज़माने में सिर्फ़ वही पार्टी क्रांतिकारी शक्तियों का अग्रदल बन सकती है, जो सचमुच **देशव्यापी** पैमाने पर भंडाफोड़ों का **संगठन करेगी।** "देशव्यापी" शब्द का बहुत ही गूढ़ अर्थ है। भंडाफोड़ करनेवाले ग़ैर मज़दूर लोगों में से (और अग्रदल बनने के लिए हमें दूसरे वर्गों को अपनी ओर खींचना होगा) अधिकतर संभल-संभलकर चलनेवाले राजनीतिज्ञ और संतुलित दिमाग़ के व्यवहार-कुशल होते हैं। वे अच्छी तरह जानते हैं कि "सर्वशक्तिमान" रूसी सरकार की बात तो जाने दीजिये, एक छोटे-से सरकारी अफ़सर के ख़िलाफ़ भी "शिकायत" करना कितना ख़तरनाक होता है। और वे **हमारे पास** अपनी शिकायतें केवल तभी लायेंगे, जब वे देखेंगे कि उनकी शिकायतों का सचमुच कोई असर हो सकता है, कि हम किसी **राजनीतिक ताक़त**

Scanned by CamScanner

के प्रतिनिधि हैं। बाहरी लोगों की नज़रों में ऐसी ताक़त बनने के लिए हमें ख़ुद अपनी चेतना, पहल और उत्साह को बढ़ाने का काम बहुत लगन और धैर्य से करना होगा। इस काम को पूरा करने के लिए चंडावल के सिद्धांत और व्यवहार पर "अग्रदल" का ठप्पा लगा देने से काम नहीं चलेगा।

परंतु यदि हमें सरकार के सही माने में देशव्यापी भंडाफोड़ के काम को संगठित करना है, तो हमारे आंदोलन का वर्ग स्वरूप किन बातों में व्यक्त होगा?—"सर्वहारा वर्ग के संघर्ष के साथ घनिष्ठ और सजीव संपर्क रखने" के अति उत्साही समर्थक हमसे यह प्रश्न करेंगे और अब भी करते हैं। उत्तर है: इस बात में कि देशव्यापी भंडाफोड़ का यह काम हम, सामाजिक-जनवादी, करेंगे; कि हमारे आंदोलन से जितने भी प्रश्न उठेंगे, उन सबका सदा सच्ची सामाजिक-जनवादी भावना के साथ स्पष्टीकरण किया जायेगा और इस मामले में मार्क्सवाद को जान-बूझकर अथवा अनजाने में तोड़ने-मरोड़नेवाले विचारों को ज़रा भी आश्रय नहीं दिया जायेगा; इस बात में कि इस सर्वांगीण राजनीतिक आंदोलन का संचालन एक ऐसी पार्टी करेगी, जो सरकार पर समस्त जनता के नाम पर दबाव डालने का काम, सर्वहारा की राजनीतिक स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने के साथ-साथ उसे राजनीतिक शिक्षा देने का काम और मज़दूर वर्ग के आर्थिक संघर्ष का नेतृत्व करने, अपने शोषकों के साथ मज़दूर वर्ग के जो झगड़े अपने आप उठ खड़े होते हैं और जो अधिकाधिक बढ़ती हुई संख्या में मज़दूरों को झकझोरकर हमारे पक्ष में ले आते हैं, उन सबको इस्तेमाल करने का काम—इन कामों को अभिन्न रूप से एकसाथ मिलाकर करती है!

परंतु "अर्थवाद" की सबसे लाक्षणिक विशेषताओं में से एक यह है कि वह इस संपर्क के महत्व को और इससे ज़्यादा सर्वहारा वर्ग की सबसे फ़ौरी आवश्यकताओं (याने राजनीतिक आंदोलन तथा राजनीतिक भंडाफोड़ों के ज़रिए सर्वांगीण राजनीतिक प्रशिक्षा देने की आवश्यकता) और आम जनवादी आंदोलन की आवश्यकताओं के संबंध को नहीं समझता। समझ का यह अभाव न केवल "मार्तीनोव के" शब्दों में प्रकट होता है, बल्कि तथाकथित वर्गीय दृष्टिकोण के हवालों में भी प्रकट होता है, जिनका अर्थ यही होता है, जो इन शब्दों का है। मिसाल के लिए, यह देखिये कि

Scanned by CamScanner

ईस्क्रा के अंक १२ में प्रकाशित "अर्थवादी" पत्र के लेखकों ने इसे किस पकार व्यक्त किया है:* "*ईस्क्रा* का वही बुनियादी दोष" (विचारधारा को अधिक महत्व देना) "इस बात का कारण है कि वह विभिन्न सामाजिक वर्गों तथा प्रवृत्तियों के प्रति सामाजिक-जनवादियों के रुख़ के मामले में सुसंगत नहीं है। *ईस्क्रा* ने निरंकुशता के ख़िलाफ़ तुरंत संघर्ष छेड़ने की मसस्या को सैद्धांतिक तर्कों के द्वारा" ("पार्टी के कामों के विकास के द्वारा" नहीं, "जो पार्टी के विकास के साथ-साथ बढ़ते हैं...") "हल कर दिया। पर संभवत: वह यह महसूस करता है कि मौजूदा हालत में मज़दूरों के लिए यह कितना मुश्किल काम होगा" (*ईस्क्रा* महसूस ही नहीं करता, बल्कि अच्छी तरह जानता है कि यह काम मज़दूरों को उन "अर्थवादी" बुद्धिजीवियों की अपेक्षा कम कठिन मालूम पड़ता है, जिन्हें छोटे-छोटे बच्चों की फ़िक्र पड़ी हुई है, क्योंकि मज़दूर तो उन मांगों के लिए भी लड़ने को तैयार हैं, जिनसे, अविस्मरणीय मार्तीनोव के शब्दों में, "कोई ठोस नतीजा निकलने की उम्मीद नहीं होती")... "और चूंकि *ईस्क्रा* में इतना सब्र नहीं है कि वह उस वक़्त तक इंतज़ार कर सके, जब तक कि मज़दूर इस संघर्ष के लिए और शक्ति न बटोर लें, इसलिए वह उदारपंथियों तथा बुद्धिजीवियों के बीच सहयोगियों की तलाश करने लगता है..."।

हां, हां, हम उस वक़्त तक "इंतज़ार करने" का सारा "सब्र" सचमुच खो बैठे हैं, जिसकी उम्मीद तरह-तरह के "समझौतावादी" हमें बहुत दिनों से दिला रहे हैं, जब हमारे "अर्थवादी" **अपने** पिछड़ेपन का दोष मज़दूरों के मत्थे मढ़ना बंद कर देंगे और जब वे स्वयं अपनी शक्ति के अभाव को यह कहकर

---

* स्थानाभाव के कारण हम *ईस्क्रा* में इस पत्र का, जो "अर्थवादियों" के दृष्टिकोण का बहुत अच्छा प्रतिनिधित्व करता है, पूरा-पूरा उत्तर नहीं दे पाये। हम इस पत्र के प्रकाशन से बहुत खुश थे, क्योंकि हमारे पास विभिन्न स्रोतों से इस तरह की अफ़वाहें बहुत पहले पहुंच चुकी हैं कि *ईस्क्रा* एक सुसंगत वर्गीय दृष्टिकोण का अनुसरण नहीं कर रहा है, और हम बहुत दिन से इंतज़ार कर रहे थे कि कोई उचित अवसर मिले या कोई बाक़ायदा हम पर यह आरोप लगाये, तो हम जवाब दें। और हमारी आदत है कि हम हमलों का जवाब अपना बचाव करके नहीं, बल्कि जवाबी हमले से देते हैं।

Scanned by CamScanner

उचित ठहराना बंद कर देंगे कि मज़दूरों में ताक़त की कमी है। हम अपने "अर्थवादियों" से पूछते हैं: "इस संघर्ष के लिए मज़दूरों के और शक्ति बटोर लेने" का क्या मतलब है? क्या यह स्पष्ट नहीं है कि इसका मतलब मज़दूरों को राजनीतिक शिक्षा देना और हमारे देश की घृणित निरंकुशता के **सभी** पहलुओं का उनके सामने भंडाफोड़ करना है? और क्या यह बात साफ़ नहीं है कि हमें **ठीक इसी काम के लिए** "उदारपंथियों और बुद्धिजीवियों के बीच" वैसे "सहयोगियों" की ज़रूरत है, जो ज़ेम्स्त्वो,[76] अध्यापकों, सांख्यिकों, विद्यार्थियों, आदि पर होनेवाले राजनीतिक हमलों का भंडाफोड़ करने में हमारी मदद करने को तैयार हों? क्या यह आश्चर्यजनक रूप से "पेचीदा प्रक्रिया" सचमुच समझने में इतनी कठिन है? क्या पा० बो० अक्सेलरोद १८९७ से ही बार-बार आप लोगों से यह नहीं कहते आये हैं: "रूसी सामाजिक-जनवादियों के लिए ग़ैर सर्वहारा वर्गों में से समर्थक और प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोगी पाने की समस्या का हल प्रधानतया और मूलतया इस बात से निकलेगा कि खुद सर्वहारा वर्ग के अंदर प्रचार कार्य किस तरह से चलाया जाता है"? परंतु मार्तीनोव जैसे लोग और दूसरे "अर्थवादी" अब भी यह सोच रहे हैं कि **पहले** "मालिकों तथा सरकार के खिलाफ़ आर्थिक संघर्ष" चलाकर (ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति के लिए) मज़दूरों को शक्ति बटोरना चाहिए और **फिर**—शायद ट्रेड-यूनियनवादी "क्रियाशीलता के प्रशिक्षण" से—सामाजिक-जनवादी क्रियाशीलता की ओर "बढ़ जाना चाहिए"!

"...अपनी इस तलाश में," "अर्थवादी" आगे कहते हैं, "*ईस्क्रा* अकसर वर्गीय दृष्टिकोण को त्याग देता है, वर्ग विरोधों पर परदा डाल देता है और सरकार के खिलाफ़ फैले हुए आम असंतोष को सबसे आगे रखता है, हालांकि 'सहयोगियों' में इस असंतोष की मात्रा और इसके कारण काफ़ी अलग-अलग होते हैं। उदाहरण के लिए, ज़ेम्स्त्वो के प्रति *ईस्क्रा* का रुख इसी तरह का है"... कहा जाता है कि *ईस्क्रा* "सरकार के आश्वासनों से असंतुष्ट अभिजात वर्ग को मज़दूर वर्ग की मदद का वचन तो देता है, पर आबादी के इन स्तरों के बीच जो वर्ग विरोध पाये जाते हैं, उनके बारे में एक शब्द भी नहीं कहता"। यदि पाठक *निरंकुशता*

Scanned by CamScanner

और ज़ेम्स्त्वो (*ईस्क्रा* के अंक २ और ४ में प्रकाशित) शीर्षक लेखों को देखेंगे, जिनकी ओर संभवत: पत्र के लेखक इशारा कर रहे हैं, तो वे पायेंगे कि इन लेखों* में "सामंती नौकरशाही ढंग के जिला बोर्डों (ज़ेम्स्त्वो) के नरम आंदोलन" के प्रति और "यहां तक कि संपत्तिवान वर्गों की स्वतंत्र गतिविधियों" के प्रति **सरकार** के रुख़ की चर्चा की गयी है। इन लेखों में कहा गया है कि मज़दूर उस वक़्त चुप नहीं रह सकते, जब सरकार ज़ेम्स्त्वो के ख़िलाफ़ जंग चला रही है और ज़ेम्स्त्वोवालों का आह्वान किया गया है कि उन्हें अब नरम भाषण देना बंद करना चाहिए, और जब क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद अपनी पूरी शक्ति के साथ सरकार का सामना कर रहा हो, तब उन्हें दृढ़ता और मज़बूती के साथ बोलना चाहिए। यह स्पष्ट नहीं है कि पत्र के लेखकगण यहां किस बात से असहमत हैं। क्या उनका विचार है कि "संपत्तिवान वर्ग" और "सामंती नौकरशाही ढंग के ज़ेम्स्त्वो" जैसे शब्दों को मज़दूर "नहीं समझेंगे"? क्या उनका विचार है कि नरम भाषण देना बंद करने और दृढ़ता और मज़बूती के साथ बोलने के लिए ज़ेम्स्त्वो पर **ज़ोर डालना** "विचारधारा को अधिक महत्व देना" है? क्या उनका यह ख़याल है कि यदि मज़दूरों को इस बात का ज़रा भी ज्ञान न हो कि निरंकुश शासन का ज़ेम्स्त्वो के प्रति **भी** क्या रवैया है, तब भी क्या वे निरंकुश शासन के ख़िलाफ़ संघर्ष करने के लिए "शक्ति बटोर सकेंगे"? इस सब पर भी कोई प्रकाश नहीं पड़ता। केवल एक बात साफ़ है और वह यह कि पत्र के लेखकों के दिमाग़ में इसका बहुत ही धुंधला चित्र है कि सामाजिक-जनवाद के राजनीतिक काम क्या हैं। यह बात उनके इस कथन से और भी स्पष्ट हो जाती है: "विद्यार्थी आंदोलन के प्रति भी 'ईस्क्रा' का यही" (अर्थात "वर्ग विरोधों पर परदा डाल देने" का) "रुख़ है"। याने हम लोगों को मज़दूरों से यह अपील करने के बजाय कि उन्हें सार्वजनिक प्रदर्शनों के द्वारा यह ऐलान करना चाहिए कि हिंसा, अव्यवस्था और अनाचार का वास्तविक केंद्र

* और इन लेखों के दरमियान जो समय गुज़रा, उसमें *ईस्क्रा* ने (अंक ३ में) एक ऐसा लेख छापा था, जिसमें ख़ास तौर पर देहात में पाये जानेवाले वर्ग विरोधों की चर्चा की गयी थी। (देखें *मज़दूरों की पार्टी और किसान*।—**सं०**)

Scanned by CamScanner

विद्यार्थी नहीं, बल्कि रूसी सरकार है (ईस्क्रा, अंक २*)—*राबोचाया मीस्ल* के अंदाज़ में यक़ीनन दलीलें देनी चाहिए थीं! और इस तरह के विचार ये सामाजिक-जनवादी फ़रवरी और मार्च की घटनाओं के बाद, १९०१ की शरद-ऋतु में व्यक्त कर रहे हैं, जब विद्यार्थी आंदोलन में एक नया उभार आनेवाला है, जिससे प्रकट होता है कि इस क्षेत्र में भी निरंकुशता के ख़िलाफ़ "स्वयंस्फूर्त" विरोध आंदोलन का सचेतन रूप से सामाजिक-जनवादी नेतृत्व करने के काम से **आगे** निकला जा रहा है। पुलिस और कज़्ज़ाक जिन विद्यार्थियों को पीट रहे हैं, उनकी मदद में उठने की मज़दूरों की स्वयंस्फूर्त कोशिश सामाजिक-जनवादी संगठन के सचेतन कार्य से आगे निकली जा रही है!

"और फिर भी," पत्र के लेखक आगे लिखते हैं, "*ईस्क्रा* अन्य लेखों में हर तरह के समझौतों की कड़ी निंदा करता है और, उदाहरण के लिए, गेदवादियों के असहनशील व्यवहार का समर्थन करता है।" सामाजिक-जनवादियों में आजकल पाये जानेवाले मतभेदों के बारे में जो लोग प्राय: बड़े आत्म-विश्वास और बड़े हलकेपन के साथ यह कह देते हैं कि ये मतभेद बहुत ही छोटे हैं और उनको लेकर आंदोलन के दो टुकड़े कर डालना उचित नहीं है, उन लोगों को हम इन शब्दों पर बहुत गंभीरता से विचार करने की सलाह देंगे। एक तरफ़, कुछ ऐसे लोग हैं, जो समझते हैं कि हमने अभी मज़दूरों को यह समझाने के लिए कि निरंकुशता विभिन्न वर्गों के साथ किस प्रकार दुश्मनी का बरताव करती है और उन्हें यह बताने के लिए कि समाज के अलग-अलग हिस्से निरंकुशता का किस तरह विरोध करते हैं बहुत ही कम काम किया है; दूसरी तरफ़, वे लोग हैं, जो इस काम को "समझौता" करना—ज़ाहिर है "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" से समझौता—समझते हैं; क्या ये दोनों तरह के लोग एक संगठन के अंदर रहकर सफलतापूर्वक काम कर सकते हैं?

*व्ला० इ० लेनिन, *१८३ विद्यार्थियों की फ़ौज में जबरन भरती*।—सं०

Scanned by CamScanner

हमने किसानों की मुक्ति की चालीसवीं वर्षगांठ[77] पर देहाती इलाक़ों में वर्ग संघर्ष शुरू करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया (अंक ३) और वीत्ते से गुप्त ज्ञापन[78] के संबंध में कहा कि स्थानीय स्वशासन तथा निरंकुश शासन के बीच ऐसा मतभेद पैदा हो गया है, जिसे सुलझाया नहीं जा सकता (अंक ४); नये क़ानून[79] के सिलसिले में हमने सामंती ज़मींदारों पर और उस सरकार पर हमला किया, जो उनकी सेवा करती है (अंक ८) और ग़ैर क़ानूनी ढंग से होनेवाली ज़ेम्स्त्वो की कांग्रेस का स्वागत किया तथा उनसे अनुरोध किया कि अब उन्हें ऐसी दरख़ास्तें देना बंद करना चाहिए, जिनसे ख़ुद उनके सम्मान को धक्का लगता है और उन्हें सामने आकर लड़ना चाहिए (अंक ८);* हमने उन विद्यार्थियों की हिम्मत बढ़ायी, जो राजनीतिक संघर्ष की आवश्यकता को महसूस करने लगे थे और जिन्होंने ऐसा संघर्ष शुरू भी कर दिया था (अंक ३), और साथ ही हमने (२५ फ़रवरी को मास्को के विद्यार्थियों की कार्यकारिणी समिति के घोषणापत्र की चर्चा करते हुए, अंक ३ में) "शुद्ध विद्यार्थी" आंदोलन के उन समर्थकों की "घोर नासमझी" पर सख़्त हमला किया, जो विद्यार्थियों से यह कहते थे कि उन्हें सड़कों पर होनेवाले प्रदर्शनों में शामिल नहीं होना चाहिए; हमने *रोस्सीया* अख़बार[80] के धूर्त उदारपंथियों के "अर्थहीन सपनों" और उनकी "बगुला-भगती" का भंडाफोड़ किया (अंक ५), और साथ ही हमने इस बात की भी चर्चा की कि "शांतिपूर्ण लेखकों, वृद्ध प्रोफ़ेसरों, वैज्ञानिकों और ज़ेम्स्त्वो के प्रसिद्ध उदारपंथी सदस्यों" पर सरकार के यातना-गृहों में कैसे भीषण "अत्याचार हो रहे हैं" (अंक ५, *साहित्य पर पुलिस का छापा* शीर्षक लेख); हमने इस बात का भंडाफोड़ किया कि "मज़दूरों की भलाई की राज्य की ओर से देखभाल" के कार्यक्रम का असली मतलब क्या है और हमने इन "मूल्यवान स्वीकृतियों" का स्वागत किया कि "ऊपर से सुधार करके नीचे से इन सुधारों की मांग को उठने से रोक देना बेहतर है बजाय इसके कि हम इन मांगों के उठाये जाने का इंतज़ार करते रहें" (अंक ६); ** हमने उन सांख्यिकीविदों की

---

*व्ला० इ० लेनिन, *ज़ेम्स्त्वो की कांग्रेस*।—सं०

**व्ला० इ० लेनिन, *मूल्यवान स्वीकृतियां*।—सं०

Scanned by CamScanner

हिम्मत बढ़ायी, जो सरकार के विरोध में आवाज़ उठा रहे थे (अंक ७), और उन सांख्यिकीविदों की निंदा की, जो हड़ताल तोड़नेवालों का काम कर रहे थे (अंक ९)। जो कोई इस कार्यनीति को सर्वहारा की वर्ग चेतना को धुंधला करना और **उदारतावाद से समझौता** करना समझता है, वह केवल यही स्पष्ट कर देता है कि उसने *Credo* के कार्यक्रम का असली मतलब ज़रा भी नहीं समझा है और वह उसका चाहे जितना भी खंडन क्यों न करता हो, पर वह de facto **उसी कार्यक्रम पर अमल कर रहा है!** कारण कि ऐसा करके वह सामाजिक-जनवादी आंदोलन को "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" की ओर घसीट रहा है और **उदारतावाद के सामने घुटने टेक रहा है,** वह हर "उदारपंथी" सवाल में सक्रिय रूप से हस्तक्षेप करने और ऐसे सवाल की तरफ़ **स्वयं अपना** सामाजिक-जनवादी रुख़ स्पष्ट करने के कर्त्तव्य से विमुख हो रहा है।

(च) एक बार फिर "मिथ्या प्रचारक", एक बार फिर "ढकोसलेबाज़"

पाठकों को याद होगा कि यह शिष्ट शब्दावली *राबोचेये देलो* की है, जिसने इन शब्दों के द्वारा हमारे इस आरोप का जवाब दिया है कि वह "मज़दूर आंदोलन को बुर्जुआ जनवाद का साधन बना देने के लिए अप्रत्यक्ष रूप से ज़मीन तैयार कर रहा है"। अपने भोलेपन के कारण *राबोचेये देलो* ने तय कर डाला कि यह आरोप बहस के दौरान किये गये एक हमले से अधिक कुछ नहीं है, मानो इन दुष्ट मतवादियों ने उसके विषय में हर तरह की अप्रिय बातें कहने का निश्चय कर लिया हो। और भला बुर्जुआ जनवाद का साधन होने से ज़्यादा अप्रिय बात और क्या हो सकती है? और इसलिए उसने मोटे-मोटे अक्षरों में आरोप का "खंडन" छापा है: "यह सरासर मिथ्या प्रचार के सिवा कुछ नहीं है" (*दो कांग्रेसें*, पृ० ३०), "यह ढकोसलाबाज़ी है" (पृ० ३१), "यह स्वांग भरना है" (पृ० ३३)। जुपिटर की तरह ही *राबोचेये देलो* (हालांकि उसमें और जुपिटर में बहुत कम समानता

Scanned by CamScanner

है) इसलिए नाराज़ है कि वह ग़लती पर है, और जल्दी-जल्दी गालियां देकर वह यह साबित कर रहा है कि अपने विरोधियों के तर्क को समझने में वह असमर्थ है। लेकिन यदि वह थोड़ा भी सोचता, तो उसकी समझ में आ जाता कि जन-आंदोलन की स्वयंस्फूर्ति की **किसी भी तरह** पूजा करने और सामाजिक-जनवादी राजनीति का **किसी भी तरह** दरजा घटाकर ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति के स्तर पर ले आने का मतलब मज़दूर आंदोलन को बुर्जुआ जनवाद का साधन बना देने के लिए ज़मीन तैयार करने के सिवा और कुछ नहीं है। स्वयंस्फूर्त मज़दूर आंदोलन अपने से केवल ट्रेड-यूनियनवाद ही उत्पन्न कर सकता है (लाज़िमी तौर पर उत्पन्न करता है) और मज़दूर वर्ग की ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति मज़दूर वर्ग की बुर्जुआ राजनीति ही होती है। मज़दूर वर्ग की राजनीति केवल इसी बात से सामाजिक-जनवादी राजनीति नहीं बनती कि वह राजनीतिक संघर्ष में, या यहां तक कि राजनीतिक क्रांति में भाग ले रहा है। क्या *राबोचेये देलो* इस बात से इनकार करने की हिम्मत कर सकता है? क्या वह अब इतने दिनों बाद भी सार्वजनिक रूप से, साफ़-साफ़ और बिना किसी लाग-लपेट के हमें यह बता सकता है कि उसकी समझ के मुताबिक़ अंतर्राष्ट्रीय तथा रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन के ज़रूरी सवाल क्या-क्या हैं? नहीं, ऐसी बात करने की वह कभी हिम्मत नहीं करेगा, क्योंकि उसने तो एक ही गुर पकड़ लिया है, जिसे हम इस तरह बयान कर सकते हैं कि हर बात के जवाब में "नहीं" कहते जाओ: यह मैं नहीं हूं, यह मेरा घोड़ा नहीं है, मैं नहीं चलाता इसे। हम "अर्थवादी" नहीं हैं, *राबोचाया मीस्ल* "अर्थवाद" के पक्ष में नहीं है और रूस में "अर्थवाद" कहीं है ही नहीं। यह एक बहुत बढ़िया और "नीति लायक़" चाल है। पर इसमें बस एक ही दोष है—इस चाल का प्रयोग करनेवाले पत्रों को प्राय: लोग "जीहुज़ूरी करनेवाला" कहते हैं।[81]

राबोचेये देलो का विचार है कि आम तौर पर रूस में बुर्जुआ जनवाद केवल "कल्पना लोक की छाया" है (*दो कांग्रेसें*, पृ० ३२)*। कितने सुखी हैं ये लोग! शुतुरमुर्ग़ की तरह रेत में सिर

*यहीं "रूस की उन ठोस परिस्थितियों" का हवाला दिया गया है,

Scanned by CamScanner

घुसाकर समझते हैं कि चारों तरफ़ की हर चीज़ ग़ायब हो गयी है! वे उदारपंथी पत्रकार, जो हर महीने मार्क्सवाद के पतन एवं लोप के उपलक्ष्य में अपने विजयोल्लास की घोषणा दुनिया के सामने किया करते हैं; वे उदारपंथी पत्र (*संक्तपेतेरबूर्गस्कीये वेदोमोस्ती, रूस्कीये वेदोमोस्ती*[82] और अन्य बहुत-से), जो मज़दूरों के पास वर्ग संघर्ष की ब्रेंतानो धारणा[83] और ट्रेड-यूनियन मार्का राजनीति ले जानेवाले उदारपंथियों को प्रोत्साहन दिया करते हैं; मार्क्सवाद के वे प्रतिभाशाली आलोचक, जिनकी वास्तविक प्रवृत्तियों को *Credo* ने इतनी अच्छी तरह स्पष्ट कर दिया था और जिनकी रचनाएं ही केवल आजकल रूस में बिना किसी रोक-रुकावट के वितरित हो सकती हैं; **ग़ैर** सामाजिक-जनवादी क्रांतिकारी प्रवृत्तियों का वह उभार, जो फ़रवरी तथा मार्च की घटनाओं के बाद से ख़ास तौर पर देखने में आ रहा है—ये सब चीज़ें बेशक केवल कल्पना लोक की छाया हैं! इन सबका बुर्जुआ जनवाद से कोई भी संबंध नहीं है!

राबोचेये देलो को तथा *ईस्क्रा* के अंक १२ में प्रकाशित "अर्थवादी" पत्र के लेखकों को "इस बात के कारणों पर गंभीरता से विचार करना" चाहिए कि "वसंत की घटनाओं से सामाजिक-जनवाद की प्रतिष्ठा और आदर बढ़ने के बजाय ग़ैर सामाजिक-जनवादी क्रांतिकारी प्रवृत्तियों में इतना उभार क्यों आया"? इसका कारण यह था कि हमारे सामने जो कार्यभार थे, उनकी कसौटी पर हम खरे नहीं उतरे। आम मज़दूर हमसे अधिक क्रियाशील निकले; हमारे पास ऐसे क्रांतिकारी नेता और संगठनकर्त्ता नहीं थे, जिन्हें पर्याप्त प्रशिक्षा मिल चुकी हो, जिन्हें

जो "मज़दूर आंदोलन को दैवी अनिवार्यता के साथ क्रांतिकारी मार्ग पर ढकेल रही हैं"। परंतु ये लोग यह बात समझने से इनकार करते हैं कि यह भी संभव है कि मज़दूर वर्ग के आंदोलन का क्रांतिकारी मार्ग सामाजिक-जनवादी मार्ग न हो! जब पश्चिमी यूरोप में निरंकुश सत्ता का राज्य था, तब वहां का पूरा बुर्जुआ वर्ग मज़दूर वर्ग को क्रांति के मार्ग पर "ढकेलता था", जान-बूझकर ढकेलता था। परंतु हम, सामाजिक-जनवादी, उससे तो संतुष्ट नहीं हो सकते हैं। और यदि हम किसी भी तरह सामाजिक-जनवादी राजनीति को स्वयंस्फूर्त, ट्रेड-यूनियनवादी राजनीति के स्तर पर उतार लाते हैं, तो ऐसा करके हम बुर्जुआ जनवाद के हाथों में खेलते हैं।

Scanned by CamScanner

विरोधी पक्ष के सभी हिस्सों की भावनाओं का पूरा-पूरा ज्ञान हो और जिनमें आंदोलन के आगे-आगे चलने, स्वयंस्फूर्त प्रदर्शन को एक राजनीतिक प्रदर्शन में बदलने, उसके राजनीतिक स्वरूप का और विस्तार करने, आदि की क्षमता हो। ऐसी परिस्थिति में हमसे अधिक सक्रिय और मुस्तैद ग़ैर सामाजिक-जनवादी क्रांतिकारी लाज़िमी तौर पर हमारे पिछड़ेपन का फ़ायदा उठायेंगे, और तब मज़दूर—चाहे वे कितनी ही जान लड़ाकर और आत्म-बलिदान की भावना के साथ पुलिस और फ़ौज से लोहा क्यों न लेते हों, चाहे वे कितने ही अधिक क्रांतिकारी क़दम क्यों न उठाते हों—बुर्जुआ जनवाद के पिछलगुए, उन क्रांतिकारियों की मदद करनेवाली शक्ति ही साबित होंगे, न कि सामाजिक-जनवादी अग्रदल। मिसाल के लिए, जर्मनी के सामाजिक-जनवादियों को लीजिये, जिनके केवल कमज़ोर पहलुओं की ही हमारे "अर्थवादी" नक़ल करना चाहते हैं। इसका क्या कारण है कि जर्मनी में **एक भी** राजनीतिक घटना ऐसी **नहीं** होती है, जिससे सामाजिक-जनवाद की प्रतिष्ठा और साख न बढ़ती हों? इसका कारण यह है कि वहां सामाजिक-जनवाद इस दृष्टि से हमेशा सबसे आगे रहता है कि वह प्रत्येक घटना का सबसे अधिक क्रांतिकारी मूल्यांकन करता है और अन्याय के ख़िलाफ़ उठनेवाली हर आवाज़ का समर्थन करता है। वह अपने को इन लंबे-चौड़े तर्कों की लोरी सुना-सुनाकर नहीं सुलाता कि आर्थिक संघर्ष मज़दूरों को अपने अधिकारों के अभाव के बारे में सोचने की प्रेरणा देगा और ठोस परिस्थितियां मज़दूर आंदोलन को दैवी अनिवार्यता के साथ क्रांतिकारी मार्ग पर ढकेलती जायेंगी। वह सामाजिक तथा राजनीतिक जीवन के हरेक क्षेत्र में और हरेक सवाल में दख़ल देता है: चाहे कैसर विल्हेल्म द्वारा किसी बुर्जुआ प्रगतिवादी को किसी शहर का मेयर मानने से इनकार करने का सवाल हो (अभी तक हमारे "अर्थवादी" जर्मनों को यह नहीं समझा पाये हैं कि यह वास्तव में इदारतावाद से समझौता करना है!), चाहे "अनैतिक" प्रकाशनों तथा चित्रों पर रोक लगाने के क़ानून का मामला हो, चाहे प्रोफ़ेसरों के चुनाव में सरकार के दबाव डालने का सवाल हो, या कोई और सवाल हो। हर जगह सामाजिक-जनवादी सबसे आगे नज़र आते हैं, वे सभी वर्गों में राजनीतिक असंतोष पैदा करते हैं, सोते हुओं को जगाते हैं, पिछड़े लोगों को आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं और सर्वहारा की

Scanned by CamScanner

राजनीतिक चेतना तथा राजनीतिक क्रियाशीलता के विकास के लिए प्रचुर मात्रा में सामग्री प्रस्तुत करते हैं। इस सबका परिणाम यह है कि समाजवाद के कट्टर से कट्टर शत्रु भी इस आगे बढ़े हुए राजनीतिक योद्धा का आदर करते हैं और अकसर कोई महत्वपूर्ण दस्तावेज़ बुर्जुआ हलक़ों से, और यहां तक कि नौकरशाही तथा दरबारी हलक़ों से बाहर निकलकर जादुई ढंग से *Vorwärts* के संपादकीय दफ़्तर में पहुंच जाती है।

तो उस प्रतीयमान "विरोधाभास" का यही हल है, जिसे समझना *राबोचेये देलो* के लिए इतना कठिन है कि वह बस हाथ उठाकर चिल्लाने लगता है: "ये स्वांग भर रहे हैं!" सचमुच यह बात सोचने की है: हम लोग, *राबोचेये देलो* के लोग, मज़दूर वर्ग के **जन**-आंदोलन को अपनी **आधार-शिला** मानते हैं (और यह बात मोटे अक्षरों में छापते हैं!), हम हर किसी को स्वयंस्फूर्त तत्व के महत्व को कम करके आंकने के विरुद्ध चेतावनी देते फिरते हैं, हम आर्थिक संघर्ष को ही, **उसी को, उसी को** राजनीतिक रूप देना चाहते हैं, हम सर्वहारा वर्ग के संघर्ष के साथ घनिष्ठ और सजीव संपर्क रखना चाहते हैं! और तब भी हमसे यह कहा जाता है कि हम मज़दूर आंदोलन को बुर्जुआ जनवाद का साधन बना देने के लिए ज़मीन तैयार कर रहे हैं। और इसे कौन लोग कहते हैं? वे, जो उदारतावाद से "समझौता करते" हैं, जो हर "उदारपंथी" सवाल में टांग अड़ाते हैं ("सर्वहारा वर्ग के संघर्ष के साथ सजीव संपर्क रखने" को कितने ग़लत ढंग से समझा है उन्होंने!), जो विद्यार्थियों के बारे में और यहां तक कि (ज़रा सोचिये!) ज़ेम्स्त्वो के बारे में भी इतना माथा खपाते हैं! वे लोग, जो सामान्यतया आबादी के ग़ैर सर्वहारा वर्गों के बीच गतिविधियों पर अपनी शक्ति का अधिक ("अर्थवादियों" की तुलना में) भाग लगाना चाहते हैं! क्या यह "स्वांग भरना" नहीं है??

बेचारा *राबोचेये देलो*! क्या वह इस पेचीदा प्रक्रिया का कभी हल पा सकेगा?

Scanned by CamScanner

४

अर्थवादियों का नौसिखुआपन और क्रांतिकारियों का संगठन

राबोचेये देलो के इस दावे से—जिसका हम ऊपर विश्लेषण कर चुके हैं—कि आर्थिक संघर्ष राजनीतिक आंदोलन का सबसे अधिक व्यापक रूप से उपयोग करने योग्य साधन है और यह कि अब हमारा कार्यभार आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप देना है, आदि, आदि, न केवल हमारे राजनीतिक, बल्कि हमारे **संगठनात्मक** कार्यभारों के प्रति भी संकुचित दृष्टिकोण प्रकट हो जाता है। "मालिकों तथा सरकार के खिलाफ़ आर्थिक संघर्ष" के लिए एक ऐसे अखिल रूसी केंद्रीयकृत संगठन की क़तई आवश्यकता नहीं है—और इसलिए ऐसे संघर्ष से कभी ऐसा संगठन उत्पन्न नहीं हो सकता—जो राजनीतिक असंतोष, विरोध और क्रोध के हर प्रकार के सभी रूपों को एक लड़ी में पिरोकर उन्हें एक संयुक्त आक्रमण का रूप दे सके, जो पेशेवर क्रांतिकारियों का संगठन हो और जिसका नेतृत्व समस्त जनता के सच्चे राजनीतिक नेता करते हों। यह स्वाभाविक ही है। किसी भी संस्था के संगठन का स्वरूप स्वभावतया एवं अवश्यंभावी रूप से इस बात से निर्धारित होता है कि इस संस्था की गतिविधि का सारतत्व क्या है। अतएव वे दावे करके, जिनका ऊपर विश्लेषण किया गया है, *राबोचेये देलो* न केवल राजनीतिक गतिविधि की संकीर्णता को, बल्कि संगठनात्मक कार्य की संकीर्णता को भी उचित एवं पवित्र क़रार दे देता है। इस मामले में भी वह सदा की भांति एक ऐसे पत्र के रूप में सामने आता है, जिसकी चेतना स्वयंस्फूर्ति के आगे शीश झुका देती है। परंतु संगठन के स्वयंस्फूर्त ढंग से विकसित होते जा रहे रूपों की पूजा करना, इसे महसूस न करना कि हमारा संगठनात्मक काम कितना संकुचित और निम्न कोटि का होता है और इस महत्वपूर्ण क्षेत्र में हम अभी तक कितने "नौसिखुए ढंग से" काम कर रहे हैं—यह न महसूस करना, मैं कहता हूं, सचमुच हमारे आंदोलन की एक बीमारी बन गया है। यह निस्संदेह पतन की बीमारी नहीं, यह विकास की बीमारी

Scanned by CamScanner

है। परंतु ठीक इसी समय, जब हम लोगों के चारों ओर, आंदोलन के नेताओं और संगठनकर्त्ताओं के चारों ओर स्वयंस्फूर्त क्रोध की मानो एक आंधी-सी आयी हुई है, पिछड़ेपन की हिमायत करने और इस मामले में संकुचितपन को उचित ठहराने की हर प्रवृत्ति के ख़िलाफ़ डटकर लड़ना ज़रूरी है, और हम लोगों में फैले **नौसिखुएपन** के ख़िलाफ़ उन तमाम लोगों में, जो व्यावहारिक कार्य में भाग लेते हैं या जो यह काम शुरू करने की तैयारी कर रहे हैं, असंतोष पैदा करने की और उस नौसिखुएपन को दूर करने का अडिग संकल्प पैदा करने की विशेष आवश्यकता है।

(क) नौसिखुआपन किसे कहते हैं?

१८९४-१९०१ के काल के एक लाक्षणिक सामाजिक-जनवादी मंडल के कार्य का संक्षिप्त विवरण देकर हम इस सवाल का जवाब देने का प्रयत्न करेंगे। हम यह बता चुके हैं कि इस काल में समस्त विद्यार्थी युवकों का समुदाय मार्क्सवाद में डूबा हुआ था। ज़ाहिर है कि ये विद्यार्थी मार्क्सवाद में केवल एक सिद्धांत के रूप में नहीं डूबे हुए थे, बल्कि यों कहें कि वे एक सिद्धांत के रूप में उसकी ओर इतना ज़्यादा आकर्षित नहीं हुए थे, जितना इसलिए कि वह उन्हें इस प्रश्न का उत्तर देता था: "क्या करें?", उसे वे दुश्मन के ख़िलाफ़ मैदान में उतर पड़ने के आह्वान के रूप में देखते थे। और ये नये योद्धा बहुत ही भोंडे हथियार और प्रशिक्षा लेकर मैदान में उतरते थे। बहुत-से मामलों में तो उनके पास प्राय: एक भी हथियार और ज़रा भी प्रशिक्षा नहीं होती थी। वे इस तरह लड़ने चलते थे, मानो किसान खेत में अपने हल छोड़कर और केवल एक-एक लाठी हाथ में उठाकर वहां से लड़ने के लिए दौड़ पड़े हों। विद्यार्थियों का मंडल, जिसका आंदोलन के पुराने सदस्यों से कोई संपर्क नहीं होता, जिसका दूसरे नगरों के मंडलों से, यहां तक कि उसी शहर के अन्य भागों के मंडलों से (या दूसरे विश्वविद्यालयों के मंडलों से) कोई संपर्क नहीं होता, जो क्रांतिकारी कार्य की विभिन्न शाखाओं का कोई संगठन नहीं करता, जो थोड़े-बहुत लंबे समय के लिए भी कार्य की कोई विधिवत योजना नहीं बनाता—ऐसा मंडल झट मज़दूरों से संपर्क क़ायम करके

Scanned by CamScanner

काम शुरू कर देता है। मंडल धीरे-धीरे अपना प्रचार-कार्य और आंदोलन-कार्य बढ़ाता जाता है, अपने काम से वह मज़दूरों के अपेक्षाकृत बड़े हिस्सों की और पढ़े-लिखे वर्गों के भी कुछ लोगों की सहानुभूति प्राप्त कर लेता है, जिनसे उसे रुपया भी मिल जाता है और जिनमें से "समिति" युवकों के नये दल भरती कर लेती है। समिति की (या संघर्ष करनेवाली लीग की) आकर्षण-शक्ति बढ़ जाती है, उसका कार्य-क्षेत्र विस्तृत हो जाता है और उसका काम बिलकुल स्वयंस्फूर्त ढंग से फैल जाता है: वे ही लोग, जो एक साल या चंद महीने पहले विद्यार्थी मंडल की सभाओं में बोला करते थे और इस प्रश्न पर बहस किया करते थे कि "किधर जाना है", जिन्होंने मज़दूरों के साथ संपर्क क़ायम किया था और क़ायम रखा था और जो परचे लिखते और छापते थे, अब क्रांतिकारियों के दूसरे दलों से संपर्क क़ायम करते हैं, साहित्य जुटाते हैं, एक स्थानीय पत्र निकालने की तैयारी शुरू करते हैं, प्रदर्शन संगठित करने की बातें करने लगते हैं और अंत में खुली जंग शुरू कर देते हैं (यह खुली जंग परिस्थितियों के अनुसार कई रूप ले सकती है, जैसे पहले आंदोलनात्मक परचे का प्रकाशन, या पत्र के पहले अंक का निकलना, या पहला प्रदर्शन संगठित किया जाना)। और आम तौर पर पहली कार्रवाई ही फ़ौरन पूरी तरह असफल हो जाती है। फ़ौरन और पूरी तरह इसलिए कि यह खुली जंग एक लंबे और दृढ़ संघर्ष की किसी सुव्यवस्थित और अच्छी तरह से सोच-विचारकर बनायी गयी और क़दम-ब-क़दम तैयार की गयी योजना का परिणाम नहीं थी, बल्कि वह केवल मंडलों के परंपरागत काम के स्वयंस्फूर्त विकास का परिणाम थी; कारण कि लगभग हर जगह पुलिस स्वभावतया स्थानीय आंदोलन के मुख्य नेताओं को जानती थी, क्योंकि उन्होंने अपने स्कूली ज़माने में ही "नाम कमा लिया था" और पुलिस सिर्फ़ इस इंतज़ार में रहती थी कि उचित अवसर आये, तो छापा मारे, वह मंडल को अपना काम बढ़ाने के लिए जान-बूझकर काफ़ी समय दे देती थी, ताकि corpus delicti * प्रकाश में आ सकें और कई पहचाने हुए आदमियों को सदा खुला छोड़े रहती थी, ताकि वे "नयी नसल पैदा कर सकें" (मेरा विचार है कि हमारे लोग और राजनीतिक पुलिसवाले, दोनों ही इस पारिभाषिक

* अपराधों के मूल।—सं०

Scanned by CamScanner

शब्दावली का प्रयोग करते हैं)। इस तरह की जंग की तुलना बरबस उन किसानों की जंग से ही करनी पड़ती है, जो लाठियां लेकर आधुनिक फ़ौज से लड़ने निकल पड़ते हैं। और इस आंदोलन की जीवन-शक्ति को देखकर सचमुच आश्चर्य होता है, क्योंकि उसके योद्धाओं में प्रशिक्षण का पूर्ण अभाव होते हुए भी यह आंदोलन फैलता गया, बढ़ता गया और विजय भी हासिल करता गया। यह सच है कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से शुरू-शुरू में अस्त्रों का पिछड़ा हुआ होना न केवल अवश्यंभावी था, बल्कि **उचित भी** था, क्योंकि उससे बड़े पैमाने पर योद्धाओं को भरती करने में मदद मिलती थी। परंतु जब गंभीर लड़ाइयां शुरू हुईं (१८९६ की गरमियों में जो हड़तालें हुईं, दरअसल उस समय से ही ये लड़ाइयां शुरू हो गयी थीं), तब हमारे जुझारू संगठन में जो दोष थे, वे अधिकाधिक प्रकट होने लगे। शुरू में सरकार घबरा गयी और उसने अनेक ग़लत क़दम भी उठाये (उदाहरण के लिए, उसने समाजवादियों के "कारनामों" का वर्णन करते हुए जनता के नाम एक अपील निकाली, या राजधानियों से निर्वासित करके मज़दूरों को प्रांतीय औद्योगिक केंद्रों में भेज दिया), परंतु बहुत जल्द उसने अपने को संघर्ष की नयी परिस्थितियों के अनुरूप ढाल लिया और हर तरह के अस्त्र-शस्त्रों से सज्जित अपने खुफ़िया एजेंटों, गुप्तचरों और राजनीतिक पुलिसवालों के दस्ते जगह-जगह तैनात कर दिये। नित नयी जगहों पर छापे मारे जाने लगे, उनकी लपेट में इतने अधिक लोग आये और स्थानीय मंडलों का इस बुरी तरह सफ़ाया हुआ कि आम मज़दूरों से उनका एक-एक नेता छिन गया, आंदोलन ने इतना असंगठित और इतना अविश्वसनीय छुटपुट रूप धारण किया कि काम में क्रम और तालमेल बनाये रखना बिलकुल असंभव हो गया था। स्थानीय नेताओं का बुरी तरह इधर-उधर बिखरे रहना, मंडलों का सांयोगिक गठन, सैद्धांतिक, राजनीतिक तथा संगठनात्मक प्रश्नों के संबंध में प्रशिक्षण का अभाव और संकुचित दृष्टिकोण— ये तमाम बातें इन परिस्थितियों का लाज़िमी नतीजा थीं, जिनका हमने ऊपर वर्णन किया है। हालत यह हो गयी कि कई जगहों पर मज़दूर हममें डटकर काम करने तथा गुप्त बातों को छिपा रखने की क्षमता का अभाव देखकर बुद्धिजीवियों में विश्वास खोने लगे और उनसे कन्नी काटने लगे, वे कहने लगे कि बुद्धिजीवी

Scanned by CamScanner

बहुत लापरवाह होते हैं और अपने को बहुत शीघ्र पुलिस के हवाले कर देते हैं!

जिस किसी को आंदोलन का थोड़ा भी ज्ञान है, वह जानता है कि आख़िर अब सभी विचारशील सामाजिक-जनवादी काम करने के इन नौसिखुए तरीक़ों को एक बीमारी समझने लगे हैं। जिस पाठक को आंदोलन का विशेष ज्ञान नहीं है, वह कहीं यह न समझे कि हमने आंदोलन की किसी विशेष अवस्था या विशेष बीमारी का "आविष्कार" कर डाला है, इसलिए हम एक बार फिर उसी गवाह का हवाला देना चाहेंगे, जिसे हम पहले उद्धृत कर चुके हैं। आशा है कि पाठक उद्धरण की लंबाई के लिए हमें क्षमा करेंगे:

ब—व ने *राबोचेये देलो* के अंक ६ में लिखा है: "रूसी मज़दूरों की क्रांति के आम प्रवाह की जहां एक ख़ास विशेषता यह है कि वह धीमी गति से अधिक व्यापक व्यावहारिक कार्य के युग में संक्रमण कर रहा है और यह संक्रमण प्रत्यक्ष रूप से उस आम संक्रमणकाल पर निर्भर करता है, जिससे होकर आजकल रूसी मज़दूर आंदोलन गुज़र रहा है—वहां उसकी एक और ख़ास विशेषता भी है, जो कम दिलचस्प नहीं है। हमारा मतलब **कार्य-क्षेत्र में उतरने के योग्य क्रांतिकारी शक्तियों की आम कमी*** से है, जो न केवल पीटर्सबर्ग में, बल्कि सारे रूस में महसूस की जा रही है। जैसे-जैसे मज़दूर आंदोलन में आम तौर पर जान आती जाती है, मज़दूर जन-समुदाय का आम विकास होता जाता है, हड़तालें जल्दी-जल्दी होती जाती हैं और मज़दूरों का जन-संघर्ष अधिकाधिक खुला रूप धारण करता जाता है, जिससे सरकारी दमन, गिरफ़्तारियों, निर्वासनों और देशनिर्वासनों का चक्र और तेज़ होता जाता है, वैसे-वैसे **सुदक्ष क्रांतिकारी शक्तियों की यह कमी अधिकाधिक स्पष्ट होती जाती है** और इसमें कोई संदेह नहीं कि इसका **आंदोलन के आम स्वरूप तथा गहराई पर प्रभाव पड़ना लाज़िमी है।** बहुत-सी ऐसी हड़तालें हो जाती हैं, जिन पर क्रांतिकारी संगठन कोई ज़ोरदार और सीधा असर नहीं डाल पाते... आंदोलनात्मक परचों और ग़ैर क़ानूनी साहित्य की कमी महसूस होती है... मज़दूरों के मंडलों के पास आंदोलनकर्त्ता नहीं रहते... इसके अलावा पैसे का हमेशा अभाव होता है। संक्षेप में **मज़दूर आंदोलन की प्रगति क्रांतिकारी संगठनों की प्रगति एवं विकास से आगे निकला जा रहा है।** सक्रिय क्रांतिकारियों की संख्या इतनी कम है कि वे असंतुष्ट मज़दूरों के समस्त जन-समुदाय पर प्रभाव को अपने हाथों में केंद्रित नहीं रख पाते और न ही इस असंतोष को तनिक भी व्यवस्थित एवं संगठित रूप दे पाते हैं... विभिन्न मंडलों तथा अलग-अलग क्रांतिकारियों को एक सूत्र में बांधकर उनकी एकता

*हर जगह शब्दों पर ज़ोर हमने दिया है।

Scanned by CamScanner

स्थापित नहीं की जाती और वे किसी ऐसे संयुक्त, मज़बूत एवं अनुशासनबद्ध संगठन का प्रतिनिधित्व नहीं करते, जिसके सभी अंगों का सुनियोजित विकास होता हो"... और यह स्वीकार करने के बाद कि जो मंडल टूट जाते हैं, उनके स्थान पर तुरंत नये मंडलों का बनना "सिर्फ़ यह साबित करता है कि आंदोलन में कितनी ज़बरदस्त जीवन-शक्ति है... किंतु उससे यह सिद्ध नहीं होता कि उसके पास सुयोग्य क्रांतिकारी कार्यकर्त्ता पर्याप्त संख्या में हैं", लेखक अंत में कहता है: "पीटर्सबर्ग के क्रांतिकारियों में व्यावहारिक प्रशिक्षण का जो अभाव है, वह उनके काम के नतीजों में भी प्रकट होता है। हाल में जो मुक़दमे हुए हैं, उनसे, ख़ास तौर पर 'आत्म-मुक्ति दल' तथा 'श्रम बनाम पूंजी'[84] दल के मुक़दमे से यह बात बिलकुल साफ़ हो गयी है कि नौजवान आंदोलनकर्त्ता, जिसे श्रम की हालत का विस्तृत ज्ञान नहीं होता और इसलिए जो यह नहीं जानता कि किस कारख़ाने में किन परिस्थितियों में आंदोलन किया जा सकता है, जो गुप्त कार्य के सिद्धांतों से अनभिज्ञ है और सामाजिक-जनवाद के केवल आम सिद्धांतों को समझता है" (लेकिन क्या वह समझता है?), "शायद चार, पांच या छः महीने तक तो काम कर सकता है। पर उसके बाद गिरफ़्तारियां होने लगती हैं, जिनसे बहुधा पूरा संगठन, या कम से कम उसका एक हिस्सा तो टूट ही जाता है। इसलिए सवाल उठता है कि यदि दल की आयु का हिसाब महीनों में लगाया जाये, तब क्या वह सफलतापूर्वक और उपयोगी काम कर सकता है?... मौजूदा संगठनों में जो दोष हैं, ज़ाहिर है कि वे सभी संक्रमणकाल के कारण नहीं हैं... ज़ाहिर है, मौजूदा संगठनों के सदस्यों की संख्या और उनकी गुणात्मक रचना भी इसका कोई छोटा कारण नहीं है और हमारे सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ताओं को सबसे पहले... **संगठनों को कारगर ढंग से एक में मिलाने और अपने सदस्यों को सख़्ती से चुनने** का काम हाथ में लेना चाहिए।"

(ख) नौसिखुआपन और अर्थवाद

अब हम उस प्रश्न की चर्चा करेंगे, जो निस्संदेह हर पाठक के दिमाग़ में उठ रहा है। क्या नौसिखुएपन का, विकास के काल की इस बीमारी का, जिसका **पूरे** आंदोलन पर असर पड़ता है, "अर्थवाद" से भी कोई संबंध साबित किया जा सकता है, जो रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन की प्रवृत्तियों में से **एक** है? हम समझते हैं कि किया जा सकता है। व्यावहारिक प्रशिक्षण का अभाव, संगठनात्मक कार्य करने की क्षमता का अभाव निस्संदेह **हम सभी** में है, इसमें वे लोग भी आ जाते हैं, जो शुरू से ही क्रांतिकारी मार्क्सवाद के अडिग समर्थक रहे हैं। सचमुच यदि केवल व्यावहारिक प्रशिक्षण के अभाव की ही बात होती, तो व्यावहारिक

Scanned by CamScanner

कार्यकर्त्ताओं को कोई दोष नहीं दे सकता था। परंतु "नौसिखुएपन" में कई और बातें भी आ जाती हैं: उसका मतलब यह है कि क्रांतिकारी कार्य का क्षेत्र आम तौर पर संकीर्ण है, लोग यह बात नहीं समझते कि इस प्रकार के संकुचित ढंग के कार्य के आधार पर क्रांतिकारियों का कोई अच्छा संगठन नहीं बनाया जा सकता और अंत में इसका मतलब यह है—और यह सबसे महत्वपूर्ण बात है—कि इस संकीर्णता को उचित ठहराने और उसे ऊंचा उठाकर एक विशेष "सिद्धांत" के स्तर पर पहुंचा देने की कोशिशें की जाती हैं, याने इस सवाल पर भी लोग स्वयंस्फूर्ति की पूजा करते हैं। एक बार इन कोशिशों के प्रकट होने के बाद यह बिलकुल तय हो जाता है कि नौसिखुआपन "अर्थवाद" से संबंधित है, और जब तक हम "अर्थवाद" को आम तौर पर (अर्थात मार्क्सवादी सिद्धांत की, सामाजिक-जनवादी संगठन की भूमिका की और उसके राजनीतिक कार्यों की संकुचित धारणा को) दूर नहीं करते, तब तक हम संगठनात्मक कार्य की इस संकीर्णता को दूर नहीं कर सकेंगे। ये कोशिशें दो तरह से प्रकट हुई हैं। कुछ लोग यह कहने लगे: अभी तक आम मज़दूरों ने उन व्यापक तथा जुझारू राजनीतिक कार्यभारों को खुद पेश नहीं किया है, जिनको क्रांतिकारी लोग उन पर "लादने" की कोशिश कर रहे हैं, फ़िलहाल मज़दूरों को **तात्कालिक** राजनीतिक मांगों के लिए लड़ते जाना चाहिए, उन्हें "मालिकों तथा सरकार के खिलाफ़ आर्थिक संघर्ष"* जारी रखना चाहिए (और स्वभावतया, जन-आंदोलन की "समझ में आसानी से आ जानेवाले इस संघर्ष के अनुरूप एक ऐसा संगठन भी होना चाहिए, जिसे एकदम अप्रशिक्षित नौजवान भी "आसानी से समझ सकें")। दूसरे लोग, जो "धीरे-धीरे चलने से" कोसों दूर रहते हैं, यह कहने लगे: "राजनीतिक क्रांति करना" संभव और आवश्यक है, परंतु उसके लिए सर्वहारा को दृढ़ और अटल संघर्ष की प्रशिक्षा देनेवाला क्रांतिकारियों का कोई मज़बूत संगठन बनाने की ज़रूरत नहीं है। ज़रूरी बस इतना है कि अपनी पुरानी परिचित "सहज प्राप्य" लाठी उठाओ और बढ़ चलो। रूपक के फेर में न पड़कर

---

* *राबोचाया मीस्ल* और *राबोचेये देलो*, विशेषकर प्लेखानोव को उत्तर।

Scanned by CamScanner

यदि हम अपनी बात सीधे-सीधे कहें, तो इसका मतलब यह है कि हमें आम हड़ताल का संगठन करना चाहिए,* अथवा "उत्तेजना पैदा करनेवाले आतंकवादी कार्यों" के ज़रिए मज़दूर आंदोलन की "अत्माविहीन" प्रगति को बढ़ावा देना चाहिए।** ये दोनों ही प्रवृत्तियां, अवसरवादी और "क्रांतिवादी", प्रचलित नौसिखुएपन के आगे शीश नवा रही हैं, दोनों में से कोई भी यह नहीं मानती कि इस नौसिखुएपन को दूर किया जा सकता है, दोनों में से कोई भी यह नहीं समझती कि हमारा प्राथमिक तथा सबसे आवश्यक व्यावहारिक कार्यभार **क्रांतिकारियों** का एक ऐसा **संगठन** खड़ा करना है, जो राजनीतिक संघर्ष की शक्ति, उसके स्थायित्व और उसके अविराम क्रम को क़ायम रख सके।

हमने अभी कुछ देर पहले ब—व के इन शब्दों को उद्धृत किया था: "मज़दूर आंदोलन का विकास क्रांतिकारी संगठनों की प्रगति एवं विकास से आगे निकला जा रहा है"। "एक निकटवर्त्ती पर्यवेक्षक की" इस "मूल्यवान टिप्पणी" का (ब—व के लेख के विषय में *राबोचेये देलो* ने इन्हीं शब्दों का प्रयोग किया है) हमारे लिए दोहरा महत्व है। उससे प्रकट होता है कि हमारा यह मत सही था कि रूसी सामाजिक-जनवाद के वर्तमान संकट का मुख्य कारण यह है कि **नेतागण** ("सिद्धांतकार", क्रांतिकारी, सामाजिक-जनवादी) **जनता के स्वयंस्फूर्त उभार** के मुक़ाबले में **पिछड़ते जा रहे हैं।** उससे पता चलता है कि "अर्थवादी" पत्र (*ईस्क्रा*, अंक १२ में) के लेखकों ने, बो० क्रिचेव्स्की और मार्तीनोव ने स्वयंस्फूर्त तत्व के महत्व को कम करके आंकने के बारे में, नीरस दैनिक संघर्ष के बारे में, प्रक्रिया-के-रूप-में-कार्यनीति, आदि के बारे में जो तमाम दलीलें दी हैं, वे नौसिखुएपन के गीत गाने और उसका समर्थन करने के अलावा और कुछ नहीं हैं। जो लोग तिरस्कार के साथ नाक-भौं सिकोड़े बिना "सिद्धांतकार" शब्द का उच्चारण नहीं कर सकते, जो लोग प्रचलित पिछड़ेपन एवं प्रशिक्षण के अभाव के आगे शीश नवाने को "जीवन की वास्तविकताओं की समझ" कहते हैं, उनके व्यवहार से प्रकट होता है कि वे हमारे सबसे आवश्यक **व्यावहारिक** कार्यभारों को भी नहीं समझते। जो पिछड़े हुए हैं,

---

*रूस में प्रकाशित तथा कीयेव समिति द्वारा पुनर्मुद्रित लेख-संग्रह *सर्वहारा संघर्ष* में *राजनीतिक क्रांति कौन करेगा?* शीर्षक लेख।

** *क्रांतिवाद का पुनरुत्थान* और *स्वोबोदा* पत्रिकाएं।

Scanned by CamScanner

उनसे ये लोग चिल्लाकर कहते हैं: क़दम मिलाकर चलो! आगे मत भागो! जो संगठनात्मक काम में क्रियाशीलता तथा पहलक़दमी नहीं दिखा पाते, जो व्यापक एवं साहसी कार्यों की "योजनाएं" नहीं बना पाते, उनको ये लोग "प्रक्रिया-के-रूप-में-कार्यनीति" के उपदेश सुनाते हैं! हमारा सबसे बड़ा गुनाह यह है कि हम अपने राजनीतिक तथा **संगठनात्मक** कार्यभारों को रोज़मर्रा के आर्थिक संघर्ष के तात्कालिक, "ठोस", "स्पर्शनीय" हितों के स्तर पर **उतार लाते हैं;** परंतु ये लोग हमें बार-बार वही पुराना गीत सुनाते रहते हैं: आर्थिक संघर्ष को ही राजनीतिक रूप दें! हम फिर कहते हैं: इस तरह के व्यवहार से "जीवन की वास्तविकताओं की समझ" उतनी ही प्रकट होती है, जितनी एक प्रचलित लोक-कथा के उस नायक में थी, जिसने किसी की अंत्येष्टि के समय शोक मनानेवालों से कहा था कि "भगवान करे, यह दिन आपके लिए बार-बार आये!"

याद कीजिये कि ये महाबुद्धिमान लोग किस तरह नाक-भौं चढ़ाकर और किस अनुपम, एकदम नरसिस[85] जैसे ढंग से प्लेख़ानोव को यह उपदेश सुनाया करते थे कि "मज़दूरों के **मंडलों** में आम तौर पर" (जी हां!) "सच्चे और **व्यावहारिक** अर्थ में, याने राजनीतिक मांगों के लिए उपयोगी एवं सफल **व्यावहारिक** संघर्ष के अर्थ में राजनीतिक कार्यभारों को संपन्न करने की क्षमता नहीं" होती है (*राबोचेये देलो का उत्तर*, पृ० २४)। महानुभावो, मंडल कई प्रकार के होते हैं। ज़ाहिर है कि "नौसिखुओं" के मंडलों में उस वक़्त तक राजनीतिक कार्यभारों को संपन्न करने की क्षमता पैदा नहीं हो सकती, जब तक कि उन्हें अपने नौसिखुएपन का एहसास नहीं हो जाता और वे उसे त्याग नहीं देते। और यदि इन नौसिखुए लोगों को अपने नौसिखुए तरीक़ों से मोह हो गया हो, यदि वे "व्यावहारिक" शब्द को मोटे अक्षरों में लिखना पसंद करते हों और समझते हों कि व्यावहारिक होने के लिए ज़रूरी है कि हम अपने कार्यभारों को जनता के सबसे पिछड़े हुए हिस्से की समझ के स्तर पर उतार लायें, तब तो ज़ाहिर है कि इन लोगों से कोई आशा नहीं रह जाती है और तब यह निश्चित है कि उनमें **आम तौर पर राजनीतिक कार्यभारों को संपन्न करने की क्षमता नहीं है।** परंतु अलेक्सेयेव व मीश्किन, ख़ाल्तूरिन व जेल्याबोव जैसे वीरों के मंडल में सच्चे तथा अत्यंत

Scanned by CamScanner

व्यावहारिक अर्थ में राजनीतिक कार्यभारों को संपन्न करने की क्षमता है, और उसमें उन्हें संपन्न करने की क्षमता इसीलिए और उसी हद तक होती है, जिस हद तक कि उनके ओजपूर्ण उपदेशों का अपने आप जागृत होती हुई जनता पर प्रभाव पड़ता है और जिस हद तक उनके उबलते हुए जोश के प्रत्युत्तर तथा समर्थन में क्रांतिकारी वर्ग में जोश आता है। प्लेख़ानोव सोलहों आना सही थे, जब उन्होंने न केवल इस क्रांतिकारी वर्ग की ओर संकेत किया था, न केवल यह साबित किया था कि इस वर्ग में अपने आप जागृति का आना अवश्यंभावी तथा अनिवार्य है, बल्कि "मज़दूरों के मंडलों" के सामने एक महान और उच्च राजनीतिक कार्यभार भी रखा था। तब से आज तक जो जन-आंदोलन उभर आया है, उसका ज़िक्र आप लोग करते हैं तो केवल इस कार्यभार को **नीचा गिराने** के लिए, "मज़दूरों के मंडलों" की क्रियाशीलता तथा कार्य-क्षेत्र को **संकुचित करने** के लिए। यदि आप अपने नौसिखुए तरीक़ों के मोह में पड़े नौसिखुए लोग नहीं हैं, तो और क्या हैं? आप लोग व्यावहारिक होने की शेख़ी बघारते हैं, पर आप वह नहीं देख पाते, जिसे रूस का प्रत्येक व्यावहारिक कार्यकर्त्ता जानता है कि क्रांतिकारी आंदोलन के लिए न केवल मंडलों का, बल्कि अलग-अलग व्यक्तियों का उत्साह भी कैसे चमत्कार कर सकता है। या क्या आपका ख़याल यह है कि हमारा आंदोलन पिछली सदी के आठवें दशक के जैसे वीरों को पैदा नहीं कर सकता? लेकिन क्यों? क्या इसलिए कि हम लोगों में प्रशिक्षण का अभाव है? पर हम अपने को प्रशिक्षित कर तो रहे हैं, आगे भी करते जायेंगे और उसे प्राप्त करके छोड़ेंगे! यह सच है कि "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" के ठहरे हुए पानी पर, दुर्भाग्यवश, काई जम गयी है, हम लोगों में कुछ ऐसे लोग पैदा हो गये हैं, जो स्वयंस्फूर्ति के आगे घुटने टेककर प्रार्थना करते हैं और सदा श्रद्धा से रूसी सर्वहारा का "पार्श्वभाग" (प्लेख़ानोव के शब्दों में) देखते रहते हैं। पर इस काई को हम साफ़ कर देंगे। वह समय आ गया है, जब रूस के क्रांतिकारी एक सच्चे क्रांतिकारी सिद्धांत से अपना पथ आलोकित करते हुए, एक सचमुच क्रांतिकारी तथा अपने आप जागृत होते हुए वर्ग पर भरोसा करते हुए, आख़िरकार—आख़िरकार!—अपनी समस्त विराट शक्ति को बटोरकर और सीना तानकर खड़े हो सकते हैं। ज़रूरत सिर्फ़ इस बात की

Scanned by CamScanner

है कि हमारे व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं का समुदाय, और उससे भी बड़ा उन लोगों का समुदाय, जो अपनी पढ़ाई के ज़माने से ही व्यावहारिक कार्य करने का शौक़ रखता है, ऐसे हर सुझाव को उपेक्षा और तिरस्कार के साथ ठुकरा दे, जो हमारे राजनीतिक कामों के स्तर को नीचे गिराने और हमारे संगठनात्मक कार्य के क्षेत्र को सीमित करने के उद्देश्य से रखा गया हो। और महानुभावो, इसे हम हासिल करेंगे, इसका आप इतमीनान रखें!

कहां से शुरू करें? शीर्षक लेख में मैंने *राबोचेये देलो* के जवाब में यह लिखा था: "किसी विशेष प्रश्न के बारे में आंदोलन की कार्यनीति अथवा पार्टी संगठन के किसी ब्योरे से संबंधित कार्यनीति २४ घंटे में बदली जा सकती है। लेकिन इस संबंध में कि सामान्यत:, सदैव और बिना किसी शर्त के जुझारू संगठन तथा जनता के बीच राजनीतिक आंदोलन की जरूरत है अथवा नहीं, अपने विचार २४ घंटे में क्या २४ महीने में भी केवल वे ही लोग बदल सकते हैं, जिनमें हर प्रकार के उसूल का अभाव है।" *राबोचेये देलो* ने इसका यह उत्तर दिया था: "*ईस्क्रा* के केवल इसी आरोप के बारे में यह दावा किया जा सकता है कि वह तथ्यों पर आधारित है, परंतु यह भी एकदम निराधार है। *राबोचेये देलो* के पाठक अच्छी तरह जानते हैं कि शुरू से ही हम *ईस्क्रा* के निकलने की बाट जोहे बिना न केवल राजनीतिक आंदोलन चलाने के लिए कहते आ रहे थे"... (और इसके साथ-साथ हम यह भी कहते थे कि न सिर्फ़ मज़दूरों के मंडल, "बल्कि मज़दूर वर्ग का जन-आंदोलन भी निरंकुश शासन का तख़्ता उलटने को अपना प्रारंभिक राजनीतिक कार्यभार नहीं बना सकता," उसका प्राथमिक कार्यभार तो केवल तात्कालिक राजनीतिक मांगों के लिए संघर्ष करना है, और यह कि "जनता एक हड़ताल के बाद, या कई हड़तालों के बाद, तो हर हालत में तात्कालिक राजनीतिक मांगों को समझने लगती है")... "बल्कि रूस में काम करनेवाले साथियों के वास्ते हमने विदेशों से जो प्रकाशन भिजवाये थे, वे उस काल में **एकमात्र** सामाजिक-जनवादी राजनीतिक एवं आंदोलनात्मक सामग्री थे"... (और इस एकमात्र सामग्री में आप व्यापकतम राजनीतिक आंदोलन को न केवल शुद्ध आर्थिक संघर्ष पर

Scanned by CamScanner

आधारित करते थे, बल्कि यह दावा करने की हद तक जाते थे कि इस संकुचित-सीमित आंदोलन का ही "सबसे अधिक व्यापक रूप में उपयोग किया जा सकता है"। और, सज्जनो, क्या आप लोग यह नहीं देखते कि आपकी दलीलें ख़ुद ही यह साबित कर देती हैं कि—चूंकि इसी प्रकार की **एकमात्र** सामग्री मिलती थी—इसलिए *ईस्क्रा* का प्रकाशित होना तथा *राबोचेये देलो* से उसका संघर्ष होना आवश्यक था?)... "दूसरी ओर, हमारे प्रकाशन-कार्य ने कार्यनीति के मामले में पार्टी की एकता के लिए सचमुच ज़मीन तैयार की"... (एकता इस विश्वास में कि कार्यनीति पार्टी के कामों के विकास की प्रक्रिया है, जो पार्टी के विकास के साथ-साथ बढ़ते जाते हैं? सचमुच बड़ी बहुमूल्य एकता रही होगी वह!)... "और ऐसा करके एक 'जुझारू संगठन' बनाना संभाव बनाया, जिसके लिए 'संघ' ने भरसक कोशिश की—जितना विदेश में काम करनेवाला कोई संगठन कर सकता था" (*राबोचेये देलो*, अंक १०, पृ० १५)। इस तरह पैंतरे बदलने से काम नहीं चलेगा! इस बात से मैं सपने में भी इनकार नहीं करूंगा कि आप लोग जितनी भी कोशिश कर सकते थे, आपने ज़रूर की थी। मैंने तो कहा था और कहता हूं कि आपके कर सकने की "संभावना" का **दायरा** भी आपके दृष्टिकोण की संकीर्णता से सीमित हो जाता है। "तात्कालिक राजनीतिक मांगों" के लिए लड़ने के वास्ते, या "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" का संचालन करने के वास्ते एक "जुझारू संगठन" बनाने की बात करना ही हास्यास्पद है।

परंतु पाठक यदि नौसिखुएपन के प्रति "अर्थवादियों" के प्रेम के सचमुच नायाब नमूने देखना चाहते हैं, तो ज़ाहिर है कि उन्हें कहीं का ईंट और कहीं का रोड़ा जमा करके भानमती का कुनबा जोड़नेवाले ढुलमुल *राबोचेये देलो* को छोड़कर सुसंगत एवं दृढ़संकल्प *राबोचाया मीस्ल* को देखना चाहिए। उसके *विशेष परिशिष्ट* के १३ वें पृष्ठ पर र० म० ने लिखा था: "अब दो शब्द क्रांतिकारी बुद्धिजीवी कहलानेवाले लोगों के बारे में भी कह दिये जायें। यह सच है कि कई ऐसे अवसर आये हैं, जब इन लोगों ने यह साबित कर दिखाया है कि 'ज़ारशाही के ख़िलाफ़ डटकर लड़ने' के लिए वे तैयार हैं। लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि राजनीतिक पुलिस द्वारा निर्मम ढंग से सताये जाने पर हमारे

Scanned by CamScanner

ये क्रांतिकारी बुद्धिजीवी सोचने लगते हैं कि इस राजनीतिक पुलिस के ख़िलाफ़ चलनेवाला संघर्ष ही निरंकुशता के ख़िलाफ़ राजनीतिक संघर्ष है। यही कारण है कि वे आज तक यह नहीं समझ पाये हैं कि 'निरंकुशता के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए शक्तियां कहां से आयेंगी?'"

स्वयंस्फूर्त आंदोलन के इस पुजारी ने (इस शब्द के सबसे बुरे अर्थ में) पुलिस विरोधी संघर्ष के प्रति तिरस्कार की कैसी अनुपम और शानदार भावना का प्रदर्शन किया है! यदि हम गुप्त रूप से कार्य का संगठन नहीं कर पाते, तो हमारे इस दोष को वह इस तर्क द्वारा **उचित ठहराने** के लिए तैयार हैं कि जन-आंदोलन के स्वयंस्फूर्त विकास के साथ राजनीतिक पुलिस के ख़िलाफ़ चलनेवाले संघर्ष का हमारे लिए तनिक भी महत्व नहीं रह गया है!! इस बेहूदे निष्कर्ष को बहुत कम लोग मानेंगे—हमारे क्रांतिकारी संगठन की ख़ामियों के सवाल ने इतना ज़रूरी रूप धारण कर लिया है। परंतु मिसाल के लिए, यदि मार्तीनोव इस बात को मानने से इनकार करते हैं, तो उसका कारण केवल यही होगा कि उनमें अपने विचारों को उनके तार्किक परिणाम तक ले जाने की योग्यता नहीं है, या उतना साहस नहीं है। तो क्या सचमुच जन-साधारण द्वारा ठोस मांगें, जिनसे कोई ठोस नतीजे निकलने की उम्मीद हो, पेश करने का ऐसा "कार्यभार" क्रांतिकारियों के टिकाऊ, केंद्रीयकृत, जुझारू संगठन का गठन करने के लिए विशेष प्रयत्नों की मांग करता है? क्या यह "कार्यभार" ऐसी जनता भी नहीं कर सकती, जो "राजनीतिक पुलिस के ख़िलाफ़ संघर्ष" क़तई नहीं "चलाती"? इसके अलावा क्या यह कार्यभार उस वक़्त तक पूरा हो सकता है, जब तक कि चंद नेताओं के अलावा ऐसे मज़दूर (जिनकी प्रबल बहुसंख्या होती है) भी उसकी पूर्ति में भाग नहीं लेते, जिनमें "राजनीतिक पुलिस के ख़िलाफ़ संघर्ष चलाने" की तनिक भी **योग्यता नहीं होती?** ऐसे मज़दूर, याने औसत ढंग के आम लोग हड़तालों में और पुलिस तथा फ़ौज से सड़कों पर मुठभेड़ के समय अपार साहस और आत्म-बलिदान की भावना का परिचय दे सकते हैं और हमारे पूरे आंदोलन के परिणाम को वे लोग **तय** कर सकते हैं (बल्कि कहना चाहिए कि केवल ऐसे ही लोग तय कर सकते हैं), लेकिन **राजनीतिक** पुलिस के ख़िलाफ़ चलनेवाले संघर्ष के लिए विशेष

Scanned by CamScanner

गुणों की आवश्यकता होती है, उसके लिए **पेशेवर** क्रांतिकारियों की ज़रूरत पड़ती है। और हमें न केवल इस बात की व्यवस्था करनी है कि जनता ठोस मांगें "पेश करे", बल्कि इसकी भी कि आम मज़दूर दिनोंदिन बढ़ती हुई संख्या में ऐसे पेशेवर क्रांतिकारियों को भी "आगे बढ़ायें"। इस प्रकार हम इस प्रश्न पर पहुंच गये हैं कि पेशेवर क्रांतिकारियों के संगठन और शुद्ध मज़दूर आंदोलन के बीच क्या संबंध है। यद्यपि साहित्य में इस प्रश्न की बहुत कम झलक मिलती है, फिर भी उन साथियों से, जो न्यूनाधिक मात्रा में "अर्थवाद" की ओर झुक जाते हैं, बातचीत और बहस करते हुए हमें, "राजनीतिवादियों" को अकसर इस सवाल की ओर बहुत ध्यान देना पड़ा है। यह एक ऐसा सवाल है, जिसकी खास तौर पर चर्चा करनी होगी। परंतु उसे शुरू करने से पहले हम एक और उद्धरण यहां देंगे, जिससे हमारी इस प्रस्थापना की एक नयी मिसाल मिलेगी कि नौसिखुएपन तथा "अर्थवाद" के बीच संबंध है।

अपने *उत्तर*[86] में श्री N.N. ने लिखा था: "'श्रम-मुक्ति' दल सरकार के खिलाफ़ प्रत्यक्ष संघर्ष छेड़ने की मांग करता है, पर वह यह नहीं सोचता कि इस संघर्ष के लिए भौतिक शक्तियां कहां से आयेंगी और न वह यही बताता है कि **इस संघर्ष का मार्ग क्या होगा।**" आखिर के शब्दों पर ज़ोर देते हुए लेखक ने "मार्ग" शब्द के साथ यह टिप्पणी जोड़ दी है: "यह नहीं कहा जा सकता कि अपनी बात को गुप्त रखने के लिए दल ने संघर्ष का मार्ग इंगित नहीं किया है, क्योंकि कार्यक्रम षड्यंत्र की नहीं, बल्कि एक **जन-आंदोलन** की बात करता है। और जनता गुप्त मार्गों पर आगे नहीं बढ़ सकती। क्या हम गुप्त प्रदर्शनों और खुफ़िया दरख़ास्तों की बात सोच सकते हैं?" (*Vademecum*, पृ० ५६)। इस प्रकार लेखक "भौतिक शक्तियों" (हड़ताल तथा प्रदर्शन करनेवाले) और संघर्ष के "मार्गों" के प्रश्न के बहुत निकट तक पहुंच जाते हैं, फिर भी वह अभी तक किंकर्त्तव्यविमूढ़ हैं, क्योंकि वह जन-आंदोलन की "पूजा करते हैं", याने वह उसे एक ऐसी चीज़ समझते हैं, जो हमारी क्रांतिकारी क्रियाशीलता से हमें **मुक्त** कर देती है, और वह उसे ऐसी चीज़ नहीं समझते, जिसे हमारी क्रांतिकारी क्रियाशीलता को प्रोत्साहन देना और उसकी **प्रेरणा** देनी हो। हड़ताल गुप्त नहीं हो सकती—उनके

Scanned by CamScanner

लिए, जो उसमें भाग लेते हैं और जिनका उससे सीधा संबंध रहता है। लेकिन हड़ताल रूस के आम मज़दूरों के लिए "गुप्त" रह सकती है (और ज़्यादातर मामलों में रहती है), क्योंकि सरकार इसका पूरा प्रबंध कर लेती है कि हड़तालियों के साथ कोई संपर्क न रहने पाये और हड़ताल की कोई ख़बर न फैलने पाये। यही वह क्षेत्र है, जिसमें "राजनीतिक पुलिस के ख़िलाफ़ चलनेवाले संघर्ष" की ख़ास तौर पर आवश्यकता होती है, एक ऐसा संघर्ष, जिसमें जनता की उतनी बड़ी संख्या कभी भाग नहीं ले सकती, जितनी बड़ी संख्या हड़तालों में भाग लेती है। इस संघर्ष का संगठन उन लोगों को "कला के समस्त नियमों" का पालन करते हुए ही करना होगा, जिनका पेशा ही क्रांतिकारी कार्य करना है। इस बात से कि जनता अपने आप आंदोलन में खिंचती चली आ रही है, इस संघर्ष को संगठित करने का काम **कम आवश्यक** नहीं हो जाता। इसके विपरीत इस बात से तो संगठन और **अधिक आवश्यक** हो जाता है, क्योंकि यदि हम, समाजवादी लोग, प्रत्येक हड़ताल तथा प्रत्येक प्रदर्शन को गुप्त बना देने के पुलिस के प्रयत्नों को नहीं रोकेंगे (और कभी-कभी स्वयं हड़ताल की गुप्त रूप से तैयारी नहीं करेंगे), तो हम जनता के प्रति अपने प्रत्यक्ष कर्त्तव्य की अवहेलना करेंगे। और हम इस काम को करने में सफल इसीलिए हो **सकते हैं** कि अपने आप जाग्रत होती हुई जनता अधिकाधिक संख्या में "पेशेवर क्रांतिकारियों" को **अपने बीच से भी आगे बढ़ाती जायेगी** (बशर्ते कि हमें मज़दूरों को हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने की सलाह देने की धुन न सवार हो जाये)।

(ग) मज़दूरों का संगठन और क्रांतिकारियों का संगठन

यह आशा करना स्वाभाविक ही है कि जो सामाजिक-जनवादी राजनीतिक संघर्ष और "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" को एक ही चीज़ मानता है, वह "क्रांतिकारियों का संगठन" को कमोबेश "मज़दूरों का संगठन" जैसी ही कोई चीज़ समझेगा। और वास्तव में होता भी यही है, इसलिए जब संगठन की चर्चा छिड़ती है, तो हम लोग शब्दश: एकदम अलग-अलग

Scanned by CamScanner

ज़बानों में बोलते मालूम पड़ते हैं। मिसाल के लिए, मुझे अच्छी तरह याद आ रहा है कि एक बार मेरी बातचीत एक काफ़ी सुसंगत "अर्थवादी" से हुई थी, जिनसे मेरा पहले का कोई परिचय नहीं था।[87] हम लोग एक पुस्तिका को लेकर बहस कर रहे थे, जिसका शीर्षक था *राजनीतिक क्रांति कौन करेगा?*। हम बहुत जल्द इस बात पर एकमत हो गये कि इस पुस्तिका का मुख्य दोष यह है कि उसमें संगठन के प्रश्न को भुला दिया गया है। हम लोगों ने यह सोचना शुरू कर दिया था कि हमारे बीच पूरा मतैक्य है, पर... बातचीत के आगे बढ़ने पर पता चला कि हम लोग अलग-अलग बातें कह रहे हैं। वह पुस्तिका के लेखक से इसलिए नाराज़ थे कि उसने हड़ताल-फ़ंड, पारस्परिक सहायता समितियों, आदि के बारे में कुछ नहीं लिखा है, जबकि मेरे दिमाग़ में राजनीतिक क्रांति "लाने" में एक आवश्यक तत्व के रूप में क्रांतिकारियों के संगठन की बात थी। इस मतभेद के प्रकट होते ही शायद ही कोई ऐसा सैद्धांतिक सवाल रह गया हो, जिस पर मेरी और उन "अर्थवादी" की राय एक रही हो!

हमारे मतभेद का कारण क्या था? यह कि संगठन और राजनीति, दोनों के बारे में "अर्थवादी" लोग हमेशा ही सामाजिक-जनवाद से ट्रेड-यूनियनवाद की ओर भटक जाते हैं। मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ मज़दूरों के आर्थिक संघर्ष से सामाजिक-जनवाद का राजनीतिक संघर्ष कहीं अधिक व्यापक और पेचीदा होता है। इसी तरह (और इसी कारण) एक क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादी पार्टी का संगठन आर्थिक संघर्ष चलाने के लिए बनाये गये मज़दूरों के संगठनों से अवश्यंभावी रूप से **भिन्न ढंग का** होगा। मज़दूरों के संगठन को एक तो व्यावसायिक संगठन होना चाहिए; दूसरे, उसे अधिक से अधिक व्यापक संगठन होना चाहिए; और तीसरे, उसके लिए ज़रूरी होता है कि वह कम से कम गुप्त हो (ज़ाहिर है कि यहां और आगे भी मैं केवल एकतांत्रिक रूस को ध्यान में रखकर बातें कर रहा हूं)। इसके विपरीत क्रांतिकारियों के संगठन को सबसे पहले और मुख्यतया ऐसे लोगों का संगठन होना चाहिए, जिन्होंने क्रांतिकारी कार्य को अपना पेशा बना लिया हो (इसलिए मैं **क्रांतिकारियों** के संगठन की बात करता हूं, जिससे मेरा मतलब क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादियों से है)। और चूंकि यह विशेषता

Scanned by CamScanner

ऐसे संगठन के सभी सदस्यों में होनी चाहिए, इसलिए यह आवश्यक है कि न केवल **मज़दूरों और बुद्धिजीवियों का भेद,** बल्कि अलग-अलग व्यवसायों तथा पेशों का **सारा अंतर एकदम ख़त्म कर दिया जाये।** ऐसे संगठन के लिए यह ज़रूरी है कि वह बहुत फैला हुआ न हो तथा अधिक से अधिक गुप्त हो। आइये, ज़रा इस तीन-सूत्री अंतर पर विचार करें।

जिन देशों में राजनीतिक स्वतंत्रता है, उनमें व्यावसायिक और राजनीतिक संगठनों का अंतर स्पष्ट होता है, और ट्रेड-यूनियनों तथा सामाजिक-जनवाद का भेद भी साफ़ होता है। हर देश की ऐतिहासिक, क़ानूनी तथा अन्य परिस्थितियों के अनुसार वहां के सामाजिक-जनवाद तथा ट्रेड-यूनियनों का संबंध अलग-अलग ढंग का होता है—वह कमोबेश घनिष्ठ, पेचीदा, आदि हो सकता है (हमारी राय में यह संबंध जितना घनिष्ठ और जितना सरल हो सके, उतना ही अच्छा है)। परंतु स्वतंत्र देशों में ट्रेड-यूनियन संगठन और सामाजिक-जनवादी पार्टी के संगठन के एक होने का कोई सवाल नहीं उठ सकता। लेकिन रूस में, पहली नज़र में, ऐसा मालूम होता है कि निरंकुशता के जुए ने सामाजिक-जनवादी संगठन और ट्रेड-यूनियनों के तमाम अंतर को ख़त्म कर दिया है, क्योंकि यहां मज़दूरों के **सभी** संगठनों और **सभी** मंडलों पर रोक लगी हुई है और मज़दूरों के आर्थिक संघर्ष का प्रधान रूप और मुख्य अस्त्र—हड़ताल—एक दंडनीय अपराध (और कभी-कभी तो राजनीतिक अपराध भी!) माना जाता है। इसलिए हमारे देश की परिस्थितियां एक ओर तो आर्थिक संघर्ष में भाग लेनेवाले मज़दूरों को राजनीतिक सवालों में दिलचस्पी लेने के लिए ज़ोरदार ढंग से "प्रेरित करती" हैं और दूसरी ओर, वे सामाजिक-जनवादियों को इस बात के लिए "प्रेरित करती" हैं कि वे सामाजिक-जनवाद और ट्रेड-यूनियनवाद को एक चीज़ समझने लगें (और हमारे क्रिचेव्स्की, मार्तीनोव और उनके जैसे दूसरे लोग पहली "प्रेरणा" की तो ख़ूब चर्चा करते हैं, पर दूसरी "प्रेरणा" को बिलकुल भुला देते हैं)। ज़रा ऐसे लोगों की कल्पना कीजिये, जो "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" में निनानवे प्रतिशत डूबे हुए हैं। इनमें से कुछ तो अपने **पूरे** कार्य-काल में (जो चार से छः महीने तक का होता है) कभी भी यह सोचने के लिए प्रेरित नहीं होंगे कि क्रांतिकारियों के एक

Scanned by CamScanner

अधिक पेचीदा संगठन की आवश्यकता है, दूसरे लोगों को शायद काफ़ी व्यापक रूप से प्रचारित बर्नस्टीनवादी साहित्य मिल जायेगा और उसे पढ़कर वे "नीरस दैनिक संघर्ष की प्रगति" के गूढ़ महत्व को समझने लगेंगे। कुछ और लोग शायद इस आकर्षक विचार में बह जायेंगे कि "सर्वहारा वर्ग के संघर्ष के साथ घनिष्ठ और सजीव संपर्क" की—ट्रेड-यूनियन आंदोलन तथा सामाजिक-जनवादी आंदोलन के बीच संपर्क की—एक नयी मिसाल दुनिया के सामने रखनी चाहिए। ऐसे लोग कह सकते हैं कि जो देश पूंजीवाद के क्षेत्र में, और इसलिए मज़दूर आंदोलन के क्षेत्र में, जितनी ही देर से प्रवेश करता है, उस देश के समाजवादी ट्रेड-यूनियन आंदोलन में उतना ही अधिक भाग ले सकते हैं तथा उसका उतना ही अधिक समर्थन कर सकते हैं, और उस देश में ग़ैर सामाजिक-जनवादी ट्रेड-यूनियनों की उतनी ही कम गुंजाइश रह जाती है और रह जानी चाहिए। यहां तक इन लोगों की दलील बिलकुल सही है, पर दुर्भाग्य यह है कि कुछ लोग इससे आगे बढ़ जाते हैं और सपने देखने लगते हैं कि सामाजिक-जनवादी आंदोलन ट्रेड-यूनियनवाद के साथ एकदम घुल-मिल जायेगा। *सेंट पीटर्सबर्ग की संघर्ष करनेवाली लीग के नियमों* के उदाहरण से हम शीघ्र ही देखेंगे कि इन सपनों का हमारी संगठन की योजनाओं पर कितना बुरा प्रभाव पड़ा है।

आर्थिक संघर्ष के लिए मज़दूरों को ट्रेड-यूनियनों में संगठित होना चाहिए। हर सामाजिक-जनवादी मज़दूर को इन संगठनों की यथासंभव सहायता करनी चाहिए और उनमें सक्रिय भाग लेना चाहिए। यह सब सच है। परंतु यह मांग करना क़तई हमारे हित में नहीं है कि केवल सामाजिक-जनवादियों को ही ट्रेड-यूनियनों का सदस्य बनने के हक़ दिये जायें: इससे तो जनता पर हमारा असर कम ही होगा। ट्रेड-यूनियनों में उन सभी मज़दूरों को शामिल होने दीजिये, जो मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ संघर्ष करने के लिए एक होने की आवश्यकता को महसूस करते हैं। यदि ट्रेड-यूनियनें उन सभी लोगों की एकता स्थापित नहीं करेंगी, जिनमें कम से कम यह प्राथमिक समझ पैदा हो चुकी है और यदि वे बहुत **व्यापक** ढंग के संगठन नहीं बनेंगी, तो वे अपने उद्देश्यों को कभी पूरा नहीं कर सकेंगी। ये संगठन जितने ही अधिक व्यापक होंगे, हमारा असर भी उन पर उतना ही अधिक

Scanned by CamScanner

व्यापक होगा—और यह असर केवल आर्थिक संघर्ष के "स्वयंस्फूर्त" विकास के कारण नहीं पैदा होगा, बल्कि वह ट्रेड-यूनियनों के समाजवादी सदस्यों की अपने साथियों को प्रभावित करने की प्रत्यक्ष और सचेतन कोशिशों का परिणाम भी होगा। परंतु एक व्यापक संगठन गुप्त रूप से काम करने के तरीक़ों का सख़्ती से इस्तेमाल नहीं कर सकता (क्योंकि उसके लिए आर्थिक संघर्ष में भाग लेने से कहीं अधिक प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है)। सदस्यों की विशाल संख्या की आवश्यकता और गुप्त तरीक़ों को सख़्ती से अमल में लाने की ज़रूरत के विरोध को कैसे हल किया जाये? ट्रेड-यूनियनों को कम से कम गुप्त बनाने के क्या उपाय हैं? आम तौर पर इसके दो उपाय हैं: या तो ट्रेड-यूनियन संगठन वैध क़रार कर दिये जायें (कुछ देशों में समाजवादी तथा राजनीतिक संगठनों के वैध होने के पहले ही यह हो गया था), या संगठन को गुप्त तो रखा जाये, पर साथ ही उसे इतना "स्वतंत्र", बिखरा हुआ, या जैसा कि जर्मन कहते हैं, lose* बना दिया जाये कि अधिकतर सदस्यों के संबंध में गुप्त तरीक़ों की ज़रूरत बस नहीं के बराबर रह जाये।

रूस में ग़ैर समाजवादी और ग़ैर राजनीतिक मज़दूर यूनियनों का वैधीकरण शुरू हो चुका है, और इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारे तेज़ी से बढ़ते हुए सामाजिक-जनवादी मज़दूर आंदोलन के हर क़दम के साथ इस वैधीकरण की कोशिशें ज़ोर पकड़ेंगी और उनको बढ़ावा मिलेगा—ज़्यादातर ऐसे प्रयत्न वर्तमान व्यवस्था के समर्थकों की ओर से हो रहे हैं, पर कुछ हद तक खुद मज़दूर और उदारपंथी बुद्धिजीवी भी इस तरह की कोशिशें कर रहे हैं। वसील्येव और ज़ुबातोव[88] जैसे लोगों ने वैधीकरण का नारा उठाया है, ओज़ेरोव और वोर्म्स जैसे महानुभाव उसका समर्थन करने का वचन दे चुके हैं और मज़दूरों में भी इस नयी प्रवृत्ति के समर्थक दिखायी देने लगे हैं। अब आगे से हम इस प्रवृत्ति की उपेक्षा नहीं कर सकेंगे। हम उसके साथ किस तरह पेश आयें, इस पर सामाजिक-जनवादियों में दो मत नहीं हो सकते। इस आंदोलन में ज़ुबातोव और वसील्येव जैसे लोग, राजनीतिक पुलिसवाले और पादरी जो भी खेल खेलते हैं, उनका हमें डटकर भंडाफोड़ करना

* ढीला।—सं०

Scanned by CamScanner

चाहिए और मज़दूरों को समझना चाहिए कि इन लोगों के असल इरादे क्या हैं। मज़दूरों की वैध सभाओं में उदारपंथी कार्यकर्त्ताओं के भाषणों में जो समझौतावादी, "मेल-मिलाप के" स्वर सुनायी पड़ें, हमें उनका भी भंडाफोड़ करना चाहिए और ऐसा करते समय इस बात की परवाह नहीं करनी चाहिए कि इस प्रकार की बातें वक्ता ने शांतिपूर्ण वर्ग सहयोग की वांछनीयता में सचमुच विश्वास रखने के कारण कही हैं, या उसका उद्देश्य सरकार की नज़रों में अच्छा बनने का था, या वह केवल अपने फूहड़पन के कारण ऐसी बातें कह गया है। अंत में, हमें मज़दूरों को पुलिस के फंदों से बचने के लिए आगाह करना चाहिए, क्योंकि ऐसी खुली सभाओं में और ऐसे संगठनों में, जिन्हें खुले तौर पर काम करने की इजाज़त होती है, पुलिसवाले अकसर "उग्र दिमाग़वालों" का पता लगाते हैं और अवैध संगठनों में अपने खुफ़िया दलालों को घुसाने के लिए वैध संगठनों का इस्तेमाल करने की कोशिश किया करते हैं।

परंतु यह सब करते हुए हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि मज़दूर आंदोलन के वैधीकरण से **अंत में** जाकर हमारा ही फ़ायदा होगा, न कि ज़ुबातोव जैसे लोगों का। इसके विपरीत, हमारा भंडाफोड़ आंदोलन ही है, जो हमें गेहूं को झाड़-झंखाड़ से अलग करने में मदद देगा। झाड़-झंखाड़ क्या है, इसकी ओर हम संकेत कर चुके हैं। गेहूं से हमारा मतलब यह है कि मज़दूरों के और भी बड़े तथा और भी पिछड़े हुए हिस्से सामाजिक एवं राजनीतिक प्रश्नों की ओर आकर्षित होंगे, हमारा मतलब यह है कि हम, क्रांतिकारी लोग उन कामों से मुक्त हो जायेंगे, जो बुनियादी तौर पर वैध हैं (वैध किताबों का वितरण, पारस्परिक सहायता, आदि) और जिनके विकास से हमें लाज़िमी तौर पर आंदोलन के लिए अधिकाधिक सामग्री मिलती जायेगी। इस अर्थ में हम ज़ुबातोव और ओज़ेरोव जैसे लोगों से यह कह सकते हैं और कहना चाहिए: सज्जनो, डटे रहो, अपना पूरा ज़ोर लगाये रहो! जब कभी आप लोग मज़दूरों के रास्ते में (या तो सीधे-सीधे उनको उकसावा देकर, या "स्त्रूवेवाद"[89] की मदद से मज़दूरों को बड़े "ईमानदारीभरे ढंग से" भ्रष्ट करके) फंदा डालेंगे, तब हम आपका भंडाफोड़ करने की व्यवस्था करेंगे। पर जब कभी आप लोग सचमुच कोई आगे क़दम उठायेंगे, भले ही वह "थोड़ा

Scanned by CamScanner

हटकर बढ़ने का" क़दम हो, तब हम यह कहेंगे: कृपया और बढ़िये! और सचमुच आगे क़दम केवल वही हो सकता है, जिससे मज़दूरों के कार्य-क्षेत्र में थोड़ा ही सही, पर सचमुच कुछ विस्तार आये। ऐसे प्रत्येक विस्तार से हमारा लाभ होगा और उससे ऐसी वैध संस्थाओं के निर्माण में सहायता मिलेगी, जहां पुलिस के ख़ुफ़िया एजेंट समाजवादियों का पता नहीं लगाया करेंगे, बल्कि जहां समाजवादियों को अपने समर्थक मिलेंगे। संक्षेप में हमारा काम झाड़-झंखाड़ को काटकर साफ़ करना है। हमारा काम गमलों में गेहूं उगाना नहीं है। झाड़-झंखाड़ साफ़ करके हम गेहूं के लिए ज़मीन साफ़ कर देंगे। और जबकि अफ़ानासी इवानोवीच और पुलखेरिया इवानोवना[90] जैसे लोग गमलों में लगी फ़सल को उगाने में व्यस्त हैं, तो हमें न केवल आज के झाड़-झंखाड़ को साफ़ करने के लिए, बल्कि कल की गेहूं की फ़सल काटने के लिए भी लोगों को तैयार करना चाहिए।*

अतएव **हम** वैधीकरण द्वारा एक ऐसा ट्रेड-यूनियन संगठन बनाने की समस्या **हल** नहीं कर सकते, जो कम से कम गुप्त और अधिक से अधिक व्यापक हो (परंतु यदि ज़ुबातोव और ओज़ेरोव जैसे लोग हमें इस समस्या को हल करने का थोड़ा भी अवसर देते हैं, तो हमें बहुत ही ख़ुशी होगी—और इसके लिए जितना हो सके, उतने ज़ोरदार ढंग से हमें इन लोगों के ख़िलाफ़ लड़ना चाहिए!)। इसके बाद गुप्त ट्रेड-यूनियन संगठनों का मार्ग बचता

---

*झाड़-झंखाड़ के विरुद्ध *ईस्क्रा* के संघर्ष से नाराज़ होकर *राबोचेये देलो* ने यह लिखा था: "*ईस्क्रा* को समय का चिह्न (वसंत की) महान घटनाओं में उतना नहीं दिखायी पड़ता, जितना कि मज़दूर आंदोलन का 'वैधीकरण' कराने के लिए ज़ुबातोव के एजेंटों की दयनीय कोशिश में। वह यह नहीं देखता कि ये तथ्य उसके विरुद्ध पड़ते हैं; कारण कि उनसे प्रकट होता है कि मज़दूर आंदोलन ने सरकार की नज़रों में ख़तरनाक रूप धारण कर लिया है" (*दो कांग्रेसें*, पृ० २७)। इन सब बातों की ज़िम्मेदारी उन कट्टरपंथी लोगों के "जड़सूत्रवाद" पर है, जो "जीवन के ज़रूरी तक़ाज़ों" को अनदेखा कर देते हैं। ये लोग हठधर्मी के साथ गज़गज़भर ऊंचे गेहूं को तो देखने से भी इनकार करते हैं, पर एक-एक इंच ऊंचे झाड़-झंखाड़ को साफ़ करने में लगे हुए हैं! इससे क्या यह बात प्रकट नहीं हो जाती कि "रूसी मज़दूर आंदोलन के विषय में इन लोगों की परिप्रेक्ष्य की अनुभूति विकृत है" (उपरोक्त पुस्तक, पृ० २७)?

Scanned by CamScanner

है, और इसके लिए **हमें** निश्चित रूप से उन मज़दूरों की अधिक से अधिक मदद करनी **चाहिए**, जिन्होंने (जैसा हम यक़ीनन जानते हैं) इस मार्ग पर चलना शुरू कर दिया है। ट्रेड-यूनियन संगठन न केवल आर्थिक संघर्ष को विकसित और मज़बूत करने के लिए बहुत मूल्यवान साबित हो सकते हैं, बल्कि वे राजनीतिक आंदोलन और क्रांतिकारी संगठन के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण सहायक बन सकते हैं। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए और नवजात ट्रेड-यूनियन आंदोलन को सामाजिक-जनवादियों की वांछित दिशा में ले जाने के लिए सबसे पहले यह समझना ज़रूरी है कि लगभग पिछले पांच वर्ष से सेंट पीटर्सबर्ग के "अर्थवादी" संगठन की जिस योजना को लेकर इतने व्यस्त हैं, वह कितनी बेहूदा है। यह योजना जुलाई, १८९७ में *मज़दूर सहायता कोष की नियमावली (लिस्तोक 'राबोत्निका'*, अंक ९=१०, पृ० ४६, *राबोचाया मीस्ल*, अंक १ से ली हुई) और अक्तूबर, १९०० में *मज़दूरों के एक ट्रेड-यूनियन संगठन की नियमावली* (सेंट पीटर्सबर्ग में छपा एक ख़ास परचा, जो *ईस्क्रा* के अंक १ में उद्धृत किया गया है) में प्रस्तुत की गयी थी। इन दोनों नियमावलियों का बुनियादी दोष यह है कि उनमें एक व्यापक मज़दूर संगठन का ढांचा विस्तार से बताया गया है और उसे क्रांतिकारियों का संगठन समझ लिया गया है। आइये, बादवाली नियमावली पर थोड़ा विचार करें, क्योंकि यह अधिक विस्तारपूर्वक बनायी गयी है। उसमें **बावन** पैराग्राफ़ हैं। तेईस पैराग्राफ़ों में उन "मज़दूर मंडलों" की बनावट, काम करने के तरीक़े और क्षेत्र की चर्चा है, जो हर कारख़ाने में संगठित किये जाते हैं ("दस व्यक्तियों से अधिक नहीं") और जो "केंद्रीय (फ़ैक्टरी) दलों" का चुनाव करते हैं। पैराग्राफ़ २ में कहा गया है कि "केंद्रीय दल अपने कारख़ाने या वर्कशाप में होनेवाली सभी बातों पर नज़र रखता है और घटनाओं का ब्योरा रखता है।" "केंद्रीय दल चंदा देनेवालों के सामने माहवार हिसाब पेश करता है" (पैरा १७), आदि। दस पैराग्राफ़ों में "ज़िला संगठन" का ज़िक्र है और उन्नीस पैराग्राफ़ों में 'मज़दूर संगठन की समिति' तथा 'सेंट पीटर्सबर्ग की संघर्ष करनेवाली लीग की समिति' के पेचीदा अंतर्संबंध की विवेचना है (हर ज़िले के और "प्रबंधकर्त्ता दलों"

Scanned by CamScanner

के प्रतिनिधि—"प्रचारकों के दल, प्रांतों के साथ और विदेशों में स्थित संगठनों के साथ संपर्क रखनेवाले दल, गोदामों, प्रकाशनों तथा कोष की व्यवस्था करनेवाले दल")।

सामाजिक-जनवाद और मज़दूरों के आर्थिक संघर्ष से संबंधित "प्रबंधकर्त्ता दल" एक ही बात हैं! "अर्थवादियों" के विचार कैसे सामाजिक-जनवाद से हटकर ट्रेड-यूनियनवाद की ओर बहक जाते हैं और वे इस विचार से कितने दूर हैं कि सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ता को सबसे पहले क्रांतिकारियों का ऐसा संगठन बनाने की फ़िक्र करनी चाहिए, जो सर्वहारा के **पूरे** मुक्ति-संग्राम का नेतृत्व कर सके—इसकी इससे बढ़िया मिसाल मिलना मुश्किल है। "मज़दूर वर्ग की राजनीतिक मुक्ति" की और "ज़ार की निरंकुशता" के ख़िलाफ़ संघर्ष की बातें करना और फिर भी इस प्रकार की नियमावलियां बनाना यह बताता है कि इन लोगों ने यह तनिक भी नहीं समझा है कि सामाजिक-जनवाद के असली राजनीतिक काम क्या हैं। इनके लगभग पचास पैराग्राफ़ों में इस समझ की झलक तक नहीं मिलती कि जनता में ऐसा व्यापकतम राजनीतिक आंदोलन चलाना आवश्यक है, जो रूसी निरंकुशता के हर पहलू पर और रूस के विभिन्न सामाजिक वर्गों की सभी विशेषताओं पर प्रकाश डाले। इस तरह की नियमावली से राजनीतिक उद्देश्यों की बात तो जाने दीजिये, ट्रेड-यूनियनवादी उद्देश्यों को प्राप्त करने में भी कोई मदद नहीं मिल सकती, क्योंकि उसके लिए **व्यवसायगत** संगठन करना आवश्यक है, जिसका इन नियमावलियों में कोई ज़िक्र तक नहीं किया गया है।

पर सबसे ज़्यादा मार्के की बात शायद इस पूरी "व्यवस्था" का ज़रूरत से ज़्यादा भारी होना है। यह व्यवस्था एक-जैसे तथा हद दरजे के फुटकर नियमों और तीन मंज़िलोंवाली चुनाव-प्रणाली के ज़रिए एक-एक फ़ैक्टरी को "समिति" से बांधने की कोशिश करती है। "अर्थवाद" के संकुचित दृष्टिकोण की सीमाओं में जकड़ा हुआ विचार ऐसे नियमों के जंगल में खो जाता है, जिनसे सचमुच लाल फ़ीते और नौकरशाही की बू आती है। ज़ाहिर है कि तीन-चौथाई नियन व्यवहार में कभी लागू नहीं किये जाते, पर दूसरी ओर, इस प्रकार का "गुप्त" संगठन, जिसका केंद्रीय दल हर कारख़ाने में मौजूद हो, राजनीतिक पुलिस के लिए बहुत बड़े पैमाने पर छापे मारना बहुत आसान बना देता है।

Scanned by CamScanner

के प्रतिनिधि—"प्रचारकों के दल, प्रांतों के साथ और विदेशों में स्थित संगठनों के साथ संपर्क रखनेवाले दल, गोदामों, प्रकाशनों तथा कोष की व्यवस्था करनेवाले दल")।

सामाजिक-जनवाद और मज़दूरों के आर्थिक संघर्ष से संबंधित "प्रबंधकर्त्ता दल" एक ही बात हैं! "अर्थवादियों" के विचार कैसे सामाजिक-जनवाद से हटकर ट्रेड-यूनियनवाद की ओर बहक जाते हैं और वे इस विचार से कितने दूर हैं कि सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ता को सबसे पहले क्रांतिकारियों का ऐसा संगठन बनाने की फ़िक्र करनी चाहिए, जो सर्वहारा के **पूरे** मुक्ति-संग्राम का नेतृत्व कर सके—इसकी इससे बढ़िया मिसाल मिलना मुश्किल है। "मज़दूर वर्ग की राजनीतिक मुक्ति" की और "ज़ार की निरंकुशता" के ख़िलाफ़ संघर्ष की बातें करना और फिर भी इस प्रकार की नियमावलियां बनाना यह बताता है कि इन लोगों ने यह तनिक भी नहीं समझा है कि सामाजिक-जनवाद के असली राजनीतिक काम क्या हैं। इनके लगभग पचास पैराग्राफ़ों में इस समझ की झलक तक नहीं मिलती कि जनता में ऐसा व्यापकतम राजनीतिक आंदोलन चलाना आवश्यक है, जो रूसी निरंकुशता के हर पहलू पर और रूस के विभिन्न सामाजिक वर्गों की सभी विशेषताओं पर प्रकाश डाले। इस तरह की नियमावली से राजनीतिक उद्देश्यों की बात तो जाने दीजिये, ट्रेड-यूनियनवादी उद्देश्यों को प्राप्त करने में भी कोई मदद नहीं मिल सकती, क्योंकि उसके लिए **व्यवसायगत** संगठन करना आवश्यक है, जिसका इन नियमावलियों में कोई ज़िक्र तक नहीं किया गया है।

पर सबसे ज़्यादा मार्के की बात शायद इस पूरी "व्यवस्था" का ज़रूरत से ज़्यादा भारी होना है। यह व्यवस्था एक-जैसे तथा हद दरजे के फुटकर नियमों और तीन मंज़िलोंवाली चुनाव-प्रणाली के ज़रिए एक-एक फ़ैक्टरी को "समिति" से बांधने की कोशिश करती है। "अर्थवाद" के संकुचित दृष्टिकोण की सीमाओं में जकड़ा हुआ विचार ऐसे नियमों के जंगल में खो जाता है, जिनसे सचमुच लाल फ़ीते और नौकरशाही की बू आती है। ज़ाहिर है कि तीन-चौथाई नियन व्यवहार में कभी लागू नहीं किये जाते, पर दूसरी ओर, इस प्रकार का "गुप्त" संगठन, जिसका केंद्रीय दल हर कारख़ाने में मौजूद हो, राजनीतिक पुलिस के लिए बहुत बड़े पैमाने पर छापे मारना बहुत आसान बना देता है।

Scanned by CamScanner

पोलैंड के हमारे साथी भी अपने आंदोलन में इस प्रकार के दौर से उस समय गुज़रे, जब वहां हर किसी को मज़दूर सहायता कोष का व्यापक संगठन खड़ा करने का जोश आया हुआ था, परंतु जब उन्होंने देखा कि ऐसे संगठनों से केवल राजनीतिक पुलिस को भरपूर फ़सल बटोरने में मदद मिलती है, तब उन्होंने बहुत जल्द ही इस विचार को त्याग दिया। यदि हम मज़दूरों के व्यापक संगठन चाहते हैं, न कि व्यापक गिरफ़्तारियां, यदि हम राजनीतिक पुलिस को ख़ुश नहीं करना चाहते, तो इन संगठनों को हमें बिलकुल ग़ैर रस्मी बनाकर रखना चाहिए। परंतु क्या उस हालत में वे काम कर सकेंगे? आइये, हम देखें कि इनके काम क्या हैं: "...कारख़ाने में होनेवाली सभी बातों पर नज़र रखना और घटनाओं का ब्योरा रखना" (नियमावली का पैरा २)। क्या इस काम के लिए सचमुच किसी बाक़ायदा दल की ज़रूरत है? क्या यह काम बिना कोई विशेष दल बनाये और अवैध पत्रों को रिपोर्टें भेजकर बेहतर ढंग से नहीं हो सकता? "...कारख़ानों में मज़दूरों की हालत को सुधारने के लिए मज़दूरों के संघर्षों का नेतृत्व करना" (नियमावली का पैरा ३)। इस काम के लिए भी किसी बाज़ाब्ता दल की आवश्यकता नहीं है। कोई भी होशियार आंदोलनकर्त्ता मामूली बातचीत के ज़रिए पता लगा सकता है कि मज़दूर किन मांगों को उठाना चाहते हैं और फिर वह इन मांगों की सूचना क्रांतिकारियों के एक संकुचित—व्यापक नहीं—संगठन को भेज सकता है, ताकि उनके बारे में एक परचा तैयार हो जाये। "...एक कोष का संगठन करना... जिसके लिए फ़ी रूबल दो कोपेक के हिसाब से चंदा जमा करना होगा" (पैरा ६) ...चंदा देनेवालों के सामने माहवार हिसाब पेश करना (पैरा १७)... जो लोग चंदा न दें, उन्हें सदस्यता से अलग कर देना (पैरा १०), इत्यादि। ख़ूब, इससे तो पुलिस की बन जायेगी, क्योंकि उसके लिए इस "केंद्रीय फ़ैक्टरी कोष" के भारी-भरकम गुप्त संगठन में घुस जाने, सारा धन ज़ब्त कर लेने और सभी अच्छे लोगों को गिरफ़्तार कर लेने से ज़्यादा आसान बात और क्या हो सकती है! इससे कहीं बेहतर क्या यह नहीं रहेगा कि एक-एक या दो-दो कोपेक के ऐसे चंदा-टिकट जारी कर दिये जायें, जिन पर किसी निश्चित (बहुत सीमित और बहुत ही गुप्त) संगठन की मुहर लगी हो, या किसी तरह

Scanned by CamScanner

के चंदा-टिकटों के बिना ही पैसा जमा किया जाये और उसका हिसाब सांकेतिक भाषा में किसी अवैध पत्र में छाप दिया जाये? इससे हमारा उद्देश्य पूरा हो जायेगा, लेकिन राजनीतिक पुलिस के लिए कोई सुराग पाना सौगुना मुश्किल हो जायेगा।

मैं इन नियमों का और भी विश्लेषण कर सकता हूं, पर मेरे विचार से जितना कहा जा चुका है, वही काफ़ी है। सबसे अधिक विश्वसनीय, अनुभवी और तपे हुए मज़दूरों का एक छोटा-सा गठा हुआ केंद्र, जिसके ज़िम्मेदार प्रतिनिधि सभी ख़ास-ख़ास इलाक़ों में तैनात हों और क्रांतिकारियों के संगठन के साथ जिनका संबंध बहुत ही सख़्त ढंग के गुप्त नियमों के मुताबिक़ क़ायम हो—ऐसा केंद्र जनता के व्यापकतम सहयोग से और बिना किसी बाज़ाब्ता संगठन के ट्रेड-यूनियन संगठन के **सभी** कामों को पूरा कर सकता है, और इससे भी बड़ी बात यह है कि सामाजिक-जनवादी आंदोलन जिस ढंग को पसंद करता है, उसी ढंग से वह इन तमाम कामों को कर सकता है। सारी राजनीतिक पुलिस के बावजूद **सामाजिक-जनवादी** ट्रेड-यूनियन आंदोलन को **मज़बूत** बनाने और विकसित करने का एकमात्र यही तरीक़ा है।

यह एतराज़ किया जा सकता है कि जो संगठन इतना lose हो कि उसकी कोई रूपरेखा तक निश्चित न हुई हो और जिसके कोई बाक़ायदा बनाये गये और रजिस्टर में दर्ज सदस्य भी न हों, उसको संगठन का नाम देना ही ग़लत है। यह बात सही हो सकती है। मैं नामों की परवाह नहीं करता। लेकिन यह "बिना सदस्यों का संगठन" हर ज़रूरी काम कर दिखायेगा और शुरू से ही इस बात को सुनिश्चित करेगा कि हमारी भावी ट्रेड-यूनियनों तथा समाजवाद के बीच घनिष्ठतम संपर्क बना रहे। केवल कोई घोर कल्पनावादी ही निरंकुश शासन के अधीन मज़दूरों का ऐसा **व्यापक** संगठन बनाना चाहेगा, जिसमें चुनाव होते हों, रिपोर्टें दी जाती हों, हर आदमी को वोट देने का अधिकार मिला हो, आदि, आदि।

इससे जो सबक़ निकलता है, वह बहुत ही सीधा-सादा है: यदि हम क्रांतिकारियों के एक मज़बूत संगठन की ठोस नींव से शुरूआत करेंगे, तो हम पूरे आंदोलन के स्थायित्व की गारंटी कर सकेंगे और सामाजिक-जनवादी आंदोलन तथा ख़ास ट्रेड-यूनियन आंदोलन—दोनों—के उद्देश्यों को हासिल करने में सफल होंगे।

Scanned by CamScanner

इसके विपरीत यदि हम मज़दूरों के एक व्यापक संगठन से शुरूआत करेंगे, जिसे प्राय: सबसे ज़्यादा जनता की "पहुंच के अंदर" समझा जाता है (पर जो दरअसल सबसे ज़्यादा राजनीतिक पुलिसवालों की पहुंच में होता है और जिससे क्रांतिकारी लोग सबसे ज़्यादा आसानी से पुलिस के चंगुल में आ जाते हैं), तो हम इन दोनों में किसी भी उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकेंगे, अपना नौसिखुआपन दूर नहीं कर पायेंगे, और चूंकि हम बिखरे हुए रहेंगे और पुलिस बार-बार हमारी ताक़त को तोड़ती जायेगी, इसलिए हमारी कोशिशों का केवल यह नतीजा निकलेगा कि ज़ुबातोव और ओज़ेरोव के ढर्रे की यूनियनें सबसे ज़्यादा जनता की पहुंच के अंदर हो जायेंगी।

दरअसल क्रांतिकारियों के इस संगठन को कौन-से काम करने चाहिए? इसकी अब हम विस्तार से विवेचना करेंगे। पर उसके पहले हम ज़रा अपने आतंकवादी की एक और लाक्षणिक दलील पर भी विचार कर लें, जो (दुर्भाग्यवश!) इस मामले में भी "अर्थवादी" का बिलकुल नज़दीकी पड़ोसी है। *स्वोबोदा* (अंक १) में—जो मज़दूरों के लिए प्रकाशित पत्रिका है—*संगठन* शीर्षक से एक लेख छपा है, जिसके लेखक ने अपने मित्रों की, याने इवानोवो-वोज़्नेसेंस्क के "अर्थवादी" मज़दूरों की हिमायत करने की कोशिश की है। वह लिखते हैं:

"जब भीड़ मूक और अप्रबुद्ध होती है और जब आंदोलन की जड़ें आम लोगों में नहीं होतीं, तब बुरा हाल होता है। मिसाल के लिए, गरमियों में या किसी और छुट्टी में विश्वविद्यालयवाले नगरों के विद्यार्थी अपने-अपने घरों को चल देते हैं और उनके जाते ही मज़दूरों का आंदोलन ठप हो जाता है। क्या ऐसा मज़दूर आंदोलन भी कोई असली ताक़त हासिल कर सकता है, जिसे बाहर से धक्का देने की ज़रूरत पड़ती हो? हरगिज़ नहीं... ऐसे आंदोलन ने अभी पैरों से चलना नहीं सीखा है, वह अब भी किसी की उंगली पकड़कर चलता है। हर क्षेत्र में यही हालत है: विद्यार्थी चले जाते हैं—और पूरा काम बंद हो जाता है; सबसे योग्य लोग गिरफ़्तार कर लिए जाते हैं—और मलाई के हटते ही सारा दूध खट्टा हो जाता है; यदि 'समिति' पकड़ ली जाती है, तो जब तक एक नयी समिति नहीं बन जाती, तब तक के लिए हर चीज़ ठप हो जाती है; और कोई नहीं कह सकता कि अगली समिति किस प्रकार की होगी—हो सकता है कि वह पहलेवाली समिति से बिलकुल भिन्न ढंग की हो: पहली समिति एक तरह की सीख दिया करती थी, नयी समिति उसकी बिलकुल उलटी

Scanned by CamScanner

बात कह सकती है। बीते हुए कल और आनेवाले कल का तार टूट जाता है, बीते हुए दिनों का अनुभव भविष्य का पथ आलोकित नहीं करता। और यह सब इसलिए होता है कि जड़ें भीड़ में अभी गहरी नहीं पहुंची हैं। काम सौ मूर्ख नहीं, बल्कि एक दर्जन बुद्धिमान करते हैं। एक दर्जन बुद्धिमान लोग एक झपट्टे में साफ़ किये जा सकते हैं, लेकिन जब संगठन भीड़ को समेटे रहता है, तब हर काम भीड़ करती है और कोई लाख सिर मारने पर भी आंदोलन को नहीं रोक सकता" (पृ० ६३)।

तथ्यों का वर्णन बिलकुल सही है। उनसे हमारे नौसिखुएपन का एक अच्छा चित्र मिल जाता है। परंतु इस वर्णन से जो नतीजे निकाले गये हैं, वे मूर्खता और राजनीतिक बेहूदगी, दोनों ही दृष्टि से *राबोचाया मीस्ल* को ही शोभा देते हैं। वे मूर्खता की हद के द्योतक इसलिए हैं कि लेखक आंदोलन की "जड़ों" की "गहराई" के दार्शनिक एवं सामाजिक-ऐतिहासिक प्रश्न को इस प्राविधिक एवं संगठनात्मक प्रश्न के साथ मिला देता है कि राजनीतिक पुलिसवालों का सामना करने का सबसे अच्छा तरीक़ा क्या है। वे राजनीतिक बेहूदगी की पराकाष्ठा के द्योतक इसलिए हैं कि लेखक बुरे नेताओं की जगह अच्छे नेताओं को लाने के बजाय आम तौर पर नेताओं की जगह "भीड़" को ला बिठाने की बात सोचते हैं। जिस प्रकार राजनीतिक आंदोलन के स्थान पर उत्तेजना पैदा करनेवाले आतंकवादी कार्यों का प्रयोग करने का विचार हमें राजनीतिक दृष्टि से पीछे घसीटता है, उसी प्रकार यह विचार हमें संगठन के क्षेत्र में पीछे घसीटने की कोशिश करता है। मैं सचमुच embarras de richesses* अनुभव कर रहा हूं और तय नहीं कर पा रहा हूं कि *स्वोबोदा* ने जो भ्रम पैदा किया है, उसे कहां से सुलझाना शुरू करूं। अपनी बात में स्पष्टता लाने के लिए मैं एक मिसाल से शुरू करूंगा। जर्मनों को लीजिये। मैं आशा करता हूं कि कोई इस बात से इनकार नहीं करेगा कि जर्मनों के संगठन ने भीड़ को समेट लिया है, उनके यहां हर चीज़ भीड़ से शुरू होती है और वहां के मज़दूर आंदोलन ने अपने पैरों पर चलना सीख लिया है। फिर भी ज़रा ध्यान दीजिये कि वहां यह लाखों और करोड़ों की भीड़ अपने "एक दर्जन" परखे हुए राजनीतिक

---

*बहुतायत से परेशानी।—सं०

Scanned by CamScanner

नेताओं को कितना महत्व देती है और कितनी दृढ़ता से उनसे चिपटी रहती है! संसद में विरोधी पार्टियों के सदस्यों ने अकसर समाजवादियों को यह कह-कहकर ताने दिये हैं: "अच्छे जनवादी हैं आप लोग! आप लोगों का यह मज़दूर वर्ग का आंदोलन बस नाम भर का है, असल में तो साल-दर-साल नेताओं का वही पुराना गुट, वे ही बेबेल और लीबक्नेख़्त जमे रहते हैं। पीढ़ियां गुज़र जाती हैं और उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता। आपके संसद-सदस्य—जिन्हें कहा जाता है कि मज़दूर चुनते हैं—बादशाह सलामत द्वारा नियुक्त किये गये अफ़सरों से भी ज़्यादा मुस्तक़िल हैं!" परंतु "भीड़" को "नेताओं" से लड़ा देने, भीड़ में दूषित और महत्वाकांक्षी भावनाएं जगाने और "एक दर्जन बुद्धिमानों" में जनता का विश्वास नष्ट करके आंदोलन की मज़बूती और स्थायित्व को ख़त्म करने की इन धूर्ततापूर्ण कोशिशों को देखकर जर्मन लोग केवल तिरस्कार से मुसकरा देते हैं। जर्मनों में राजनीतिक चिंतन काफ़ी विकसित हो चुका है और उन्होंने इतना काफ़ी राजनीतिक अनुभव संचित कर लिया है कि वे यह समझने लगे हैं कि ऐसे "एक दर्जन" परखे हुए और प्रतिभाशाली नेताओं के बिना (और प्रतिभाशाली लोग सैकड़ों की संख्या में नहीं पैदा होते), जिन्हें अपने काम की पूरी प्रशिक्षा मिल चुकी हो, जो दीर्घकाल तक अनुभव प्राप्त कर चुके हों और जो पूर्ण सहयोग और ताल-मेल के साथ काम करते हों, आधुनिक समाज में कोई वर्ग दृढ़ता के साथ संघर्ष नहीं कर सकता। जर्मनों के बीच भी ऐसे लफ़्फ़ाज़ हुए हैं, जिन्होंने "सौ मूर्खों" की ख़ुशामद की है, उन्हें "एक दर्जन बुद्धिमानों" से ऊंचा स्थान दिया है, जनता के "ज़बरदस्त घूंसों" का गुणगान किया है और (मोस्ट और हैस्सेलमैन्न की तरह) उसे विवेकहीन "क्रांतिकारी" कार्य करने के लिए उकसाया है और दृढ़ तथा स्थिर-चित्त नेताओं के प्रति अविश्वास पैदा किया है। समाजवादी आंदोलन में पाये जानेवाले ऐसे तमाम लफ़्फ़ाज़ तत्वों के ख़िलाफ़ दृढ़तापूर्वक और निर्ममतापूर्वक संघर्ष करके ही जर्मन समाजवाद पनप सका है और आज की यह विराट शक्ति बन सका है। लेकिन आज जब रूस का सामाजिक-जनवाद केवल इसलिए संकट से गुज़र रहा है कि उसके पास अपने आप जाग्रत होती हुई जनता का नेतृत्व करने के लिए पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित, विकसित एवं अनुभवी नेता नहीं हैं,

Scanned by CamScanner

तब हमारे ये अक़्ल के ठेकेदार मूर्खों जैसी गंभीरता के साथ चीख-चीखकर कहते हैं: "जब आंदोलन की जड़ें आम लोगों में नहीं होतीं, तब बुरा हाल होता है"!

"विद्यार्थियों की समिति किसी काम की नहीं होती, उसमें स्थायित्व नहीं होता।" यह बिलकुल सच बात है। परंतु इससे जो नतीजा निकालना चाहिए, वह यह है कि हमें पेशेवर **क्रांतिकारियों** की समिति बनानी चाहिए और इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि पेशेवर क्रांतिकारी बनने की क्षमता किसी विद्यार्थी में है या मज़दूर में। लेकिन आप लोग इससे यह नतीजा निकालते हैं कि मज़दूर आंदोलन को बाहर से धक्का नहीं देना चाहिए! अपने राजनीतिक भोलेपन के कारण आप यह नहीं देखते कि आप लोग हमारे "अर्थवादियों" के हाथों में खेल रहे हैं और हमारे नौसिखुएपन को बढ़ावा दे रहे हैं। मैं पूछता हूं कि हमारे विद्यार्थियों ने हमारे मज़दूरों को किस अर्थ में "धक्का दिया"? **केवल** इस अर्थ में कि विद्यार्थियों के पास स्वयं जो थोड़ा-बहुत राजनीतिक ज्ञान था, समाजवादी विचार के जो चंद टुकड़े उन्होंने जमा कर लिये थे (क्योंकि आजकल के विद्यार्थियों का मुख्य बौद्धिक भोजन—क़ानूनी मार्क्सवाद—उन्हें केवल प्रारंभिक ज्ञान या ज्ञान के चंद टुकड़े ही दे सकता है), उन्हें वे मज़दूरों तक ले गये थे। **इस प्रकार का** "बाहर से धक्का देना" कभी बहुत ज़्यादा नहीं हुआ है, इसके विपरीत अभी तक हमारे आंदोलन में यह बात बहुत कम देखने में आयी है, क्योंकि हम लोग सदा अपने घोंघे के अंदर ही बंद पड़े रहे हैं, हम "मालिकों तथा सरकार के खिलाफ़" प्राथमिक "आर्थिक संघर्ष" की पूजा दासों की तरह हद से ज़्यादा करते रहे हैं। हम, पेशेवर क्रांतिकारी इसे अपना फ़र्ज़ समझते हैं और समझेंगे कि अभी तक हमने **इस प्रकार के** जितने "धक्के बाहर से दिये" उससे सौ गुना ज़्यादा "धक्के" दें। लेकिन इसी एक बात से कि आपने "बाहर से धक्का देने" जैसी घृणित शब्दावली का प्रयोग किया है—जिन शब्दों से मज़दूरों में (कम से कम उन मज़दूरों में, जो उतने ही पिछड़े हुए हैं, जितने कि आप लोग) लाज़िमी तौर पर उन **सभी** लोगों के प्रति अविश्वास का भाव पैदा होगा, जो उनके पास बाहर से राजनीतिक ज्ञान और क्रांतिकारी अनुभव ले जाते हैं और इससे मज़दूरों में ऐसे **तमाम** लोगों का विरोध करने की सहज प्रवृत्ति

Scanned by CamScanner

उत्पन्न होगी—यह साबित हो जाता है कि आप लोग लफ़्फ़ाज़ हैं और लफ़्फ़ाज़ लोग मज़दूर वर्ग के सबसे बुरे दुश्मन होते हैं।

जी हां! और अब मेरे "बंधुत्वहीन तरीक़े" से बहस करने का रोना मत शुरू कर दीजियेगा। मैं आपके इरादों की पवित्रता में सपने में भी संदेह नहीं करता। जैसा मैं कह चुका हूं, आदमी केवल राजनीतिक भोलेपन के कारण भी लफ़्फ़ाज़ बन सकता है। परंतु मैंने साबित कर दिया है कि आप लोग लफ़्फ़ाज़ी पर उतर आये हैं और यह कहने में मैं कभी नहीं थकूंगा कि लफ़्फ़ाज़ मज़दूर वर्ग के सबसे बुरे दुश्मन होते हैं। सबसे बुरे दुश्मन इसलिए कि वे लोग भीड़ की बुरी प्रवृत्तियों को बढ़ावा देते हैं और पिछड़ा हुआ मज़दूर यह नहीं पहचान पाता कि ये लोग, जो अपने को मज़दूरों का मित्र बताते हैं और कभी-कभी ईमानदारी के साथ पेश आते हैं, असल में उसके दुश्मन हैं। सबसे बुरे दुश्मन इसलिए कि फूट और ढुलमुल-यक़ीनी के ज़माने में, जब हमारे आंदोलन की रूपरेखा अभी गढ़ी ही जा रही है, तब लफ़्फ़ाज़ी के ज़रिए भीड़ को गुमराह करने से ज़्यादा आसान और कोई बात नहीं है, और भीड़ को अपनी ग़लती बहुत बाद में अत्यंत कटु अनुभव से ही मालूम होती है। यही कारण है कि आज रूस के प्रत्येक सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ता के लिए यह नारा होना चाहिए: *स्वोबोदा* और *राबोचेये देलो* के ख़िलाफ़ डटकर लड़ो, क्योंकि वे दोनों ही गिरकर लफ़्फ़ाज़ी के स्तर पर आ गये हैं (इस बारे में ज़्यादा विस्तार से हम आगे चर्चा करेंगे*)।

"सौ मूर्खों के मुक़ाबले एक दर्जन बुद्धिमानों का सफ़ाया करना ज़्यादा आसान है।" यह विलक्षण सत्य (जिसके लिए सौ मूर्ख सदा आपकी प्रशंसा करेंगे) आपको इतना स्पष्ट केवल इसलिए लगता है कि तर्क करते-करते आप यकायक एक प्रश्न को छोड़ दूसरे प्रश्न पर पहुंच गये हैं। आपने जिस बात की चर्चा शुरू की थी और जिसकी चर्चा अब भी कर रहे हैं, वह है एक

*यहां हम केवल इतना कह दें कि "बाहर से धक्का देने" तथा संगठन के प्रश्न पर *स्वोबोदा* के दूसरे उपदेशों के बारे में हमने जो कुछ कहा है, वह **सभी** "अर्थवादियों" पर **पूरी तरह** लागू होता है, जिनमें *राबोचेये देलो* के समर्थक भी आ जाते हैं, कारण कि उन्होंने संगठन के विषय में या तो ऐसे विचारों का सक्रिय रूप से प्रचार और समर्थन किया है, या वे उनमें बह गये हैं।

Scanned by CamScanner

"समिति" अथवा "संगठन" का सफ़ाया हो जाने की बात, और अब आप यकायत "गहराई" में आंदोलन की "जड़ों" का सफ़ाया होने के प्रश्न पर पहुंच गये हैं। ज़ाहिर है कि हमारे आंदोलन को मिटाना इसलिए असंभव है कि उसकी सैकड़ों और लाखों जड़ें जनता में बहुत गहराई तक पहुंच चुकी हैं, परंतु इस समय चर्चा का विषय यह नहीं है। जहां तक "गहरी जड़ों" का प्रश्न है, तो आज भी, हमारे तमाम नौसिखुएपन के बावजूद, कोई हमारा "सफ़ाया" नहीं कर सकता, फिर भी हम यह शिकायत करते हैं और शिकायत किये बिना नहीं रह सकते कि "**संगठनों**" का सफ़ाया हो जाता है और उसके परिणामस्वरूप आंदोलन का क्रम बनाये रखना असंभव हो जाता है। लेकिन आपने चूंकि **संगठनों** का सफ़ाया हो जाने का सवाल उठाया है और इस सवाल पर आप अड़े रहना ही चाहते हैं, इसलिए मैं ज़ोर देकर कहता हूं कि सौ मूर्खों की तुलना में एक दर्जन बुद्धिमानों का सफ़ाया करना कहीं ज़्यादा मुश्किल है। और आप भीड़ को मेरे "जनवाद विरोधी" विचारों, आदि के ख़िलाफ़ चाहे जितना भी भड़कायें, पर मैं सदा इस प्रस्थापना की पैरवी करूंगा। जैसा कि मैं बार-बार कह चुका हूं, संगठन के संबंध में "बुद्धिमानों" से मेरा मतलब **पेशेवर क्रांतिकारियों** से है। उसमें इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि उनको विद्यार्थियों में से प्रशिक्षित किया गया है या मज़दूरों में से। मैं ज़ोर देकर यह कहता हूं: (१) नेताओं के एक स्थायी और आंदोलन का क्रम बनाये रखनेवाले संगठन के बिना कोई भी क्रांतिकारी आंदोलन टिकाऊ नहीं हो सकता; (२) जितने अधिक व्यापक पैमाने पर जनता स्वयंस्फूर्त ढंग से संघर्ष में खिंचते हुए आंदोलन का आधार बनेगी और उसमें भाग लेगी, ऐसा संगठन बनाना उतना ही ज़्यादा ज़रूरी होता जायेगा, और इस संगठन को उतना ही अधिक मज़बूत बनना होगा (क्योंकि जनता के अधिक पिछड़े हुए हिस्सों को गुमराह करना लफ़्फ़ाज़ों के लिए ज़्यादा आसान होता है); (३) इस प्रकार के संगठन में मुख्यतया ऐसे लोगों को होना चाहिए, जो अपने पेशे के रूप में क्रांतिकारी कार्य करते हों; (४) निरंकुश राज्य में इस प्रकार के संगठन की सदस्यता को हम जितना ही अधिक ऐसे लोगों तक **सीमित** रखेंगे, जो अपने पेशे के रूप में क्रांतिकारी कार्य करते हों और जो राजनीतिक पुलिस को मात देने की विद्या सीख चुके हों, ऐसे

Scanned by CamScanner

संगठन का "सफ़ाया करना" उतना ही अधिक मुश्किल होगा; और (५) मज़दूर वर्ग तथा समाज के अन्य वर्गों के उतने ही **अधिक** लोगों के लिए यह संभव हो सकेगा कि वे आंदोलन में शामिल हों और उसमें सक्रिय काम करें।

मैं अपने "अर्थवादी", आतंकवादी और "अर्थवादी-आतंकवादी"* मित्रों को निमंत्रण देता हूं कि वे इन प्रस्थापनाओं का खंडन करें। इस समय मैं केवल अंत की दो प्रस्थापनाओं की चर्चा करूंगा। यह प्रश्न कि "एक दर्जन बुद्धिमानों" का सफ़ाया करना ज़्यादा आसान है या "सौ मूर्खों" का, अंत में उस प्रश्न का रूप धारण कर लेता है, जिस पर हम ऊपर विचार कर चुके हैं, याने यह कि जब सख़्त गोपनीयता रखना आवश्यक हो, तब क्या एक जन-**संगठन** बनाना संभव है? किसी जन-संगठन में हम वह सख़्त गोपनीयता हासिल नहीं कर सकते, जो सरकार के ख़िलाफ़ दृढ़ तथा क्रम बनाये रखनेवाला संघर्ष चलाने के लिए परम अनिवार्य है। परंतु तमाम गुप्त कामों को पेशेवर क्रांतिकारियों की यथासंभव छोटी से छोटी संख्या के हाथों में केंद्रित कर देने का मतलब यह नहीं होता कि ये क्रांतिकारी ही "सब लोगों के लिए सोचा करेंगे" और भीड़ **आंदोलन** में सक्रिय रूप से भाग नहीं लेगी। इसके विपरीत भीड़

---

* *स्वोबोदा* को आतंकवादी न कहकर शायद यह नाम देना अधिक उचित होगा, क्योंकि *क्रांतिवाद का पुनरुत्थान* शीर्षक लेख में आतंकवाद का समर्थन किया जाता है और जिस लेख की हम इस समय आलोचना कर रहे हैं, वह "अर्थवाद" की हिमायत करता है। *स्वोबोदा* के बारे में कहा जा सकता है कि नेकी सोचे, बदी करे। *स्वोबोदा* की इच्छाएं और इरादे बड़े भले हैं—पर नतीजा होता है सरासर गड़बड़ी; इसका मुख्य कारण यह है कि *स्वोबोदा* संगठन के क्रम को अटूट रखना तो ज़रूरी समझता है, पर वह क्रांतिकारी चिंतन तथा सामाजिक-जनवादी सिद्धांत के क्रम के अटूट रहने की आवश्यकता को नहीं मानता। वह पेशेवर क्रांतिकारी को पुनर्जीवित करना चाहता है (*क्रांतिवाद का पुनरुत्थान*) और इसके लिए वह एक तो उत्तेजना पैदा करनेवाले आतंकवादी कार्यों का प्रयोग करने, और, दूसरे, "औसत मज़दूरों का संगठन बनाने" का सुझाव रखता है (*स्वोबोदा*, अंक १, पृ० ६६ और उससे आगे), जिन्हें "बाहर से धक्का देने" की कम आवश्यकता पड़े। दूसरे शब्दों में, वह घर को गरम रखने के लिए लकड़ी जुटाने के वास्ते घर को ही ढा देना चाहता है।

Scanned by CamScanner

अपने बीच में से अधिकाधिक संख्या में पेशेवर क्रांतिकारियों को पैदा करेगी, क्योंकि वह समझेगी कि चंद विद्यार्थियों और आर्थिक संघर्ष चलानेवाले चंद मज़दूरों का एक जगह जमा होकर एक "समिति" बना लेना ही काफ़ी नहीं है, बल्कि पेशेवर क्रांतिकारी बनने के लिए वर्षों का प्रशिक्षण आवश्यक होता है, तब भीड़ केवल नौसिखुए तरीक़ों के ही बारे में नहीं, बल्कि ऐसे प्रशिक्षण के बारे में भी "सोचेगी"। **संगठन** के गुप्त कामों के केंद्रीयकरण का यह मतलब कदापि नहीं होता कि **आंदोलन** के सभी कामों का केंद्रीयकरण कर दिया जायेगा। ग़ैर क़ानूनी अख़बार के काम में जनता का बड़ी से बड़ी संख्या में सक्रिय भाग लेना इस बात से कोई कम नहीं हो जायेगा कि अख़बार से संबंधित गुप्त काम "एक दर्जन" पेशेवर क्रांतिकारियों के हाथों में केंद्रित रहेंगे, बल्कि इसके विपरीत दस गुना **बढ़ जायेगा।** इस प्रकार और केवल इसी प्रकार हम इस बात की गारंटी कर सकेंगे कि ग़ैर क़ानूनी साहित्य को पढ़ने, उसके लिए लिखने और कुछ हद तक उसको बांटने का भी काम **एक तरह से गुप्त काम नहीं रह जायेगा,** क्योंकि बहुत जल्द पुलिस इस नतीजे पर पहुंच जायेगी कि हज़ारों की संख्या में बंटनेवाले प्रकाशनों की एक-एक प्रति पर सरकार की पूरी अदालती और प्रशासनिक दफ़्तरशाही को लगाना उपहासास्पद और असंभव है। यह बात न केवल प्रकाशनों पर, बल्कि आंदोलन के प्रत्येक पहलू पर, और यहां तक कि प्रदर्शनों पर भी लागू होती है। प्रदर्शन में जनता के बड़ी संख्या में और सक्रिय भाग लेने में कोई कमी नहीं आयेगी, बल्कि उसमें इस बात से और फ़ायदा होगा कि इस काम के सारे गुप्त पहलुओं को—परचे तैयार करना, मोटे तौर पर योजनाएं बनाना, हर शहरी मोहल्ले, हर औद्योगिक इलाक़े तथा हर स्कूल-कालेज के लिए नेताओं को नियुक्त करना, आदि—"एक दर्जन" ऐसे अनुभवी क्रांतिकारियों के हाथों में केंद्रित कर दिया जाये, जिनकी प्रशिक्षा अपने पेशे के मामले में पुलिसवालों की टक्कर की हो (मैं जानता हूं कि मेरे "ग़ैर जनवादी" विचारों पर एतराज़ किया जायेगा, पर इस विवेकहीन एतराज़ का मैं बाद में उचित जवाब दूंगा)। यदि बहुत ही गुप्त कामों को क्रांतिकारियों के एक संगठन के हाथों में केंद्रित कर दिया जायेगा, तो इससे ऐसे अनेक अन्य संगठनों के कार्य के विस्तार और गुण में कोई कमी नहीं आयेगी,

Scanned by CamScanner

बल्कि इसके विपरीत उनमें बढ़ती ही होगी, जो आम जनता के लिए होते हैं और इसलिए कम से कम बाक़ायदा होते हैं और यथासंभव कम गुप्त होते हैं, जैसे मज़दूरों की ट्रेड-यूनियनें, मज़दूरों के आत्म-शिक्षा मंडल, ग़ैर क़ानूनी साहित्य पढ़नेवाले मंडल, आबादी के अन्य **तमाम** स्तरों में काम करनेवाले समाजवादी मंडल और जनवादी मंडल भी, इत्यादि, इत्यादि। ऐसे मंडलों, ट्रेड-यूनियनों और संगठनों को हर जगह और **बड़ी से बड़ी संख्या में** होना चाहिए और उन्हें तरह-तरह के काम करने चाहिए। पर इन संगठनों को और **क्रांतिकारियों** के संगठन को **एक चीज़ समझना,** उनके बीच जो फ़र्क़ है, उसको मिटा देना और जनता की इस बात की हद दरजे की धुंधली समझ को कि जन-आंदोलन में काम करने के लिए कुछ ऐसे लोगों का होना ज़रूरी है, जो केवल सामाजिक-जनवादी कार्य करते हों, और कि ऐसे लोगों को बड़े धैर्य और अध्यवसाय के साथ अपने को पेशेवर क्रांतिकारी **बनने की प्रशिक्षा देनी** चाहिए—और भी धुंधला बना देना बेतुकी और हानिकर बात है।

हां, यह समझ अविश्वसनीय रूप से धुंधली पड़ गयी है। संगठन के मामले में हमारा सबसे बड़ा गुनाह यह है कि **हमने अपने नौसिखुएपन से रूस में क्रांतिकारियों की प्रतिष्ठा को धक्का पहुंचाया है।** जो आदमी सिद्धांत के मामले में ढीला-ढाला और ढुलमुल है, जिसका दृष्टिकोण संकुचित है, जो अपनी काहिली को छिपाने के लिए जनता की स्वयंस्फूर्ति की दुहाई देता है, जो जन-नायक के रूप में नहीं, बल्कि ट्रेड-यूनियन के सचिव के रूप में अधिक काम करता है, जो ऐसी किसी व्यापक तथा साहसी योजना पेश करने में असमर्थ है, जिसका विरोधी भी आदर करें, और जो खुद अपने पेशे की कला में—राजनीतिक पुलिस को मात देने की कला में—अनुभवहीन और फूहड़ साबित हो चुका है, ज़ाहिर है कि ऐसा आदमी क्रांतिकारी नहीं, दयनीय नौसिखुआ है!

इन तीखे शब्दों से कोई सक्रिय कार्यकर्त्ता नाराज़ न हो, क्योंकि जहां तक अपर्याप्त प्रशिक्षण का प्रश्न है, मैं सबसे पहले अपने को ऐसे लोगों में शामिल करता हूं। मैं एक मंडल में[91] काम किया करता था, जिसने अपने लिए बड़ा लंबा-चौड़ा, सर्वतोमुखी कार्यक्रम बना रखा था, और उस मंडल के सदस्य, हम सभी

Scanned by CamScanner

लोग इस बात का एहसास करके घोर पीड़ा का अनुभव करते थे कि हम इतिहास के एक ऐसे क्षण में नौसिखुए साबित हो रहे हैं, जबकि हम एक प्रसिद्ध उक्ति को बदलकर यह कह सकते थे: "हमें क्रांतिकारियों का एक संगठन दे दो और हम पूरे रूस को उलट देंगे!" उन दिनों जो शरम मुझे जलाती थी, उसकी मैं जितनी ही याद करता हूं, उतना ही मुझे उन नामधारी सामाजिक-जनवादियों पर क्रोध आता है, जिनकी सीखें क्रांतिकारियों के नाम को कलंकित करती हैं और जो यह नहीं समझते कि हमारा काम क्रांतिकारियों को नौसिखुओं के धरातल पर उतार लाने की पैरवी करना नहीं, बल्कि नौसिखुओं को ऊपर उठाकर क्रांतिकारियों के धरातल पर **पहुंचा देना** है।

(घ) संगठनात्मक कार्य का विस्तार

हम ब—व से "कार्य-क्षेत्र में उतरने के योग्य क्रांतिकारी शक्तियों की उस कमी के बारे में" सुन चुके हैं, "जो न केवल पीटर्सबर्ग में, बल्कि सारे रूस में महसूस की जा रही है"। इस बात से शायद ही किसी का मतभेद होगा। परंतु सवाल यह है कि इस कमी का कारण क्या है? ब—व लिखते हैं:

"हम इस घटना के ऐतिहासिक कारणों की व्याख्या में नहीं जायेंगे; यहां हम केवल इतना ही कहेंगे कि जिस समाज का मनोबल दीर्घकालीन राजनीतिक प्रतिक्रियावाद ने तोड़ दिया हो और पुराने तथा नये आर्थिक परिवर्तनों ने जिसे छिन्न-भिन्न कर रखा हो, वह **बहुत ही छोटी संख्या में** ऐसे लोगों को अपने बीच से पैदा करता है, **जो क्रांतिकारी कार्य करने के योग्य हों;** कि मज़दूर वर्ग अवश्य कुछ ऐसे क्रांतिकारी मज़दूर कार्यकर्त्ताओं को जन्म देता है, जिनसे ग़ैर क़ानूनी संगठनों को कुछ हद तक नया बल मिलता है, परंतु इन क्रांतिकारियों की संख्या वक़्त की ज़रूरत को देखते हुए बहुत नाकाफ़ी होती है। इसका और कारण यह भी है कि कारख़ाने में रोज़ाना साढ़े ग्यारह घंटे काम करनेवाले मज़दूर की स्थिति ऐसी होती है कि वह मुख्यतया आंदोलनकर्त्ता का ही काम कर सकता है; लेकिन प्रचार और संगठन, अवैध साहित्य का पुनर्मुद्रण और वितरण, परचों का प्रकाशन, आदि ऐसी ज़िम्मेदारियां हैं, जो लाज़िमी तौर पर मुख्यतया बहुत ही थोड़े-से बुद्धिजीवियों के कंधों पर आ पड़ती हैं" (*राबोचेये देलो*, अंक ६, पृ० ३८-३९)।

Scanned by CamScanner

ब—व से हमारा बहुत-सी बातों पर मतभेद है। ख़ास तौर पर उन शब्दों से, जिन पर हमने ज़ोर दिया है और जिनसे यह बात सबसे ज़्यादा साफ़ हो जाती है कि ब—व यद्यपि हमारे नौसिखुएपन से तंग आ गये हैं (जैसा कि स्थिति पर सोचनेवाला हर व्यावहारिक कार्यकर्त्ता तंग आ गया है), परंतु "अर्थवाद" से दबे होने के कारण वह इस असहनीय स्थिति से निकलने का कोई रास्ता तलाश करने में असमर्थ हैं। सच बात यह है कि समाज "काम" के योग्य **बहुत-से** व्यक्तियों को जन्म देता है, पर हम उन सबसे काम नहीं ले पाते। इस दृष्टि से हमारे आंदोलन की संकटमय तथा संक्रमणकालीन अवस्था का संक्षेप में इस प्रकार वर्णन किया जा सकता है: **हमें लोग नहीं मिलते—हालांकि लोग बेशुमार हैं।** लोग बेशुमार हैं, क्योंकि मज़दूर वर्ग तथा समाज के अन्य विभिन्न हिस्से भी वर्ष-प्रति-वर्ष अधिकाधिक ऐसे लोगों को जन्म देते जाते हैं, जो असंतुष्ट हैं और अपना असंतोष व्यक्त करना चाहते हैं, जो उस निरंकुशता के ख़िलाफ़ संघर्ष में भरसक मदद करना चाहते हैं, जिसके असहनीय रूप को अभी सबने तो नहीं पहचाना है, पर जिसे बढ़ती हुई संख्या में लोग दिनोंदिन अधिक तेज़ी से महसूस करने लगे हैं। साथ ही, हमें लोग इसलिए नहीं मिलते कि हमारे पास ऐसे नेता नहीं हैं, ऐसे राजनीतिक नेता, इतने प्रतिभाशाली संगठनकर्त्ता नहीं हैं, जो इतने व्यापक आधार पर और साथ ही ऐसे सुचारु तथा समुचित ढंग से काम का संगठन कर सकें, जिससे सभी प्रकार की शक्तियों का, यहां तक कि छोटी से छोटी और महत्वहीन शक्तियों का भी उसमें भाग लेना संभव हो। "क्रांतिकारी संगठनों की प्रगति तथा विकास" न केवल मज़दूर वर्ग के आंदोलन के विकास की तुलना में पिछड़ा हुआ है, जिसे ब—व भी मानते हैं, बल्कि वह जनता के हर हिस्से के आम जनवादी आंदोलन के विकास की तुलना में भी पिछड़ा हुआ है। (आज ब—व शायद यह समझेंगे कि इससे उनके निष्कर्ष की ही पुष्टि होती है।) आंदोलन का स्वयंस्फूर्त आधार जितना विशाल है, उसकी तुलना में क्रांतिकारी कार्य का विस्तार बहुत संकुचित है, उसे चारों ओर से "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष"

Scanned by CamScanner

के तुच्छ सिद्धांत ने जकड़ रखा है। फिर भी इस समय न सिर्फ़ राजनीतिक आंदोलनकर्त्ताओं को, बल्कि सामाजिक-जनवादी संगठनकर्त्ताओं को भी "आबादी के सभी वर्गों में जाना" चाहिए।* शायद ही किसी व्यावहारिक कार्यकर्त्ता को इस बात में संदेह होगा कि सामाजिक-जनवादी अपने संगठनात्मक कार्य की हज़ारों छोटी-छोटी ज़िम्मेदारियों को विभिन्न वर्गों के अलग-अलग प्रतिनिधियों के बीच बांट सकते हैं। विशेषीकरण का अभाव हमारे काम की शैली का एक सबसे गंभीर दोष है, जिसके बारे में ब—व ने भी सख़्त और सही शिकायत की है। हमारे समान लक्ष्य में पृथक-पृथक "कार्रवाइयां" जितनी छोटी होंगी, उन्हें करने के लिए हमें उतने ही अधिक आदमी मिल जायेंगे (इनमें से अधिकांश लोग ऐसे होते हैं, जो क़तई पेशेवर क्रांतिकारी नहीं बन सकते) और पुलिस के लिए इन तमाम "छोटे-मोटे कामों को पूरा करनेवाले कार्यकर्त्ताओं" को "जाल में फंसाना" उतना ही ज़्यादा मुश्किल हो जायेगा, और तब वह किसी छोटे-से मामले में होनेवाली गिरफ़्तारी से कोई इतना बड़ा "मुक़दमा" भी खड़ा नहीं कर सकेगी, जिससे "ख़ुफ़िया पुलिस" पर सरकार के ख़र्च का कोई औचित्य साबित हो सके। जहां तक हमारी मदद करने के लिए तैयार लोगों की संख्या का सवाल है, यह हम पिछले अध्याय में ही बता चुके हैं कि इस मामले में पिछले पांच वर्षों में बहुत ज़्यादा परिवर्तन हो चुका है। लेकिन दूसरी ओर, काम के इन तमाम छोटे-छोटे टुकड़ों को एक लड़ी में पिरोने के लिए, जिससे कि काम तो बंटे, पर आंदोलन न बंट जाये, और इस प्रकार के छोटे-मोटे काम करनेवालों के मन में यह विश्वास पैदा करने के लिए कि उनका काम आवश्यक और महत्वपूर्ण है, जिस विश्वास के बिना वे कभी काम

---

*मिसाल के लिए, कुछ समय से फ़ौज में जनवादी भावना का असंदिग्ध उत्थान स्पष्टत: दिखायी दे रहा है। आंशिक रूप से इसका कारण यह है कि अब उन्हें मज़दूरों और विद्यार्थियों जैसे "दुश्मनों" से ज़्यादा अधिकाधिक बार सड़कों पर लड़ना पड़ रहा है। जब हमारे उपलब्ध साधन इस बात की इजाज़त दें, तब हमें अवश्य ही फ़ौज के सिपाहियों और अफ़सरों के बीच प्रचार और आंदोलन पर तथा हमारी पार्टी से संबंधित "सैनिक संगठन" बनाने पर गंभीरता के साथ ध्यान देना चाहिए।

Scanned by CamScanner

न करेंगे,* यह ज़रूरी है कि हमारे पास परखे हुए क्रांतिकारियों का एक मज़बूत संगठन हो। ऐसा संगठन जितना ही गुप्त होगा, जनता को पार्टी में उतना ही व्यापक और उतना ही दृढ़ विश्वास होगा, और जैसा कि हम जानते हैं, युद्ध के समय न केवल अपनी सेना का खुद अपनी शक्ति में विश्वास दृढ़ करना, बल्कि दुश्मन को और सभी **तटस्थ** लोगों को भी इस ताक़त का यक़ीन दिलाना आवश्यक होता है; कभी-कभी तो कुछ शक्तियों की मित्रतापूर्ण तटस्थता ही मामले का निपटारा कर देती है। यदि हमारे पास ऐसा संगठन हो, जो मज़बूत सैद्धांतिक नींव पर खड़ा हो और जिसके पास एक सामाजिक-जनवादी पत्र भी हो,

---

*मुझे इस समय एक फ़ैक्टरी इंस्पेक्टर की याद आ रही है, जिसके बारे में मुझे एक साथी ने बताया था। यह फ़ैक्टरी इंस्पेक्टर सामाजिक-जनवादियों की मदद करना चाहता था और वास्तव में कर भी रहा था, पर उसे इस बात की बड़ी सख़्त शिकायत थी कि वह नहीं जानता कि उसकी दी हुई "इत्तिला" क्रांतिकारी केंद्र तक पहुंचती भी है या नहीं, उसकी मदद की सचमुच कितनी ज़रूरत है और वह जो कुछ छोटी-मोटी सेवा कर सकता है, उसका उपयोग करने की क्या संभावनाएं हैं। इसमें शक नहीं कि हर व्यावहारिक कार्यकर्त्ता इसी प्रकार के अनेक उदाहरण दे सकता है कि अपने नौसिखुएपन के कारण हम कितने ही सहयोगियों को खो बैठते थे। हमारे लिए इस तरह की सेवाएं, जो स्वतः तो बहुत "छोटी" होती हैं, पर मिलकर बहुत अमूल्य हो जाती हैं, रेल विभाग, चुंगी विभाग के कर्मचारी तथा अफ़सर भी, अभिजात वर्ग में, पादरियों में और जीवन के **प्रत्येक** क्षेत्र में, यहां तक कि पुलिस और दरबारियों में से आनेवाले लोग भी कर सकते थे और करते थे! यदि हमारे पास एक असली पार्टी होती, क्रांतिकारियों का एक सच्चा और जुझारू संगठन होता, तो अपने इन तमाम "सहायकों" में से हम किसी पर भी अनुचित बोझ न लादते, उन्हें हमेशा और हर बार अपने अवैध संगठन के हृदयस्थल में घसीटने की कोशिश न करते, बल्कि इसके विपरीत हम इन सभी कार्यकर्त्ताओं का बड़े ध्यानपूर्वक पोषण करते, यहां तक कि ऐसे लोगों को इस प्रकार के कामों का ख़ास तौर पर प्रशिक्षण भी देते और यह बात सदा ध्यान में रखते कि बहुत-से विद्यार्थी तब पार्टी की कहीं अधिक सेवा कर सकते हैं, जब वे "अल्पकालीन" क्रांतिकारी न बनकर किसी ओहदे या पद पर बने रहें और पार्टी का केवल "सहायक" बनना क़बूल करें। परंतु मैं फिर कहता हूं कि इस कार्यनीति का उपयोग करने का अधिकार केवल उसी संगठन को है, जिसने अपने पैर जमा लिये हों और जिसके पास सक्रिय कार्यकर्त्ताओं की कोई कमी न हो।

Scanned by CamScanner

तो इसका कोई डर नहीं रहेगा कि आंदोलन की ओर जो बहुत-से "बाहरी" लोग आकर्षित हुए हैं, वे उसे पथभ्रष्ट कर देंगे (इसके विपरीत, खास तौर पर आजकल, जब चारों ओर नौसिखुएपन का बोलबाला है, हम यह देखते हैं कि बहुत-से सामाजिक-जनवादियों का झुकाव तो *Credo* की ओर है, और वे केवल अपने को ही सामाजिक-जनवादी मानते हैं)। संक्षेप में, विशेषीकरण लाज़िमी तौर से केंद्रीयकरण की पूर्वापेक्षा करता है और उसका बिना शर्त तक़ाज़ा करता है।

लेकिन ब—व, जिन्होंने विशेषीकरण की आवश्यकता इतनी अच्छी तरह बतायी है, हमारी राय में अपने उपरोक्त तर्क के दूसरे भाग में इस चीज़ के महत्व को कम कर देते हैं। मज़दूर क्रांतिकारियों की संख्या अपर्याप्त है—वह कहते हैं। यह बात एकदम सच है और हम फिर इस बात पर ज़ोर देकर कहेंगे कि "एक निकटवर्ती पर्यवेक्षक ने" इस बारे में जो "मूल्यवान राय दी है", उससे सामाजिक-जनवादी आंदोलन के वर्तमान संकट के कारणों और फलस्वरूप उन्हें दूर करने के उपायों के बारे में हमारे मत की पूर्णतया पुष्टि होती है। न केवल सभी क्रांतिकारी आम तौर पर जनता के स्वयंस्फूर्त उभार की तुलना में पिछड़े हुए हैं, बल्कि मज़दूर क्रांतिकारी भी मज़दूर जनता के स्वयंस्फूर्त उभार की तुलना में पिछड़े हुए हैं। यह **तथ्य** अत्यंत स्पष्ट रूप से, "व्यावहारिक" दृष्टि से भी इस बात की पुष्टि कर देता है कि मज़दूरों के प्रति हमारे कर्त्तव्यों को लेकर हमें अकसर जो "शिक्षणशास्त्र" पढ़ाया जाता है, वह न केवल बेतुका है, बल्कि **राजनीतिक दृष्टि से प्रतिक्रियावादी** भी है। इस तथ्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि हमारा सबसे पहला और सबसे ज़रूरी कर्त्तव्य यह है कि हम ऐसे मज़दूर क्रांतिकारियों के प्रशिक्षण का प्रबंध करें, जो **पार्टी कार्य के मामले में** उसी स्तर के साथी बन सकें, जिस स्तर के साथी बुद्धिजीवियों में से आये हुए क्रांतिकारी होते हैं ("पार्टी कार्य के मामले में" शब्दों पर हमने ज़ोर दिया है, क्योंकि अनिवार्य होते हुए भी और मामलों में मज़दूरों को बुद्धिजीवियों के स्तर पर ले आना न तो इतना आसान है और न इतना ज़रूरी है)। अतएव **मुख्यतया** हमें मज़दूरों को क्रांतिकारियों के स्तर तक **उठाने** की ओर ही ध्यान देना चाहिए; हमारा काम कदापि यह नहीं है कि हम "मज़दूर

Scanned by CamScanner

जनता" के स्तर पर उतर आयें, जैसा कि "अर्थवादी" चाहते हैं, या अनिवार्य रूप से "औसत मजदूर" के स्तर पर उतर आयें, जैसा कि *स्वोबोदा* चाहता है (जो इस संबंध में अर्थवादी "शिक्षणशास्त्र" की दूसरी सीढ़ी पर चढ़ जाता है)। मैं मजदूरों के लिए सुबोध साहित्य की आवश्यकता से, और विशेष रूप से पिछड़े हुए मजदूरों के लिए विशेष प्रकार के सुबोध (पर निस्संदेह भोंडा नहीं) साहित्य की आवश्यकता से जरा भी इनकार नहीं करता। पर मुझे जो बात बुरी लगती है, वह यह है कि "शिक्षणशास्त्र" के प्रश्नों को सदा राजनीति और संगठन के प्रश्नों से उलझा दिया जाता है। आप महानुभाव, जो "औसत मजदूरों" के बारे में बहुत ही चिंता प्रकट करते हैं, मजदूर राजनीति या मजदूर संगठन की चर्चा करने से पहले **नीचे झुकने** की अपनी इच्छा द्वारा असल में मजदूरों का अपमान ही करते हैं। गंभीर बातों के बारे में सीधे ही खड़े होकर बातें कीजिये, और शिक्षाशास्त्र की बातें शिक्षाशास्त्रियों के लिए ही छोड़ दीजिये, राजनीतिज्ञों और संगठनकर्त्ताओं को उनमें न घसीटिये! क्या बुद्धिजीवियों में भी उन्नत लोग, "औसत लोग" और "आम लोग" नहीं होते? क्या हर आदमी यह नहीं मानता कि बुद्धिजीवियों के लिए भी सुबोध साहित्य की आवश्यकता होती है और क्या ऐसा साहित्य लिखा नहीं जाता? मान लीजिये कि किसी ने कालेज या हाई स्कूल के विद्यार्थियों को संगठित करने के बारे में एक लेख लिखा हो और उसमें बार-बार—इस अंदाज से कि मानो कोई नया आविष्कार किया गया हो—यह दुहराया गया हो कि सबसे पहले हमें "औसत विद्यार्थियों का" संगठन बनाना चाहिए। यदि कोई ऐसा लेख लिखेगा, तो उसका मजाक बनाया ही जायेगा और यह उचित भी होगा। उससे कहा जायेगा: महाशय, यदि आपके दिमाग़ में संगठन के बारे में कुछ विचार हों, तो बताइये, इसे हम खुद तय कर लेंगे कि कौन "औसत दर्जे" में आता है, कौन उसके ऊपर है और कौन औसत से नीचे है। लेकिन यदि आपके पास संगठन के बारे में **अपने** कोई विचार नहीं हैं, तो "आम लोगों" और औसत लोगों" की इस बहस से आप केवल हमें उकता देंगे। आपको समझना चाहिए कि "राजनीति" और "संगठन" के सवाल अपने आप में इतने गंभीर हैं कि उन पर केवल बहुत गंभीरता से ही विचार किया जा सकता है: हम मजदूरों

Scanned by CamScanner

को (और विश्वविद्यालयों तथा हाई स्कूलों के विद्यार्थियों को) शिक्षा देकर इस **योग्य बना सकते हैं** कि हम उनके साथ इन प्रश्नों पर **चर्चा कर सकें** और हमें उन्हें ऐसी शिक्षा देनी चाहिए; पर जब आप एक बार इन सवालों को उठा देते हैं, तो फिर आपको उनका असली जवाब देना ही चाहिए, "औसत लोगों" या "आम लोगों" की ओर न हटें, कोरी लफ़्फ़ाज़ी करके छुटकारा पाने की कोशिश न करें।*

अपने ध्येय के वास्ते पूरी तरह तैयार होने के लिए मज़दूर क्रांतिकारी को भी पेशेवर क्रांतिकारी बनना होगा। इसलिए ब—व का यह कहना सही नहीं है कि मज़दूर चूंकि साढ़े ग्यारह घंटे कारखाने में बिताता है, इसलिए (आंदोलन के काम को छोड़कर) बाक़ी सभी क्रांतिकारी कामों का बोझ **"लाज़िमी तौर पर** मुख्यतया बहुत ही थोड़े-से बुद्धिजीवियों के कंधों पर आ पड़ता है"। पर ऐसा होना "लाज़िमी" नहीं है। ऐसा इसलिए होता है कि हम लोग पिछड़े हुए हैं, क्योंकि हम यह नहीं मानते कि हर योग्य मज़दूर को **पेशेवर** आंदोलनकर्त्ता, संगठनकर्त्ता, प्रचारक, साहित्य-वितरक, आदि बनने में मदद करना हमारा कर्त्तव्य है। इस मामले में हम बहुत शरमनाक ढंग से अपनी शक्ति का अपव्यय करते हैं; जिस वस्तु की हमें विशेष ध्यानपूर्वक हिफ़ाज़त करनी चाहिए, उसकी देखरेख करने की हममें योग्यता नहीं है। जर्मनों को देखिये: उनके पास हमसे सौ गुनी अधिक शक्तियां हैं, परंतु वे अच्छी तरह समझते हैं कि "औसत लोगों" के बीच से सही माने में योग्य आंदोलनकर्त्ता, आदि अकसर नहीं निकलते

---

* *स्वोबोदा* ने अंक १, पृ० ६६ पर *संगठन* शीर्षक लेख में लिखा है: "मज़दूरों की सेना की पदचाप उन तमाम मांगों को बल देगी, जो रूसी **श्रमिकों** की ओर से उठायी जायेंगी।" ज़ाहिर है कि "श्रमिक" यहां मोटे टाइप में छपा है! और यही लेखक आगे कहते हैं: "मैं बुद्धिजीवियों का विरोधी क़तई नहीं हूं, लेकिन"... (इसी **"लेकिन"** शब्द का श्चेद्रीन ने यह अर्थ बताया था: कान कभी माथे के ऊपर नहीं निकल सकते!)... लेकिन मुझे इस बात पर हमेशा बहुत झुंझलाहट होती है, जब कोई आकर बड़े सुंदर और आकर्षक शब्द कह देता है और यह मांग करता है कि उन शब्दों को उनकी (उसकी?) सुंदरता और अन्य गुणों के कारण स्वीकार कर लिया जाना चाहिए" (पृ० ६२)। हां, इस पर मुझे भी "हमेशा बहुत झुंझलाहट होती है"...

Scanned by CamScanner

हैं। इसलिए वे हर योग्य मज़दूर को तुरंत ऐसी परिस्थितियों में रखने का प्रयत्न करते हैं, जिनमें वह अपनी क्षमताओं का अधिक से अधिक विकास तथा उपयोग कर सके: उसे पेशेवर आंदोलनकर्त्ता बनाया जाता है, उसे अपने कार्य का क्षेत्र बढ़ाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, उसे एक कारख़ाने से बढ़कर पूरे उद्योग में और एक स्थान से बढ़कर पूरे देश में अपना कार्य-क्षेत्र फैलाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। वह अपने पेशे में अनुभव और दक्षता प्राप्त करता है, वह अपने दृष्टिकोण को व्यापक बनाता है और अपना ज्ञान बढ़ाता है, वह दूसरे स्थानों के और दूसरी पार्टियों के प्रमुख राजनीतिक नेताओं को नज़दीक से देखता है, वह ख़ुद भी उनके स्तर तक उठने का प्रयत्न करता है, वह मज़दूर वर्ग के वातावरण के ज्ञान तथा समाजवादी विश्वासों की ताज़गी का उस पेशेवर कौशल के साथ अपने में समन्वय करने की कोशिश करता है, जिसके बिना सर्वहारा अपने बहुत ही दक्ष शत्रुओं के ख़िलाफ़ दृढ़ संघर्ष **नहीं चला सकता।** आम मज़दूर इसी तरह और केवल इसी तरह बेबेल और आयर जैसे आदमी पैदा करते हैं। परंतु जो चीज़ राजनीतिक दृष्टि से स्वतंत्र देश में बहुत बड़ी हद तक अपने आप ही हो जाती है, उसी को रूस में सुनियोजित ढंग से हमारे संगठनों को पूरा करना होगा। जिस मज़दूर आंदोलनकर्त्ता में थोड़ी भी प्रतिभा हो और जो थोड़ा भी होनहार हो, उसे कारख़ाने में ग्यारह घंटे रोज़ काम करने के लिए छोड़ **नहीं** देना **चाहिए।** हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि उसकी जीविका का भार पार्टी अपने ऊपर ले ले, कि वह ठीक समय पर भूमिगत हो जाये और अपने कार्य-क्षेत्र को बदल दे, अन्यथा उसका अनुभव नहीं बढ़ेगा, उसका दृष्टिकोण व्यापक नहीं बनेगा और वह राजनीतिक पुलिस के ख़िलाफ़ संघर्ष में चंद साल भी खड़ा नहीं रह सकेगा। जैसे-जैसे मज़दूर जनता का स्वयंस्फूर्त उभार विस्तार और गहराई में बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे मज़दूर जनता अपने बीच से न केवल प्रतिभाशाली आंदोलनकर्त्ताओं को, बल्कि प्रतिभाशाली संगठनकर्त्ताओं, प्रचारकों और "व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं" को भी बढ़ती हुई संख्या में उत्पन्न करती जाती है—यहां "व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं" का प्रयोग हमने उसके सबसे अच्छे अर्थों में किया है (हमारे बुद्धिजीवियों में उनकी संख्या

Scanned by CamScanner

बहुत ही कम है, क्योंकि वे प्राय: रूसी स्वभाव के मुताबिक़ किसी हद तक लापरवाह और सुस्त होते हैं)। जब हमारे पास ऐसे विशेष प्रशिक्षित मज़दूर क्रांतिकारियों के दस्ते होंगे, जो काफ़ी तैयारियां कर चुके होंगे (और निस्संदेह इनमें "हर प्रकार के अस्त्रधारी" क्रांतिकारी होंगे), तब दुनिया की कोई राजनीतिक पुलिस उनका मुक़ाबला नहीं कर सकेगी, क्योंकि क्रांति में अटूट निष्ठा रखनेवाले व्यक्तियों के इन दस्तों को आम मज़दूरों के व्यापकतम हिस्सों का पूर्ण विश्वास प्राप्त होगा। यह सीधे-सीधे हमारा **दोष** है कि हम मज़दूरों को पेशेवर क्रांतिकारी प्रशिक्षण का यह मार्ग अपनाने के लिए, जो उनका और "बुद्धिजीवियों" का समान मार्ग है, बहुत ही कम "धक्का देते" हैं और अकसर ऐसी बातों के बारे में मूर्खतापूर्ण भाषण सुना-सुनाकर हम उन्हें पीछे घसीटते रहते हैं कि आम मज़दूर या "औसत मज़दूर" किन बातों को "समझ सकते" हैं, आदि।

और मामलों की तरह इस मामले में भी हमारे संगठनात्मक काम का सीमित विस्तार निस्संदेह इस बात से अटूट रूप से जुड़ा हुआ है कि हम अपने सिद्धांतों तथा राजनीतिक कार्यभारों को एक छोटे दायरे तक सीमित रखते हैं (यद्यपि अधिकतर "अर्थवादी" और नौसिखुए व्यावहारिक कार्यकर्त्ता इस बात को नहीं समझते)। स्वयंस्फूर्ति की पूजा करने की भावना के कारण हमें उन बातों से एक क़दम भी इधर-उधर उठाने में डर लगता है, जिन्हें आम जनता "समझ सकती है", हमें डर लगता है कि हम कहीं जनता की तात्कालिक एवं प्रत्यक्ष आवश्यकताओं में ही जुटे रहने से बहुत ऊपर न उठ जायें। लेकिन महानुभावो, डरिये नहीं! याद रखिये कि संगठन के मामले में हम इतने निचले स्तर पर खड़े हैं कि **ज़रूरत से ज़्यादा** ऊपर उठ **सकने** का विचार तक मन में लाना मूर्खता है!

(ङ) "षड्यंत्रकारी" संगठन और "जनवाद"

लेकिन फिर भी हमारे बीच ऐसे बहुत-से लोग हैं, जो "ज़िंदगी की आवाज़" के मामले में इतने अधिक संवेदनशील

Scanned by CamScanner

हैं कि इसी से सबसे अधिक डरते हैं और जो यहां प्रतिपादित विचारों को माननेवालों पर 'नरोदनाया वोल्या'-वादी होने का और "जनवाद" को न समझने, आदि का आरोप लगाते हैं। इन आरोपों की चर्चा करना आवश्यक है, जिन्हें निस्संदेह *राबोचेये देलो* ने भी दोहराया है।

इन पंक्तियों का लेखक अच्छी तरह जानता है कि पीटर्सबर्ग के "अर्थवादियों" ने तो *राबोचाया गाज़ेता* पर भी 'नरोदनाया वोल्या'-वादी होने का आरोप लगाया था (और यदि कोई *राबोचाया गाज़ेता* की तुलना *राबोचाया मीस्ल* से करे, तो यह बात बिलकुल समझ में आ जाती है)। इसलिए जब *ईस्क्रा* के निकलने के कुछ समय बाद ही एक साथी ने हमें बताया कि 'क' नगर के सामाजिक-जनवादी *ईस्क्रा* को 'नरोदनाया वोल्या'-वादी पत्र कहते हैं, तो हमें ज़रा भी आश्चर्य नहीं हुआ। ज़ाहिर है कि हमने इस आरोप को अपनी प्रशंसा समझा, क्योंकि "अर्थवादियों" ने भला किस अच्छे सामाजिक-जनवादी पर 'नरोदनाया वोल्या'-वादी होने का आरोप नहीं लगाया है?

ये आरोप एक दोहरी ग़लतफ़हमी का नतीजा हैं। एक तो हम लोगों में क्रांतिकारी आंदोलन के इतिहास की इतनी कम जानकारी है कि किसी भी ऐसे जुझारू केंद्रित संगठन को, जिसने ज़ारशाही के खिलाफ़ दृढ़ संघर्ष का एलान किया हो, 'नरोदनाया वोल्या' का नाम दिया जाता है। लेकिन पिछली शताब्दी के आठवें दशक में क्रांतिकारियों ने जो शानदार संगठन बनाया था और जिसे हमें अपना आदर्श बनाना चाहिए, उसे 'नरोदनाया वोल्या'-वादियों ने नहीं, बल्कि 'ज़ेम्ल्या इ वोल्या'[92] के सदस्यों ने बनाया था, जो बाद में 'चोर्नी पेरेदेल' और 'नरोदनाया वोल्या' नामक दो दलों में बंट गया था। अतएव जुझारू क्रांतिकारी संगठन को 'नरोदनाया वोल्या'-वादियों की कोई खास चीज़ समझना इतिहास और तर्क, दोनों ही दृष्टि से बेतुका है, क्योंकि **कोई भी** क्रांतिकारी प्रवृत्ति, जो सचमुच गंभीरतापूर्वक लड़ना चाहती है, ऐसे संगठन के बिना अपना काम नहीं चला सकती। 'नरोदनाया वोल्या'-वादियों ने जो ग़लती की थी, वह यह नहीं थी कि वे अपने संगठन में **सभी** असंतुष्ट लोगों को शामिल करने की

Scanned by CamScanner

कोशिश करते थे और इस संगठन को निरंकुशता के ख़िलाफ़ निर्णायक संघर्ष की ओर ले जाना चाहते थे। नहीं, यह तो उनकी महान ऐतिहासिक सेवा थी। उनकी ग़लती यह थी कि वे एक ऐसे सिद्धांत पर भरोसा करते थे, जो अपने सार-रूप में क़तई क्रांतिकारी नहीं था, और यह नहीं जानते थे कि विकसित होते हुए पूंजीवादी समाज के अंदर चलनेवाले वर्ग संघर्ष के साथ अपने आंदोलन को अविच्छिन्न रूप से कैसे जोड़ा जाये, या ऐसा करने में वे असमर्थ थे। मार्क्सवाद को समझने में सरासर विफलता पर (या "स्त्रूवेवाद" की भावना से "समझने" पर) ही कोई यह राय बना सकता है कि मज़दूर वर्ग के स्वयंस्फूर्त जन-आंदोलन का जन्म हो जाने के कारण हमें क्रांतिकारियों का उतना ही अच्छा—बल्कि उससे भी अच्छा—संगठन बनाने के काम से **छुटकारा** मिल गया है, जितना अच्छा संगठन 'ज़ेम्ल्या इ वोल्या' ने बनाया था। इसके विपरीत यह आंदोलन तो इस काम को हमारा कर्त्तव्य **बना देता है,** क्योंकि जब तक सर्वहारा के इस स्वयंस्फूर्त संघर्ष का नेतृत्व क्रांतिकारियों का एक मज़बूत संगठन नहीं करेगा, यह संघर्ष सच्चा "वर्ग संघर्ष" नहीं बन सकता।

दूसरी बात यह है कि बहुत-से लोग, जिनमें स्पष्टत: बो० क्रिचेव्स्की (*राबोचेये देलो*, अंक १०, पृ० १८) भी शामिल हैं, सामाजिक-जनवादियों की उन दलीलों का ग़लत मतलब लगाते हैं, जिन्हें वे राजनीतिक संघर्ष के बारे में "षड्यंत्रकारी" दृष्टिकोण के ख़िलाफ़ सदा देते आये हैं। राजनीतिक संघर्ष को एक षड्यंत्र तक **सीमित करने** का हमने सदा विरोध किया है और बेशक आगे भी विरोध करते रहेंगे।* पर, निस्संदेह, इसका मतलब यह नहीं है कि हम एक मज़बूत क्रांतिकारी संगठन की ज़रूरत से इनकार करते हैं। मिसाल के लिए, फ़ुटनोट में जिस पुस्तिका का ज़िक्र किया गया है, उसमें राजनीतिक संघर्ष को एक षड्यंत्र तक सीमित करने के ख़िलाफ़ दलीलें देने के साथ-साथ (सामाजिक-जनवादी आदर्श के रूप में) एक इतने शक्तिशाली

---

*तुलना करें *रूसी सामाजिक-जनवादियों के कार्यभार*, पृ० २१, प० ला० लाव्रोव के ख़िलाफ़ दलीलें।

Scanned by CamScanner

संगठन का विवरण दिया गया है, जो "निरंकुशता को चकनाचूर करने के लिए" "विद्रोह का... सहारा" ले सके और दूसरा "हर तरह का हमला" संगठित कर सके।* यदि संगठन के रूप को लिया जाये, तो एक ऐसे देश में, जहां एकतांत्रिक राज्य है, एक मज़बूत क्रांतिकारी संगठन को "षड्यंत्रकारी" संगठन भी कहा जा सकता है, क्योंकि फ़्रांसीसी भाषा के शब्द conspiration (काम के गुप्त तरीक़े) का अर्थ लगभग वही है, जो रूसी भाषा के शब्द "ज़ागोवोर" (षड्यंत्र) का है; और इस प्रकार के संगठन की बातों को अत्यंत गुप्त रखना आवश्यक है। इस प्रकार के संगठन के लिए अपनी बातों को गुप्त रखना इतना आवश्यक होता है कि बाक़ी तमाम परिस्थितियों को (कितने सदस्य हों, वे कैसे चुने जायें, उनके क्या काम हों, आदि) यही बात ध्यान में रखते हुए निश्चित करना पड़ता है। इसलिए इस आरोप से डर जाना हद दरजे का भोलापन है कि हम, सामाजिक-जनवादी लोग, एक षड्यंत्रकारी संगठन खड़ा करना चाहते हैं। "अर्थवाद" के प्रत्येक विरोधी के लिए यह आरोप भी उतना ही प्रशंसासूचक होना चाहिए, जितना कि 'नरोदनाया वोल्या' के अनुयायी होने का आरोप।

एतराज़ किया जा सकता है कि इतने शक्तिशाली और इतने गुप्त संगठन के लिए, जिसके हाथों में गुप्त कार्य के सारे सूत्र केंद्रित हों और जो लाज़िमी तौर पर एक केंद्रीभूत संगठन हो,

---

* *रूसी सामाजिक-जनवादियों के कार्यभार*, पृ० २३। यहां हम इस बात का एक और उदाहरण देंगे कि या तो *राबोचेये देलो* यह नहीं समझता कि वह क्या कह रहा है, या वह "हवा के साथ" अपना रुख बदलता रहता है। *राबोचेये देलो* के अंक १ में हम यह वाक्य मोटे अक्षरों में पाते हैं: **"इस पुस्तिका में जो विचार प्रकट किये गये हैं, उनका सारतत्व बिलकुल वही है, जो *राबोचेये देलो* के संपादकीय कार्यक्रम में दिया गया है"** (पृ० १४२)। क्या सचमुच ऐसी बात है? क्या यह विचार कि जन-आंदोलन का प्राथमिक काम निरंकुश शासन को उलटना नहीं होना चाहिए, *रूसी सामाजिक-जनवादियों के कार्यभार* शीर्षक पुस्तिका के विचारों से मिलता है? क्या "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" का सिद्धांत और मंज़िलोंवाला सिद्धांत भी इस पुस्तिका के विचारों से मिलते हैं? इस बात का फ़ैसला हम स्वयं पाठकों पर छोड़ देते हैं कि क्या एक ऐसे मुखपत्र के, जो "बिलकुल वही होने" का मतलब इस विचित्र ढंग से समझता हो, अपने कोई दृढ़ सिद्धांत हो सकते हैं।

Scanned by CamScanner

यह ग़लती करना बहुत ही आसान होगा कि वह समय से पहले ही हमला कर बैठे, राजनीतिक असंतोष तथा मज़दूर वर्ग की बेचैनी तथा क्रोध की उग्रता द्वारा ऐसा हमला संभव और ज़रूरी बनाये जाने से पहले ही बिना सोचे-समझे आंदोलन को तेज़ कर दे। इसके जवाब में हम यह कहते हैं: मोटे तौर पर बेशक इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि कोई जुझारू संगठन बिना सोचे-समझे ऐसी लड़ाई शुरू कर **सकता है**, जिसका अंत ऐसी पराजय में हो **सकता है**, जिसे शायद किसी और परिस्थिति में टालना संभव होता। परंतु ऐसे सवाल पर हम केवल हवाई तर्क करने तक ही अपने को सीमित नहीं रख सकते, क्योंकि यों तो हर लड़ाई में पराजय की अमूर्त संभावना निहित रहती है और इस संभावना को **कम करने** का इसके सिवा और कोई तरीक़ा नहीं है कि लड़ाई के लिए संगठित रूप से तैयारी की जाये। लेकिन यदि हम रूस में इस समय व्याप्त ठोस परिस्थितियों पर विचार करें, तो हम सकारात्मक नतीजे पर पहुंचने के लिए मजबूर होंगे कि एक मज़बूत क्रांतिकारी संगठन ठीक इसीलिए नितांत आवश्यक है कि वह आंदोलन में दृढ़ता पैदा कर सके और उसे बिना सोचे-समझे हमला कर बैठने की संभावना से **बचा सके**। यह वर्तमान समय की ही विशेषता है कि जब अभी इस प्रकार का कोई संगठन मौजूद नहीं है और क्रांतिकारी आंदोलन तेज़ी से और स्वयंस्फूर्त ढंग से बढ़ रहा है, तभी एक-दूसरे के बिलकुल उलटे दो दृष्टिकोण (जो, जैसे कि उम्मीद करनी चाहिए, आगे चलकर "मिल जाते" हैं) **दिखाई देने लगे हैं:** अर्थात एक ओर, बिलकुल बेतुका "अर्थवाद" है और नरमी के उपदेश हैं, और दूसरी ओर, उतने ही बेतुके "उत्तेजनात्मक आतंकवादी कार्य" हैं, जो "एक ऐसे आंदोलन के समाप्त होने के चिह्न बनावटी तरीक़े से पैदा करने की कोशिश करते हैं, जो बढ़ रहा है और मज़बूत हो रहा है, पर जो अभी अपने अंत की अपेक्षा अपने आरंभ के अधिक निकट है" (व० ज़०, *ज़ार्या*, अंक २-३, पृ० ३५३)। *राबोचेये देलो* के उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि ऐसे सामाजिक-जनवादी **अभी से मौजूद हैं**, जो दोनों ही प्रकार की अति के शिकार हो जाते हैं। और बातों के अलावा यह इसलिए भी आश्चर्य की बात नहीं है कि "मालिकों तथा सरकार के ख़िलाफ़ आर्थिक संघर्ष" से क्रांतिकारियों को संतोष **कभी नहीं** हो सकता और इस प्रकार के परस्पर विरोधी चरमपंथी

Scanned by CamScanner

दृष्टिकोणों का कहीं-कहीं दिखाई पड़ने लगना अवश्यंभावी होता है। बिना सोचे-समझे हमला कर बैठने से आंदोलन की रक्षा और सफलता की आशा रखनेवाले हमलों की तैयारियां केवल एक ऐसा केंद्रित और जुझारू संगठन ही कर सकता है, जो दृढ़ता के साथ सामाजिक-जनवादी नीति पर चलता हो और जो समस्त क्रांतिकारी आकांक्षाओं को संतुष्ट करता हो।

एक और एतराज़ किया जा सकता है। वह यह कि यहां संगठन के विषय में जो विचार व्यक्त किये गये हैं, वे "जनवाद के सिद्धांत" के ख़िलाफ़ पड़ते हैं। जहां पहला एतराज़ ख़ास तौर पर रूसी एतराज़ था, वहां यह एतराज़ **ख़ास तौर पर विदेशी** एतराज़ है। केवल विदेशों में काम करनेवाला कोई संगठन ('रूसी सामाजिक-जनवादियों का संघ') ही अपने संपादकमंडल को अन्य हिदायतों समेत इस तरह की हिदायत दे सकता था:

"**संगठन का सिद्धांत।** सामाजिक-जनवाद को सफलतापूर्वक विकसित और एकबद्ध करने के लिए उसके पार्टी संगठन के व्यापक जनवादी सिद्धांत पर ज़ोर देना चाहिए, उनको विकसित करना चाहिए और उनके लिए लड़ना चाहिए और यह इसलिए ख़ास तौर पर ज़रूरी हो गया है कि हमारी पार्टी के अंदर कुछ जनवाद विरोधी प्रवृत्तियां प्रकट हुई हैं" (*दो कांग्रेसें*, पृ० १८)।

अगले अध्याय में हम देखेंगे कि *ईस्क्रा* की "जनवाद विरोधी प्रवृत्तियों" से *राबोचेये देलो* कैसे लड़ता है। फ़िलहाल हम उस "सिद्धांत" पर अधिक निकट से विचार करेंगे, जिसे "अर्थवादी" लोग पेश करते हैं। यह बात शायद हरेक आदमी मानेगा कि "व्यापक जनवादी सिद्धांत" के लिए निम्नलिखित दो बातों का होना ज़रूरी है: एक, काम का पूरा खुलापन, और दो, सभी पदों के लिए चुनाव। खुलेपन के बिना और ऐसे खुलेपन के बिना, जो संगठन के सदस्यों तक ही सीमित न हो, जनवाद की बात करना उपहासास्पद होगा। हम जर्मन समाजवादी पार्टी को जनवादी संगठन इसलिए कहते हैं कि वह जो कुछ करती है, सब खुलेआम करती है, यहां तक कि उसकी पार्टी कांग्रेसें भी खुलेआम ही होती हैं। लेकिन ऐसे संगठन को कोई जनवादी नहीं कहेगा, जो अपने सदस्यों के अलावा और सब लोगों की नज़रों से गोपनीयता के परदे के पीछे छुपा रहता हो। इसलिए "**व्यापक**

Scanned by CamScanner

जनवादी सिद्धांत" को पेश करने से क्या लाभ है, जबकि गुप्त संगठन इस सिद्धांत की बुनियादी शर्त को **पूरा नहीं कर सकता?** अत: "व्यापक सिद्धांत" सुनने में गंभीर, पर अंदर से अर्थहीन शब्द साबित होते हैं। यही नहीं, उनसे संगठन के मामले में सबसे आवश्यक कार्यभारों की समझ का पूर्ण अभाव भी प्रकट होता है। हर आदमी जानता है कि हमारे "व्यापक" क्रांतिकारी समुदाय में अपनी बातों को गुप्त रखने की कितनी कमी है। हम इस मामले में ब—व की कटु शिकायतों को सुन चुके हैं और हम उनकी इस सर्वथा न्यायोचित मांग से भी परिचित हैं कि "सदस्यों का चुनाव करते समय बड़ी सख्ती बरतनी चाहिए" (*रावोचेये देलो*, अंक ६, पृ० ४२)। लेकिन फिर भी कुछ ऐसे लोग हैं, जो "वास्तविकता का गहरा ज्ञान" रखने का दावा करते हैं, मगर आजकल की जैसी परिस्थिति में भी वे बातों को अधिक से अधिक गुप्त रखने पर नहीं, और सदस्यों का चुनाव करते समय ज़्यादा से ज़्यादा सख्ती बरतने (और इसलिए अपेक्षाकृत अधिक सीमित क्षेत्र से सदस्यों को चुनने) पर नहीं, बल्कि "**व्यापक** जनवादी सिद्धांत" पर **ज़ोर देते हैं!** एकदम बिना पर की उड़ान इसी को कहा जाता है!

जनवाद के दूसरे लक्षण, याने चुनाव के सिद्धांत के विषय में भी स्थिति कुछ इससे बेहतर नहीं है। राजनीतिक दृष्टि से स्वतंत्र देशों में लोग इस चीज़ को मानकर चलते हैं। जर्मन सामाजिक-जनवादी पार्टी की संगठन संबंधी नियमावली की धारा १ में लिखा है: "पार्टी की सदस्यता उन लोगों के लिए खुली है, जो पार्टी कार्यक्रम के सिद्धांतों को मानते हैं और पार्टी की हर मुमकिन मदद करते हैं।" चूंकि पूरा राजनीतिक मैदान उसी तरह जनता की नज़रों के सामने खुला रहता है, जैसे नाट्यमंच दर्शकों की नज़रों के सामने, इसलिए अखबारों तथा सार्वजनिक सभाओं से सबको मालूम होता रहता है कि कौन इन सिद्धांतों को मानता है और कौन नहीं मानता, कौन पार्टी की मदद करता है और कौन उसका विरोध करता है। यह हर आदमी को मालूम रहता है कि अमुक राजनीतिक नेता ने अपना राजनीतिक जीवन किस प्रकार आरंभ किया, उसका विकास किस तरह हुआ, जब परीक्षा की घड़ी आयी, तो उसका व्यवहार कैसा रहा और उसमें कौन-से गुण हैं, और इसलिए स्वभावतया पार्टी के **सभी** सदस्य तमाम

Scanned by CamScanner

बातों की जानकारी रखते हुए उस व्यक्ति को पार्टी में किसी पद के लिए चुन सकते हैं या चुनने से इनकार कर सकते हैं। राजनीतिक क्षेत्र में चूंकि पार्टी के लोगों के हर क़दम पर (अक्षरश:) सार्वजनिक नियंत्रण रहता है, इसलिए अपने आप वह नियम काम करने लगता है, जिसे हम जीवविज्ञान में "योग्यतम की उत्तरजीविता" का सिद्धांत कहते हैं। पूरे खुलेपन, चुनाव तथा सार्वजनिक नियंत्रण के द्वारा होनेवाला यह "प्राकृतिक वरण" इस बात की गारंटी कर देता है कि अंतिम विश्लेषण में हर राजनीतिक नेता अपने "उचित स्थान पर" पहुंच ही जायेगा, उसे वही काम मिलेगा, जो उसकी योग्यता तथा क्षमता को देखते हुए उसके लिए सबसे अधिक उपयुक्त होगा, वह अपनी ग़लतियों का अपने ऊपर असर महसूस करेगा और वह सारी दुनिया के सामने साबित कर दिखायेगा कि उसमें ग़लतियों को पहचानने और उनसे बचने की कितनी योग्यता है।

इस चित्र को ज़रा हमारे निरंकुश शासन के चौखटे में फ़िट करने की कोशिश करके तो देखिये! क्या हम रूस में इस बात की कल्पना कर सकते हैं कि वे तमाम लोग, जो "पार्टी कार्यक्रम के सिद्धांतों को मानते हैं और पार्टी की हर मुमकिन मदद करते हैं", गुप्त रूप से कार्यरत क्रांतिकारी के प्रत्येक क़दम पर नियंत्रण रख सकते हैं? क्या यह संभव है कि वे तमाम लोग मिलकर गुप्त रूप से काम करनेवाले क्रांतिकारियों में से एक साथी को किसी पद के लिए चुन लें, जबकि स्वयं कार्य के हित में क्रांतिकारी को इन "तमाम" दस में से नौ से अवश्य ही यह छुपाना **चाहिए** कि वह कौन है? *राबोचेये देलो* जिन भारी-भरकम शब्दों का प्रयोग करता है, थोड़ा उनके असली अर्थ पर विचार कीजिये और आपको मालूम हो जायेगा कि जब चारों ओर निरंकुशता का अंधकार छाया हो और राजनीतिक पुलिस छांट-छांटकर लोगों को गिरफ़्तार कर रही हो, उस समय पार्टी के संगठन में "व्यापक जनवाद" एक **बेकार और हानिकारक खिलौने** से अधिक कुछ नहीं हो सकता। यह एक बेकार खिलौना है, क्योंकि वास्तव में लाख इच्छा के बावजूद **व्यापक** जनवाद के सिद्धांत पर कोई क्रांतिकारी संगठन न तो कभी चला है और न चल ही सकता था। यह एक हानिकारक खिलौना है, क्योंकि "व्यापक जनवादी सिद्धांत" पर चलने की यदि ज़रा भी कोशिश

Scanned by CamScanner

की गयी, तो उससे केवल पुलिस को ही बड़े पैमाने पर छापे मारने में मदद मिलेगी, उससे मौजूदा नौसिखुआपन हमेशा के लिए क़ायम रहेगा, उससे व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं का ध्यान अपने को पेशेवर क्रांतिकारियों के रूप में प्रशिक्षित करने के बहुत ही गंभीर और आवश्यक काम से हट जायेगा और वे चुनाव व्यवस्था के "काग़ज़ी" नियम तैयार करने में व्यस्त हो जायेंगे। "जनवाद का खेल" केवल विदेशों में ही, जहां ऐसे लोग अकसर आपस में मिलते रहते हैं, जिन्हें वास्तविक और सजीव काम करने का अवसर नहीं मिलता, कहीं-कहीं ही, ख़ास तौर पर विभिन्न छोटे-मोटे दलों में ही खेला जाता है।

क्रांतिकारी मामलों में ऊपर से भद्र मालूम पड़नेवाला जनवाद का यह "सिद्धांत" ला घुसेड़ने का *राबोचेये देलो* का यह प्रिय हथकंडा कितना अभद्र है, यह दिखाने के लिए हम फिर एक गवाह पेश करेंगे। यह गवाह हैं लंदन से निकलनेवाली पत्रिका *नकानूने* के संपादक ए० सेरेब्रियाकोव। इन महाशय के हृदय में *राबोचेये देलो* के प्रति एक बड़ी कोमल भावना है और प्लेख़ानोव तथा "प्लेख़ानोववादियों" के प्रति गहरी घृणा भी है। विदेशों में स्थित 'रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' में फूट के विषय में अपने लेखों के द्वारा *नकानूने* ने निश्चित रूप से *राबोचेये देलो* का समर्थन किया था और प्लेख़ानोव पर गालियों की बौछार की थी। इसलिए जिस प्रश्न पर हम विचार कर रहे हैं, उसके बारे में इस गवाह का मूल्य और भी बढ़ जाता है। *नकानूने* के अंक ७ (जुलाई, १८९९) में ए० सेरेब्रियाकोव का एक लेख *मज़दूर आत्म-मुक्ति दल के घोषणापत्र के बारे में* शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। उसमें उन्होंने कहा है कि "एक गंभीर क्रांतिकारी आंदोलन में आत्म-प्रवंचना, नेतृत्व और तथाकथित एरियोपेगस*" के बारे में बातें करना "अशोभनीय" है। और बातों के अलावा इस लेख में ए० सेरेब्रियाकोव ने यह भी लिखा था:

"मीश्किन, रोगाचोव, जेल्याबोव, मिख़ाइलोव, पेरोव्स्काया, फ़ीगनेर, आदि ने अपने को कभी नेता नहीं समझा और न कभी उन्हें किसी ने नेता

---

*एरियोपेगस—एथेंस का सर्वोच्च न्यायालय, जिसका अधिवेशन एरियो नामक पहाड़ी पर होता था।—सं०

Scanned by CamScanner

चुना या नियुक्त किया था, हालांकि सच यह है कि वे नेता थे, क्योंकि प्रचार-कार्यों के काल में और सरकार के खिलाफ़ संघर्ष के काल में भी काम का सारा बोझ यही लोग अपने कंधों पर संभालते थे, सबसे खतरनाक जगहों में ये ही लोग जाते थे और सबसे अधिक लाभ इन्हीं लोगों के कामों से होता था। वे नेता इसलिए नहीं बन गये कि वे नेता होना चाहते थे, बल्कि इसलिए कि उनके साथियों को उनकी बुद्धिमानी, उनकी क्रियाशीलता और वफ़ादारी में विश्वास था। यह डर (क्योंकि यदि आप डरते नहीं, तो इसकी इतनी चर्चा क्यों कर रहे हैं?) कि कोई एरियोपेगस आंदोलन का मनमाने ढंग से संचालन किया करेगा—यह तो भोलेपन की हद है। उसका कहना कौन मानेगा?"

हम पाठक से पूछते हैं कि यह "एरियोपेगस" जनवाद विरोधी प्रवृत्तियों" से किस प्रकार भिन्न है? और क्या यह स्पष्ट नहीं है कि *राबोचेये देलो* का "भद्र" संगठनात्मक सिद्धांत भी उतना ही भोला और अशोभनीय है? वह भोला इसलिए है कि "एरियोपेगस" का या "जनवाद विरोधी प्रवृत्तियां" रखनेवाले व्यक्तियों का कहना तब तक कोई नहीं मानेगा, जब तक कि "उनके साथियों को उनकी बुद्धिमानी, उनकी क्रियाशीलता और वफ़ादारी में विश्वास" नहीं होगा। अशोभनीय इसलिए कि यह कुछ लोगों के आत्म-दंभ से, हमारे आंदोलन की वास्तविक स्थिति के बारे में कुछ लोगों के अज्ञान से तथा कुछ और लोगों में तैयारी के अभाव तथा क्रांतिकारी आंदोलन के इतिहास के बारे में उनके अज्ञान से खिलवाड़ करने के लिए शब्दाडंबरपूर्ण तिकड़म है। हमारे आंदोलन के सक्रिय कार्यकर्त्ताओं के लिए संगठन का एकमात्र सच्चा सिद्धांत यही होना चाहिए कि वे संगठन के कामों को सख़्ती के साथ गुप्त रखें, सदस्यों का चुनाव करते समय ज़्यादा से ज़्यादा सख़्ती बरतें और पेशेवर क्रांतिकारी तैयार करें। इतना हो जाये, तो "जनवाद" से भी बड़ी एक चीज़ की हमारे लिए गारंटी हो जायेगी; वह यह कि क्रांतिकारियों के बीच सदा पूर्ण, भ्रातृत्वपूर्ण और पारस्परिक विश्वास क़ायम रहेगा। यह हमारे लिए अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि रूस में इसके स्थान पर सार्वजनिक जनवादी नियंत्रण स्थापित करने का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता। यह समझना एक बड़ी ग़लती होगी कि सच्चा "जनवादी" नियंत्रण क़ायम करना चूंकि असंभव है, इसलिए क्रांतिकारी संगठन के सदस्यों पर किसी प्रकार का भी नियंत्रण नहीं रहेगा: उनके

Scanned by CamScanner

पास जनवाद के (साथियों के एक ऐसे घनिष्ठ और गठे हुए दल में जनवाद, जिसके सब सदस्यों का एक-दूसरे पर पूर्ण विश्वास रहता है) खिलौनों जैसे रूपों के बारे में सोचने का समय नहीं होता, पर उनमें अपनी **ज़िम्मेदारी** की बड़ी सजीव भावना होती है, क्योंकि वे अपने अनुभव से जानते हैं कि सच्चे क्रांतिकारियों का संगठन एक अवांछित सदस्य से छुटकारा पाने के लिए बड़े से बड़ा क़दम उठाने में भी नहीं हिचकता। इसके अलावा रूस के (और अंतर्राष्ट्रीय) क्रांतिकारी हलक़ों में काफ़ी विकसित ऐसा जनमत भी पाया जाता है, जिसके पीछे एक लंबा इतिहास है और जो साथियों के प्रति अपने कर्त्तव्य की हर अवहेलना के लिए बहुत सख़्ती और निर्ममता के साथ दंड देता है (और "जनवाद"—खिलौना जनवाद नहीं, बल्कि सच्चा जनवाद—भ्रातृत्व की अवधारणा का निश्चय ही एक अभिन्न अंग होता है!)। यदि आप इन सब बातों का ध्यान रखें, तो आप समझ जायेंगे कि "जनवाद विरोधी प्रवृत्तियों" के बारे में इस सारी चर्चा से और इन तमाम प्रस्तावों से नेताशाही के उस नाटक की फफूंदी जैसी बदबू आती है, जो विदेशों में अकसर खेला जाता है।

यह बताना भी ज़रूरी है कि इस प्रकार की बातचीत का दूसरा स्रोत, याने भोलापन, जनवाद के अर्थ के बारे में अस्पष्ट विचारों के उलझाव से उत्पन्न होता है। ब्रिटेन की ट्रेड-यूनियनों के बारे में श्री तथा श्रीमती वेब ने जो पुस्तक लिखी है, उसमें एक दिलचस्प अध्याय है, जिसका शीर्षक है *आदिम जनवाद*। इस अध्याय में लेखकों ने बताया है कि ब्रिटेन में अपनी ट्रेड-यूनियनों के अस्तित्व के पहले काल में वहां के मज़दूर जनवाद के लिए यह नितांत आवश्यक समझते थे कि यूनियन की व्यवस्था का सारा काम उसके सारे सदस्य करें: न सिर्फ़ तमाम सवाल सभी सदस्यों के वोट से तय होते थे, बल्कि यूनियन के पदाधिकारियों के तमाम काम भी सभी सदस्य बारी-बारी से करते थे। एक लंबे ऐतिहासिक अनुभव के बाद ही मज़दूरों की समझ में यह आ सका कि जनवाद की यह अवधारणा कितनी बेतुकी है और उन्होंने यह समझा कि एक ओर, प्रतिनिधि संस्थाओं तथा दूसरी ओर, सारा समय देनेवाले पदाधिकारियों की कितनी ज़रूरत है। जब अनेक ट्रेड-यूनियनों का आर्थिक दिवाला निकल गया, तब कहीं जाकर

Scanned by CamScanner

मज़दूरों की समझ में यह बात आयी कि यूनियन के सदस्यों से लिये जानेवाले चंदे और उनको दी जानेवाली सहायता का अनुपात केवल जनवादी वोट से निश्चित नहीं हो सकता, बल्कि उसके लिए बीमा विशेषज्ञों से परामर्श करना भी आवश्यक है। संसदवाद और जनता द्वारा क़ानून बनाये जाने के बारे में काउत्स्की ने जो पुस्तक लिखी है, उसको भी ले लीजिये, और आप देखेंगे कि इस मार्क्सवादी सिद्धांतकार ने वे ही निष्कर्ष निकाले हैं, जिन पर "स्वयंस्फूर्त" ढंग से अपना संगठन करनेवाले मज़दूर अनेक वर्षों के व्यावहारिक अनुभव के बाद पहुंचे हैं। काउत्स्की ने जनवाद के विषय में रिट्टिंगहोसेन की आदिम धारणा का सख़्ती के साथ विरोध किया है। उन्होंने उन लोगों का मज़ाक़ उड़ाया है, जो जनवाद के नाम पर यह मांग करते हैं कि "लोकप्रिय अख़बारों का संपादन सीधे जनता को करना चाहिए"। काउत्स्की ने साबित कर दिया है कि सर्वहारा के वर्ग संघर्ष के सामाजिक-जनवादी नेतृत्व के लिए **पेशेवर** पत्रकारों, संसद सदस्यों, आदि का होना क्यों आवश्यक है, उन्होंने उन "अराजकतावादियों और साहित्यकारों के समाजवाद" की कटु आलोचना की है, जो "रोब जमाने के लिए" कहते फिरते हैं कि क़ानून बनाने का काम तो सीधे सारी जनता को सौंप देना चाहिए और जो यह समझने में बिलकुल असमर्थ हैं कि आधुनिक समाज में इस विचार पर केवल एक सीमा तक ही अमल किया जा सकता है।

जो लोग हमारे आंदोलन में व्यावहारिक काम कर चुके हैं, वे जानते हैं कि आम विद्यार्थियों और मज़दूरों में जनवाद की यह "आदिम" धारणा कितनी अधिक प्रचलित है। कोई आश्चर्य नहीं कि यह धारणा संगठन की नियमावली और साहित्य में भी प्रवेश कर जाती है। बर्नस्टीनपंथी "अर्थवादियों" ने अपनी नियमावली में एक यह धारा भी शामिल की थी: "धारा १०: यूनियन के पूरे संगठन के हितों से संबंध रखनेवाले तमाम मामलों का फ़ैसला यूनियन के तमाम सदस्यों के बहुमत से होगा"। और इन लोगों की बात को दोहराते हुए आतंकवादी मत के "अर्थवादियों" ने यह नियम बनाया: "समिति का निर्णय केवल उसी समय अमल में आयेगा, जब पहले उसे तमाम मंडलों में घुमा दिया गया होगा" (*स्वोबोदा*, अंक १, पृ० ६७)। यह बात ध्यान देने

Scanned by CamScanner

की है कि सभी सदस्यों का व्यापक मतसंग्रह करनेवाली यह धारा इस मांग के **अलावा** है कि **पूरा** संगठन चुनाव के सिद्धांत के आधार पर खड़ा किया जाये! निस्संदेह हम इस आधार पर उन व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं की निंदा नहीं करेंगे, जिन्हें सच्चे जनवादी संगठनों के सिद्धांत तथा व्यवहार के अध्ययन का बहुत कम अवसर मिला है। लेकिन जब नेतृत्व करने का दावा रखनेवाला *राबोचेये देलो* ऐसी परिस्थितियों में भी अपने को व्यापक जनवादी सिद्धांत के एक प्रस्ताव तक सीमित रखता है, तब इसे महज़ दूसरों पर अपना "रोब जमाने की कोशिश" करने के अलावा और क्या कहा जा सकता है?

(च) स्थानीय तथा अखिल रूसी कार्य

हमने यहां संगठन की जिस योजना की रूपरेखा दी है, उस पर यह एतराज़ करना कि यह योजना जनवाद के सिद्धांतों के ख़िलाफ़ जाती है और यह एक षड्यंत्रकारी संगठन खड़ा करने की योजना है, बिलकुल निराधार बातें हैं। फिर भी एक सवाल रह जाता है, जो अकसर उठाया जाता है और जिस पर विस्तार से विचार करना ज़रूरी है। वह सवाल है स्थानीय काम और अखिल रूसी काम के पारस्परिक संबंध का। यह भय प्रकट किया जाता है कि एक केंद्रित संगठन के बनने से हो सकता है कि स्थानीय काम के मुक़ाबले अखिल रूसी काम को ज़्यादा महत्व दिया जाने लगे, मज़दूर आंदोलन को धक्का पहुंचे, आम मज़दूरों से हमारा संपर्क कमज़ोर हो और स्थानीय आंदोलन की जड़ें आम तौर पर कमज़ोर हों। इस एतराज़ का हम यह जवाब देते हैं कि पिछले चंद वर्षों से हमारे मज़दूर आंदोलन की यही कमज़ोरी रही है कि हमारे स्थानीय कार्यकर्त्ता स्थानीय काम में बहुत ज़्यादा डूबे हुए रहे हैं; और इसलिए यह नितांत आवश्यक है कि अब देशव्यापी काम को थोड़ा ज़्यादा महत्व दिया जाये। इससे हमारे संबंध टिकाऊ हो जायेंगे और उसके साथ स्थानीय आंदोलन और मज़बूत बनेगा। केंद्रीय और स्थानीय अख़बारों के सवाल को लीजिये। पाठकों से मैं चाहूंगा कि वे इस बात को न भूलें कि हम यहां अख़बारों के प्रकाशन के सवाल को एक **मिसाल** के तौर पर ही ले रहे हैं, जिससे आम क्रांतिकारी कार्य के प्रश्न पर

Scanned by CamScanner

भी प्रकाश पड़ता है, जो कहीं अधिक व्यापक और वैविध्यपूर्ण होता है।

जन-आंदोलन के पहले काल (१८९६-१८९८) में पार्टी के स्थानीय कार्यकर्त्ताओं ने *राबोचाया गाज़ेता* नामक एक अखिल रूसी पत्र निकालने की कोशिश की। उसके बाद के काल में (१८९८-१९००) वैसे तो आंदोलन ने बहुत प्रगति की, पर नेताओं का ध्यान पूरे तौर से स्थानीय पत्रों में ही लगा रहा। कुल जितने स्थानीय पत्र निकाले गये, यदि हम उन्हें गिनें, तो पता चलेगा* कि फ़ी महीने एक अंक का औसत पड़ता है। क्या इससे हमारा नौसिखुआपन एकदम साफ़ नहीं हो जाता? क्या इससे यह बात एकदम साफ़ नहीं हो जाती कि आंदोलन की स्वयंस्फूर्त प्रगति की तुलना में हमारा क्रांतिकारी संगठन बहुत पिछड़ा है? यदि **इतनी ही संख्या** में अंक जगह-जगह बिखरे हुए स्थानीय दलों द्वारा नहीं, बल्कि एक ही संगठन द्वारा निकाले गये होते, तो न सिर्फ़ हमारी बहुत-सी मेहनत बच जाती, बल्कि हमारे काम में कहीं अधिक टिकाऊपन आता और उसका तार न टूटता। इस साधारण-सी बात को वे व्यावहारिक कार्यकर्त्ता अकसर भूल जाते हैं, जो **सक्रिय रूप से** लगभग पूरे तौर पर केवल स्थानीय पत्रों के लिए काम कर रहे हैं (और दुर्भाग्य से अधिकतर मामलों में आज भी यही बात सच है); और वे पत्रकार भी इस बात को भुला देते हैं, जो इस प्रश्न पर कोरे शेख़चिल्लीपन का परिचय देते हैं। व्यावहारिक कार्यकर्त्ता तो साधारणतया यह दलील देकर संतोष कर लेते हैं कि एक अखिल रूसी अख़बार का संगठन करना स्थानीय कार्यकर्त्ताओं के लिए "मुश्किल" है,** और कोई अख़बार न निकले, इससे तो स्थानीय अख़बार का निकलना बेहतर है ही। ज़ाहिर है कि यह बाद की दलील बिलकुल सही है, और

*देखें *पेरिस कांग्रेस में दी गयी रिपोर्ट*[93], पृ० १४: "उस समय (१८९७) से १९०० के वसंत तक विभिन्न स्थानों से विभिन्न पत्रों के तीस अंक प्रकाशित किये गये... औसतन, प्रति महीना एक से ज़्यादा अंक का प्रकाशन हुआ।"

यह मुश्किल देखने में जितनी लगती है, असल में इतनी है नहीं। सच बात यह है कि आज एक भी ऐसा स्थानीय मंडल **नहीं है, जो अखिल रूसी काम के किसी न किसी अंग की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर न ले सकता हो। "यह मत कहो कि मैं कर नहीं सकता, कहो कि मैं करना नहीं चाहता।"

Scanned by CamScanner

आम तौर पर स्थानीय अख़बारों के ज़बरदस्त महत्व और उपयोगिता को स्वीकार करने में हम किसी भी व्यावहारिक कार्यकर्त्ता से पीछे नहीं रहेंगे। लेकिन सवाल यह नहीं है। सवाल यह है कि क्या हम उस बिखराव और नौसिखुएपन को दूर नहीं कर सकते, जो रूस भर में फैले हुए स्थानीय अख़बारों के ढाई साल के अंदर तीस अंकों के निकलने से इतने स्पष्ट रूप से सामने आ जाते हैं? आप आम तौर पर स्थानीय पत्रों की उपयोगिता के बारे में निर्विवाद किंतु बहुत ही आम बातें कहकर ही संतोष मत कर लीजिये! साथ में यह भी स्वीकार करने की हिम्मत कीजिये कि इन पत्रों के कुछ ग़लत पहलू भी हैं, जो पिछले ढाई साल के अनुभव से साफ़ हो गये हैं। इस अनुभव से यह बात भी स्पष्ट हो गयी है कि जिन परिस्थितियों में हम काम करते हैं, उनमें इन स्थानीय अख़बारों में से अधिकांश सिद्धांत के कच्चे साबित होते हैं, उनका राजनीतिक महत्व बहुत कम होता है, क्रांतिकारी शक्तियों के व्यय की दृष्टि से वे बहुत ही महंगे पड़ते हैं और प्राविधिक दृष्टि से वे बहुत ही असंतोषजनक साबित होते हैं (ज़ाहिर है कि यहां मेरा मतलब उनकी छपाई की प्रविधि से नहीं, बल्कि इस बात से है कि वे कितने नियमित ढंग से और कितनी बार निकलते हैं)। ये त्रुटियां आकस्मिक नहीं हैं; वे उस बिखराव का अवश्यंभावी परिणाम हैं, जिससे एक ओर तो इस काल में स्थानीय अख़बारों की बहुतायत समझ में आ जाती है, और जो दूसरी ओर, इस बहुतायत के कारण **और ज्यादा बढ़ता जाता है**। अपने अख़बार को सिद्धांत के मामले में दृढ़ बनाये रखना और उसे एक राजनीतिक मुखपत्र के स्तर तक उठा ले जाना एक अकेले स्थानीय संगठन की **सामर्थ्य के बिलकुल बाहर होता है**, इतनी सामग्री जमा कर लेना और उसका इस्तेमाल करना—जिससे हमारे पूरे राजनीतिक जीवन पर प्रकाश पड़ सके—उसकी **ताक़त के बाहर होता है**। स्वतंत्र देशों में बहुत-से स्थानीय अख़बारों की आवश्यकता साबित करने के लिए प्राय: यह दलील दी जाती है कि स्थानीय मज़दूरों से पत्र छपवाने में ख़र्चा कम पड़ता है और इन पत्रों के जरिए स्थानीय जनता तक अधिक मात्रा में और जल्दी सारी सूचनाएं पहुंचायी जा सकती हैं, जैसा कि अनुभव से साबित हुआ है, यह **दलील** रूस में स्थानीय अख़बार निकालने के

Scanned by CamScanner

ख़िलाफ़ पड़ती है। क्रांतिकारी शक्तियों के व्यय की दृष्टि से ये बहुत ही ज़्यादा महंगे साबित होते हैं, और वे **यदा-कदा** ही निकल पाते हैं, क्योंकि यह सीधी-सी बात है कि एक **अवैध** अख़बार निकालने के लिए चाहे उसका आकार कितना ही छोटा क्यों न हो, एक बड़े विस्तृत गुप्त संगठन की आवश्यकता होती है, जो बड़े कल-कारख़ानों के उत्पादन के साथ ही संभव होता है, कारण कि यह संगठन एक छोटी-सी, हाथ से चलनेवाली वर्कशाप में नहीं खड़ा किया जा सकता। बहुधा ऐसा होता है कि गुप्त संगठन के पिछड़ेपन के कारण (हरेक व्यावहारिक कार्यकर्त्ता इस बात के अनेक उदाहरण दे सकता है) एक या दो अंकों के निकलने और बंटने के बाद तुरंत ही पुलिस को **आम** गिरफ़्तारियां करने का मौक़ा मिल जाता है और फलस्वरूप ऐसा सफ़ाया होता है कि नये सिरे से दुबारा काम शुरू करना पड़ता है। एक सुसंगठित गुप्त संगठन के लिए अपने पेशे में अच्छी तरह प्रशिक्षित क्रांतिकारियों और श्रम के अत्यंत सुसंगत विभाजन की आवश्यकता पड़ती है, लेकिन ये दोनों बातें ऐसी हैं, जो किसी अलग-थलग काम करनेवाले स्थानीय संगठन के लिए, चाहे वह किसी समय कितना ही शक्तिशाली क्यों न रहा हो, सामर्थ्य के बाहर होती हैं। हमारे संपूर्ण आंदोलन के न केवल सामान्य हितों की (मज़दूरों का सुसंगत समाजवादी तथा राजनीतिक सिद्धांतों में प्रशिक्षण), बल्कि विशिष्ट रूप से स्थानीय हितों की भी **ग़ैर स्थानीय अख़बार बेहतर ढंग से सेवा कर सकते हैं।** पहली नज़र में हमारी बात में कुछ विरोधाभास मालूम पड़ेगा, पर पिछले ढाई साल का अनुभव, जिसका ज़िक्र हम ऊपर कर चुके हैं, हमारी बात की सचाई को पूरी तरह साबित कर चुका है। हर आदमी यह बात मानेगा कि इन अख़बारों के तीस अंकों को निकालने के लिए जिन स्थानीय शक्तियों ने काम किया था, उन सबको यदि एक अख़बार के निकालने में लगा दिया जाता, तो वे सौ नहीं, तो कम से कम साठ अंक ज़रूर ही बड़ी आसानी से निकाल सकती थीं, और फलस्वरूप वह अख़बार आंदोलन की शुद्ध स्थानीय विशेषताओं को भी अधिक पूर्णता के साथ व्यक्त कर सकता था। यह सच है कि ऐसा संगठन खड़ा कर देना कोई आसान काम नहीं है, लेकिन हमें उसकी ज़रूरत तो महसूस करनी ही चाहिए। हर स्थानीय मंडल को इसके बारे में सोचना चाहिए, ऐसा संगठन

Scanned by CamScanner

खड़ा करने के लिए **सक्रिय काम करना** चाहिए और इस बात का इंतज़ार नहीं करना चाहिए कि कोई बाहर से उस पर दबाव डाले। उसे इस लालच में नहीं पड़ना चाहिए कि स्थानीय अख़बार अधिक लोकप्रिय होगा तथा अधिक नज़दीक से निकलेगा, क्योंकि जैसा कि हमारे क्रांतिकारी अनुभव से पता चलता है, ये बातें बहुधा काल्पनिक साबित होती हैं।

वे पत्रकार सचमुच व्यावहारिक कार्य का कोई उपकार नहीं करते, जो यह सोचकर कि वे व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं के विशेष रूप से निकट हैं, इन बातों के काल्पनिक रूप को नहीं देखते और इस हैरतअंगेज़ खोखली और सस्ती दलील का सहारा लेते हैं: हमारे पास स्थानीय अख़बार होने चाहिए, हमारे पास क्षेत्रीय अख़बार होने चाहिए और हमारे पास अखिल रूसी अख़बार भी होने चाहिए। निस्संदेह आम तौर पर इन सभी की ज़रूरत है, लेकिन जब आप किसी ठोस संगठनात्मक समस्या को हल करने चलते हैं, तो निश्चय ही आपको समय और परिस्थिति का ध्यान रखना पड़ता है। क्या यह कोरा शेखचिल्लीपन नहीं है, जब *स्वोबोदा* (अंक १, पृ० ६८) "**अख़बार की समस्या** से संबंधित" एक विशेष लेख में यह कहता है: "हमारी राय में हर उस स्थान में, जहां थोड़े-बहुत भी मज़दूर जमा हों, मज़दूरों का अपना अख़बार होना चाहिए—ऐसा अख़बार नहीं, जो बाहर से मंगाया जाता हो, बल्कि ख़ास उसी स्थान का अख़बार।" जिस पत्रकार ने ये शब्द लिखे हैं यदि वह खुद उनका अर्थ समझने के लिए तैयार नहीं है, तो उसकी जगह कम से कम आप पाठकों को तो अवश्य ही उनका अर्थ समझ लेना चाहिए: ज़रा हिसाब लगाइये कि रूस में ऐसे स्थानों की संख्या यदि सैकड़ों में नहीं, तो दसियों में तो ज़रूर है, "जहां थोड़े-बहुत भी मज़दूर जमा हों", और फिर सोचिये कि यदि हर स्थानीय संगठन खुद अपना अख़बार निकालने की कोशिश करने लगे, तो क्या वह महज़ हमारे नौसिखुएपन को बरक़रार रखना न होगा? ज़रा सोचिये कि इस बिखराव से पार्टी के स्थानीय कार्यकर्त्ताओं को अपना काम शुरू करते ही पकड़ लेने में—और वह भी बिना किसी "थोड़ी-बहुत भी" मेहनत के—और इस तरह उन्हें सच्चे क्रांतिकारी बनने से रोकने में पुलिसवालों को कितनी मदद मिलेगी! लेखक ने आगे लिखा है कि एक अखिल रूसी अख़बार के पाठकों को अपने शहर

Scanned by CamScanner

के अलावा दूसरे शहरों के कारख़ानों के मालिकों के हथकंडों के बारे में तथा "अपने शहर के अलावा दूसरे शहरों की फ़ैक्टरियों के अंदर की ज़िंदगी का विस्तृत विवरण" पढ़ना बिलकुल दिलचस्प नहीं लगेगा, लेकिन "एक ओर्योल निवासी ओर्योल शहर के मामलात के बारे में पढ़ने से कभी नहीं ऊबेगा। प्रत्येक अंक में उसे पता चलेगा कि इस बार किनकी 'अच्छी तरह मरम्मत हुई है' और किनको 'डांटा-फटकारा गया है' और उसका हृदय उत्साह से भर उठेगा" (पृ० ६९)। हां, हां, ओर्योल निवासी पाठक का हृदय यदि उत्साह से भर उठा है, तो हमारे पत्रकार की कल्पना की उड़ानें भी बहुत ऊंची होती जा रही हैं, ज़रूरत से ज़्यादा ऊंची। उसे अपने से यह पूछना चाहिए था: क्या इस बहुत ही घटिया क़िस्म की संकुचित स्थानीयता की हिमायत करना उचित है? कारख़ानों के भीतर की हालतों के भंडाफोड़ का महत्व और आवश्यकता मानने में हम किसी से पीछे नहीं हैं, लेकिन हमें यह भी याद रखना चाहिए कि हम अब ऐसी अवस्था में पहुंच गये हैं, जब पीटर्सबर्ग के रहनेवाले लोग पीटर्सबर्ग से निकलनेवाले *राबोचाया मीस्ल* में पीटर्सबर्ग संबंधी पत्रों को पढ़कर ऊबने लगे हैं। स्थानीय फ़ैक्टरियों की हालत का भंडाफोड़ सदा परचों के ज़रिए किया जाता रहा है और **आगे भी उसे सदा इसी तरह किया जाना चाहिए,** लेकिन **अख़बार** का स्तर हमें ऊपर उठाना चाहिए, न कि नीचे गिराकर उसे कारख़ाने के परचे के धरातल पर ले आना चाहिए। "अख़बार" के लिए हमें "छोटी-मोटी" बातों का भंडाफोड़ करनेवाले लेख उतने नहीं चाहिए, जितने कारख़ानों के जीवन की बड़ी-बड़ी, लाक्षणिक बुराइयों का भंडाफोड़ करनेवाले लेख। ऐसे भंडाफोड़ों को ख़ास तौर से ज्वलंत तथ्यों पर आधारित होना चाहिए, ताकि वे **सभी** मज़दूरों का और आंदोलन के सभी नेताओं का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर सकें, सही माने में उनके ज्ञान-भंडार को बढ़ा सकें, उनके दृष्टिकोण को विस्तृत कर सकें और नये इलाक़ों तथा मज़दूरों के नये हिस्सों को जगाने का काम आरंभ कर सकें।

"इसके अलावा स्थानीय अख़बार में कारख़ाने के प्रबंधकों तथा अन्य अधिकारियों के तमाम हथकंडों का झटपट भंडाफोड़ किया जा सकता है। लेकिन इस आम, दूर के अख़बार तक ख़बर के पहुंचते-पहुंचते, जहां घटना हुई थी, वहां के निवासी भी घटना

Scanned by CamScanner

को भूल जायेंगे। जब पाठक के हाथ में अख़बार पहुंचेगा, तो वह कहेगा: 'भगवान जाने यह घटना कब हुई थी!" (उपरोक्त)। जी हां! भगवान जाने यह घटना कब हुई थी! इसी स्रोत से हमें यह भी मालूम हुआ है कि ढाई साल के अंदर अख़बारों के जो कुल मिलाकर ३० अंक प्रकाशित हुए थे, वे छः शहरों से निकले थे, याने फ़ी शहर हर **छः महीने में एक अंक** का औसत पड़ता है! यदि गंभीरता से अपरिचित हमारा यह पत्रकार स्थानीय काम की उत्पादन-शक्ति को अपने अनुमान में **तिगुना** कर दे (जो किसी भी औसत शहर के लिए बिलकुल ग़लत होगा, क्योंकि हमारे नौसिखुएपन के रहते हुए काम की उत्पादन-शक्ति को थोड़ा-बहुत भी बढ़ाना असंभव है), तब भी हमें औसत हर दो महीने पर एक अंक से ज़्यादा नहीं मिलेगा, और इसको किसी भी तरह "झटपट भंडाफोड़ करना" नहीं कहा जा सकता। लेकिन दसेक स्थानीय संगठनों को मिलाकर उनके प्रतिनिधियों को एक आम अख़बार का संगठन करने में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए भेजिये और वे ऐसी व्यवस्था कर देंगे कि हम हर पंद्रह रोज़ बाद **सारे रूस में** छोटी-मोटी बुराइयों का नहीं, बल्कि बड़ी-बड़ी, लाक्षणिक बुराइयों का भंडाफोड़ कर सकेंगे। हमारे संगठनों की अवस्था का जिसे तनिक भी ज्ञान है, उसे इस बात में ज़रा भी संदेह नहीं हो सकता। जहां तक दुश्मन को रंगे हाथों पकड़ने का सवाल है—यदि हम यह बात गंभीरता के साथ कह रहे हैं और केवल कुछ पिटे-पिटाये शब्दों का प्रयोग नहीं कर रहे हैं—तो सच्ची बात यह है कि आम तौर पर ऐसा कर पाना एक अवैध अख़बार के सामर्थ्य के बाहर की बात है। यह काम तो केवल गुमनाम परचा ही कर सकता है, क्योंकि इस तरह का भंडाफोड़ घटना के अधिक से अधिक एक या दो दिन के अंदर ही हो जाना चाहिए (उदाहरण के लिए, छोटी-मोटी हड़तालों, प्रदर्शनों या किसी कारख़ाने में मज़दूरों के पीटे जाने, आदि को ले लीजिये)।

"मज़दूर केवल कारख़ानों में ही नहीं, शहरों में भी रहते हैं," हमारा लेखक आगे लिखता है और इस प्रकार ऐसे सुसंगत ढंग से तफ़सीलों से आम बात पर पहुंच जाता है, जो स्वयं बोरीस क्रिचेव्स्की को ही शोभा देता। वह नगर दूमाओं (म्युनिसिपल समितियों), नगर अस्पतालों, नगर स्कूलों, आदि की

Scanned by CamScanner

चर्चा करता है और ज़ोर देता है कि मज़दूरों के अख़बारों को नगर के आम मामलों की अवहेलना नहीं करनी चाहिए। यह मांग अपने में बड़ी अच्छी मांग है, पर साथ ही वह इस बात का भी एक बहुत अच्छा उदाहरण है कि स्थानीय अख़बारों के बारे में हमारी बहसें अकसर किस तरह की खोखली और हवाई बातों तक ही सीमित रह जाती हैं। सबसे पहली बात तो यह है कि यदि हर उस स्थान से सचमुच अख़बार निकलने लगें, "जहां थोड़े-बहुत भी मज़दूर जमा हों" और उनमें नगर के मामलों के बारे में इतनी विस्तृत सूचनाएं रहा करें, जितनी *स्वोबोदा* चाहता है, तो हमारी रूसी परिस्थितियों में यह लाज़िमी तौर पर बहुत घटिया क़िस्म की सूचना का रूप धारण कर लेगा, उससे ज़ारशाही एकतंत्र पर एक अखिल रूसी क्रांतिकारी हमले के महत्व की चेतना कमज़ोर पड़ जायेगी और उस प्रवृत्ति के बहुत ही बलवान अंकुर—जिन्हें समूल नष्ट तो नहीं किया गया है, पर जो अभी छुपे हुए हैं या जिन्हें अस्थायी रूप से दबा दिया गया है—फिर फूलने-फलने लगेंगे, जो इस प्रख्यात उक्ति के कारण बहुत बदनाम हो गयी है कि कुछ क्रांतिकारी उन संसदों की तो बहुत चर्चा करते हैं, जो अभी कहीं नहीं हैं, पर उन नगर दूमाओं के बारे में कुछ नहीं कहते, जो हमारी आंखों के सामने जीती-जागती मौजूद हैं।[94] हमने "लाज़िमी तौर पर" इसलिए कहा कि हम इस बात पर ज़ोर देना चाहते थे कि *स्वोबोदा* निस्संदेह यह नहीं चाहता कि ऐसा हो, वह तो इसकी उलटी चीज़ चाहता है। लेकिन सदिच्छाएं ही तो काफ़ी नहीं होतीं। नगर के मामलों के बारे में अपने पूरे काम की लाइन की रोशनी में बातें करने के लिए हमें सबसे **पहले** यह लाइन पूरी तरह निर्धारित करनी पड़ेगी, उसे दृढ़ता के साथ स्थापित करना पड़ेगा दलीलों से नहीं, बल्कि अनेक मिसालों द्वारा, ताकि यह लाइन एक **परंपरा** की स्थिरता प्राप्त कर ले। अभी हम यह काम क़तई नहीं कर पाये हैं। फिर भी **पहले** यह कर चुकने के बाद ही हम सारे देश में फैले हुए स्थानीय अख़बारों की बात सोच सकते हैं और उनके बारे में चर्चा कर सकते हैं।

दूसरे, नगर के मामलों के बारे में सचमुच अच्छे और रोचक ढंग से लिखने के लिए ज़रूरी है कि लिखनेवाले को इन मामलों की प्रत्यक्ष जानकारी हो, केवल किताबी ज्ञान नहीं। परंतु **पूरे रूस**

Scanned by CamScanner

में कहीं भी शायद ही कोई ऐसा सामाजिक-जनवादी मिल सके, जिसे ऐसी जानकारी हो। नगर तथा राजकीय मामलों के बारे में अख़बारों में (सरल पुस्तिकाओं में नहीं) लिखने के लिए आवश्यक है कि हमारे पास योग्य व्यक्तियों द्वारा एकत्रित तथा तैयार की गयी ताज़ी और विविध प्रकार की सामग्री हो। ऐसी सामग्री जमा करने तथा उसको अख़बार के वास्ते तैयार करने के लिए ज़रूरी है कि हमारे पास उस आदिम मंडल के "आदिम जनवाद" से बेहतर कोई चीज़ हो, जिसमें हर आदमी हर काम करता है और सभी मतसंग्रह का नाटक खेलकर अपना मनोरंजन करते हैं। इसके लिए ज़रूरी है कि सुदक्ष लेखक हों, सुदक्ष संवाददाता हों और सामाजिक-जनवादी रिपोर्टरों की एक पूरी सेना हो, जिनका दूर-दूर तक संपर्क हो, जो हर तरह के "राजकीय भेदों" को (जिनको लेकर रूस के सरकारी कर्मचारी इतराते तो बहुत हैं, पर बहुत जल्दी ही उगल देते हैं) खोदकर निकाल सकें, जो "परदे के पीछे" होनेवाली घटनाओं का पता लगा सकें। इसके लिए हमारे पास ऐसे लोगों की एक पूरी सेना होनी चाहिए, जिनके लिए सर्वव्यापी और सर्वज्ञानी होना "पदानुसार" आवश्यक है। हम लोग, **सभी** प्रकार के आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय उत्पीड़न के ख़िलाफ़ लड़नेवाली पार्टी, सर्वज्ञानी लोगों की ऐसी एक सेना जुटा सकते हैं, उसे जमा और प्रशिक्षित कर सकते हैं, जत्थेबंद कर सकते हैं और मैदान में उतार सकते हैं और यह काम हमें करना ही होगा—पर अभी यह सब करना बाक़ी है! अधिकतर स्थानों में यह हालत है कि इस दिशा में एक भी क़दम उठाने के बजाय, बहुधा इसकी आवश्यकता तक **महसूस** नहीं की जाती। हमारे सामाजिक-जनवादी पत्रों को पलटिये और राजनयिक, सैनिक, धार्मिक, नगरीय, आर्थिक तथा अन्य मामलों और हथकंडों के बारे में सजीव और रोचक लेखों, समाचारों और भंडाफोड़ करनेवाली ख़बरों की तलाश कीजिये। आपको इन चीज़ों के बारे में **लगभग कुछ भी नहीं** मिलेगा या बहुत ही कम मिलेगा।*

* यही कारण है कि बहुत ही अच्छे स्थानीय अख़बारों की मिसालों से भी दरअसल हमारे ही दृष्टिकोण की पुष्टि होती है। उदाहरण के लिए, *यूज्नी राबोची*[95] एक बहुत बढ़िया अख़बार है और वह सिद्धांतों की अस्थिरता के दोष से भी सर्वथा मुक्त है। परंतु यह अख़बार भी अकसर

Scanned by CamScanner

यही कारण है कि जब "कोई आकर बड़े सुंदर और आकर्षक शब्दों में" यह कहता है कि फ़ैक्टरी, नगर और राजकीय बुराइयों के भंडाफोड़ के लिए हर उस स्थान से अख़बार निकालने की आवश्यकता है, "जहां थोड़े-बहुत भी मज़दूर जमा हों", तब "मुझे इस बात पर हमेशा बहुत झुंझलाहट होती है"!

केंद्रीय अख़बार के मुक़ाबले स्थानीय अख़बारों की प्रधानता या तो दरिद्रता की सूचक होती है या ऐश की। दरिद्रता की सूचक उस मसय, जब आंदोलन के पास बड़े पैमाने के उत्पादन के योग्य शक्तियां नहीं होतीं, जब वह नौसिखुएपन के दलदल में फंसकर हाथ-पैर मारता है और "कारख़ानों के जीवन की छोटी-मोटी बातों" में नाक तक डूबा रहता है। ऐश की सूचक उस समय, जब मज़दूर आंदोलन सर्वांगीण भंडाफोड़ और चौमुखे आंदोलन के काम पर **पूरी तरह क़ाबू पा चुका होता है** और जब वह केंद्रीय अख़बार के अलावा बहुत-से स्थानीय अख़बारों को प्रकाशित करने की आवश्यकता महसूस करता है। यह हर आदमी को ख़ुद तय करने दीजिये कि आजकल जो स्थानीय अख़बारों की प्रधानता है, वह दरिद्रता की सूचक है या ऐश की। मैं ख़ुद यहां केवल अपने निष्कर्ष को ठीक-ठीक रख देना चाहता हूं, ताकि किसी ग़लतफ़हमी की गुंजाइश न रह जाये। अभी तक हमारे अधिकतर स्थानीय संगठन प्राय: केवल स्थानीय अख़बारों के बारे में ही सोचते रहे हैं और उनका लगभग सारा काम इन्हीं को लेकर होता रहा है। यह ठीक नहीं है—इसकी बिलकुल उलटी हालत होनी चाहिए: अधिकतर स्थानीय संगठनों को प्रधानतया एक अखिल रूसी पत्र के प्रकाशन के बारे में सोचना चाहिए और

बहुत देर में निकलने के कारण और पुलिस द्वारा बार-बार छापा मारे जाने के कारण स्थानीय आंदोलन को वह चीज़ नहीं दे सका है, जो वह उसे देना चाहता था। आज हमारी पार्टी को जिस चीज़ की सबसे सख़्त ज़रूरत है—याने मज़दूर आंदोलन के बुनियादी सवालों का सिद्धांतनिष्ठ प्रस्तुतीकरण और व्यापक राजनीतिक आंदोलन—वह स्थानीय अख़बार की सामर्थ्य के बाहर का काम सिद्ध हुआ है। इस अख़बार ने जो विशेष रूप से मूल्यवान सामग्री छापी है—जैसे खान मालिकों के सम्मेलन, बेकारी की समस्या, आदि के बारे में—तो वह वास्तव में स्थानीय सामग्री नहीं थी, बल्कि वह ऐसी सामग्री थी, जिसकी **पूरे रूस के लिए आवश्यकता थी**, न कि केवल दक्षिणी भाग के लिए। ऐसे लेख हमारे किसी सामाजिक-जनवादी पत्र में नहीं छपे हैं।

Scanned by CamScanner

उनके काम का मुख्य उद्देश्य भी यही होना चाहिए। जब तक यह नहीं किया जाता, तब तक हम **एक भी** ऐसा अखबार **नहीं** निकाल पायेंगे, जो **चौमुखे** अखबारी आंदोलन के जरिए मज़दूर हलचल की थोड़ी-बहुत भी सेवा कर सकने में समर्थ हो। जब यह काम हो चुकेगा, तब आवश्यक केंद्रीय अखबार और आवश्यक स्थानीय अखबारों के बीच अपने आप सही तरह के संबंध स्थापित हो जायेंगे।

* * *

पहली नजर में देखने पर लगेगा कि स्थानीय काम के बजाय अखिल रूसी काम को अधिक महत्व देने की आवश्यकता के बारे में हम जिस नतीजे पर पहुंचे हैं, वह विशिष्ट रूप से आर्थिक संघर्ष के क्षेत्र पर लागू नहीं होता: आर्थिक संघर्ष में मज़दूरों का प्रत्यक्ष शत्रु या तो उनके मालिक होते हैं या फिर मालिकों के दल, जिनके पास कोई ऐसा संगठन नहीं होता, जो उस रूसी सरकार के शुद्ध सैनिक तथा अत्यंत केंद्रित संगठन से तनिक भी मिलता-जुलता हो, जो छोटी से छोटी बातों में भी एक निश्चय के साथ चलती है और जो राजनीतिक संघर्ष में हमारी प्रत्यक्ष शत्रु है।

परंतु बात ऐसी नहीं है। जैसा कि हम पहले भी कई बार कह चुके हैं, आर्थिक संघर्ष एक व्यावसायिक संघर्ष होता है, और इस कारण उसके लिए जरूरी होता है कि मज़दूरों का संगठन न केवल उनके काम करने के स्थान के अनुसार, बल्कि व्यवसाय के अनुसार हो। हमारे मालिक लोग जितनी तेज़ी से तरह-तरह की कंपनियों और सिंडीकेटों में संगठित होते जा रहे हैं, मज़दूरों के लिए व्यवसाय के अनुसार अपना संगठन करना उतना ही अधिक आवश्यक होता जा रहा है। हमारा बिखराव और हमारा नौसिखुआपन संगठन के उस काम के रास्ते में एक बड़ी भारी रुकावट है, जिसके लिए क्रांतिकारियों की एक ऐसी अखिल रूसी संयुक्त संस्था का होना आवश्यक है, जो मज़दूरों की अखिल रूसी ट्रेड-यूनियनों का नेतृत्व कर सके। इस उद्देश्य के लिए जिस प्रकार का संगठन होना चाहिए, उसका वर्णन हम ऊपर कर चुके हैं और अब हम केवल अपने अखबारों के प्रश्न के प्रसंग में इसके बारे

Scanned by CamScanner

में चंद शब्द और कहेंगे।

इसमें शायद ही किसी को संदेह होगा कि हर सामाजिक-जनवादी अख़बार में व्यावसायिक (आर्थिक) संघर्ष के लिए एक विशेष **स्तंभ** होना चाहिए। परंतु व्यावसायिक आंदोलन में जो बढ़ती हुई है, वह हमें व्यावसायिक प्रेस के बारे में भी सोचने को मजबूर करती है। लेकिन हमारा विचार है कि कुछ इने-गिने अपवादों को छोड़कर, इस समय रूस में व्यावसायिक अख़बारों का कोई सवाल नहीं उठ सकता: वे इस समय ऐश की सी चीज़ होंगे, जबकि हमें आजकल अकसर रोज़ रोटी भी नहीं मिल पाती है। हमारे ग़ैर क़ानूनी काम की परिस्थितियों के अनुरूप व्यावसायिक प्रकाशनों का जो रूप हो सकता है और जिसकी हमें आज भी आवश्यकता है, वह है **व्यावसायिक पुस्तिकाएं**। इन पुस्तिकाओं में हमें संबंधित व्यवसाय में श्रम की हालत के विषय में और इस मामले में रूस के विभिन्न भागों में पाये जानेवाले भेदों के बारे में, संबंधित व्यवसाय के मज़दूरों की मुख्य मांगों के बारे में, इस व्यवसाय से संबंधित क़ानूनों की त्रुटियों के बारे में, इस व्यवसाय में व्यस्त मज़दूरों के आर्थिक संघर्ष की प्रमुख घटनाओं के बारे में, उनके ट्रेड-यूनियन संगठन की प्रारंभिक दशा, वर्तमान हालत और भविष्य की आवश्यकताओं, इत्यादि के बारे में तमाम **वैध*** और अवैध सामग्री एकत्रित करके सुनियोजित तथा व्यवस्थित ढंग से देनी होगी। ऐसी

---

* इस मामले में वैध सामग्री का विशेष महत्व है, और ऐसी सामग्री को सुनियोजित ढंग से जमा करने तथा उसका इस्तेमाल करने में हम ख़ास तौर पर पिछड़े हुए हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि केवल वैध सामग्री के आधार पर किसी तरह कोई व्यावसायिक पुस्तिका तो तैयार की जा सकती है, पर केवल अवैध सामग्री के आधार पर यह काम कभी नहीं किया जा सकता। *राबोचाया मीस्ल* के प्रकाशनों[१०] में जिन सवालों की चर्चा रहती है, उनके बारे में मज़दूरों से अवैध सामग्री जमा करते हुए हम क्रांतिकारियों की काफ़ी मेहनत बरबाद करते हैं (जबकि इस काम में उनकी जगह बड़ी आसानी से वैध कार्यकर्त्ता ले सकते हैं) और तब भी हम कभी अच्छी सामग्री जमा नहीं कर पाते। इसका कारण यह है कि उस मज़दूर को, जिसे बहुधा किसी बड़े कारख़ाने के केवल एक विभाग का और प्राय: हमेशा आर्थिक परिणामों का ज्ञान रहता है, लेकिन अपने काम की आम परिस्थितियों और मानदंडों का नहीं, वह जानकारी नहीं मिल सकती, जो कारख़ाने के दफ़्तरों में काम करनेवाले कर्मचारियों के पास या इंस्पेक्टरों, डाक्टरों, आदि के पास रहती

Scanned by CamScanner

पुस्तिकाओं से एक तो हमारे सामाजिक-जनवादी अखबारों को विभिन्न व्यवसायों की ऐसी छोटी-मोटी तफ़सीली बातें छापने से छुटकारा मिल जायेगा, जिनमें केवल उस व्यवसाय विशेष के मजदूरों को ही दिलचस्पी होती है। दूसरे, व्यावसायिक संघर्ष में हमारा जो अनुभव होता है, उसका निचोड़ इन पुस्तिकाओं में दर्ज रहेगा, और आज जो जमा की हुई सामग्री बहुत-से परचों और चिट्ठियों के रूप में खो जाती है, वह इन पुस्तिकाओं के रूप में सुरक्षित हो जायेगी और उसका सामान्यीकरण भी हो जायेगा। तीसरे, ये पुस्तिकाएं आंदोलनकर्त्ताओं का पथप्रदर्शन करेंगी, क्योंकि मजदूरों के श्रम की हालत में अपेक्षाकृत धीरे-धीरे परिवर्तन होता है और किसी भी व्यवसाय के मजदूरों की मुख्य मांगें बहुत लंबे समय तक एक-सी ही रहती हैं (उदाहरण के लिए, याद कीजिये कि मास्को के बुनकरों ने १८८५ में कौन-सी मांगें पेश की थीं[97] और फिर उनकी तुलना उन मांगों से कीजिये, जो १८९६ में पीटर्सबर्ग के बुनकरों ने बुलंद की थीं); इन मांगों और आवश्यकताओं को एक पुस्तिका के रूप में जमा कर दिया जाये, तो वह पिछड़े हुए इलाक़ों में या पिछड़े हुए मजदूरों के बीच आर्थिक सवालों पर आंदोलन करनेवालों के लिए कई वर्षों तक एक बड़े उपयोगी गुटके का काम कर सकती है। किसी इलाक़े की सफल हड़तालों की मिसालों, एक

है और जो छोटे-छोटे अखबारों के समाचारों में और उद्योग-धंधों, डाक्टरी व्यवसाय या जेम्स्त्वो, आदि से संबंध रखनेवाले विशेष प्रकाशनों में बिखरी हुई मिलती है।

मुझे अपना "पहला प्रयोग" अच्छी तरह याद है और मैं कभी नहीं चाहूंगा कि वह दुहराया जाये। एक मजदूर मुझसे मिलने आया करता था। मैंने उससे कई हफ़्ते तक "जिरह" की और उस बड़े कारखाने की हालतों के हरेक पहलू के बारे में उससे पूछा, जिसमें वह काम करता था। यह तो सच है कि बड़ी मेहनत के बाद मुझे (केवल एक कारखाने की!) रिपोर्ट के लिए सामग्री मिली, लेकिन जब कभी बातचीत खत्म होती, तो वह मजदूर माथे का पसीना पोंछता और मुसकराता हुआ मुझसे कहता: "आपके सवालों का जवाब देने से तो ओवरटाइम काम करना ज्यादा आसान है!"

अपना क्रांतिकारी संघर्ष हम जितने ही जोरदार तरीक़े से चलायेंगे, "व्यावसायिक" काम के एक हिस्से को वैध करने के लिए सरकार उतनी ही ज्यादा मजबूर होगी और इस प्रकार वह हमारे कंधों का बोझ थोड़ा हलका कर देगी।

Scanned by CamScanner

क्षेत्र में मजदूरों के अपेक्षाकृत ऊंचे जीवन-स्तर और बेहतर श्रम-परिस्थितियों की सूचना से दूसरे इलाक़ों के मजदूरों में बार-बार उठकर लड़ने का उत्साह पैदा होगा। चौथी बात यह है कि व्यावसायिक संघर्ष के सामान्यीकरण की जिम्मेदारी लेकर और इस प्रकार क्यों व्यावसायिक आंदोलन और समाजवाद का नाता मजबूत करके सामाजिक-जनवादी साथ ही साथ इस बात का भी ख़याल रखेंगे कि ट्रेड-यूनियन काम हमारे पूरे सामाजिक-जनवादी काम का न तो बहुत ही छोटा हिस्सा बनकर रह जाये और न बहुत बड़ा हिस्सा। दूसरे शहरों के संगठनों से कटे हुए किसी स्थानीय संगठन के लिए यह बहुत कठिन, और कभी-कभी तो लगभग असंभव होता है कि वह उनके बीच संतुलन क़ायम रख सके (और *राबोचाया मीस्ल* की मिसाल से पता चलता है कि ट्रेड-यूनियनवाद की दिशा में कितनी भयानक अतिशयोक्ति की जा सकती है)। लेकिन क्रांतिकारियों के एक ऐसे अखिल रूसी संगठन को उनके बीच संतुलन क़ायम रखने में कोई कठिनाई नहीं होगी, जो मार्क्सवाद पर दृढ़ता से आधारित हो, जो पूरे राजनीतिक संघर्ष का नेतृत्व करता हो और जिसके पास पेशेवर आंदोलनकर्त्ताओं का एक दल हो।

५

एक अखिल रूसी राजनीतिक अख़बार की "योजना"

बो० क्रिचेव्स्की ने हम लोगों पर "सिद्धांत को व्यवहार से अलग करके उसे एक निर्जीव पंथ बना देने" की प्रवृत्ति का परिचय देने का आरोप लगाते हुए (*राबोचेये देलो*, अंक १०, पृ० ३०) लिखा है: "इस मामले में *ईस्क्रा* ने जो सबसे गंभीर भूल की है, वह है उसका एक आम पार्टी संगठन की 'योजना' पेश करना" (अर्थात *कहां से शुरू करें?* शीर्षक लेख)। मार्तीनोव ने इसी विचार को दुहराते हुए घोषणा की है कि "आकर्षक एवं पूर्ण विचारों के प्रचार की तुलना में नीरस दैनिक संघर्ष की प्रगति के महत्व को कम करके आंकने की जो प्रवृत्ति *ईस्क्रा* में दिखाई पड़ती है, वह... पार्टी के संगठन की उस योजना के रूप

Scanned by CamScanner

में अपनी चरम सीमा पर पहुंच गयी, जो ईस्क्रा के अंक ४ में *कहां से शुरू करें?* शीर्षक लेख में प्रस्तुत हुई है" (वही, पृ० ६१)। अंत में, अभी हाल में ल० नदेज्दिन भी इस "योजना" पर (उद्धरण-चिह्न स्पष्टत: व्यंग व्यक्त करने के उद्देश्य से लगाये गये थे) रोष प्रकट करनेवालों के दल में शरीक हो गये हैं। अपनी *क्रांति की पूर्वबेला* पुस्तिका में (जिसे हमारे पहले से परिचित स्वोबोदा नामक 'क्रांतिकारी-समाजवादी दल' ने छापा है), जो हमारे पास अभी हाल में आयी है, वह कहते हैं: "इस समय एक अखिल रूसी अखबार से संबंधित किसी संगठन की बात करना कुरसीतोड़ विचारों और कुरसीतोड़ कार्य का प्रचार करना है" (पृ० १२६), यह "साहित्यिकपने" का एक रूप है, आदि।

हमारे इस आतंकवादी की भी यदि वही राय निकली, जो "नीरस दैनिक संघर्ष की प्रगति" के हामियों की थी, तो उससे कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए, क्योंकि राजनीति और संगठन से संबंध रखनेवाले अध्यायों में हम इन लोगों के इस अंतरंग संबंध की जड़ों का पता लगा चुके हैं। परंतु यहां इस बात की ओर ध्यान आकर्षित करना जरूरी है कि ल० नदेज्दिन ही एक ऐसे व्यक्ति हैं, जिन्होंने एक ऐसे लेख के विचारक्रम को भी समझने की ईमानदारी के साथ कोशिश की है, जो उन्हें पसंद नहीं आया है और उसमें उठाये गये सवाल का जवाब सारत: देने की कोशिश की है, जबकि *राबोचेये देलो* ने एक भी चीज ऐसी नहीं कही है, जिसका विषय से संबंध हो, और उसने अशोभनीय तथा पाखंडपूर्ण हथकंडों के जरिए सवाल को और उलझा देने की कोशिश की है। यह काम यद्यपि रुचिकर नहीं है, फिर भी हमें अवगी की घुड़सालों[१४] की सफ़ाई में कुछ समय लगाना ही पड़ेगा।

(क) *कहां से शुरू करें?* शीर्षक लेख किसको बुरा लगा?*

राबोचेये देलो ने इस लेख को लेकर हम पर जो पुष्प-वर्षा की है, उसका एक गुच्छा यहां पेश कर दें। "कोई अखबार पार्टी

* *१२ साल के अंदर* शीर्षक लेख-संग्रह में व्ला० इ० लेनिन ने पांचवें अध्याय का 'क' पैराग्राफ़ छोड़ दिया और निम्नलिखित टिप्पणी दी: "पैराग्राफ़ '(क) *कहां से शुरू करें?* शीर्षक लेख किसको बुरा लगा?' इस संस्करण में छोड़ दिया गया है, क्योंकि उसका विषय *राबोचेये देलो* और

Scanned by CamScanner

संगठन को नहीं बनाता, बल्कि बात ठीक इसकी उलटी होती है"... *ईस्क्रा* एक ऐसा अख़बार बनना चाहता है, "जो पार्टी के **ऊपर** हो, जो उसके **नियंत्रण के बाहर** रहे और जो ख़ुद अपने अलग एजेंट रखने के कारण पार्टी से स्वतंत्र हो"... "यह किस चमत्कार का परिणाम है कि *ईस्क्रा* उस पार्टी के, जिसका वह स्वयं एक अंग है, उन सामाजिक-जनवादी संगठनों को बिलकुल भूल गया, जो आज सचमुच मौजूद हैं?"... "जिनके पास दृढ़ सिद्धांत हैं और तदनुरूप एक योजना है, वे पार्टी के वास्तविक संघर्ष के सर्वोच्च नियामक होते हैं और पार्टी पर अपनी योजना थोपते हैं"... "यह योजना हमारे जीवित और जीवन सक्षम संगठनों को अंधकार की दुनिया की ओर ले जाती है और एजेंटों का एक मनगढ़ंत ताना-बाना खड़ा करना चाहती है".... "यदि *ईस्क्रा* की योजना कार्यान्वित हो गयी, तो रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी का—जो अभी बन ही रही है—नामोनिशान मिट जायेगा"... "जिस अख़बार को केवल प्रचार का एक साधन होना चाहिए, वह पूरे व्यावहारिक क्रांतिकारी संघर्ष के नियमों की रचना करनेवाला अनियंत्रित तानाशाह बन जाना चाहता है".... "इस सुझाव को सुनकर कि हमारी पार्टी को **पूरी तरह से** एक स्वतंत्र संपादकमंडल के अधीन कर दिया जाये, हमारी पार्टी को किस तरह से अपना मत ज़ाहिर करना चाहिए?" आदि, आदि।

उपरोक्त उद्धरणों की बातों और उनके लहजे से पाठक यह समझ सकते हैं कि *राबोचेये देलो* को हमारा लेख **बुरा लगा है**। अपना ख़याल करके नहीं, बल्कि हमारी पार्टी के उन संगठनों और समितियों का ख़याल करके, जिनके सिलसिले में वह *ईस्क्रा* पर यह आरोप लगाता है कि वह उन्हें अंधकार की दुनिया की ओर ले जाना और यहां तक कि उनका नामोनिशान भी मिटा देना चाहता है। भला क्या यह भयंकर बात नहीं है? पर अजीब बात तो कुछ और है। *कहां से शुरू करें?* शीर्षक लेख मई, १९०१ में प्रकाशित हुआ था। *राबोचेये देलो* के लेख सितंबर, १९०१

बुंद के साथ *ईस्क्रा* द्वारा 'हुक्म देने', आदि प्रयत्नों के प्रश्न पर बहस तक ही सीमित है। और बातों के अलावा इस पैराग्राफ़ में बताया गया है कि ख़ुद बुंद ने (१८९८-१८९९ में) *ईस्क्रा* के सदस्यों को संबोधन करते हुए पार्टी का मुखपत्र पुनः स्थापित करने तथा 'साहित्यिक प्रयोगशाला' संगठित करने का प्रस्ताव पेश किया था।"—सं०

Scanned by CamScanner

में छपे थे। अब हम जनवरी, १९०२ के बीच में हैं। लेकिन इन पांच महीनों में (सितंबर से पहले और बाद में) पार्टी की **एक भी** समिति और **एक भी** संगठन ने उस दानव के खिलाफ़ बाक़ायदा अपनी आवाज़ बुलंद नहीं की, जो उन्हें अंधकार की दुनिया में ले जाना चाहता है! और फिर भी इन पांच महीनों में *ईस्क्रा* में और अनेक स्थानीय तथा दूसरे प्रकाशनों में रूस के सभी भागों से आये हुए सैकड़ों पत्र छप चुके हैं। इसका आख़िर क्या कारण है कि जिनको अंधकार की दुनिया में ले जाया जा रहा है, उनको खुद इसका कुछ भी पता नहीं है और वे नाराज़ नहीं हुए हैं, हालांकि एक तीसरे साहब अलबत्ता नाराज़ हो गये हैं?

इसका कारण यह है कि समितियां और अन्य संगठन सचमुच काम कर रहे हैं और वे "जनवाद" का नाटक नहीं खेलते। समितियों ने *कहां से शुरू करें?* शीर्षक लेख पढ़ा, उन्होंने देखा कि इस लेख में "एक संगठन की ऐसी योजना की रूपरेखा तैयार करने" की कोशिश की गयी है, **"जिस पर अमल करने से यह संभव होगा कि संगठन को सब तरफ़ से खड़ा करना शुरू कर सकें"** और चूंकि वे यह अच्छी तरह जानती और समझती थीं कि जब तक लोगों को यह विश्वास नहीं हो जायेगा कि ऐसे संगठन का निर्माण आवश्यक है और निर्माण की योजना सही है, तब तक "सब तरफ़" की ओर से तो क्या, एक तरफ़ तक की ओर से भी संगठन को "खड़ा करने की बात" नहीं सोची जायेगी, इसलिए स्वभावतया समितियों को उन लोगों के साहस का "बुरा मानने" की बात कभी नहीं सूझी, जिन्होंने *ईस्क्रा* में कहा था: "प्रश्न के तात्कालिक महत्व को देखते हुए हमने अपनी ओर से साथियों के विचारार्थ योजना की एक रूपरेखा प्रस्तुत करने का फ़ैसला किया है, जिसे हमने अधिक ब्योरे के साथ एक पैंफ़्लेट में विकसित किया है, जो छपने के लिए तैयार किया जा रहा है।" यदि लोग अपने काम के बारे में ईमानदार हों, तो क्या यह बात उनकी समझ में नहीं आयेगी कि यदि साथियों ने पेश की गयी योजना को **स्वीकार कर लिया**, तो वे उस पर महज़ इसलिए अमल नहीं करेंगे कि वे "पराधीन" हैं, बल्कि इसलिए कि वे इस योजना को हमारे समान उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक समझते हैं, और यदि उन्होंने योजना को

Scanned by CamScanner

स्वीकार नहीं किया, तो "रूपरेखा" (बड़ा भारी-भरकम शब्द है न?) महज़ एक रूपरेखा ही रह जायेगी? और क्या यह कोरी लफ़्फ़ाज़ी नहीं है कि योजना की रूपरेखा की "धज्जियां उड़ाकर" और साथियों को उसे ठुकराने की सलाह देकर ही नहीं, बल्कि ऐसे लोगों को, जिन्हें क्रांतिकारी कार्य का कोई अनुभव नहीं है, **केवल इस आधार पर** रूपरेखा तैयार करनेवालों के खिलाफ़ **भड़काकर** भी योजना के ख़िलाफ़ लड़ा जाये कि उन्होंने "नियम बनाने" का और "सर्वोच्च नियामक" के रूप में सामने आने का **साहस किया है,** अर्थात उन्होंने एक योजना की रूपरेखा **पेश करने** की जुर्रत की है? यदि स्थानीय पार्टी कार्यकर्त्ताओं को ऊपर उठाकर व्यापक विचारों, कार्यों, योजनाओं, आदि के धरातल तक **ले आने** की कोशिश का न केवल इस आधार पर कि ये विचार ग़लत हैं, बल्कि इस आधार पर भी विरोध किया जाये कि **"ऊपर उठाने"** की "इच्छा" ही "निंदनीय" है, तो क्या हमारी पार्टी विकसित हो सकती है और उन्नति कर सकती है? ल० नदेज्दिन ने भी हमारी योजना की "धज्जियां उड़ा दी" हैं, पर वह ऐसी लफ़्फ़ाज़ी पर नहीं उतरे हैं, जिसके कारणों की तलाश हमें उनके भोलेपन या बहुत ही पिछड़े राजनीतिक विचारों के अलावा कहीं और करनी पड़े। उन्होंने शुरू में ही इस आरोप को ज़ोरों के साथ ठुकरा दिया है कि हम लोग "पार्टी पर एक इंस्पेक्टरशाही" थोपना चाहते हैं। इसीलिए नदेज्दिन ने योजना की जो आलोचना की है, उसका जवाब उसके गुणों-अवगुणों के आधार पर दिया जा सकता है और दिया जाना चाहिए, पर *राबोचेये देलो* तो केवल इसी योग्य है कि हम उपेक्षा के साथ उसे ठुकरा दें।

परंतु "तानाशाही" और "पराधीनता" की चीख़-पुकार मचानेवाले लेखक को उपेक्षा के साथ ठुकरा देने के बावजूद हम ऐसे लोगों द्वारा पैदा किये गये भ्रमों को पाठकों के दिमाग़ से मिटाने के कर्त्तव्य से मुक्त नहीं हो जाते। यहां हम "व्यापक जनवाद" जैसे नारों की असलियत दुनिया के सामने खोलकर रख सकते हैं। हम पर समितियों को भूल जाने और उन्हें अंधकार की दुनिया में ले जाने की इच्छा रखने या कोशिश करने, आदि के आरोप लगाये जाते हैं। पर ऐसी हालत में हम इन आरोपों का जवाब कैसे दे सकते हैं, जबकि बातों को गुप्त रखने की आवश्य-

Scanned by CamScanner

कता के कारण हम पाठकों के सामने इस तरह के **प्रायः कोई तथ्य नहीं रख सकते**, जिनसे इन समितियों के साथ हमारे असली संबंध पर प्रकाश पड़ता हो? जो लोग भीड़ को भड़काने के उद्देश्य से तीव्र आरोपों की बौछार कर रहे हैं, वे हमसे आगे मालूम पड़ते हैं, क्योंकि उनमें ढिठाई है और उन्हें प्रत्येक क्रांतिकारी के इस कर्त्तव्य का तनिक भी ध्यान नहीं है कि वह जिन संपर्कों और संबंधों को बनाये रखता है या जिन्हें वह क़ायम करता है या क़ायम करने की कोशिश कर रहा है, उनको वह दुनिया से छिपाकर रखता है। स्वभावतया ऐसे लोगों से "जनवाद" के मैदान में होड़ करने के लिए हम क़तई तैयार नहीं। जहां तक उन पाठकों का संबंध है, जो पार्टी के मामलों से अपरिचित हैं, उनके सामने अपना कर्त्तव्य पूरा करने का हमारा केवल यही तरीक़ा है कि हम उन्हें वह न बतायें कि जो है और जो im Werden* है, बल्कि जो कुछ हो चुका है और बीती हुई बातों के रूप में बताया जा सकता है, उसका केवल **एक कण** उनके सामने रख दें।

बुंद ने इशारा किया है कि हम "नक़ली दावेदार हैं",** विदेशों में स्थित 'संघ' ने हम पर आरोप लगाया है कि हम पार्टी का नामोनिशान तक मिटा देना चाहते हैं। महानुभावो, आपको पूर्ण संतोष हो जायेगा, जब हम गुज़रे हुए ज़माने के बारे में **चार तथ्य** जनता के सामने रखेंगे।

पहला*** तथ्य। 'संघर्ष करनेवाली लीग' नाम के अनेक संगठनों में से एक के सदस्यों ने, जिन्होंने हमारी पार्टी के निर्माण और हमारी उद्घाटन कांग्रेस में प्रतिनिधि भेजने में प्रत्यक्ष भाग लिया था, *ईस्क्रा* दल के एक सदस्य के साथ मज़दूरों के लिए एक पुस्तक-माला प्रकाशित करने के संबंध में समझौता किया, जिससे कि पूरे आंदोलन की सेवा हो सके। पुस्तक-माला निकालने का प्रयत्न असफल रहा और उसके लिए लिखी गयी पुस्तिकाएं *रूसी सामाजिक-जनवादियों के कार्यभार* और *नया फ़ैक्टरी क़ानून*

* उत्पत्ति की प्रक्रिया में।—सं०

** *ईस्क्रा*, अंक ८। जातियों के प्रश्न पर हमारे लेख के जवाब में रूस और पोलैंड के सामान्य यहूदी संघ की केंद्रीय समिति का वक्तव्य।

*** हम यहां जान-बूझकर इन तथ्यों को उस क्रम में नहीं रख रहे हैं, जिसमें वे वास्तव में थे।[99]

Scanned by CamScanner

घूम-घामकर कुछ अन्य लोगों के जरिए विदेश पहुंच गयी और वहां उनको प्रकाशित किया गया।

दूसरा तथ्य। बुंद की केंद्रीय समिति के सदस्यों ने *ईस्क्रा* दल के एक सदस्य के सामने यह सुझाव रखा कि एक "साहित्यिक प्रयोगशाला" का—बुंद के उस समय के शब्दों में—संगठन किया जाये। सुझाव रखते हुए उन्होंने कहा था कि यदि यह नहीं किया गया, तो हमारा आंदोलन बहुत ज्यादा पीछे हट जायेगा। इस बातचीत का नतीजा *रूस में मजदूरों का ध्येय** नामक पुस्तिका का प्रकाशन था।

तीसरा तथ्य। बुंद की केंद्रीय समिति ने एक प्रांतीय शहर के जरिए *ईस्क्रा* के एक सदस्य के सामने यह सुझाव रखा कि वह फिर से निकलनेवाले *राबोचाया गाज़ेता* के संपादन का काम अपने हाथ में ले लें और वह साथी निस्संदेह इसके लिए तैयार हो गये। बाद में इस सुझाव को बदल दिया गया: साथी से कहा गया कि संपादकमंडल के बारे में चूंकि कुछ नयी व्यवस्था हो गयी है, इसलिए अब उन्हें एक लेखक के रूप में उस पत्र में लिखना चाहिए। निस्संदेह यह सुझाव भी स्वीकार कर लिया गया। लेख भी भेजे गये (जिनकी नक़लें हमने बचा ली हैं): *हमारा कार्यक्रम*, जिसमें सीधे-सीधे बर्नस्टीनवाद के ख़िलाफ़ और वैध साहित्य तथा *राबोचाया मीस्ल* में व्यक्त होनेवाले नीति-परिवर्तन के ख़िलाफ़ आवाज़ बुलंद की गयी थी; *हमारा तात्कालिक कार्यभार* ("पार्टी का ऐसा मुखपत्र निकालना, जो नियमित रूप से प्रकाशित हो और जिसका सभी स्थानीय दलों से घनिष्ठ संपर्क हो"; प्रचलित "नौसिखुएपन" की बुराइयां); *ज़रूरी सवाल* (जिसमें इस एतराज़ पर विचार किया गया था कि एक केंद्रीय मुखपत्र निकालने से **पहले** स्थानीय दलों के कार्य को विकसित करना ज़रूरी है और जिसमें "क्रांतिकारी संगठन" के सर्वोच्च महत्व पर और "संगठन, अनुशासन तथा बातों को गुप्त रखने की कला का चरम सीमा तक

* इस पुस्तिका के लेखक ने मुझसे यह बताने का अनुरोध किया है कि अपनी पहली पुस्तिकाओं की तरह उन्होंने यह पुस्तिका भी 'संघ' को यह समझकर भेजी थी कि 'संघ' के प्रकाशनों का संपादन 'श्रम-मुक्ति' दल कर रहा है (कुछ कारणों से उन्हें उस समय—फ़रवरी, १८९९ में—संपादकों में परिवर्तन के बारे में नहीं मालूम हो सका था)। इस पुस्तिका को लीग[100] जल्द ही फिर से प्रकाशित करेगी।

Scanned by CamScanner

विकास करने" की आवश्यकता पर ज़ोर दिया गया था)। *राबोचाया गाज़ेता* को फिर से निकालने के सुझाव पर अमल नहीं किया गया और ये लेख भी नहीं छपे।

चौथा तथ्य। समिति के एक सदस्य ने, जो हमारी पार्टी की दूसरी नियमित कांग्रेस का संगठन कर रहा था, *ईस्क्रा* दल के एक सदस्य के पास कांग्रेस का कार्यक्रम भेजा और सुझाव रखा कि फिर से निकलनेवाले *राबोचाया गाज़ेता* का संपादन *ईस्क्रा* दल करे। यह मानो प्रारंभिक क़दम था, बाद में इस सुझाव को उस समिति ने, जिसका यह साथी सदस्य था, और बुंद की केंद्रीय समिति ने स्वीकार कर लिया; *ईस्क्रा* दल को कांग्रेस के स्थान और समय की सूचना दे दी गयी। उसने (चूंकि उसे यक़ीन नहीं था कि वह कुछ निश्चित कारणों से कांग्रेस में अपना प्रतिनिधि भेज सकेगा) कांग्रेस के लिए अपनी लिखित रिपोर्ट तैयार की। इस रिपोर्ट में कहा गया था कि आज, जबकि हर तरफ़ पूर्ण बिखराव का दौर-दौरा है, एक केंद्रीय समिति का चुनाव कर लेने से केवल यही नहीं कि एकता की समस्या हल नहीं होगी, बल्कि हो सकता है कि ऐसा करने पर शीघ्र ही, तेज़ी के साथ और पूरी तैयारी के साथ पुलिस छापा मारे, जिसकी उस समय गोपनीयता के अभाव को देखते हुए बहुत अधिक संभावना थी, और इस तरह पार्टी बनाने का शानदार विचार ही कुछ समय के लिए बदनाम हो जाये, और यह कि इसलिए सभी समितियों और अन्य तमाम संगठनों से यह कहा जाये कि वे फिर से निकलनेवाले उस मुखपत्र का समर्थन करें, जो सब का है और जो सभी समितियों के बीच **वास्तविक** संपर्क क़ायम करेगा और पूरे आंदोलन के लिए **सही माने में** नेताओं के एक दल को प्रशिक्षित करेगा, कि जब यह दल विकसित और मज़बूत हो जायेगा, तब समितियां और पार्टी बहुत ही आसानी से इस दल को केंद्रीय समिति में बदल सकेंगी। परंतु पुलिस के कई छापों और गिरफ़्तारियों के परिणामस्वरूप यह कांग्रेस नहीं हो सकी और बातों को गुप्त रखने की दृष्टि से रिपोर्ट को नष्ट कर दिया गया। उसे केवल चंद साथी ही पढ़ पाये, जिनमें एक समिति के प्रतिनिधि भी शामिल थे।

अब पाठक खुद निर्णय कर सकते हैं कि हम पर "नक़ली दावेदार होने" का आरोप लगाकर बुंद किन तीरक़ों का उपयोग

Scanned by CamScanner

कर रहा है और *राबोचेये देलो* किस तरह के हथकंडों का प्रयोग कर रहा है, जब वह हम पर समितियों को अंधकार की दुनिया में ले जाने की कोशिश करने और पार्टी संगठन के "स्थान पर" एक ऐसा संगठन "स्थापित करना" चाहने का आरोप लगा रहा है, जो केवल एक अखबार के विचारों का प्रचार करनेवाला संगठन होगा। **समितियों के बार-बार कहने पर** हमने इस विषय पर एक रिपोर्ट उन्हीं के सामने पेश की कि आम कार्य करने के लिए एक निश्चित योजना बनाना क्यों आवश्यक है। *राबोचाया गाज़ेता* में छपे लेखों में और पार्टी कांग्रेस के लिए तैयार की गयी रिपोर्ट में हमने इस योजना को यदि और विस्तार से बताया, तो ऐसा हमने पार्टी संगठन के वास्ते ही किया था, और यह काम हमने उन लोगों के अनुरोध से ही किया था, जिनका पार्टी में इतना प्रभाव था कि उन्होंने पार्टी में फिर से (सचमुच) जान डालने में पहलक़दमी की थी। और **हमारा सहयोग लेकर** पार्टी का अपना केंद्रीय मुखपत्र **रस्मी तौर पर** फिर से निकालने की कोशिश **दो बार** असफल हो जाने के बाद ही हमने अपना यह आवश्यक कर्त्तव्य समझा कि हम एक **ग़ैर रस्मी** मुखपत्र निकालें, ताकि **तीसरी** कोशिश के समय साथियों के सामने केवल अटकलबाज़ी के सुझाव न हों, बल्कि पिछले **अनुभव** के नतीजे उनके सामने रखे जायें। आज इस अनुभव के कुछ नतीजे सबके सामने हैं और सब साथी खुद इसका फ़ैसला कर सकते हैं कि हमने अपनी ज़िम्मेदारी को सही तौर पर समझा था या नहीं, और साथियों को उन लोगों के बारे में क्या सोचना चाहिए, जो ऐसे लोगों को, जो कुछ दिन पहले की घटनाओं से अभी अपरिचित हैं, केवल इसलिए गुमराह करने की कोशिश कर रहे हैं कि उनमें से कुछ के "राष्ट्रीय" प्रश्न संबंधी विचारों की असंगतियों की ओर और कुछ के सिद्धांतहीन ढुलमुलपन के अनौचित्य की ओर हमने जो संकेत किया था, उसकी वजह से वे हमसे नाराज़ हो गये हैं।

Scanned by CamScanner

(ख) क्या अख़बार सामूहिक संगठनकर्त्ता हो सकता है?

कहां से शुरू करें? शीर्षक लेख की मुख्य बात यह है कि उसमें **ठीक** इसी सवाल पर विचार किया गया है और इसका जवाब "हां" में दिया गया है। जहां तक हमें ज्ञात है, इस प्रश्न के सारतत्व पर विचार करने और यह साबित करने की कोशिश कि इस सवाल का जवाब केवल "नहीं" में दिया जाना चाहिए, सिर्फ़ ल० नदेज्दिन ने की है। उनकी पूरी की पूरी दलील हम नीचे दे रहे हैं:

"...हमें देखकर बड़ी खुशी हुई कि *ईस्क्रा* ने (अंक ४ में) एक अखिल रूसी अख़बार की जरूरत का सवाल उठाया है, लेकिन हम इस बात से सहमत नहीं हो सकते कि यह सवाल लेख के शीर्षक *कहां से शुरू करें?* से कोई मेल खाता है। निस्संदेह, यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण मसला है। परंतु न कोई अख़बार, न लोकप्रिय परचों की एक पूरी माला और न घोषणापत्रों का एक पूरा पहाड़ ही क्रांतिकारी काल में जुझारू संगठन का आधार बन सकते हैं। हमको स्थानीय पैमाने पर मजबूत राजनीतिक संगठन बनाने का काम हाथ में लेना चाहिए। हमारे पास ऐसे संगठन नहीं हैं; अभी तक हम मुख्यतया सजग मजदूरों के बीच ही काम करते रहे हैं और आम मजदूर प्राय: केवल आर्थिक संघर्ष में लगे रहे हैं। **यदि मजबूत राजनीतिक संगठन स्थानीय पैमाने पर प्रशिक्षित नहीं किये जाते, तो फिर एक सुसंगठित अखिल रूसी अख़बार का भी क्या लाभ होगा?** वह तो जलती हुई झाड़ी होगा, जलता रहेगा, भस्म नहीं होगा, परंतु किसी को नहीं जलायेगा। *ईस्क्रा* का खयाल है कि उसके चारों ओर, उसके वास्ते काम करने के दौरान, लोग जमा और संगठित होंगे। **परंतु यदि थोड़ा और ठोस काम किया जाये, तो उनके लिए उसके इर्द-गिर्द जमा होना और संगठित होना ज्यादा आसान होगा!** यह थोड़ा और ठोस काम यही हो सकता है और लाजिमी तौर पर होना चाहिए कि स्थानीय अख़बारों का व्यापक संगठन किया जाये, मजदूरों की ताक़तों को तुरंत प्रदर्शनों के लिए तैयार किया जाये, बेरोजगारों के बीच स्थानीय संगठन जमकर काम करें (उनके बीच पुस्तिकाओं और परचों का नियमित वितरण करें, सभाएं करें, सरकार का विरोध करने की अपीलें निकालें, इत्यादि)। हमें चाहिए कि हम स्थानीय पैमाने पर सजीव राजनीतिक काम आरंभ करें, और जब इस वास्तविक आधार पर एक में मिल जाने का समय आयेगा, तब वह कोई बनावटी या काग़जी एकीकरण नहीं होगा। स्थानीय कार्य का अखिल रूसी कार्य के रूप में एकीकरण अख़बारों के जरिए नहीं किया जा सकता!" (*क्रांति की पूर्ववेला*, पृ० ५४)।

Scanned by CamScanner

हमने इस ज़ोरदार उद्धरण के उन अंशों पर अपनी तरफ़ से ज़ोर दिया है, जो इस बात की सबसे अच्छी मिसालें हैं कि हमारी योजना के बारे में लेखक की राय कितनी ग़लत है और उनका वह दृष्टिकोण आम तौर पर कितना दोषपूर्ण है, जिसे वह ईस्क्रा के दृष्टिकोण के विरोध में पेश करते हैं। यदि स्थानीय पैमाने पर मज़बूत राजनीतिक संगठन प्रशिक्षित नहीं किये जाते, तो एक अखिल रूसी अखबार का बहुत बढ़िया संगठन करने से भी कोई लाभ न होगा। बिलकुल सही है। लेकिन यही तो असल बात है कि मज़बूत राजनीतिक संगठनों को **प्रशिक्षित करने का एक अखिल रूसी अखबार के अलावा और कोई तरीक़ा नहीं है।** *ईस्क्रा* ने अपनी "योजना" पेश करने **से पहले** जो महत्वपूर्ण बात कही थी, उसे लेखक ने एकदम भुला दिया है। *ईस्क्रा* ने कहा था: "एक ऐसे क्रांतिकारी संगठन के निर्माण का नारा देना" आवश्यक है, "जिसमें केवल **नाम के लिए नहीं**, बल्कि कार्यरूप में सभी शक्तियों को एकत्रित करने और आंदोलन का नेतृत्व करने की क्षमता हो, याने जो संगठन **प्रत्येक विरोध-आंदोलन और प्रत्येक विस्फोट का किसी भी क्षण समर्थन करने को तैयार रहे** और जो उनका उपयोग उन सैनिक शक्तियों को बढ़ाने और मज़बूत करने के लिए करे, जो निर्णायक युद्ध के लिए आवश्यक होंगी।" परंतु—*ईस्क्रा* ने आगे लिखा था—फ़रवरी और मार्च की घटनाओं के बाद अब इस बात को सिद्धांत रूप में हर आदमी मान लेगा। फिर भी हमें जिस चीज़ की आवश्यकता है, वह यह नहीं है कि इस समस्या का सिद्धांत रूप में हल निकाला जाये, बल्कि यह कि **उसका कोई व्यावहारिक हल निकले।** हमें तुरंत कोई निश्चित रचनात्मक योजना पेश करनी चाहिए, ताकि हर आदमी निर्माण का काम आरंभ कर सके और **हर तरफ़ से** संगठन बनना शुरू हो जाये। लेकिन हमें फिर व्यावहारिक हल से हटाकर एक ऐसे तथ्य की ओर घसीटा जा रहा है, जो सिद्धांत रूप में तो बिलकुल सही, निर्विवाद और महान तथ्य है, पर आम मज़दूरों की दृष्टि से एकदम नाकाफ़ी और क़तई समझ में न आनेवाला तथ्य है, याने "मज़बूत राजनीतिक संगठनों को प्रशिक्षित करना"! सुयोग्य लेखक महोदय, यहां सवाल यह नहीं है। सवाल यह है कि

Scanned by CamScanner

प्रशिक्षण देने का काम **किस तरह** किया जाये और संपन्न किया जाये!

यह कहना सही नहीं है कि "अभी तक हम मुख्यतया सजग मज़दूरों के बीच ही काम करते रहे हैं और आम मज़दूर प्राय: केवल आर्थिक संघर्ष में लगे रहे हैं।" इस रूप में तो यह प्रस्थापना सजग मज़दूरों को "आम" मज़दूरों के मुक़ाबले खड़ा करने की उस प्रवृत्ति का रूप धारण कर लेती है, जो *स्वोबोदा* में अकसर दिखाई पड़ती है और जो बुनियादी तौर पर ग़लत है। हमारे यहां पिछले कुछ वर्षों में तो सजग मज़दूर भी "प्राय: केवल आर्थिक संघर्ष में लगे रहे हैं"। पहली बात यह है। दूसरी बात यह है कि यदि हम सजग मज़दूरों और बुद्धिजीवियों, दोनों के बीच से इस संघर्ष के लिए नेता **प्रशिक्षित करने** में मदद नहीं करेंगे, तो जनता राजनीतिक संघर्ष चलाना कभी नहीं सीखेगी, और ऐसे नेता प्रशिक्षण **केवल इसी तरीक़े से** पा सकते हैं कि वे हमारे राजनीतिक जीवन के **सभी** पहलुओं का और विभिन्न कारणों से तथा विभिन्न वर्गों की तरफ़ से होनेवाले विरोध-आंदोलन तथा संघर्ष की **सभी कोशिशों** का नियमित रूप से, दैनंदिन मूल्यांकन करते चलें। इसलिए "राजनीतिक संगठनों के प्रशिक्षण" की बातें करना और साथ ही राजनीतिक अख़बार के "काग़ज़ी काम" का "स्थानीय पैमाने पर किये जानेवाले सजीव राजनीतिक काम" से **मुक़ाबला करना** एकदम हास्यास्पद बात है! अरे, *ईस्क्रा* ने तो अपनी अख़बार की "योजना" को बेरोज़गारों के आंदोलन, किसानों के विद्रोहों, ज़ेम्स्त्वो के सदस्यों के असंतोष और "ज़ारशाही के बाशीबुज़ूक* के ख़िलाफ़ जनता के क्रोध", आदि का समर्थन करने के लिए "जुझारू मुस्तैदी" पैदा करने की "योजना" के ही अनुरूप बनाया है। हर आदमी, जिसे आंदोलन की थोड़ी भी जानकारी है, अच्छी तरह जानता है कि स्थानीय संगठनों में से अधिकतर इन चीज़ों के बारे में **कभी सपने में भी नहीं सोचते**; कि "सजीव राजनीतिक काम" की जिन संभावनाओं की ओर यहां संकेत किया गया है, उनमें से कई ऐसी

---

* १८-१९वीं शताब्दियों की तुर्क सेना के अनियमित दस्ते। इन दस्तों के सैनिक अपनी अनुशासनहीनता, क्रूरता और लूटमार के लिए कुख्यात थे। – सं०

Scanned by CamScanner

हैं, जिन्हें एक भी संगठन **कभी** कार्यान्वित **नहीं** कर पाया है: कि, मिसाल के लिए, जब ज़ेम्स्त्वो के बुद्धिजीवियों में बढ़ते हुए असंतोष और विरोध की ओर ध्यान आकर्षित करने की कोशिश की जाती है, तो नदेज्दिन ("हे भगवान, तो क्या यह अख़बार ज़ेम्स्त्वो के लिए निकाला गया है?" — *पूर्वबेला*, पृ० १२९), "अर्थवादी" (*ईस्क्रा* के अंक १२ में प्रकाशित उनका पत्र) और बहुत-से व्यावहारिक कार्यकर्त्ता एकदम निराश और चिंतित हो उठते हैं। ऐसी हालत में "शुरू करने" का **केवल** यही तरीक़ा हो सकता है कि लोगों को इन तमाम चीज़ों के बारे में **सोचने** के लिए प्रेरणा दी जाये और उन्हें प्रेरणा दी जाये कि वे असंतोष और सक्रिय संघर्ष के सभी विविध रूपों का जोड़ लगायें और सामान्यीकरण करें। आज, जबकि सामाजिक-जनवादी कार्यभारों को बहुत निचले स्तर पर लाया जा रहा है, "सजीव राजनीतिक काम" को **केवल** सजीव राजनीतिक आंदोलन से ही **आरंभ** किया जा सकता है, और यह उस वक़्त तक नहीं हो सकता, जब तक कि हमारे पास एक ऐसा अखिल रूसी अख़बार न हो, जो जल्दी-जल्दी निकले और जिसका सही तौर पर वितरण हो।

जो लोग *ईस्क्रा* की "योजना" को "साहित्यिकपने" का सूचक समझते हैं, उन्होंने योजना का सारतत्व ज़रा भी नहीं समझा है और वे सोचते हैं कि इस समय सबसे उपयोगी साधन के रूप में जिस चीज का सुझाव दिया गया है, वही लक्ष्य है। प्रस्तावित योजना के स्पष्टीकरण के लिए जो दो उपमाएं दी गयी थीं, उनका अध्ययन करने की तकलीफ़ इन लोगों ने गवारा नहीं की है। *ईस्क्रा* ने लिखा था: एक अखिल रूसी राजनीतिक अख़बार का प्रकाशन वह **मुख्य सूत्र** होना चाहिए, जिसके सहारे हम इस संगठन को (अर्थात एक ऐसे क्रांतिकारी संगठन को, जो प्रत्येक विरोध आंदोलन और प्रत्येक विस्फोट का समर्थन करने के लिए सदा तैयार रहे) अडिग भाव से विकसित कर सकेंगे तथा उसे अधिक गहरा और व्यापक बना सकेंगे। अब मुझे कृपया यह बताइये: जब राजगीर लोग कोई बहुत बड़ी इमारत खड़ी करने के लिए, जितनी बड़ी इमारत पहले कभी न देखी गयी हो, उसके अलग हिस्सों में ईंटें बिछाते हैं, तब वे यदि प्रत्येक ईंट के वास्ते ठीक स्थान का पता लगाने के लिए, पूरे काम

Scanned by CamScanner

के अंतिम लक्ष्य को सदा अपने सामने रखने के लिए और न केवल हरेक ईंट का, बल्कि ईंट के हरेक टुकड़े का सही इस्तेमाल करने के लिए, ताकि वह पहले बिछायी गयी और बाद में बिछायी जानेवाली ईंटों के साथ जुड़कर एक पूर्ण एवं सबको मिलाकर चलनेवाली रेखा बन जाये—इस सबके लिए यदि वे एक डोरी इस्तेमाल करते हैं, तो क्या उसे "काग़ज़ी" काम कहा जायेगा? और क्या अपने पार्टी जीवन में हम ठीक एक ऐसे ही समय से नहीं गुज़र रहे हैं, जबकि हमारे पास ईंटें और राजगीर तो हैं, पर सबका पथप्रदर्शन करनेवाली वह डोरी नहीं है, जिसे सब देख सकें और जिसके मुताबिक़ सभी काम कर सकें? उन लोगों को चिल्लाने दीजिये, जो यह कहते हैं कि हम डोरी तानकर अपना हुक्म चलाना चाहते हैं: महानुभावो, यदि हम अपना हुक्म चलाना चाहते, तो अपने मुखपृष्ठ पर हम "*ईस्क्रा*, अंक १" न लिखकर "*राबोचाया गाज़ेता*, अंक ३" लिखते, जैसा कि हमसे अनेक साथी लिखने के लिए कह रहे थे और जैसा कि लिखने का हमें ऊपर बतायी गयी घटनाओं के बाद **पूरा अधिकार होता**। परंतु हमने यह नहीं किया। हम हर तरह के झूठे सामाजिक-जनवादियों से निर्ममतापूर्वक लड़ने के लिए अपने हाथों को स्वतंत्र रखना चाहते थे; हम यह चाहते थे कि यदि हमने सही ढंग से अपनी डोरी तानी है, तो लोग उसका आदर इसलिए करें कि वह सही है, इसलिए नहीं कि उसे अधिकृत मुखपत्र ने ताना है।

"स्थानीय कार्य को केंद्रीय संस्थाओं के रूप में जोड़ने का प्रश्न एक गोरखधंधा बन गया है," ल० नदेज्दिन हमें उपदेश देते हुए फ़रमाते हैं, "एकता के लिए एकरूप तत्वों की आवश्यकता होती है, और यह एकरूपता उसी चीज़ से पैदा हो सकती है, जो दूसरों को जोड़ती हो; लेकिन यह जोड़नेवाला तत्व मजबूत स्थानीय संगठनों की ही उपज हो सकता है, जो इस समय अपनी एकरूपता के लिए क़तई प्रसिद्ध नहीं हैं।" यह सत्य भी उतना ही प्राचीन तथा निर्विवाद है, जितना यह सत्य कि हमें मजबूत राजनीतिक संगठनों को प्रशिक्षित करना चाहिए। और यह सत्य उतना ही बंजर भी है। हर सवाल "एक गोरखधंधा है", क्योंकि पूरा राजनीतिक जीवन एक ऐसी अंतहीन जंजीर है, जो असंख्य कड़ियों से बनी है। राजनीतिज्ञ की पूरी कला इस बात में निहित

Scanned by CamScanner

है कि वह उस कड़ी का पता लगा सके और उस कड़ी को ज़्यादा से ज़्यादा मज़बूती से पकड़ सके, जिसके हमारे हाथों से छीन लिये जाने का सबसे कम अंदेशा हो, जो उस समय सबसे अधिक महत्वपूर्ण कड़ी हो और जिसको पकड़ लेने से पूरी जंजीर पर क़ाबू पा लेने की गारंटी हो जाये।* यदि हमारे पास ऐसे अनुभवी राजगीरों का एक दल हो, जो मिलकर काम करने में इतने दक्ष हों कि वे बिना किसी निर्देशक डोरे के ईंटों को बिलकुल सही स्थान पर बिछा सकते हों (और सिद्धांत रूप से यह बात असंभव हरगिज़ नहीं है), तो उस समय शायद हम किसी और कड़ी को पकड़ सकें। परंतु दुर्भाग्य की बात यह है कि हमारे पास ऐसे अनुभवी राजगीर अभी नहीं हैं, जिन्हें दल बनाकर काम करना आता हो, अकसर ऐसी जगहों पर ईंटें बिछा दी जाती हैं, जहां उनकी कोई ज़रूरत नहीं होती, ईंटें एक सामान्य डोरे के अनुसार नहीं बिछायी जातीं, बल्कि इस तरह बिखेर दी जाती हैं कि दुश्मन इन्हें आसानी से ढहा सकता है, मानो वे ईंट नहीं, बालू के कण हों।

अब दूसरी उपमा को लीजिये: "अख़बार न केवल सामूहिक प्रचारक और सामूहिक आंदोलनकर्त्ता का, बल्कि सामूहिक संगठनकर्त्ता का भी काम करता है। इस दृष्टि से **उसकी तुलना** किसी बनती हुई इमारत के चारों ओर बांधे गये **पाड़ से की जा सकती है;** इससे इमारत की रूपरेखा प्रकट होती है और इमारत बनानेवालों को एक-दूसरे के पास आने-जाने में सहायता मिलती है, इससे वे काम का बंटवारा कर सकते हैं, अपने संगठित श्रम द्वारा प्राप्त आम परिणाम देख सकते हैं।"** क्या इस उद्धरण

* कामरेड क्रिचेव्स्की और कामरेड मार्तीनोव! मैं आप लोगों का ध्यान "तानाशाही", "अनियंत्रित अधिकार", "सर्वोच्च नियामन", आदि की इस भयंकर अभिव्यक्ति की ओर आकर्षित करना चाहता हूं! ज़रा सोचिये तो सही: पूरी जंजीर पर **क़ाबू पाने** की इच्छा है!! एक शिक़ायत फ़ौरन रवाना कर दीजिये। आपके लिए तो यहां *राबोचेये देलो* के बारहवें अंक के वास्ते दो अग्रलेखों के लिए बना-बनाया मसाला तैयार है!

** मार्तीनोव ने *राबोचेये देलो* (अंक १०, पृ० ६२) में इस उद्धरण के पहले वाक्य को तो दिया, पर दूसरे को छोड़ दिया, मानो वह इन बातों पर ज़ोर देना चाहते थे कि या तो इस प्रश्न की मूल बातों पर विचार करने की उनकी इच्छा नहीं है, या वह उन्हें समझने में ही असमर्थ हैं।

Scanned by CamScanner

से यह मालूम होता है कि कोई कुरसीतोड़ लेखक अपनी भूमिका को बढ़ा-चढ़ाकर बता रहा है? पाड़ इमारत के काम नहीं आता, उसे खड़ा करने में सबसे सस्ता सामान इस्तेमाल किया जाता है; उसे अस्थायी रूप से, कुछ समय के लिए ही बनाया जाता है और जैसे ही इमारत का ढांचा बनकर तैयार हो जाता है, वैसे ही पाड़ को गिराकर उसकी लकड़ी जलाने के काम में ले ली जाती है। जहां तक क्रांतिकारी संगठनों की इमारत बनाने का सवाल है, अनुभव यह बताता है कि कभी-कभी वह बिना पाड़ बांधे भी बनायी जा सकती है—उदाहरण के लिए, पिछली शताब्दी के आठवें दशक को ले लीजिये। लेकिन वर्त्तमान समय में यह बात नहीं सोची जा सकती कि जिस इमारत की हमें जरूरत है, वह बिना पाड़ बांधे भी बन सकती है।

नदेज्दिन इससे सहमत नहीं हैं और कहते हैं: "*ईस्क्रा* का खयाल है कि उस अखबार के चारों ओर और उसके वास्ते काम करने के दौरान लोग जमा और संगठित होंगे। परंतु यदि काम **थोड़ा और ठोस** हो, तो **उनके लिए** उसके इर्द-गिर्द जमा होना और संगठित होना **ज्यादा आसान होगा।**" बहुत खूब! बहुत खूब! "यदि काम थोड़ा और ठोस हो, तो"... एक रूसी कहावत है कि "कुएं में मत थूको, कहीं उसका पानी न पीना पड़ जाये"। परंतु कुछ लोग हैं, जिन्हें ऐसे कुएं का पानी पीने में कोई एतराज नहीं होता, जिसमें थूका जा चुका है। इस थोड़ी और ठोस चीज के नाम पर "मार्क्सवाद के" हमारे शानदार, कानूनी "आलोचक" और *रावोचाया मीस्ल* के गैर कानूनी प्रशंसक कैसी-कैसी घृणित बातें कह चुके हैं! हमारा आंदोलन हमारी अपनी संकुचित मनोवृत्ति, पहलकदमी के अभाव और हिचकिचाहट के कारण कितना सीमित बना हुआ है, जिस बात को यही परंपरागत दलील देकर उचित ठहराया जाता है कि "यदि काम थोड़ा और ठोस हो, तो उसके इर्द-गिर्द जमा होना कहीं ज्यादा आसान होगा"! और नदेज्दिन—जो यह समझते हैं कि उनमें "जीवन की वास्तविकताओं" को समझने की विशेष क्षमता है, जो "कुरसीतोड़" लेखकों को बड़े जोरों के साथ बुरा-भला कहते हैं, जो *ईस्क्रा* पर (बड़े चतुर होने का दावा करते हुए) यह आरोप लगाते हैं कि उसे हर जगह "अर्थवाद" ही दिखाई देता है और जो यह समझते हैं कि वह कट्टरपंथियों और आलोचकों के इस विभाजन से बहुत ऊपर है—यह नहीं देखते कि अपनी दलीलों

Scanned by CamScanner

के ज़रिए वह उसी संकुचित मनोवृत्ति के हाथों में खेल रहे हैं, जिस पर उन्हें इतना क्रोध आता है, और इस प्रकार वह ऐसे कुएं का पानी पी रहे हैं, जिसमें थूका जा चुका है! हां, संकुचित मनोवृत्ति के ख़िलाफ़ किसी में जितना भी सच्चा क्रोध क्यों न हो, इस मनोवृत्ति की घुटने टेककर पूजा करनेवालों को ऊपर उठाने की किसी में कितनी भी उत्कट इच्छा क्यों न हो, लेकिन यह सब नाकाफ़ी होता है, जबकि क्रोध करनेवाला आदमी स्वयं ही बिना पाल या पतवार के बहता चला जाता है और पिछली सदी के आठवें दशक के क्रांतिकारियों की तरह "स्वयंस्फूर्त ढंग से" ऐसी चीज़ों का सहारा लेने की कोशिश करता है, जैसे "उत्तेजना पैदा करनेवाले आतंकवादी कार्य", "कृषि आतंक", "संकट-सूचक घंटा बजाना", आदि। अब ज़रा इस पर भी एक नज़र डाल लीजिये कि वे "थोड़े और ठोस" काम कौन-से हैं, जिनके इर्द-गिर्द जमा और संगठित होना नदेज्दिन के ख़याल में "ज़्यादा आसान" है: (१) स्थानीय अख़बार; (२) प्रदर्शनों की तैयारियां; (३) बेरोज़गारों के बीच काम। इन कामों पर पहली नज़र डालते ही मालूम हो जायेगा कि उन्हें यों ही बिना सोचे-समझे चुन लिया गया है, ताकि कुछ न कुछ कहने को हो जाये; क्योंकि हम उन पर चाहे किसी तरह भी विचार क्यों न करें, लेकिन हमारे लिए उनमें कोई ऐसी बात ढूंढ़ना हास्यास्पद होगा, जो लोगों को "जमा और संगठित करने" के लिए विशेष रूप से उपयुक्त हो। अरे, यही नदेज्दिन महाशय कुछ पृष्ठ आगे लिखते हैं: "अब यह बात साफ़-साफ़ कह देने का समय आ गया है कि अलग-अलग स्थानों में बहुत ही घटिया क़िस्म के छोटे-छोटे काम किये जा रहे हैं और समितियां जो कुछ कर सकती थीं, उसका दसवां भाग भी नहीं कर रही हैं... जो समन्वय केंद्र इस समय हमारे पास हैं, वे केवल कल्पना-लोक की वस्तुएं हैं, वे एक ढंग की क्रांतिकारी नौकरशाही का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिसके अंदर लोग एक-दूसरे को सेनानायक नियुक्त किया करते हैं; और जब तक स्थानीय पैमाने पर मज़बूत संगठन नहीं बनते, तब तक यही हालत रहेगी।" इस टिप्पणी में बात को थोड़ा बढ़ा-चढ़ाकर तो ज़रूर कहा गया है, पर इसमें संदेह नहीं कि उसमें बहुत-सी कड़ुवी, किंतु सच्ची बातें भी मौजूद हैं, लेकिन क्या नदेज्दिन इस बात को नहीं समझते कि स्थानीय पैमाने पर

Scanned by CamScanner

होनेवाले घटिया क़िस्म के काम का पार्टी कार्यकर्त्ताओं के संकुचित दृष्टिकोण के साथ, उनकी गतिविधि के संकुचित दायरे के साथ संबंध है, और यह कि स्थानीय संगठनों में ही बंद रहनेवाले पार्टी कार्यकर्त्ताओं के प्रशिक्षण के अभाव के कारण उनके दृष्टिकोण तथा गतिविधि का संकुचित रहना अवश्यंभावी है? क्या *स्वोबोदा* में प्रकाशित संगठन संबंधी लेख के लेखक की तरह नदेज्दिन भी यह भूल गये हैं कि (१८९८ से) स्थानीय अखबारों के व्यापक रूप में निकलने लगने के साथ ही साथ किस तरह "अर्थवाद" और "नौसिखुएपन" में भी बहुत ज़ोर आया था? यदि थोड़े भी संतोषजनक ढंग से "व्यापक रूप में स्थानीय अखबारों" को निकालना संभव होता (और हम ऊपर दिखा चुके हैं कि कुछ इने-गिने स्थानों को छोड़कर यह काम असंभव है), तब भी निरंकुश शासन पर एक **आम** हल्ला बोलने और एक **संयुक्त** संघर्ष का नेतृत्व करने के लिए **सभी** क्रांतिकारी शक्तियों को जमा और संगठित करना" स्थानीय अखबारों के लिए संभव नहीं था। यह न भूलिये कि हम यहां अखबार की **केवल** लोगों को "जमा करने" और संगठित करनेवाली भूमिका की चर्चा कर रहे हैं, और हम बिखराव के समर्थक नदेज्दिन से उलटकर वही व्यंगपूर्ण सवाल पूछ सकते हैं, जो उन्होंने हमसे पूछा है: "क्या हमारे लिए कोई २,००,००० क्रांतिकारी संगठनकर्त्ता तैयार करके छोड़ गया है?" इसके अलावा "प्रदर्शनों की तैयारियों" को ईस्क्रा की योजना के **विरोध** में पेश नहीं किया जा सकता, कारण कि इस योजना में अधिक से अधिक व्यापक रूप में प्रदर्शनों का संगठन करना भी शामिल है और यह योजना के **उद्देश्यों में से एक** है; जिस सवाल पर बहस है, वह यह है कि इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए किन व्यावहारिक **साधनों** का उपयोग किया जाये। नदेज्दिन इस आखिरी बात को लेकर भी गड़बड़ा गये हैं, क्योंकि वह यह बात भूल गये हैं कि प्रदर्शनों की "तैयारी" केवल वे ही लोग कर सकते हैं, जो पहले से "जमा और संगठित" हो गये हों (जबकि अभी तक अधिकांश प्रदर्शन बड़े स्वयंस्फूर्त ढंग से होते रहे हैं), और जमा और संगठित करने की **योग्यता** का ही हममें **अभाव** है। "बेरोज़गारों के बीच काम।" फिर वही उलझाव नज़र आता है, क्योंकि यह भी पहले से जत्थेबंद सेना

Scanned by CamScanner

की एक फ़ौजी कार्रवाई है, न कि सेना को जत्थेबंद करने की योजना। यहां भी नदेज्दिन ने इस बात को कि हमारी बिखराव की हालत ने, "२,००,००० संगठनकर्त्ताओं" के अभाव ने हमें कितना सख़्त नुक़सान पहुंचाया है, कितना कम करके आंका है, उसका पता इस बात से चलता है: बहुत-से लोगों ने (जिनमें नदेज्दिन भी शामिल हैं) शिकायत की है कि *ईस्क्रा* बेरोज़गारी के बारे में बहुत कम समाचार छापता है और देहाती जीवन के बहुत आम मामलों के बारे में उसमें जो चिट्ठियां छपती हैं, वे यों ही लगे हाथों होती हैं। शिकायत सही है, मगर *ईस्क्रा* "बिना अपराध किये ही अपराधी है"। हम देहात में भी "डोरा लटकाने" की कोशिश करते हैं, पर क्या करें, वहां कोई राजगीर ही नहीं है, और इसलिए **मजबूर होकर** हम **हर** उस आदमी को प्रोत्साहन देते हैं, जो हमें बहुत साधारण बातों के बारे में भी ख़बरें देता है, इस आशा से कि इस तरह से इस क्षेत्र में हमारे संवाददाताओं की संख्या बढ़ जायेगी और अंत में **हम सभी** सही माने में सबसे महत्वपूर्ण तथ्यों को छांटने की कला **सीख जायेंगे**। परंतु जिस सामग्री के आधार पर हमें इस कला को सीखना और सिखाना है, वह इतनी कम है कि यदि हमने पूरे रूस के लिए उसका निचोड़ नहीं निकाला, तो हमारे पास सीखने-सिखाने को बहुत कम मसाला होगा। इसमें शक नहीं कि जिस किसी में आंदोलनकर्त्ता के रूप में उतनी योग्यता और आवारों के जीवन का उतना ज्ञान हो, जितना कि नदेज्दिन में मालूम पड़ता है, तो वह बेरोज़गारों के बीच आंदोलन चलाकर आंदोलन की बहुमूल्य सेवा कर सकता है, लेकिन इस प्रकार का व्यक्ति यदि इस काम में अपने प्रत्येक क़दम की ख़बर रूस के अपने **सभी** साथियों को नहीं देता, ताकि दूसरे लोग, जो सबके सब अभी तक किसी नये ढंग का काम हाथ में लेने की योग्यता नहीं रखते, उसके उदाहरण से सीख सकें, तो वह अपनी क्षमताओं को दफ़न कर देने का दोषी होगा।

एकता का महत्व, "जमा और संगठित होने" की आवश्यकता—ये बातें तो अब हर किसी की जबान पर हैं, परंतु ज्यादातर लोगों के दिमाग़ में इस बारे में कोई निश्चित विचार नहीं है कि काम शुरू कहां से किया जाये और यह एकता किस

Scanned by CamScanner

तरह स्थापित की जाये। मान लीजिये कि हम किसी शहर के अलग-अलग मोहल्लों के मंडलों को "एक करना" चाहते हैं, तो शायद हर कोई यह बात मान लेगा कि उसके लिए **समान संस्थाओं** का होना आवश्यक है, याने सबको मिलाकर केवल एक "संघ" का नाम दे देने से काम नहीं चलेगा, बल्कि इसके लिए ज़रूरी होगा कि सचमुच **समान** ढंग का काम हो, मोहल्लों के बीच सामग्री, अनुभव तथा कार्यकर्त्ताओं का आदान-प्रदान हो, कामों का बंटवारा हो, न सिर्फ़ मोहल्लों के अनुसार, बल्कि नगरव्यापी पैमाने पर विशेषीकरण के अनुसार। हर कोई मानेगा कि किसी एक मोहल्ले के "साधनों से" (ज़ाहिर है कि यहां मतलब साधनों और कार्यकर्त्ताओं से है) कोई बड़ा गुप्त कार्ययंत्र (वाणिज्य की भाषा में) अपना पूरा ख़र्च नहीं चला सकता और यह संकुचित क्षेत्र किसी विशेषज्ञ को अपनी प्रतिभा का विकास करने का पर्याप्त अवसर नहीं दे सकता। लेकिन कई शहरों को एक साथ जोड़ने के बारे में भी यही बात लागू होती है, क्योंकि एक पूरा इलाक़ा भी इस मामले में बहुत संकुचित क्षेत्र **साबित होगा,** और हमारे सामाजिक-जनवादी आंदोलन के इतिहास में यह बात साबित हो चुकी है: राजनीतिक आंदोलन और संगठनात्मक कार्य के प्रसंग में हम इस बात को पहले ही विस्तार से साबित कर चुके हैं। जिस चीज़ की हमें सबसे अधिक, सबसे पहले और तत्काल आवश्यकता है, वह यह है कि हम काम के दायरे को फैलायें, और **नियमित और समान** काम के आधार पर विभिन्न शहरों के बीच **वास्तविक** संपर्क क़ायम करें, क्योंकि बिखराव हमारे लोगों के गले में चक्की के पाट की तरह लटका हुआ है, जो (*ईस्क्रा* के एक संवाददाता के शब्दों में) एक "गड्ढे में फंस गये हैं", उन्हें कोई ज्ञान नहीं है कि दुनिया में क्या हो रहा है, उन्हें किससे सीखना है और अनुभव संचय करने और व्यापक ढंग के कार्य करने की अपनी इच्छा को पूरा करने का क्या तरीक़ा है। मैं फिर ज़ोर देकर कहता हूं कि **वास्तविक** संपर्क क़ायम करना केवल एक समान अख़बार के द्वारा ही शुरू किया जा सकता है, क्योंकि वही एक ऐसा नियमित अखिल रूसी उद्यम हो सकता है, जो विविध प्रकार के कार्यों के परिणामों का सारतत्व निकालकर उसे सबके सामने पेश करेगा और इस तरह जनता को

Scanned by CamScanner

उन **तमाम** अनगिनत राहों पर अथक गति से चलने के लिए **प्रेरित करेगा**, जो सबकी सब उसी तरह क्रांति की ओर ले जाती हैं, जैसे तमाम सड़कें रोम को जाती हैं। यदि हम केवल नाम के लिए एकता नहीं चाहते, तो हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए, जिससे प्रत्येक स्थानीय मंडल **तुरंत** अपनी, मान लीजिये, चौथाई शक्तियों को संयुक्त कार्य में **सक्रिय रूप से** लगाने के लिए **अलग कर दे** और तब अख़बार तुरंत ही इस कार्य की आम रूप-रेखा, उसका आकार-प्रकार और उसका स्वरूप उसके* सामने पेश करने लगेगा, उसे ठीक-ठीक बतायेगा कि अखिल रूसी कार्य में सबसे ज़्यादा कौन-सी ख़ामियां महसूस की जा रही हैं, आंदोलन की कहां कमी है, संपर्क कहां कमज़ोर हैं और इस लंबी-चौड़ी आम मशीन में कहां और कौन पुरज़े ऐसे हैं, जिनकी वह मंडल मरम्मत कर सकता है या जिनकी जगह बेहतर पुरज़े लगा सकता है। तब कोई ऐसा मंडल, जिसने अभी काम शुरू नहीं किया है, लेकिन जो काम की तलाश कर रहा है, एक अलग छोटे-से कारख़ाने में काम करनेवाले उस कारीगर की तरह नहीं, जिसे इसका कोई ज्ञान नहीं है कि उससे पहले "उद्योग" का कितना विकास हो चुका है या उद्योग में प्रचलित उत्पादन के तरीक़ों का आम स्तर क्या है, बल्कि वह एक ऐसे विशाल व्यवसाय के एक साझीदार की तरह काम शुरू कर सकता है, जो निरंकुश शासन के ख़िलाफ़ संपूर्ण आम क्रांतिकारी आक्रमण का **सूचक होगा**। इस विशाल यंत्र का प्रत्येक पुरज़ा जितना ही निर्विकार होगा, समान कार्य के लिए छोटे-छोटे अनेक काम करनेवालों की संख्या जितनी ही बड़ी होगी, उतना ही हमारा जाल—हमारा संगठन—अधिक सुगठित होता जायेगा और तब पुलिस के अवश्यंभावी छापों से हमारी पांतों में उतनी ही कम अव्यवस्था और निराशा फैलेगी।

---

* इसके लिए एक **शर्त** है: वह यह कि वह मंडल उस अख़बार की नीति के साथ सहानुभूति रखता हो और उसके साथ सहयोग करने में—जिसका अर्थ केवल साहित्यिक सहयोग नहीं, बल्कि आम क्रांतिकारी सहयोग है—कोई लाभ देखता हो। ***राबोचेये देलो* के लिए नोट:** जो क्रांतिकारी कार्य को महत्व देते हैं, न कि जनवाद का नाटक खेलने को, जो "सहानुभूति" को अधिक से अधिक सक्रिय और सजीव सहयोग से अलग नहीं करते, वे इस शर्त को मानकर चलते हैं।

Scanned by CamScanner

अख़बार का (यदि वह सचमुच अख़बार कहलाने के योग्य हो, याने यदि वह मासिक पत्रिका की तरह महीने में एक बार नहीं, बल्कि महीने में चार बार नियमित रूप से निकले) केवल वितरण करने के दौरान ही **वास्तविक** संपर्क क़ायम होने लगेंगे। इस समय क्रांतिकारी काम के लिए शहरों के बीच संचार शायद ही कभी होता है, कम से कम इतना तो कहा ही जा सकता है कि वह नियम से नहीं, बल्कि अपवादस्वरूप ही होता है। पर यदि हमारे पास एक अख़बार हो, तो इस प्रकार का संचार एक नियम बन जायेगा और निस्संदेह वह न सिर्फ़ अख़बार का वितरण करेगा, बल्कि उसके द्वारा अनुभव, सामग्री, कार्यकर्त्ताओं और साधनों के विनिमय को भी सुनिश्चित करेगा (और यही अधिक महत्वपूर्ण है)। तब संगठनात्मक काम का दायरा एकबारगी पहले से कई गुना विस्तार प्राप्त कर लेगा और एक स्थान में प्राप्त सफलता और दक्षता प्राप्त करने की स्थायी प्रेरणा बन जायेगी और देश के अन्य भागों में काम करनेवाले साथियों के अनुभव का उपयोग करने की इच्छा को जागृत करेगी। स्थानीय काम आज से कहीं अधिक सर्वांगीण और वैविध्यपूर्ण बन जायेगा: तब राजनीतिक और आर्थिक भंडाफोड़ के लिए सारे रूस से एकत्रित सामग्री से सभी पेशों और **विकास के प्रत्येक स्तर** के मज़दूरों को बौद्धिक भोजन मिलेगा, उससे विविध विषयों पर भाषण देने और पढ़कर सुनाने के लिए सामग्री मिलेगी, जिनके लिए, इसके अलावा, वैध अख़बारों के इशारों से, जनता में चलनेवाली चर्चा से और सरकार के "संकोचपूर्ण" बयानों से भी सुझाव मिलेंगे। रूस के सभी भागों में हर प्रदर्शन और हर विस्फोट पर सभी पहलुओं से विचार-विमर्श होगा और उनके गुणों तथा दोषों को परखा जायेगा; बाक़ी लोगों के साथ क़दम से क़दम मिलाकर चलने की और उनसे अधिक अच्छा काम करने की (हम, समाजवादी, हर प्रकार की प्रतिद्वंद्विता या हर तरह की प्रतियोगिता के ख़िलाफ़ हरगिज़ नहीं हैं!), और जो कुछ पहली बार मानो स्वयंस्फूर्त ढंग से प्रकट हो जाया करता था, अब उसके लिए सचेतन ढंग से तैयारी करने की इच्छा उत्पन्न होगी, किसी विशेष स्थान की या किसी विशेष मौक़े की सुविधाजनक परिस्थितियों से लाभ उठाकर आक्रमण की योजना में संशोधन करने की इच्छा उत्पन्न होगी, इत्यादि। साथ ही स्थानीय काम के इस पुनरुत्थान का

Scanned by CamScanner

परिणाम **सारे** प्रयासों और **सारी** शक्तियों का बदहवासीभरा और "संक्षोभजनक" झोंका जाना नहीं होगा, जैसा कि आजकल हर प्रदर्शन में या स्थानीय अख़बार का हर अंक निकालने के सिलसिले में अकसर होता है। एक तो पुलिस के लिए हमारी "जड़ों" तक पहुंचना पहले से बहुत ज़्यादा मुश्किल हो जायेगा, क्योंकि वह यह नहीं जान पायेगी कि इन जड़ों की किस मोहल्ले में तलाश करनी चाहिए। दूसरे, नियमित रूप से समान कार्य से हमारे लोगों को किसी **ख़ास** हमले के ज़ोर को आम सेना के संबंधित दस्ते की ताक़त के अनुसार घटाने-बढ़ाने का प्रशिक्षण मिलेगा (आजकल कभी कोई इसकी फ़िक्र नहीं करता, क्योंकि दस में से नौ हमले स्वयंस्फूर्त होते हैं) और इससे न सिर्फ़ साहित्य, बल्कि क्रांतिकारी कार्यकर्त्ताओं के भी एक स्थान से दूसरे स्थान को "परिवहन" में आसानी होगी।

इस समय अधिकांश मामलों में क्रांतिकारी शक्तियों को सीमित ढंग के स्थानीय काम में ख़र्च और नष्ट किया जा रहा है, परंतु विचारांतर्गत परिस्थितियों में ऐसे किसी आंदोलनकर्त्ता या संगठनकर्त्ता को, जो थोड़ी भी योग्यता रखता हो, देश के एक कोने से हटाकर दूसरे कोने में भेजने की सदा संभावना रहेगी और अवसर होंगे। शुरू में लोग पार्टी के काम के लिए पार्टी के ख़र्चे से छोटी-छोटी यात्राएं करेंगे, बाद में उन्हें इस बात की आदत पड़ जायेगी कि पार्टी ही उनका सारा ख़र्चा चलाये, वे पेशेवर क्रांतिकारी बन जायेंगे और अपने को सच्चे राजनीतिक नेता बनने के लिए प्रशिक्षित करेंगे।

यदि हम सचमुच ऐसी हालत पैदा करने में सफल हो जायें, जिसमें सभी, या कम से कम अधिकतर स्थानीय समितियां, स्थानीय दल और मंडल समान उद्देश्य के लिए सक्रिय काम करने लगें, तो हम निकट भविष्य में ही एक ऐसा साप्ताहिक अख़बार प्रकाशित कर सकेंगे, जिसकी दसियों हज़ार प्रतियां रूस भर में नियमित रूप से वितरित हुआ करेंगी। यह अख़बार एक ऐसी बड़ी धौंकनी का हिस्सा बन जायेगा, जो वर्ग संघर्ष और जनता के रोष की प्रत्येक चिनगारी को सुलगाकर धधकती हुई आग में बदल देगी। एक ऐसी चीज़ के इर्द-गिर्द, जो अपने में बहुत मासूम और बहुत बड़ी नहीं है, पर जो एक नियमित और अपने पूरे अर्थ में **समान** काम है, परखे हुए योद्धाओं की एक स्थायी

Scanned by CamScanner

सेना नियमबद्ध तरीक़े से जमा होती और लड़ने का प्रशिक्षण प्राप्त करती जायेगी। इस आम संगठनात्मक ढांचे की सीढ़ियों और पाड़ के सहारे शीघ्र ही हमारे क्रांतिकारियों में से समाजवादी-जनवादी जेल्याबोव जैसे और हमारे मज़दूरों में से रूसी बेबेल जैसे लोग पैदा होने और सामने आने लगेंगे, वे पूरी जत्थेबंद सेना का नेतृत्व अपने हाथों में संभाल लेंगे तथा रूस के कलंक और अभिशाप से हिसाब चुकाने के लिए देश की समस्त जनता को जगायेंगे।

इसी का हमें स्वप्न देखना चाहिए!

* * *

"हमें स्वप्न देखना चाहिए!" ये शब्द लिखते ही मैं यकायक चौंक पड़ा। मुझे लगा मानो मैं "एकता सम्मेलन" में बैठा हुआ हूं और मेरे सामने *राबोचेये देलो* के संपादक तथा लेखक-गण बैठे हुए हैं। साथी मार्तीनोव उठते हैं और मेरी ओर रुख़ करके बड़ी कठोर मुद्रा के साथ कहते हैं: "जनाब, मुझे यह प्रश्न करने की इजाज़त दीजिये कि क्या किसी स्वायत्त संपादकमंडल को पहले पार्टी समितियों की राय लिये बिना सपना देखने का अधिकार है?"। और उनके बाद साथी क्रिचेव्स्की उठते हैं और वह (साथी प्लेख़ानोव को बहुत पहले ही ज़्यादा गूढ़ बनानेवाले साथी मार्तीनोव को भी दार्शनिक ढंग से और गूढ़ बनाते हुए) और भी अधिक कठोर मुद्रा के साथ कहते हैं: "मैं और आगे जाता हूं। मैं पूछता हूं कि क्या किसी मार्क्सवादी को सपना देखने का कोई अधिकार है, जबकि वह यह जानता है कि मार्क्स के मतानुसार मानव-जाति अपने सामने सदा ऐसे कार्यभार रखती है, जिन्हें वह पूरा कर सकती है, और यह कि कार्यनीति पार्टी के कामों के विकास की प्रक्रिया है, जो पार्टी के विकास के साथ-साथ बढ़ रहे हैं?"

इन कठोर प्रश्नों का विचार मात्र मेरा ख़ून सर्द कर देता है और मेरे मन में सिवा इसके और कोई इच्छा नहीं रह जाती कि कहीं कोई ऐसी जगह मिल जाये, जहां में छिप जाऊं। सो मैं पीसारेव की आड़ लेने की कोशिश करूंगा।

Scanned by CamScanner

पीसारेव ने सपनों और वास्तविकता के टकराव के विषय में लिखा था: "टकराव कई तरह का होता है। हो सकता है कि मेरा सपना स्वाभाविक घटना-क्रम से आगे चला जाये या घटनाओं की दिशा से बिलकुल अलग एक ऐसी दिशा में चला जाये, जिसमें घटनाओं का स्वाभाविक प्रवाह कभी नहीं जायेगा। पहली सूरत में मेरे सपने से किसी प्रकार की हानि न होगी, बल्कि संभव है कि उससे श्रमजीवी मानव की क्रियाशीलता को बल मिले और उसमें नया जोश आ जाये... ऐसे सपनों में कोई बात ऐसी नहीं होती, जिससे श्रमिकों की शक्ति के बहक जाने या पंगु हो जाने की आशंका हो। इसके विपरीत, यदि मनुष्य इस प्रकार सपना देखने की क्षमता से बिलकुल वंचित कर दिया जाये, यदि वह समय-समय पर घटनाओं से आगे निकल जाने और जिस चीज़ के तैयार करने में अभी उसने हाथ ही लगाया है, उसकी पूरी मानसिक तसवीर न बना सके, तो मैं इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता कि फिर मनुष्य को कला और विज्ञान तथा व्यावहारिक प्रयासों के क्षेत्र में व्यापक तथा श्रमसाध्य कार्य का बीड़ा उठाने और उसे पूरा करने की प्रेरणा कहां से मिल पायेगी... सपनों तथा वास्तविकता के टकराव से कोई हानि नहीं होती है, पर शर्त सिर्फ़ यह है कि सपना देखनेवाला व्यक्ति अपने स्वप्न में सचमुच विश्वास करता हो, जीवन का ध्यानपूर्वक अवलोकन करते हुए जीवन के तथ्यों का अपनी कल्पना के महलों से मिलान करता रहता हो और आम तौर से अपने सपनों को साकार करने के लिए ईमानदारी से काम करता हो। यदि सपनों का जीवन से थोड़ा-सा भी संबंध है, तो सब ठीक है।"

दुर्भाग्य की बात है कि हमारे आंदोलन में इस प्रकार के सपने बहुत कम देखे जाते हैं। और इसकी ज्यादा जिम्मेदारी उन लोगों पर है, जो इस बात पर गुमान करते हैं कि उनके विचार सदा बड़े संतुलित रहते हैं और वे हमेशा "ठोस वास्तविकता" के "नजदीक" रहते हैं—हमारा मतलब वैध आलोचना और अवैध "पुछल्लावाद" के प्रतिनिधियों से है।

Scanned by CamScanner

(ग) हमें किस प्रकार के संगठन की आवश्यकता है?

ऊपर जो कुछ कहा गया है, उससे यह पाठक की समझ में आ गया होगा कि हमारी "योजना-के-रूप-में-कार्यनीति" यह है कि हम चढ़ाई का **नारा** फ़ौरन देने के ख़िलाफ़ हैं, हम मांग करते हैं कि "दुश्मन के क़िले के चारों ओर बाक़ायदा घेरा डाल दिया जाये", या दूसरे शब्दों में, हम यह मांग करते हैं कि सारी कोशिश स्थायी सेना को एकत्रित, संगठित और उसकी **जत्थेबंदी** करने में लगा दी जाये। जब *राबोचेये देलो* "अर्थवाद" से उछलकर एकदम आक्रमण के लिए शोर मचाने लगा (जिसके लिए उसने **अप्रैल**, १९०१ में, *लिस्तोक 'राबोचेगो देला'*[101], अंक ६ में बड़ा शोर मचाया था) और हमने इस पर उसका मज़ाक़ बनाया, तो वह तुरंत हम पर यह आरोप लगाने के लिए झपट पड़ा कि हम लोग "लकीर के फ़क़ीर" हैं, हम अपना क्रांतिकारी कर्त्तव्य नहीं समझते, सतर्कता पर ज़ोर देते हैं, इत्यादि। ज़ाहिर है कि हम लोगों को न तो यह देखकर ही कोई विशेष आश्चर्य हुआ कि जिन लोगों में सिद्धांतों का पूर्ण अभाव है और जो "प्रक्रिया-के-रूप-में-कार्यनीति" की बड़ी-बड़ी बातें करके सब दलीलों से कतराते हैं, वे ही लोग हम पर इस तरह के आरोप लगा रहे हैं, और न ही हमें यह देखकर कोई ताज्जुब हुआ कि नदेज्दिन ने भी, जो ख़ुद हर प्रकार के टिकाऊ कार्यक्रमों तथा कार्यनीति के मूल सिद्धांतों को आम तौर पर घोर उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं, इन्हीं आरोपों को दुहराया है।

कहा जाता है कि इतिहास अपने को कभी दुहराता नहीं। लेकिन नदेज्दिन इस बात की जी-तोड़ कोशिश कर रहे हैं कि इतिहास अपने को दुहराये और "क्रांतिकारी संस्कृतिवाद" की तीव्र निंदा करने में, "बिगुल बजाने" तथा "क्रांति की पूर्ववेला का विशेष दृष्टिकोण रखने", आदि के बारे में शोर मचाने में बड़ी लगन के साथ त्काचोव की नक़ल कर रहे हैं। शायद वह इस मशहूर उक्ति को भूल गये हैं कि यदि कोई मूल ऐतिहासिक घटना सही माने में एक त्रासदी के रूप में सामने आती भी है, तो जब उसकी नक़ल की जाती है, वह महज़ कामदी बनकर रह जाती है।[102] सत्ता पर क़ब्ज़ा करने के जिस प्रयत्न की तैयारी

Scanned by CamScanner

त्काचोव की सीख के द्वारा हुई थी और जो प्रयत्न उस "भयानक" आतंक द्वारा कार्यान्वित हुआ था, जो राही राने में भयभीत करनेवाला था, वह एक शानदार प्रयत्न था, लेकिन एक छोटे त्काचोव का "उत्तेजनात्मक" आतंकवादी कार्य केवल हास्यास्पद है, और जब औसत मजदूरों के संगठन का विचार भी उसके साथ जुड़ जाता है, तब तो वह विशेष रूप से हास्यास्पद बन जाता है।

नदेज्दिन ने लिखा: "यदि *ईस्क्रा* अपने साहित्यिकपने से मुक्त हो जाता, तो वह इस बात को महसूस करने लगता कि ये बातें (अंक ७ में *ईस्क्रा* के नाम एक मजदूर का पत्र, आदि जैसी मिसालें) इस सचाई की ओर संकेत करती हैं कि जल्द ही, बहुत जल्द ही, वह 'चढ़ाई' शुरू होनेवाली है; और इस वक़्त (जी हां!) एक अखिल रूसी अख़बार के साथ जुड़े संगठन की बातें करना—कुरसीतोड़ों के विचारों का प्रचार करना और उनकी तरह काम करना है।" यह भी सचमुच कैसा कल्पनातीत गड़बड़-घोटाला है: एक तरफ़ तो उत्तेजनात्मक आतंकवादी कार्य तथा "औसत मजदूरों के संगठन" के साथ-साथ यह राय कि स्थानीय अख़बार जैसी "थोड़ी और ठोस" चीज के गिर्द लोगों को जमा करना कहीं "ज्यादा आसान" है और दूसरी तरफ़, यह ख़याल कि "इस वक़्त" एक अखिल रूसी संगठन की बात करना कुरसीतोड़ों के विचारों का प्रचार करना है, या स्पष्ट और दो-टूक शब्दों में "इस वक़्त" इस काम के लिए बहुत देरी हो गयी है! लेकिन फिर "स्थानीय अख़बारों के व्यापक संगठन" का क्या होगा, प्रिय नदेज्दिन महाशय, क्या उसके लिए बहुत देरी नहीं हो गयी है? और इस दृष्टिकोण के साथ *ईस्क्रा* के दृष्टिकोण तथा कार्यनीति की तुलना कीजिये: उत्तेजनात्मक आतंकवादी कार्य की बात बकवास है, औसत मजदूरों का संगठन बनाने और स्थानीय अख़बारों के **व्यापक** संगठन की बात करने का मतलब "अर्थवाद" के लिए एकदम दरवाज़ा खोल देना है। हमें क्रांतिकारियों के एक ही अखिल रूसी संगठन की बात करनी चाहिए और जब तक वह सच्ची चढ़ाई—काग़ज़ी चढ़ाई नहीं—शुरू नहीं हो जाती, तब तक उसकी बात करना कभी बहुत देर की चीज न होगी।

Scanned by CamScanner

नदेज्दिन ने आगे लिखा है: "हां, जहां तक संगठन का संबंध है, परिस्थिति बहुत अच्छी हरगिज़ नहीं है। हां, *ईस्क्रा* का यह कहना बिलकुल सही है कि हमारे सैनिकों में से अधिकांश स्वयंसेवक तथा विद्रोही हैं... हमारी ताक़त की हालत का ऐसा संतुलित चित्र उपस्थित करके आपने एक अच्छा काम किया है। पर इसके साथ-साथ आप यह क्यों भूल जाते हैं कि **भीड़ हमारी क़तई नहीं है** और इसलिए **वह हमसे नहीं पूछेगी** कि लड़ाई कब शुरू की जाये, बल्कि एकदम सीधे जाकर 'विद्रोह' शुरू कर देगी... जब भीड़ खुद अपनी स्वयंस्फूर्त विनाशकारी शक्ति के साथ फूट पड़ती है, तब यह **संभव** है कि वह उस 'नियमित सेना' को धक्का मारकर रास्ते से हटा दे, जिसके अंदर हम इतने दिनों से बहुत ही व्यवस्थित ढंग का संगठन पैदा करने की कोशिशें लगातार कर रहे थे, पर कभी उसमें **सफल** नहीं हुए थे।" (शब्दों पर ज़ोर हमारा है।)

कैसा आश्चर्यजनक तर्क है! चूंकि "भीड़ हमारी नहीं है", **इसीलिए** तो इसी क्षण "चढ़ाई करने" की चीख-पुकार मचाना मूर्खतापूर्ण और अशोभनीय है, क्योंकि चढ़ाई का मतलब नियमित सेना का हमला होता है, न कि भीड़ का स्वयंस्फूर्त विस्फोट। चूंकि इस बात की **संभावना** है कि भीड़ नियमित सेना को धक्का मारकर रास्ते से हटा दे, इसीलिए आवश्यक है कि हम नियमित सेना में "बहुत ही व्यवस्थित ढंग का संगठन पैदा करने" के अपने काम द्वारा स्वयंस्फूर्त उभार के साथ रहने में सफल हों, क्योंकि जितना ही हम इस प्रकार का संगठन पैदा करने में "सफल" होंगे, उतनी ही अधिक यह संभावना बढ़ती जायेगी कि भीड़ नियमित सेना को धक्का मारकर रास्ते से न हटा पायेगी, बल्कि नियमित सेना भीड़ के आगे-आगे रहकर उसका नेतृत्व करने में कामयाब होगी। नदेज्दिन के दिमाग़ में उलझाव है, क्योंकि वह समझते हैं कि जिस सेना का नियमित रूप से संगठन किया जा रहा है, वह किसी ऐसे काम में लगी हुई है, जो उसको भीड़ से काटकर अलग कर देता है, जबकि सचाई यह है कि वह केवल चौमुखा और सर्वांगीण राजनीतिक आंदोलन चला रही है, याने यह ठीक एक ऐसे काम में लगी हुई है, जो भीड़ की अचेतन विनाशकारी शक्ति को और क्रांतिकारियों के संगठन की सचेतन विनाशकारी शक्ति को **एक-दूसरे के समीप लाता है और उन्हें मिलाकर एक कर देता है।** महानुभावो, आप उन लोगों को दोष देना चाहते हैं, जो निर्दोष हैं, क्योंकि यह तो 'स्वोबोदा' दल है, जो अपने **कार्यक्रम** में

Scanned by CamScanner

आतंकवादी कार्रवाइयों को शामिल करके आतंकवादियों का एक संगठन खड़ा करना चाहता है; और ऐसा संगठन सचमुच हमारे सैनिकों को उस भीड़ के निकट होने से रोकेगा, जो दुर्भाग्य से अभी तक हमारी नहीं है और जो दुर्भाग्यवश हमसे अभी यह नहीं पूछती, या कभी-कभार ही पूछती है कि लड़ाई कब और कैसे शुरू की जाये।

ईस्क्रा को भयभीत करने की कोशिश में नदेज्दिन आगे कहते हैं: "जिस तरह हम हाल की घटनाओं के समय चूक गये, जो निर्मेघ आकाश से वज्रपात के समान हम पर टूट पड़ी थीं, उसी तरह हम स्वयं क्रांति के समय भी चूक जायेंगे।" इस वाक्य पर उपरोक्त वाक्यों के प्रसंग में विचार कीजिये, तो एकदम स्पष्ट हो जायेगा कि *स्वोबोदा* ने जिस "क्रांति की पूर्ववेला के" विशेष "दृष्टिकोण" का आविष्कार किया है, वह कितना मूर्खतापूर्ण है।* स्पष्ट शब्दों में कहा जाये, तो इस विशेष "दृष्टिकोण" का निचोड़ यह निकलता है: "अब" बहस करने और तैयारी करने का समय नहीं रह गया है। ओ, "साहित्यिकपने" के आदरणीय विरोधी, यदि बात ऐसी ही है, तो फिर "सिद्धांत** तथा कार्यनीति के प्रश्नों

---

* *क्रांति की पूर्ववेला*, पृ० ६२।

** और हां, "सिद्धांत के प्रश्नों के" अपने "सिंहावलोकन" में ल० नदेज्दिन ने सिद्धांत के प्रश्नों के संबंध में निम्नलिखित उद्धरण के सिवा प्राय: कोई योग नहीं दिया है, और यह उद्धरण "क्रांति की पूर्ववेला के दृष्टिकोण" से एक बहुत अजीब चीज़ है: "कुल मिलाकर देखा जाये, तो इस समय हमारे लिए बर्नस्टीनवाद की तीव्रता कम होती जा रही है, और उसी तरह इस सवाल का महत्व भी घटता जा रहा है कि क्या श्री अदामोविच ने यह साबित कर दिया है कि श्री स्त्रूवे सम्मानपूर्वक अवकाश पाने के अधिकारी हैं, या क्या इसके विपरीत श्री स्त्रूवे श्री अदामोविच का खंडन करेंगे और इस्तीफ़ा देने से इनकार कर देंगे—सच्ची बात यह है कि अब इन चीजों से कोई अंतर नहीं पड़ता, क्योंकि क्रांति की वेला आ पहुंची है" (पृ० ११०)। सिद्धांत के सवाल पर ल० नदेज्दिन के मन में कितनी असीम उपेक्षा है, इसका इससे अच्छा उदाहरण दूसरा नहीं मिल सकता। हम "क्रांति की पूर्ववेला" की घोषणा कर चुके हैं, **इसलिए** अब इससे "कोई अंतर नहीं पड़ता" कि कट्टरपंथी लोग आलोचकों को मार भगाने में कामयाब होंगे या नहीं!! हमारे ये विद्वान यह नहीं देख पाते कि आलोचकों से हमने जो सैद्धांतिक लड़ाइयां लड़ी है, उनके नतीजों की हमें ठीक क्रांति के दौरान ही आवश्यकता होगी, ताकि हम उन लोगों की **व्यावहारिक** प्रस्थापनाओं का भी दृढ़ता के साथ मुक़ाबला कर सकें।

Scanned by CamScanner

पर" १३२ पृष्ठों की एक पुस्तिका लिखने से क्या लाभ था? आपके विचार में क्या "क्रांति की पूर्ववेला का दृष्टिकोण" रखनेवालों के लिए इससे कहीं अधिक शोभनीय बात यह न होती कि वे १,३२,००० परचे निकालते और उनमें केवल इस तरह की संक्षिप्त ललकार रहती: "उनकी पिटाई कर दो!"?

जो लोग देशव्यापी राजनीतिक आंदोलन को *ईस्क्रा* की तरह अपने कार्यक्रम, **अपनी कार्यनीति और अपने संगठनात्मक कार्य** की आधारशिला बनाते हैं, उन्हें इस बात का सबसे कम खतरा होता है कि वे क्रांति को देखने से चूक जायेंगे। जो लोग सारे रूस में एक अखिल रूसी अखबार से संबद्ध संगठन का जाल बुनने के काम में लगे हुए हैं, वे वसंत की घटनाओं को देखने से चूकना तो रहा दूर, उलटे उनकी बदौलत हम इन घटनाओं की भविष्यवाणी भी कर सके। न ही ये लोग उन प्रदर्शनों को देखने से चूके, जिनका *ईस्क्रा* के अंक १३ और १४ में वर्णन किया गया था,[103] बल्कि उन्होंने इन प्रदर्शनों में भाग लिया था और इस बात को साफ़ तौर पर समझकर भाग लिया था कि अपने आप उठती हुई भीड़ की मदद करना उनका कर्त्तव्य है; और उसके साथ ही साथ उन्होंने अखबार के ज़रिए रूस के सभी साथियों को इन प्रदर्शनों का अधिक घनिष्ठ परिचय प्राप्त करने तथा उनके अनुभव से लाभ उठाने में मदद दी थी। यदि ये लोग जीवित रहे, तो वे उस क्रांति के समय भी नहीं चूकेंगे, जिसमें सबसे पहले और सबसे अधिक इस बात की आवश्यकता होगी कि हममें आंदोलन करने का काफ़ी अनुभव हो, प्रत्येक विरोध का (सामाजिक-जनवादी ढंग से) समर्थन करने की योग्यता हो, और स्वयंस्फूर्त आंदोलन को उसके मित्रों की ग़लतियों और शत्रुओं के फंदों से बचाते हुए संचालित करने की क्षमता हो!

इस प्रकार हम अब उस अंतिम कारण पर आ जाते हैं, जो हमें एक समान अखबार के लिए मिल-जुलकर काम करने के आधार पर, एक अखिल रूसी अखबार के गिर्द संगठन की योजना पर इतना ज़ोर देने के लिए विवश कर रहा है। केवल ऐसा संगठन ही उस लचकीलेपन की गारंटी कर सकता है, जिसका एक जुझारू सामाजिक-जनवादी संगठन में होना आवश्यक है, अर्थात यह योग्यता कि संघर्ष की तेजी से बदलती हुई नाना प्रकार की परिस्थितियों के अनुरूप वह तेजी से अपने को बदलता

Scanned by CamScanner

जाये, कि "एक ओर तो जब किसी दुश्मन की ताक़त अपने से बहुत ज्यादा हो और जब उसने अपनी सारी शक्ति एक स्थान पर लगा रखी हो, तब वह खुली लड़ाई से बच जाये, और दूसरी ओर, वह इस दुश्मन की ढीलेपन से फ़ायदा उठा सके और उस पर ऐसे समय और ऐसे स्थान पर हमला करे, जब और जहां दुश्मन को उसकी सबसे कम आशंका हो।"* यह सचमुच एक बड़ी ग़लती होगी, यदि हम केवल विस्फोटों और सड़कों पर फूट पड़नेवाले संघर्षों की आशा से, या केवल "नीरस दैनिक संघर्ष की प्रगति" के आधार पर अपना पार्टी संगठन खड़ा करेंगे। हमें तो अपना रोज़मर्रा का काम **हमेशा** चलाते जाना और सदा हर बात के लिए तैयार रहना है, क्योंकि बहुधा यह बताना असंभव होता है कि विस्फोटों का काल कब समाप्त होगा और कब उसकी जगह शांति का काल आरंभ होगा। जब ऐसे मामले में पहले से कुछ कह सकना संभव भी हो, तब भी हम अपनी इस दूरदर्शिता से लाभ न उठा पायेंगे और संगठन को फिर से नहीं गढ़ सकेंगे, क्योंकि एक ऐसे देश में, जहां निरंकुश शासन क़ायम है, घटना-प्रवाह में ये परिवर्तन इसलिए आश्चर्यजनक तेज़ी से होते हैं कि कभी-कभी तो वे जांनिसार[104] द्वारा रात को एक बार छापा मारे

---

* *ईस्क्रा*, अंक ४: *कहां से शुरू करें?*। नदेज्दिन ने लिखा है: "क्रांतिकारी संस्कृतिवादी, जो क्रांति की पूर्ववेला का दृष्टिकोण नहीं मानते, इस बात से ज़रा भी चिंतित नहीं हैं कि उन्हें अभी एक दीर्घ काल तक काम करना पड़ेगा" (पृ० ६२)। हमारा जवाब यह है: यदि हम **एक दीर्घ काल** तक काम करने के वास्ते ऐसी राजनीतिक कार्यनीति और संगठनात्मक योजना तैयार नहीं कर पाते, जो साथ ही **ठीक इस कार्य की प्रतिक्रिया** में सभी आकस्मिकता के समय, घटना-प्रवाह में हर तेज़ी के समय अपनी चौकी पर होने तथा अपने कर्त्तव्य की पूर्ति के लिए हमारी पार्टी की तत्परता सुनिश्चित कर सकें, तो हम अपने को महज़ निकम्मे राजनीतिक दुस्साहसिक सिद्ध करेंगे। नदेज्दिन ने अभी कल ही अपने को सामाजिक-जनवादी कहना शुरू किया है, और केवल वही यह भूल सकते हैं कि सामाजिक-जनवाद का लक्ष्य सारी मानवता के जीवन की परिस्थितियों में मौलिक परिवर्तन करना है और इसलिए किसी सामाजिक-जनवादी को इस सवाल से "चिंतित" होने का अधिकार नहीं है कि उसके काम को पूरा होने में कितना समय लगेगा।

Scanned by CamScanner

जाने से ही संबंधित होते हैं। और खुद क्रांति को भी एक कार्य या घटना हरगिज़ नहीं समझना चाहिए (जैसा कि नदेज्दिन जैसे लोग संभवत: समझते हैं); वह तो एक ऐसा क्रम होता है, जिसमें कमोबेश ज़ोरदार विस्फोट और न्यूनाधिक निश्चल शांति के काल बारी-बारी से बहुत जल्दी-जल्दी आते रहते हैं। इस कारण हमारे पार्टी संगठन की गतिविधियों का प्रधान तत्व, इस गतिविधि का केंद्र एक ऐसा काम होना चाहिए, जो ज़्यादा ज़ोरदार विस्फोट के काल में भी संभव तथा आवश्यक हो और पूर्ण शांति के काल में भी, अर्थात उसे राजनीतिक आंदोलन का ऐसा काम होना चाहिए, जो सारे रूस में फैला हो, जो जीवन के सभी पहलुओं पर प्रकाश डाले और जो जनता के अधिक से अधिक व्यापक हिस्सों के बीच हो। परंतु आज के रूस में एक काफ़ी जल्दी-जल्दी निकलनेवाले अखिल रूसी अखबार के अभाव में ऐसे काम की **कल्पना भी नहीं की जा सकती।** इस अखबार के चारों ओर जो संगठन अपने आप खड़ा होगा, उसके **सहयोगियों** का (यहां इस शब्द का हम उसके अधिक व्यापक अर्थ में प्रयोग कर रहे हैं, अर्थात अखबार के लिए काम करनेवाले सभी लोगों का) जो संगठन बनेगा, वह क्रांतिकारी कार्य की घोर "मंदी" के काल में पार्टी के सम्मान, प्रतिष्ठा और निरंतरता की रक्षा करने से लेकर **देशव्यापी सशस्त्र विद्रोह** की तैयारी करने, उसका समय निश्चित करने और उसे सफल बनाने तक **हर चीज़ के लिए** तैयार रहेगा।

ज़रा एक ऐसी साधारण घटना का चित्र अपने सामने रखिये, जो रूस में अकसर हुआ करती है—एक या बहुत-से स्थानों में हमारे साथियों की पूरी धर-पकड़। हमारे **तमाम** स्थानीय संगठन चूंकि **एक** समान और संयुक्त काम नियमित रूप से नहीं करते, इसलिए पुलिस के ऐसे हमलों के परिणामस्वरूप काम कई महीनों के लिए ठप हो जाता है। लेकिन यदि सभी स्थानीय संगठनों के सामने एक समान काम हो, तो बहुत बड़ा हमला होने पर भी दो या तीन मुस्तैद साथी चंद हफ़्तों के अंदर ही युवकों के उन नये मंडलों का संपर्क समान केंद्र के साथ क़ायम कर सकते हैं, जो, जैसा कि सभी जानते हैं, आजकल भी बड़ी जल्दी पैदा हो जाते हैं। जब वह समान काम, जिसमें धर-पकड़ के कारण बाधा पड़ जाती है, सबके समक्ष स्पष्ट हो जाता है,

Scanned by CamScanner

तो नये मंडल और भी तेजी से बन सकेंगे और केंद्र से संपर्क क़ायम कर सकेंगे।

दूसरी ओर, एक जन-विद्रोह का चित्र भी अपने सामने रखिये। अब तो संभवत: हर आदमी मानेगा कि हमें इस संभावना को ध्यान में रखना और उसके लिए तैयारी करनी चाहिए। लेकिन **कैसे?** निश्चय ही केंद्रीय समिति सभी स्थानों में विद्रोह की तैयारी करने के लिए अपने एजेंट नियुक्त नहीं कर सकती! यदि हमारे पास एक केंद्रीय समिति होती भी, तब भी वह रूस की वर्तमान परिस्थिति में इस प्रकार के एजेंट नियुक्त करके कुछ भी न बना पाती। इसके विपरीत एक समान अख़बार को क़ायम करने और उसका वितरण करने के दौरान एजेंटों* का जो जाल अपने आप बनेगा, उसे "हाथ पर हाथ रखकर बैठे" विद्रोह के आह्वान की प्रतीक्षा नहीं करनी होगी, बल्कि वह नियमित ढंग से वह काम करेगा, जो विद्रोह होने पर सफलता की अधिकतम संभावना सुनिश्चित करेगा। इस प्रकार का काम मज़दूर जनता के अधिक से अधिक व्यापक हिस्सों से और उन तमाम लोगों से हमारे संपर्क को मज़बूत करेगा, जो निरंकुश शासन से असंतुष्ट हैं, जिनके साथ संपर्क मज़बूत करना विद्रोह के लिए बहुत आवश्यक है। यही वह काम है, जो हममें आम राजनीतिक

---

* हाय, हाय! मेरे मुंह से फिर वह भयानक शब्द "एजेंट" निकल गया, जो मार्तीनोव जैसे लोगों के जनवादी कानों को इतना बुरा लगता है! मुझे आश्चर्य है कि जब पिछली सदी के आठवें दशक के वीरों को यह शब्द बुरा नहीं लगता था, तो फिर दसवें दशक के इन नौसिखुओं को उससे इतनी चिढ़ क्यों है? मुझे यह शब्द पसंद है, क्योंकि वह बहुत साफ़ तौर पर और दो-टूक ढंग से वह **समान ध्येय** लक्षित करता है, जिसे सारे एजेंट अपने विचारों तथा कार्यों को अर्पित कर देते हैं। यदि मुझे इस शब्द की जगह किसी और शब्द का प्रयोग करना ही पड़े, तो एक ही ऐसा शब्द है, जिसे मैं इस्तेमाल करता हूं, और वह है "सहयोगी", पर उससे कुछ साहित्यिकपने और अस्पष्टता की बू आती है। हमें जिस चीज की आवश्यकता है, वह है एजेंटों का एक सैनिक संगठन। परंतु मार्तीनोव जैसे अनेक लोग (विशेषकर विदेशों में), जिन्हें "एक-दूसरे को तरक़्क़ी देकर सेनानायक नियुक्त करने" में विशेष आनंद आता है, शायद "पासपोर्ट दिलानेवाला एजेंट" न कहकर यह कहना पसंद करेंगे: "क्रांतिकारियों को पासपोर्ट दिलानेवाले विशेष विभाग का प्रधान", इत्यादि।

Scanned by CamScanner

परिस्थिति का सही-सही मूल्यांकन करने और फलस्वरूप विद्रोह के वास्ते सही समय निश्चित करने की योग्यता बढ़ायेगा। यही वह काम है, जो **सभी** स्थानीय संगठनों को सारे रूस में हलचल पैदा कर देनेवाले एक जैसे राजनीतिक सवालों और घटनाओं का एकसाथ उत्तर देने और इन "घटनाओं" की प्रक्रिया में ज़्यादा ज़ोरदार, एक जैसी और उपयोगी कार्रवाई करने का प्रशिक्षण देगा; विद्रोह तो वास्तव में सरकार के आचरण का समस्त जनता द्वारा सबसे ज़्यादा ज़ोरदार, एक जैसा और उपयोगी "प्रत्युत्तर" ही होता है। अंत में, यही वह काम है, जो रूस भर के तमाम क्रांतिकारी संगठनों को एक-दूसरे के साथ ज़्यादा से ज़्यादा अटूट और साथ ही अधिक से अधिक ऐसे गुप्त संपर्क रखना सिखायेगा, जो **सच्ची** पार्टी एकता को जन्म देंगे—क्योंकि ऐसे संपर्क के अभाव में विद्रोह की योजना पर सामूहिक रूप से विचार करना और विद्रोह के फ़ौरन पहले उसकी तैयारी से संबंधित वे क़दम उठाना असंभव होगा, जिन्हें बहुत ही गुप्त रखना आवश्यक है।

सारांश यह कि "एक अखिल रूसी राजनीतिक अख़बार की योजना" कट्टरता और साहित्यिकपने के रोगों से बीमार कुरसीतोड़ कार्यकर्त्ताओं के दिमाग़ की उपज नहीं है (जैसा कि वे लोग समझते हैं, जिन्होंने इस योजना पर बहुत कम विचार किया है), बल्कि यह विद्रोह के लिए तुरंत और चौमुखी तैयारियां करने की ऐसी अत्यंत व्यावहारिक योजना है, जो साथ ही साथ हमारे रोजमर्रा के साधारण काम को एक क्षण के लिए भी नहीं भुलाती है।

Scanned by CamScanner

निष्कर्ष

रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन के इतिहास को साफ़-साफ़ तीन कालों में बांटा जा सकता है।

पहला काल लगभग दस वर्ष का है—कोई १८८४ से १८९४ तक। यह सामाजिक-जनवाद के सिद्धांत तथा कार्यक्रम के जन्म लेने तथा मज़बूत होने का काल था। रूस में इस नयी प्रवृत्ति के समर्थकों की संख्या उंगलियों पर गिनी जा सकती थी। सामाजिक-जनवाद बिना मज़दूर आंदोलन के था, एक राजनीतिक पार्टी की हैसियत से मानो अभी उसका गर्भ में ही विकास हो रहा था।

दूसरा काल तीन या चार वर्ष का है—१८९४ से १८९८ तक। इस काल में सामाजिक-जनवाद ने एक सामाजिक आंदोलन के रूप में, आम जनता के उभार के रूप में, एक राजनीतिक पार्टी के रूप में रंगमंच पर प्रवेश किया। यह उसके बचपन और किशोरावस्था का ज़माना था। इस काल में बुद्धिजीवियों में सार्वत्रिक रूप से यह भावना फैली कि नरोदवाद से लड़ना चाहिए और मज़दूरों के बीच जाकर काम करना चाहिए, और सभी मज़दूरों में हड़ताल करने की तीव्र भावना उत्पन्न हुई। आंदोलन प्रचंड वेग से आगे बढ़ा। अधिकतर नेता बहुत ही नौजवान थे, जो उस "पैंतीस वर्ष की उम्र" तक भी अभी नहीं पहुंचे थे, जो श्री न० मिख़ाइलोव्स्की की नज़रों में एक तरह की प्राकृतिक सीमांत रेखा है। कम उम्र के होने के कारण ये नेता व्यावहारिक कार्य के लिए अयोग्य साबित हुए और वे आश्चर्यजनक तेज़ी के साथ मैदान से ग़ायब होने लगे। लेकिन उनमें से अधिकतर के कार्य का क्षेत्र बहुत विस्तृत था। उनमें से बहुतों ने अपना क्रांतिकारी चिंतन 'नरोदनाया वोल्या' के समर्थकों के रूप में आरंभ किया था। उनमें

Scanned by CamScanner

से लगभग सभी अपनी युवावस्था में बड़े उत्साह के साथ आतंकवादी वीरों की पूजा किया करते थे। इन वीरतापूर्ण परंपराओं के मुग्धकारी प्रभाव से मुक्त होने के लिए संघर्ष करने की आवश्यकता थी और इस संघर्ष के दौरान उन लोगों से संबंध तोड़ लेने पड़े, जो 'नरोदनाया वोल्या' के प्रति वफ़ादारी पर दृढ़ थे और जिनका नौजवान सामाजिक-जनवादी गहरा सम्मान करते आये थे। संघर्ष ने सामाजिक-जनवादियों को अपने को शिक्षित करने, अलग-अलग प्रवृत्तियों का अवैध साहित्य पढ़ने और वैध नरोदवाद के प्रश्नों पर निकट से विचार करने के लिए मजबूर किया। इस संघर्ष में प्रशिक्षित होकर सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ता मज़दूर आंदोलन में घुसे, उन्होंने मार्क्सवाद के उन सिद्धांतों को, जो ख़ूबी के साथ उनका पथप्रदर्शन कर रहे थे, या निरंकुश शासन का तख़्ता उलटने के काम को "एक क्षण के लिए भी" नहीं भुलाया। १८९८ के वसंत में पार्टी का निर्माण[105] इस काल के सामाजिक-जनवादियों का सबसे महत्वपूर्ण और साथ ही **अंतिम** कार्य था।

तीसरे काल की तैयारी, जैसा कि हम देख चुके हैं, १८९७ में हुई थी और १८९८ में उसने निश्चित रूप से दूसरे काल का स्थान ले लिया था (१८९८—?)। यह फूट, विसर्जन और ढुलमुलपन का काल था। जब आदमी लड़कपन पार करके जवानी में प्रवेश करने को होता है, तो उसकी आवाज़ फट जाती है। इसी प्रकार इस काल में रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन की आवाज़ भी फटने लगी और उसमें एक झूठा स्वर सुनाई देने लगा। एक ओर तो स्त्रूवे और प्रोकोपोविच, बुल्गाकोव और बेरदियायेव जैसे महानुभावों की रचनाओं में, और दूसरी ओर, व० इ० और र० म०, बो० क्रिचेव्स्की और मार्तीनोव जैसे लोगों की रचनाओं में। परंतु केवल नेतागण ही थे, जो इधर-उधर अलग-थलग भटकते फिरते थे और वापस चले जाते थे, खुद आंदोलन तो प्रचंड गति से बढ़ता और विकास करता गया। सर्वहारा संघर्ष मजदूरों के नये हिस्सों तक पहुंचा, पूरे रूस में फैल गया और इसके साथ-साथ उसने अप्रत्यक्ष रूप से विद्यार्थियों में और जनता के दूसरे हिस्सों में भी जनवादी भावना जगायी। परंतु नेताओं की चेतना स्वयंस्फूर्त उभार के विस्तार और वेग

Scanned by CamScanner

के अनुरूप न बढ़ पायी; सामाजिक-जनवादी कार्यकर्त्ताओं में एक नयी क़िस्म के लोगों की बहुतायत हो गयी—इस क़िस्म के पार्टी कार्यकर्त्ताओं की, जिनका प्रशिक्षण केवल "वैध" मार्क्सवादी साहित्य के आधार पर हुआ था, और जन-साधारण की स्वत:स्फूर्तता ने नेताओं से राजनीतिक चेतना की जितनी ज़्यादा मांग की, यह क़िस्म उतनी ही ज़्यादा अपर्याप्त सिद्ध होती गयी। नेतागण न केवल सिद्धांत ("आलोचना की स्वतंत्रता") और व्यवहार ("नौसिखुआपन") के मामले में पिछड़े हुए थे, बल्कि वे तरह-तरह की भारी-भरकम दलीलों के ज़रिए अपने पिछड़ेपन को उचित ठहराने की कोशिश किया करते थे। वैध साहित्य में ब्रेंतानोवादियों ने और अवैध साहित्य में पुछल्लावादियों ने सामाजिक-जनवाद को विकृत करके ट्रेड-यूनियनवाद के स्तर पर पहुंचा दिया था। ख़ास तौर पर जब से सामाजिक-जनवादियों के "नौसिखुएपन" के कारण ग़ैर सामाजिक-जनवादी क्रांतिकारी प्रवृत्तियों में नया जीवन पड़ने लगा, तब से *Credo* के कार्यक्रम पर अमल किया जाने लगा।

यदि पाठकों को यह शिकायत है कि मैंने केवल *राबोचेये देलो* जैसे किसी पत्र की बहुत ज़्यादा विस्तार से चर्चा की है, तो मैं उत्तर में उनसे यह कहूंगा: *राबोचेये देलो* ने "ऐतिहासिक" महत्व प्राप्त कर लिया था, क्योंकि इस तीसरे काल की मूल भावना को वह सबसे अच्छे ढंग से व्यक्त करता था।* इस काल में कैसी फूट और कैसा ढुलमुलपन था, लोग किस तरह "आलोचना", "अर्थवाद" और आतंकवाद की अनेक बातों को मान लेने के लिए तैयार हो जाते थे, इसके बहुत अच्छे उदाहरण सुसंगत र० म० की रचनाओं

* पाठक की इस शिकायत के जवाब में मैं यह जर्मन कहावत भी दुहरा सकता हूं: Den Sack schlägt man, den Esel meint man (तुम पीट रहे हो बोरे को, पर असल में मारना चाहते हो गधे को)। अकेला *राबोचेये देलो* ही नहीं, बल्कि आम व्यावहारिक कार्यकर्त्ता तथा सिद्धांतकार भी "आलोचना" के फ़ैशन की लहर में बह गये थे। वे स्वयंस्फूर्ति के सवाल पर गड़बड़ा गये थे और हमारे राजनीतिक तथा संगठनात्मक कार्यभारों की सामाजिक-जनवादी धारणा को तिलांजलि देकर ट्रेड-यूनियनवादी धारणा पर उतर आये थे।

Scanned by CamScanner

में उतने नहीं मिलते, जितने कि हवा के साथ रुख बदलनेवाले किनेस्की और मार्तीनोव जैसे लोगों की कृतियों में मिलते हैं। इस काल की प्रधान विशेषता यह नहीं है कि किसी "परम" का कोई पुजारी व्यावहारिक कार्य की ओर घोर उपेक्षा की दृष्टि से देखता था, बल्कि इस काल की प्रधान विशेषता बहुत ही घटिया क़िस्म के छोटे-छोटे कामों में व्यस्त रहना और साथ ही सिद्धांत की एकदम अवहेलना करना है। इस काल के महारथियों को "महान सूत्रों" को एकदम ठुकरा देने का इतना शौक नहीं था, जितना उनको बिगाड़कर भोंडा करने का था: उनके हाथों में पड़कर वैज्ञानिक समाजवाद एक अविभाज्य क्रांतिकारी सिद्धांत नहीं रह गया, बल्कि वह एक ऐसी पंचमेल खिचड़ी बन गया, जिसमें जर्मनी में प्रकाशित होनेवाली हर नयी पाठ्य-पुस्तक की बातों को "बेखौफ़" डाल दिया जाता था; "वर्ग संघर्ष" का नारा इन लोगों को और भी व्यापक तथा अधिक ज़ोरदार कार्य करने के लिए प्रेरित नहीं करता था, बल्कि वह उनके लिए थके हुओं को आराम पहुंचानेवाला शरबत बन गया था, क्योंकि "आर्थिक संघर्ष का राजनीतिक संघर्ष से अटूट संबंध होता है"; पार्टी के विचार ने क्रांतिकारियों का एक जुझारू संगठन बनाने के आह्वान का काम नहीं दिया, बल्कि उसे एक प्रकार की "क्रांतिकारी नौकरशाही" को और बच्चों की तरह "जनवादी" रूपों का खेल खेलने को उचित ठहराने के लिए इस्तेमाल किया गया।

हम नहीं जानते कि यह तीसरा काल कब समाप्त होगा और चौथा कब आरंभ होगा (लेकिन बहुत-से लक्षण ऐसे अवश्य दिखाई देने लगे हैं, जो चौथे काल के आरंभ होने की सूचना दे रहे हैं)। हम इतिहास के क्षेत्र से वर्तमान के क्षेत्र में और कुछ हद तक भविष्य के क्षेत्र में प्रवेश कर रहे हैं। लेकिन हमारा दृढ़ विश्वास है कि चौथे काल में जुझारू मार्क्सवाद मज़बूत होगा, रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन संकट से निकलकर पूर्ण युवावस्था की शक्ति प्राप्त करेगा, और सबसे अधिक क्रांतिकारी वर्ग का असली हरावल अवसरवादी चेंडावल को "प्रतिस्थापित" करेगा।

Scanned by CamScanner

इस प्रकार की "प्रतिस्थापना" का नारा देने के अर्थ में और ऊपर जो कुछ कहा जा चुका है, उसका मानो सारांश निकालते हुए, हम "क्या करें?" प्रश्न का यह संक्षिप्त उत्तर दे सकते हैं:

तीसरे काल का अंत करो!

Scanned by CamScanner

ईस्क्रा और *राबोचेये देलो* को एक करने का प्रयत्न

ईस्क्रा ने *राबोचेये देलो* के साथ संगठनात्मक संबंधों के मामले में जो कार्यनीति अपनायी है और जिसका उसने सुसंगत ढंग से पालन किया है, अभी उसका वर्णन करना बाक़ी है। *ईस्क्रा* के अंक १ में प्रकाशित *विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ में फूट* शीर्षक लेख में इस कार्यनीति की पूरी व्याख्या की जा चुकी है। शुरू से ही हमने यह दृष्टिकोण अपनाया था कि हमारी पार्टी की पहली कांग्रेस में जिस **असली** 'विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' को विदेशों में पार्टी के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार किया गया था, वह दो संगठनों में **बंट गया था;** कि अभी वह सवाल तय होना बाक़ी है कि विदेशों में हमारी पार्टी का प्रतिनिधि कौन है, क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी ब्यूरो[106] में रूस का प्रतिनिधित्व करने के लिए जब पेरिस की अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस के समय विभाजित 'संघ' के दोनों भागों से एक-एक आदमी को लेकर दो प्रतिनिधि चुने गये थे, तब वास्तव में इस प्रश्न को केवल अस्थायी तौर पर और कुछ विशेष परिस्थितियों के लिए ही तय किया गया था। हमने ऐलान किया था कि *राबोचेये देलो* बुनियादी तौर पर **ग़लत है;** सिद्धांत की दृष्टि से हमने ज़ोरदार तरीक़े से 'श्रम-मुक्ति' दल का पक्ष लिया था, लेकिन साथ ही हमने इस फूट की तफ़सील में जाने से इनकार कर दिया था और यह स्वीकार किया था कि शुद्ध व्यावहारिक कार्य के क्षेत्र में 'संघ' की बड़ी सेवाएं हैं।*

* फूट के बारे में हमारी राय केवल इस विषय का साहित्य पढ़ने

Scanned by CamScanner

अतएव हमारी नीति, एक हद तक, प्रतीक्षा करने की नीति थी: हमने रूस के अधिकतर सामाजिक-जनवादियों में उस समय प्रचलित इस मत को एक हद तक मान लिया था कि "अर्थवाद" के कट्टर से कट्टर विरोधी भी 'संघ' के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम कर सकते हैं, क्योंकि 'संघ' कई बार सिद्धांत के मामले में 'श्रम-मुक्ति' दल के साथ अपनी सहमति प्रकट कर चुका था और ऊपर से देखने में यह नहीं मालूम पड़ता था कि वह सिद्धांत और कार्यनीति के बुनियादी प्रश्नों के विषय में अपने अलग रुख का दावा करता है। हमारी नीति अप्रत्यक्ष रूप से इस बात से सही साबित हो गयी कि लगभग ईस्क्रा के पहले अंक के निकलने के साथ ही (दिसंबर, १९००) तीन सदस्य 'संघ' से अलग हो गये और उन्होंने तथाकथित 'पहल करनेवालों का दल' बना लिया तथा फिर से समझौता कराने की बातचीत में मध्यस्थ के रूप में (१) ईस्क्रा संगठन के विदेश विभाग को, (२) 'सोत्सिआल-देमोक्रात' क्रांतिकारी संगठन[107] को और (३) 'संघ' को अपनी सेवाएं अर्पित कीं। पहले दो संगठनों ने तुरंत अपनी सहमति की घोषणा कर दी, **तीसरे ने सुझाव को ठुकरा दिया।** यह सच है कि जब पिछले वर्ष "एकता" कांग्रेस[108] में एक वक्ता ने ये बातें बतायीं, तो 'संघ' की प्रबंध-समिति के एक सदस्य ने घोषणा की कि 'संघ' ने वह सुझाव केवल इसलिए ठुकराया था कि वह 'पहल करनेवालों के दल' की सदस्यता-संरचना से असंतुष्ट था। इस सफ़ाई को उद्धृत करना तो मैं अपना कर्तव्य समझता हूं, पर मैं यह कहने से नहीं चूक सकता कि यह कोई संतोषजनक सफ़ाई नहीं है: जब यह मालूम हो गया था कि दो संगठन बातचीत चलाने के लिए तैयार हो गये हैं, तो 'संघ' उनके साथ किन्हीं और लोगों को बीच में डालकर, या खुद सीधे बात शुरू कर सकता था।

१९०१ के वसंत में *जार्या* (अंक १, अप्रैल) और *ईस्क्रा* (अंक ४, मई), दोनों ने *राबोचेये देलो* के साथ खुली बहस शुरू की।* *ईस्क्रा* ने खास तौर पर *राबोचेये देलो* की *ऐतिहासिक*

पर ही नहीं, बल्कि हमारे संगठन के कई सदस्यों ने विदेश जाकर जो जानकारी हासिल की थी, उस पर भी आधारित थी।

* देखें व्ला० इ० लेनिन, *कहां से शुरू करें?*।—सं०

Scanned by CamScanner

करवट की आलोचना की थी, जिसने अपने **अप्रैल** के परिशिष्ट में, याने वसंत की घटनाओं के बाद, आतंकवादी कार्रवाइयों तथा "खून का बदला खून से लेने" की उन अपीलों के मामले में, जिनमें उस वक़्त बहुत-से लोग बह गये थे, ढुलमुलपन का सबूत दिया था। इस आलोचना-प्रत्यालोचना के बावजूद 'संघ' ने "समझौता करनेवालों" के एक नये दल[109] को बीच में डालकर पुनः समझौते की बातचीत चलाना स्वीकार किया। जून में उपरोक्त तीनों संगठनों के प्रतिनिधियों का एक प्रारंभिक सम्मेलन हुआ और उसने उस तफ़सीलवार "उसूली समझौते" के आधार पर एक क़रार का मसौदा तैयार किया, जिसे 'संघ' ने दो *कांग्रेसें* नामक पुस्तिका में और लीग ने *"एकता" कांग्रेस की दस्तावेज़ें* नामक पुस्तिका में प्रकाशित किया।

इस उसूली समझौते से (जिसे ज़्यादा लोग जून सम्मेलन के प्रस्ताव कहते हैं) यह बात एकदम स्पष्ट हो जाती है कि हमने एकता के लिए एक निहायत आवश्यक शर्त यह पेश की थी कि अवसरवाद के प्रत्येक रूप का आम तौर पर और रूसी अवसरवाद के प्रत्येक रूप का ख़ास तौर पर **बहुत ही ज़ोरदार तरीक़े से** विरोध किया जाये। समझौते के पहले पैराग्राफ़ में लिखा है: "हम सर्वहारा के वर्ग संघर्ष में अवसरवाद को लाने की हर कोशिश का विरोध करते हैं—उन कोशिशों का, जो तथाकथित "अर्थवाद", बर्नस्टीनवाद, मिलेरांवाद, आदि के रूप में प्रकट हुई हैं"। "सामाजिक-जनवादी कार्य के क्षेत्र में... क्रांतिकारी मार्क्सवाद के सभी विरोधियों के खिलाफ़ सैद्धांतिक संघर्ष शामिल है" (४, ग); "संगठनात्मक तथा आंदोलनात्मक कार्य के प्रत्येक क्षेत्र में सामाजिक-जनवाद को एक क्षण के लिए भी यह न भूलना चाहिए कि रूसी मजदूर वर्ग का तात्कालिक कार्य निरंकुश शासन का तख़्ता उलटना है" (५, क); ..."आंदोलन, जो केवल उजरती श्रम और पूंजी के रोजमर्रा के संघर्ष के आधार पर ही नहीं होगा" (५, ख); ..."शुद्ध आर्थिक संघर्ष और आंशिक राजनीतिक मांगों के संघर्ष की किसी मंज़िल को... न मानते हुए..." (५, ग); ..."हम आंदोलन के लिए इसे महत्वपूर्ण समझते हैं कि उन प्रवृत्तियों की आलोचना की जाये, जिन्होंने आंदोलन

Scanned by CamScanner

के प्रारंभिक रूपों के आदिम स्वरूप को... और संकुचितपन को एक सिद्धांत बना रखा है" (५, घ)। कोई बिलकुल बाहर का आदमी भी, जिसने इन प्रस्तावों को थोड़ा-बहुत भी ध्यान से पढ़ा है, उनके लिखने के ढंग से ही समझ जायेगा कि उनकी धार ऐसे लोगों के खिलाफ़ रखी गयी थी, जो अवसरवादी और "अर्थवादी" थे, जो एक क्षण के लिए ही सही निरंकुश शासन का तख्ता उलटने का उद्देश्य भूल जाते थे, जो मंज़िलोंवाले सिद्धांत को मानते थे, जो संकुचितपन को ऊंचा उठाकर एक सिद्धांत के स्तर पर पहुंचाते थे, इत्यादि। और जिस किसी को *राबोचेये देलो* के खिलाफ़ 'श्रम-मुक्ति' दल, *ज़ार्या* तथा *ईस्क्रा* द्वारा चलायी गयी बहसों का थोड़ा भी ज्ञान है, वह इस बात में तनिक भी संदेह नहीं कर सकता कि इन प्रस्तावों में एक-एक करके उन तमाम ग़लतियों का खंडन किया गया था, जिनमें *राबोचेये देलो* फंस गया था। अतएव जब 'संघ' के एक सदस्य ने "एकता" कांग्रेस में कहा कि *राबोचेये देलो* के अंक १० में जो लेख छपे हैं, वे 'संघ' की किसी नयी "ऐतिहासिक करवट" के कारण नहीं प्रकाशित किये गये हैं, बल्कि प्रस्तावों के हद से ज़्यादा "हवाईपन"* के कारण उनकी ज़रूरत पड़ी थी, तो एक वक्ता ने उसका मज़ाक़ उड़ाकर बिलकुल सही काम किया। उसने कहा कि प्रस्ताव क़तई हवाई नहीं हैं, इसके विपरीत वे अविश्वसनीय रूप में ठोस हैं: उन पर एक नज़र डालते ही मालूम हो जाता है कि वे "किसी को पकड़ने के लिए" लिखे गये हैं।

इस वाक्य को लेकर कांग्रेस में एक अभिलाक्षणिक घटना हुई। एक तरफ़ तो बो० क्रिचेव्स्की ने "पकड़ने" शब्द को पकड़ लिया, उनका ख़याल था कि यह शब्द ग़लती से मुंह से निकल गया है और उसने हमारे बुरे इरादों को खोल दिया है ("दूसरों को फंसाने के लिए जाल बिछाना")। वह भावात्मक ढंग से बोले: "ये लोग किसको पकड़ना चाहते हैं, किसको?"। तभी प्लेखानोव ने व्यंग करते हुए जड़ दिया: "हां, सचमुच किसको?"। बो० क्रिचेव्स्की ने जवाब दिया: "मैं साथी प्लेखानोव की कुशाग्रता की

* *दो कांग्रेसें* में, पृ० २५ पर ये दावे फिर दोहराये गये हैं।

Scanned by CamScanner

कमी के कारण उन्हें मदद दे दूं, उन्हें समझा दूं कि यह जाल ***राबोचेये देलो* के संपादकमंडल** के लिए बिछाया गया था" (आम हंसी), "पर हमने अपने को पकड़ में नहीं आने दिया!" (बाईं ओर से एक आवाज़: "आप लोगों के लिए यह तो और भी बुरा हुआ!")। दूसरी तरफ़, 'बोर्बा' दल (समझौता करानेवालों का एक दल) के एक सदस्य ने प्रस्तावों में 'संघ' के संशोधनों का विरोध करते हुए और हमारे वक्ता का समर्थन करने की इच्छा से कहा कि यह बिलकुल ज़ाहिर बात है कि "पकड़ना" शब्द बहस की गरमी में मुंह से संयोग से निकल गया था।

जहां तक मेरा संबंध है, मैं समझता हूं कि जिस वक्ता ने इन विचाराधीन शब्दों का प्रयोग किया था, वह इस "समर्थन" से खुश नहीं होगा। मेरा विचार है कि "किसी को पकड़ने के लिए" शब्द "मज़ाक़ में कहे गये सच्चे शब्द" थे: हमने *राबोचेये देलो* पर हमेशा ढुलमुलपन और अस्थिरता का आरोप लगाया है और स्वभावतया हमारे लिए यह **आवश्यक था** कि हम उसे **पकड़ने** की कोशिश करें, ताकि उसका यह ढुलमुलपन बंद हो जाये। इसमें बुरे इरादे का भाव लेशमात्र भी नहीं था, क्योंकि यहां तो हम सिद्धांतों की अस्थिरता पर बहस कर रहे थे। हम 'संघ' को ऐसे भ्रातृत्वपूर्ण ढंग से "पकड़ने" में सफल हो गये* कि खुद बो० क्रिचेव्स्की ने और 'संघ' की

---

* बिलकुल यही बात है: जून के प्रस्तावों की भूमिका में हमने कहा था कि रूसी सामाजिक-जनवाद ने कुल मिलाकर हमेशा 'श्रम-मुक्ति' दल के सिद्धांतों का समर्थन किया है और 'संघ' की विशेष सेवा प्रकाशन तथा संगठन के क्षेत्र में निहित रही है। दूसरे शब्दों में, हमने यह घोषणा की थी कि हम बीती हुई तमाम बातों को भूल जाने के लिए और 'संघ' के साथियों ने (आंदोलन के लिए) जो उपयोगी कार्य किया है, उसे स्वीकार करने के लिए पूरी तरह तैयार हैं, **बशर्ते** कि 'संघ' उस ढुलमुलपन को बंद कर दे, जिसे हमने "पकड़ने" की कोशिश की थी। जो भी निष्पक्ष व्यक्ति जून के प्रस्तावों को पढ़ेगा, वह उसका केवल यही मतलब लगायेगा। यदि 'संघ' (अंक १० के लेखों तथा संशोधनों में) "अर्थवाद" की ओर नयी करवट लेकर, फूट **पैदा कर देने** के बाद उन बातों को लेकर, जो हमने उसकी सेवाओं के बारे में कही थीं, हम पर संजीदगी से दोरंगी बातें करने का आरोप लगाता है (*दो कांग्रेसें*, पृ० ३०), तो इस प्रकार के आरोप पर हम केवल मुस्करा सकते हैं।

Scanned by CamScanner

प्रबंध-समिति के एक दूसरे सदस्य ने भी जून के प्रस्तावों पर हस्ताक्षर कर दिये।

राबोचेये देलो के अंक १० में जो लेख प्रकाशित हुए है (हमारे साथियों ने इस अंक को पहली बार कांग्रेस में पहुंचने पर, बैठकों के शुरू होने के चंद रोज पहले, देखा), उनसे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि गरमी और पतझड़ के बीच के काल में 'संघ' ने एक नयी करवट ली थी: अर्थवादी फिर ऊपर आ गये थे और संपादकमंडल, जो हवा के हर झोंके के साथ रुख बदलता था, फिर "सबसे कट्टर बर्नस्टीनवादियों" और "आलोचना की स्वतंत्रता" की हिमायत करने, "स्वयंस्फूर्ति" का समर्थन करने और मार्तीनोव के मुंह से हमारे राजनीतिक प्रभाव के क्षेत्र को (इस प्रभाव को और गूढ़ बनाने के तथाकथित उद्देश्य से) "सीमित करने के सिद्धांत" के उपदेश सुनाने निकल पड़ा था। एक बार फिर पार्वुस की यह उक्ति सत्य साबित हो गयी कि अवसरवादी को किसी सूत्र के द्वारा पकड़ना बहुत कठिन होता है। अवसरवादी तो **किसी भी** सूत्र पर हस्ताक्षर कर सकता है और फिर उतनी ही आसानी से उसे त्याग भी सकता है, क्योंकि अवसरवाद निश्चित और दृढ़ सिद्धांतों के अभाव का ही तो नाम है। आज अवसरवादियों ने यह ऐलान किया है कि वे अवसरवाद को आंदोलन के अंदर लाने की **तमाम** कोशिशों का विरोध करेंगे, **तमाम** संकीर्णता का विरोध करेंगे, उन्होंने बड़ी गंभीरता के साथ वचन दिया है कि वे "निरंकुश शासन का तख्ता उलटने के उद्देश्य को कभी एक क्षण के लिए भी नहीं भूलेंगे" और "केवल उजरती श्रम और पूंजी के बीच रोज़मर्रा के संघर्ष के आधार पर ही आंदोलन नहीं चलायेंगे", आदि, आदि। पर कल ही वे बात करने का अपना ढंग बदल देंगे और स्वयंस्फूर्ति तथा नीरस दैनिक संघर्ष की प्रगति की हिमायत करने के बहाने या ऐसी मांगों को, जिनसे कोई ठोस नतीजा निकलने की उम्मीद हो, बढ़ावा देने के बहाने एक बार फिर अपनी पुरानी चाल चलने लगेंगे। यह बात बार-बार ज़ोर देकर कहते रहने से कि अंक १० के लेखों में "'संघ' ने कोई ऐसी बात न तो देखी थी और न अब देखता है, जिससे यह प्रकट होता हो कि 'संघ' ने सम्मेलन में स्वीकार किये गये मसौदे के आम सिद्धांतों को किसी तरह त्याग दिया है" (*दो कांग्रेसें*,

Scanned by CamScanner

पृ० २६), 'संघ' केवल यह जता रहा है कि मतभेद की मूल बातों को समझने की उसमें या तो तनिक भी योग्यता नहीं है, या फिर इच्छा नहीं है।

राबोचेये देलो के अंक १० के निकलने के बाद हम केवल एक यही कोशिश कर सकते थे कि हम एक आम बहस छेड़ दें, जिससे यह पता लग सके कि क्या 'संघ' के सभी सदस्य इन लेखों से और उसके संपादकमंडल से सहमत हैं। 'संघ' इसी बात को लेकर हमसे ख़ास तौर पर नाराज़ है और हम पर उसकी पांतों में फूट डालने और दूसरे लोगों के मामलों में टांग अड़ाने की कोशिश करने, आदि का आरोप लगा रहा है। ज़ाहिर है कि ये आरोप निराधार हैं, क्योंकि जब एक ऐसा संपादकमंडल चुना गया हो, जो हवा के हर झोंके के साथ, वह कितना ही हलका क्यों न हो, "रुख़ बदलता" है, तब सब कुछ हवा के रुख़ पर निर्भर करता है, और हमने इस रुख़ की व्याख्या कुछ ऐसी गुप्त बैठकों में की थी, जिनमें सिवा उन संगठनों के सदस्यों के और कोई न था, जो एक होना चाहते थे। जून के प्रस्तावों में जो संशोधन 'संघ' के नाम पर पेश किये गये हैं, उनसे समझौते की आशा का अंतिम लेश भी जाता रहा है। ये संशोधन इस बात के दस्तावेज़ी सबूत हैं कि 'संघ' ने अर्थवाद की ओर एक नयी करवट ली है और उसके अधिकतर सदस्य *राबोचेये देलो* के अंक १० से सहमत हैं। संशोधनों में कहा गया था कि जहां अवसरवाद के विभिन्न रूपों का ज़िक्र आता है, उस अंश में से "तथाकथित अर्थवाद" शब्दों को काट दिया जाये (दलील यह थी कि इन दो शब्दों का "अर्थ अस्पष्ट" है, परंतु यदि ऐसा था, तो ज़रूरत सिर्फ़ यह थी कि एक प्रचलित भूल के सार की और सही व्याख्या कर दी जाती), और "मिलेरांवाद" शब्द को भी काट दिया जाये (हालांकि बो० क्रिचेव्स्की ने *राबोचेये देलो*, अंक २-३, पृष्ठ ८३-८४ में, और उससे भी ज़्यादा खुले तौर पर *Vorwärts* में इसका समर्थन किया था*)। बावजूद इसके कि जून के प्रस्तावों ने इस बात का निश्चित रूप से संकेत किया था कि सामाजिक-जनवाद का

* इस विषय पर *Vorwärts* में उसके वर्तमान संपादकमंडल, काउत्स्की और *जार्या* के बीच एक वाद-विवाद चल गया। हम रूसी पाठकों को इस वाद-विवाद से परिचित कराने से न चूकेंगे।[110]

Scanned by CamScanner

काम "**हर तरह** के राजनीतिक, **आर्थिक** एवं सामाजिक उत्पीड़न के ख़िलाफ़ सर्वहारा के **हर प्रकार** के संघर्ष का नेतृत्व करना है" और इस प्रकार जून के प्रस्तावों ने संघर्ष के इन विभिन्न रूपों में व्यवस्था और एकता पैदा करने का आह्वान किया था—इस सबके बावजूद 'संघ' ने इन बिलकुल फ़ालतू शब्दों को भी जोड़ दिया: "आर्थिक संघर्ष जन-आंदोलन को ज़ोरदार तरीक़े से बढ़ावा देता है" (ख़ुद अपने में इस कथन से कोई मतभेद नहीं हो सकता, पर संकुचित "अर्थवाद" की मौजूदगी में यह लाज़िमी था कि उसका ग़लत मतलब लगाने का मौक़ा दिया जाये)। इसके अलावा जून के प्रस्तावों में "राजनीति" को सीधे-सीधे **संकुचित** बना देने की भी कोशिश की गयी। यह दोनों तरह से किया गया—एक तो "निरंकुश शासन का तख़्ता उलटने के उद्देश्य को एक क्षण के लिए भी नहीं भूलना चाहिए" अंश से "एक क्षण के लिए भी" शब्दों को काटते हुए और दूसरे, ये शब्द उसमें जोड़ते हुए: "आर्थिक संघर्ष जनता को सक्रिय राजनीतिक संघर्ष में खींचने का वह तरीक़ा है, जिसका **सबसे अधिक व्यापक रूप में** उपयोग किया जा सकता है"। स्वभावतया, ऐसे संशोधनों के पेश हो जाने के बाद हमारे पक्ष के तमाम वक्ताओं ने एक-एक करके बोलने से इनकार कर दिया। उन्होंने समझ लिया कि उन लोगों के साथ बातचीत जारी रखना बेकार है, जो एक बार फिर अर्थवाद की ओर मुड़ रहे थे और ढुलमुलपन दिखाने की स्वतंत्रता प्राप्त करने की कोशिश कर रहे थे।

"'संघ' ने *रावोचेये देलो* के अलग रुख़ और उसकी स्वतंत्रता की सुरक्षा को भावी समझौते के टिकाऊपन की sine gua non* शर्त समझा था, पर *ईस्क्रा* इसी को समझौते के रास्ते में सबसे बड़ा रोड़ा समझता था" (*दो कांग्रेसें*, पृ० २५)। यह बहुत ग़लत बात है। हम *रावोचेये देलो* की आज़ादी पर कभी हाथ नहीं डालना चाहते थे।** हां, यदि अलग रुख़ का मतलब सिद्धांत और कार्यनीति के सैद्धांतिक प्रश्नों के संबंध में "अलग रुख़" है, तो

* सबसे आवश्यक।—सं०

** बशर्ते कि एकीकृत संगठनों की सर्वोच्च संयुक्त समिति बनाने के सिलसिले में संपादकीय सलाह-मशविरे को स्वतंत्रता का सीमित कर दिया जाना न समझा जाये। लेकिन जून में *रावोचेये देलो* ने यह बात मान ली थी।

Scanned by CamScanner

हमें उसे मानने से **क़तई इनकार था:** जून के प्रस्तावों में ऐसे ही अलग रुख़ का पूरी तरह से विरोध किया गया था, क्योंकि व्यवहार में **ऐसे** "अलग रुख़" का मतलब, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, सदा तरह-तरह के ढुलमुलपन में फंस जाना रहा है, जिससे हम लोगों में व्याप्त फूट बढ़ती है, जो पार्टी के दृष्टिकोण से एक असहनीय बात है। *राबोचेये देलो* के अंक १० में जो लेख छपे हैं, उनसे और उसके "संशोधनों" से यह बात बिलकुल साफ़ हो गयी कि वह ठीक इसी तरह के अलग रुख़ को क़ायम रखना चाहता है, और उसकी इस इच्छा का यह स्वाभाविक और अवश्यंभावी परिणाम था कि फूट पड़ गयी और युद्ध की घोषणा कर दी गयी। परंतु इस अर्थ में हम सब *राबोचेये देलो* के अलग रुख़ को मानने के लिए तैयार थे कि उसे कुछ ख़ास साहित्यिक कामों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। इन कामों का यदि उचित ढंग से बंटवारा किया जाता, तो स्वभावतया हमें इतनी चीज़ों की आवश्यकता थी: (१) एक वैज्ञानिक पत्रिका, (२) एक राजनीतिक पत्र, और (३) सुबोध लेख-संग्रह और सुबोध पुस्तिकाएं। कामों के इस प्रकार के बंटवारे को स्वीकार करके ही *राबोचेये देलो* यह साबित कर सकता था कि वह अपने उस ग़लत रास्ते को **ईमानदारी के साथ** हमेशा के लिए त्याग देना चाहता है, जिसका विरोध जून के प्रस्तावों में किया गया था। कामों के इस प्रकार के बंटवारे से ही झगड़े-झंझट की सारी संभावना दूर हो सकती थी और एक ऐसे टिकाऊ समझौते की पक्की गारंटी हो सकती थी, जो इसके साथ ही हमारे आंदोलन के एक नये उभार और नयी सफलताओं का आधार भी बन सकता।

अब रूस के किसी भी सामाजिक-जनवादी को इस बात में तनिक भी संदेह नहीं हो सकता कि क्रांतिकारी और अवसरवादी प्रवृत्तियों के बीच अंतिम रूप से जो संबंध-विच्छेद हुआ है, वह किन्हीं "संगठनात्मक" परिस्थितियों के कारण नहीं, बल्कि इस कारण हुआ है कि अवसरवादी लोग अवसरवाद के अलग रुख़ को मज़बूत करना चाहते थे और क्रिचेव्स्की तथा मार्तीनोव जैसे लोगों के उपदेशों के ज़रिए साथियों में दिमाग़ी उलझाव पैदा करने का अपना काम जारी रखना चाहते थे।

Scanned by CamScanner

क्या करें? में संशोधन

क्या करें? शीर्षक पुस्तिका के पृष्ठ १४१ पर मैंने "पहल करनेवालों" के जिस "दल" का ज़िक्र किया है, उसने मुझसे कहा है कि विदेशों में स्थित सामाजिक-जनवादी संगठनों में फिर से समझौते कराने की कोशिशों में इस दल का जो भाग रहा है, उसके संबंध में मैं एक भूल को सुधार दूं: "इस दल के तीन सदस्यों में से केवल एक १९०० के अंत में 'संघ' से अलग हुआ था; बाक़ी दो ने १९०१ में 'संघ' को तब छोड़ा था, जब उन्हें यह विश्वास हो गया कि विदेशों में स्थित *ईस्क्रा* संगठन तथा 'सोत्सिआल-देमोक्रात' क्रांतिकारी संगठन के साथ सम्मेलन के लिए, जिसका प्रस्ताव 'पहल करनेवालों के दल' ने किया था, 'संघ' की सहमति प्राप्त करना असंभव है। 'संघ' की प्रबंध-समिति ने पहले इस प्रस्ताव को यह कहकर ठुकरा दिया कि 'पहल करनेवालों के दल' में जो व्यक्ति शामिल हैं, उन्हें मध्यस्थ बनने का 'कोई अधिकार नहीं है', और विदेशों में स्थित *ईस्क्रा* संगठन से सीधे संपर्क स्थापित करने की इच्छा प्रकट की। लेकिन उसके थोड़े समय बाद ही 'संघ' की प्रबंध-समिति ने 'पहल करनेवालों के दल' को इत्तिला दी कि *ईस्क्रा* के पहले अंक के प्रकाशन के बाद, जिसमें 'संघ' में फूट पड़ जाने का समाचार था, उसने अपना फ़ैसला बदल दिया है और अब वह *ईस्क्रा* से बातचीत नहीं करना चाहती। इसके बाद 'संघ' की प्रबंध-समिति के एक सदस्य द्वारा दिये गये इस बयान का मतलब किसी के लिए समझ सकना कठिन हो जाता है कि समझौते की बातचीत चलाने का प्रस्ताव 'संघ' द्वारा ठुकरा दिये जाने का **केवल** यह कारण था कि 'संघ' 'पहल करनेवालों के दल' की सदस्यता-संरचना से असंतुष्ट था। यह सच है कि यह समझना भी इतना ही कठिन है कि गत जून में 'संघ' की प्रबंध-समिति ने बातचीत चलाना क्यों स्वीकार कर लिया था:

Scanned by CamScanner

ईस्क्रा के पहले अंक का वह लेख तो उस वक़्त भी मौजूद था और 'संघ' के प्रति *ईस्क्रा* का 'नकारात्मक' रुख और भी ज़्यादा ज़ोरदार ढंग से *ज़ार्या* के पहले अंक में और *ईस्क्रा* के चौथे अंक में व्यक्त हुआ था, और ये दोनों अंक जून सम्मेलन के पहले ही प्रकाशित हो गये थे।"

न० लेनिन

ईस्क्रा, अंक १९,
१ अप्रैल, १९०२

Scanned by CamScanner

टिप्पणियां

[1] लेनिन की पुस्तक ***क्या करें? हमारे आंदोलन के तात्कालिक प्रश्न*** १९०१ के अंत और १९०२ के आरंभ में लिखी गयी थी। दिसंबर, १९०१ में लेनिन ने (*ईस्क्रा* के १२वें अंक में) *"अर्थवाद" के समर्थकों से एक वार्ता* शीर्षक अपना लेख प्रकाशित किया। बाद में उन्होंने इसे *क्या करें?* की रूपरेखा कहा। फ़रवरी, १९०२ में लेनिन ने इस पुस्तक की भूमिका लिखी। यह पुस्तक मार्च के आरंभिक दिनों में स्टुटगार्ट में दियेत्स द्वारा प्रकाशित की गयी। इसके प्रकाशन के संबंध में एक विज्ञापन १० मार्च, १९०२ को *ईस्क्रा* के १८वें अंक में निकला।

लेनिन की *क्या करें?* शीर्षक पुस्तक ने रूस में मज़दूर वर्ग की क्रांतिकारी मार्क्सवादी पार्टी के लिए चल रहे संघर्ष में, रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की समितियों और संगठनों और आगे चलकर १९०३ में दूसरी पार्टी कांग्रेस में लेनिनीय–*ईस्क्रा*-वादी प्रवृत्ति की विजय में महान भूमिका अदा की।

१९०२–१९०३ में रूस के सामाजिक-जनवादी संगठनों में यह पुस्तक बड़े पैमाने पर वितरित की गयी।–११

[2] लेनिन का ***कहां से शुरू करें?*** शीर्षक लेख *ईस्क्रा* के चौथे अंक में अग्रलेख के रूप में प्रकाशित हुआ था। इसमें रूस के सामाजिक-जनवादी आंदोलन के उस समय के अति महत्वपूर्ण प्रश्नों के उत्तर शामिल हैं। ये प्रश्न थे: राजनीतिक आंदोलन का स्वरूप और मुख्य विषय, संगठनात्मक कार्य और जुझारू अखिल रूसी मार्क्सवादी पार्टी के निर्माण की योजना। लेनिन

Scanned by CamScanner

ने अपने इस लेख को उस योजना की रूपरेखा कहा, जिसे उन्होंने अपनी *क्या करें?* शीर्षक पुस्तक में विकसित किया।

यह लेख क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद के लिए कार्यक्रम संबंधी एक दस्तावेज बन गया और रूस तथा विदेशों में इसकी प्रतियां बड़े पैमाने पर वितरित की गयीं। – १३

³ *ईस्क्रा* (*चिनगारी*) – पहला अखिल रूसी ग़ैर क़ानूनी मार्क्सवादी समाचारपत्र। लेनिन ने १९०० में इसकी स्थापना की। समाचारपत्र ने रूस में मजदूर वर्ग की मार्क्सवादी क्रांतिकारी पार्टी के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

पुलिस के दमन के कारण रूस में क्रांतिकारी समाचारपत्र का प्रकाशन असंभव था और इसलिए लेनिन ने अपने साइबेरियाई निर्वासन के समय ही उसे विदेशों में प्रकाशित करने की योजना बनायी। निर्वासन से लौटकर (जनवरी, १९००) उन्होंने अपनी योजना अमल में लानी शुरू की।

लेनिन के *ईस्क्रा* का पहला अंक दिसंबर, १९०० में लाइपज़िग में प्रकाशित हुआ, बाद के अंक म्यूनिख में प्रकाशित हुए; जुलाई, १९०२ से यह समाचारपत्र लंदन में और १९०३ के वसंत से जेनेवा में निकलने लगा। लेनिन वस्तुतः *ईस्क्रा* के प्रधान संचालक थे।

ईस्क्रा का ध्यान ज़ारशाही निरंकुशवाद के खिलाफ़ सर्वहारा और रूस के तमाम मेहनतकश लोगों के क्रांतिकारी संघर्ष, अंतर्राष्ट्रीय जीवन, सर्वप्रथम, अंतर्राष्ट्रीय मजदूर आंदोलन की प्रमुख घटनाओं पर केंद्रित था।

यह समाचारपत्र पार्टी शक्तियों के एकीकरण का केंद्र बन गया। रूस के कई नगरों में रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी के *ईस्क्रा*-वादी ग्रुप तथा समितियां बनायी गयीं।

ईस्क्रा के संपादकमंडल ने पार्टी कार्यक्रम का मसौदा तैयार किया और उसे बहस के लिए प्रकाशित किया। उसने रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस की तैयारी की (१९०३)। पार्टी की दूसरी कांग्रेस ने रूस के सभी सामाजिक-जनवादी संगठनों को एक पार्टी में एकीकृत करने में *ईस्क्रा* की असाधारण भूमिका मान ली और उसे केंद्रीय मुखपत्र घोषित किया।

Scanned by CamScanner

लेकिन पार्टी की दूसरी कांग्रेस के फ़ौरन बाद लेनिन तथा अवसरवादी प्रवृत्ति के प्रतिनिधियों – मेंशेविकों – में उग्र संघर्ष शुरू हुआ। लेनिन *ईस्क्रा* के संपादकमंडल से अलग हो गये और ५२वें अंक (नवंबर, १९०३) से *ईस्क्रा* क्रांतिकारी मार्क्सवाद का मुखपत्र नहीं रहा। – १३

[4] १९०१ के वसंत और गर्मियों में विदेशों में स्थित सामाजिक-जनवादी संगठनों ने ('रूसी सामाजिक-जनवादियों का संघ', बुंद की विदेश समिति, 'सोत्सिआल-देमोक्रात' क्रांतिकारी संगठन और विदेशों में स्थित *ईस्क्रा* तथा *ज़ार्या* संगठन) 'बोर्बा' दल की मध्यस्थता और पहलक़दमी से समझौते और एकता के लिए वार्तालाप जारी रखा। उक्त संगठनों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन जून, १९०१ में जेनेवा में बुलाया गया (इसीलिए यह "जून" या "जेनेवा" सम्मेलन कहलाया)। सम्मेलन का उद्देश्य उस कांग्रेस के लिए तैयारी करना था, जिसमें एकता स्थापित होनी थी। सम्मेलन ने एक प्रस्ताव ("उसूली समझौता") स्वीकृत किया। इसमें सभी सामाजिक-जनवादी संगठनों के एकीकरण की आवश्यकता प्रकट की गयी थी और अवसरवाद के सभी प्रकारों – "अर्थवाद", बर्नस्टीनवाद, मिलेरांवाद, इत्यादि – की निंदा की गयी थी। पर 'रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' और उसके मुखपत्र *राबोचेये देलो* के अवसरवाद की दिशा में मुड़ने के कारण एकता के प्रयत्न असफल हो गये।

रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी के विदेशों में स्थित संगठनों की एकता कांग्रेस २१–२२ सितंबर (४–५ अक्तूबर), १९०१ को ज़ूरिच में हुई। कांग्रेस में विदेशों में स्थित *ईस्क्रा* और *ज़ार्या* संगठन के, *सोत्सिआल-देमोक्रात* क्रांतिकारी संगठन के, 'रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' के और 'बोर्बा' दल के सदस्य उपस्थित थे।

कांग्रेस में अवसरवादी फ़ैसले स्वीकृत किये जाने के कारण कांग्रेस के क्रांतिकारी भाग (*ईस्क्रा* – *ज़ार्या* और *सोत्सिआल-देमोक्रात* संगठनों के प्रतिनिधियों) ने एकता की असंभाव्यता पर एक वक्तव्य जारी किया और कांग्रेस से विदा ली। – १३

Scanned by CamScanner

5 *राबोचेये देलो* (*मज़दूरों का ध्येय*) – 'विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' का मुखपत्र। यह अनियतकालिक पत्रिका अप्रैल, १८९९ से फ़रवरी, १९०२ तक जेनेवा में प्रकाशित होती रही। कुल मिलाकर इसके १२ अंक (नौ पुस्तकों में) निकले। *राबोचेये देलो* का संपादकमंडल "अर्थवादियों" का विदेशों में स्थित केंद्र था। पत्रिका ने बर्नस्टीन के मार्क्सवाद की "आलोचना की स्वतंत्रता" वाले नारे का समर्थन किया और रूसी सामाजिक-जनवाद की कार्यनीति तथा संगठनात्मक कार्यभारों के प्रश्नों पर अवसरवादी रुख अपनाया। रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस में *राबोचेये देलो* वालों ने पार्टी के दक्षिणतम अवसरवादी पक्ष का प्रतिनिधित्व किया। – १३

6 **"अर्थवाद"** – १९वीं सदी के अंत और २०वीं सदी के आरंभ में रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन में एक अवसरवादी प्रवृत्ति।

"अर्थवादी" मज़दूर वर्ग के लक्ष्य को वेतन-वृद्धि, श्रम-परिस्थितियों में सुधार, आदि के लिए आर्थिक संघर्ष करने तक ही सीमित करते थे। उनका कहना था कि राजनीतिक संघर्ष उदारतावादी बुर्जुआ वर्ग का काम है। वे मज़दूर वर्ग की पार्टी की नेतृत्वकारी भूमिका से इनकार करते थे और कहते थे कि पार्टी का काम आंदोलन की स्वयंस्फूर्त प्रक्रिया को देखते रहना और घटनाओं को दर्ज करना ही है। मज़दूर आंदोलन की स्वयंस्फूर्ति की पूजा करते हुए "अर्थवादियों" ने क्रांतिकारी सिद्धांत तथा चेतना को कोई विशेष महत्व नहीं दिया। वे कहते थे कि समाजवादी विचारधारा स्वयंस्फूर्त मज़दूर आंदोलन से भी पैदा हो सकती है। – १३

7 *राबोचाया गाज़ेता* (*मज़दूरों का समाचारपत्र*) – कीयेव के सामाजिक-जनवादियों का ग़ैर क़ानूनी मुखपत्र। कुल मिलाकर इसके केवल दो अंक निकले – पहला अंक अगस्त, १८९७ में और दूसरा दिसंबर (इस पर तारीख नवंबर की थी),

१८९७ में। रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की पहली कांग्रेस ने (इसका आयोजन मार्च, १८९८ में हुआ था) *राबोचाया गाज़ेता* को पार्टी के अधिकृत मुखपत्र के रूप में स्वीकृत कर लिया। कांग्रेस के बाद केंद्रीय समिति के सदस्यों और *राबोचाया गाज़ेता* के संपादकों को गिरफ़्तार कर लिया गया और उसका छापाख़ाना ज़ब्त किया गया। परिणाम यह हुआ कि छापने के लिए तैयार किया गया समाचारपत्र का तीसरा अंक प्रकाशित होने से रह गया। १८९९ में *राबोचाया गाज़ेता* का प्रकाशन फिर से आरंभ करने का प्रयत्न किया गया। लेनिन ने अपनी पुस्तक *क्या करें?* में इस प्रयत्न के बारे में लिखा है (देखें प्रस्तुत प्रकाशन के पृष्ठ २०४–२०५)।–१४

[8] **लासालवादी और आइज़ेनाख़वादी**–१९वीं शताब्दी के सातवें और आठवें दशकों में जर्मन मज़दूर आंदोलन की दो पार्टियां। इन दोनों के बीच कड़ा संघर्ष जारी रहा–मुख्यतया कार्यनीति के प्रश्नों पर और विशेषकर उस समय के जर्मन राजनीतिक जीवन के सबसे ज्वलंत प्रश्न पर, अर्थात जर्मनी के एकीकरण के मार्गों के प्रश्न पर।

लासालवादी–जर्मन टुटपुंजिया समाजवादी फ़र्दीनांद लासाल के समर्थक और अनुयायी तथा १८६३ में मज़दूर संस्थाओं की लाइपज़िग कांग्रेस में स्थापित किये गये आम जर्मन मज़दूर संघ के सदस्य। लासाल ही इस संघ के पहले अध्यक्ष थे और उन्होंने संघ के कार्यक्रम और उसकी कार्यनीति की रूपरेखा बनायी थी। अपनी व्यावहारिक गतिविधियों में लासाल और उनके अनुयायी बिस्मार्क की महाशक्तिवादी नीति का समर्थन करते थे। २७ जनवरी, १८६५ को कार्ल मार्क्स के नाम लिखे गये अपने पत्र में फ़्रेडरिक एंगेल्स ने कहा: "वस्तुगत दृष्टि से यह प्रशा के हित में समस्त मज़दूर आंदोलन के साथ ग़द्दारी और विश्वासघात था।" का० मार्क्स और फ़्रे० एंगेल्स ने लासालवादियों के सिद्धांत, कार्यनीति और संगठनात्मक सिद्धांतों की बार-बार और तीखे शब्दों में आलोचना की। उन्होंने इन्हें जर्मन मज़दूर आंदोलन की एक अवसरवादी प्रवृत्ति कहा।

Scanned by CamScanner

आइज़ेनाखवादी—१८६९ में आइज़ेनाख में उद्घाटनात्मक कांग्रेस में स्थापित की गयी जर्मनी की सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी के सदस्य। पार्टी के नेता अगस्त बेबेल और विल्हेल्म लीबक्नेख्त पर कार्ल मार्क्स और फ़्रेडरिक एंगेल्स का विचारात्मक प्रभाव था। आइज़ेनाखवादियों के कार्यक्रम में कहा गया था कि जर्मनी की सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी अपने को "अंतर्राष्ट्रीय मज़दूर संघ का एक अंग और उसकी आकांक्षाओं को अपनी आकांक्षाएं मानती है"। जर्मनी के एकीकरण के प्रश्नों पर आइज़ेनाखवादियों ने "जनवादी और सर्वहारावादी मार्ग" का समर्थन किया "और प्रशावाद, बिस्मार्कवाद और राष्ट्रवाद को किसी प्रकार की, यहां तक कि नगण्य भी, रिआयतें दिये जाने के विरुद्ध संघर्ष चलाया" (व्ला० इ० लेनिन)।

१८७१ में जर्मन साम्राज्य की स्थापना हुई और तब लासालवादियों और आइज़ेनाखवादियों के बीच कार्यनीति से संबंधित मुख्य मतभेद दूर हो गये। १८७५ में मज़दूर आंदोलन की उन्नति और सरकार द्वारा किये गये कठोर दमन के परिणामस्वरूप ये दो पार्टियां जर्मनी की एकीभूत समाजवादी मज़दूर पार्टी (जो बाद में जर्मनी की सामाजिक-जनवादी पार्टी कहलायी) में एक हो गयीं। यह एकीकरण गोथा कांग्रेस में कार्यान्वित हुआ।—१७

[9] **गेदवादी और संभावनावादी**—फ़्रांसीसी समाजवादी आंदोलन में दो—क्रांतिकारी और अवसरवादी—धाराओं के अनुयायी, जिन्होंने १८८२ में हुई सेंट-एतियें कांग्रेस में फ़्रांस की मज़दूर पार्टी में फूट पड़ने के बाद दो स्वतंत्र पार्टियां संगठित कीं।

गेदवादी—जूल गेद और पाल लफ़ार्ग के पक्षधर, वामपंथी मार्क्सवादी प्रवृत्ति के प्रतिनिधि और सर्वहारा वर्ग की स्वतंत्र क्रांतिकारी नीति के समर्थक। गेदवादियों ने 'फ़्रांस की मज़दूर पार्टी' का नाम क़ायम रखा और वे उसके हाव्र कार्यक्रम के प्रति वफ़ादार रहे। यह कार्यक्रम १८८० में स्वीकृत किया गया था। इस कार्यक्रम का सैद्धांतिक भाग का० मार्क्स ने लिखा था। फ़्रांस के औद्योगिक केंद्रों में गेदवादियों का बड़ा प्रभाव था और उन्होंने मज़दूर वर्ग के राजनीतिक दृष्टि से सचेतन तत्वों

Scanned by CamScanner

को एक कर दिया। १९०१ में उन्होंने फ़्रांस की समाजवादी पार्टी की स्थापना की।

संभावनावादी (पाल ब्रूस, बेनुआ मालोन, आदि) – टुटपुंजिया सुधारवादी धारा के प्रतिनिधि, जिन्होंने सर्वहारा वर्ग को संघर्ष के क्रांतिकारी तरीक़ों से विमुख किया। संभावनावादियों ने 'मज़दूर सामाजिक-क्रांतिकारी पार्टी' की स्थापना की। उन्होंने सर्वहारा वर्ग के क्रांतिकारी कार्यक्रम और कार्यनीति को नामंज़ूर कर दिया, मज़दूर आंदोलन के समाजवादी उद्देश्यों की भ्रामक व्याख्या की और जितना "संभव" (possible) हो, उसी हद तक मज़दूरों के संघर्ष को सीमित रखने की सिफ़ारिश की। उनका प्रभाव मुख्यत: फ़्रांस के पिछड़े हुए इलाक़ों और मज़दूर वर्ग के कम विकसित हिस्सों में फैला। १९०२ में अन्य सुधारवादी दलों के साथ संभावनावादियों ने फ़्रांसीसी समाजवादी पार्टी बना ली, जिसके नेता जान जोरेस थे।

१९०५ में फ़्रांस की समाजवादी पार्टी और फ़्रांसीसी समाजवादी पार्टी एक हो गयीं। १९१४–१९१८ के साम्राज्यवादी युद्ध के दौरान उसके नेतागण (गेद, सेम्बा, आदि) ने मज़दूर वर्ग के ध्येय के साथ ग़द्दारी करके सामाजिक-अंधराष्ट्रवादी रुख अपनाया। – १७

10 **फ़ेबियन** – फ़ेबियन सोसायटी के सदस्य। इस ब्रिटिश सुधारवादी संगठन की स्थापना १८८४ में हुई थी। सोसायटी का नाम रोम के सेनापति फ़ेबियस मैक्सिमस (तीसरी सदी ईसा पूर्व) के नाम पर रखा गया था, जिसे "कनक्टेटर" (विलंबकारी) कहा जाता था। यह सेनापति अपनी विलंबकारी कार्यनीति और हानीबाल के विरुद्ध जंग में निर्णायक लड़ाइयों को टाल जाने के लिए प्रसिद्ध था। फ़ेबियन सोसायटी के सदस्य मुख्यत: बुर्जुआ बुद्धिजीवियों के प्रतिनिधि थे – वैज्ञानिक, लेखक, राजनीतिज्ञ (उदाहरणार्थ, सिडनी और बीट्रिस वेब, बरनार्ड शॉ, रैमज़े मैकडानल्ड, इत्यादि)। फ़ेबियन लोग सर्वहारा वर्ग के संघर्ष और समाजवादी क्रांति की आवश्यकता से इनकार करते थे। उनका मत था कि सुधारों और समाज के क्रमश: रूपांतरण द्वारा पूंजीवाद से समाजवाद में संक्रमण संभव है। व्ला० इ० लेनिन ने फ़ेबियनवाद को "उग्र अवसरवाद की एक

Scanned by CamScanner

प्रवृत्ति" का नाम दिया था। १९०० में फ़ेबियन सोसायटी लेबर पार्टी में शामिल हो गयी। "फ़ेबियन समाजवाद" लेबर विचारधारा का एक स्रोत है।

सामाजिक-जनवादी – लेनिन का इशारा १८८४ में स्थापित इंगलैंड के सामाजिक-जनवादी संघ के सदस्यों की ओर है। सुधारवादियों (हाइन्डमैन और अन्य) और अराजकतावादियों के अलावा क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादियों का एक दल, जो मार्क्सवाद के अनुयायी थे, सामाजिक-जनवादी संघ से संबद्ध था (हैरी क्वेल्च, टॉम मान्न, एडवर्ड एवेलिंग, एल्योनोरा मार्क्स और अन्य)। इनसे ब्रिटेन के समाजवादी आंदोलन का वाम पक्ष बना था। फ़्रेडरिक एंगेल्स ने जड़सूत्रवाद और पंथवाद के लिए, ब्रिटिश आम मज़दूर आंदोलन से संबंध-विच्छेद करके उसके विशिष्ट लक्षणों की उपेक्षा करने के लिए सामाजिक-जनवादी संघ की कटु आलोचना की। १९०७ में सामाजिक-जनवादी संघ का नया नामकरण किया गया। अब यह सामाजिक-जनवादी पार्टी कहलाया गया। १९११ में स्वतंत्र लेबर पार्टी के वामपंथी तत्वों के साथ मिलकर इस पार्टी से ब्रिटिश समाजवादी पार्टी बनी। १९२० में इस पार्टी के अधिकांश सदस्यों ने ब्रिटेन की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना में हाथ बंटाया। – १७

11 **'नरोदनाया वोल्या'** ('जनता की आज़ादी') – नरोदवादी-आतंककारियों का अगस्त, १८७९ में स्थापित गुप्त क्रांतिकारी संगठन।

'नरोदनाया वोल्या' के सदस्यों का पहला लक्ष्य निरंकुशतंत्र को उखाड़ फेंकना और जनवादी जनतंत्र की स्थापना करना था। नरोदवाद के इतिहास में पहली बार उन्होंने राजनीतिक संघर्ष की आवश्यकता का सवाल उठाया, मगर वे इस संघर्ष को षड्यंत्र और व्यक्तिगत आतंक का ही पर्याय मान बैठे।

कुछ असफल प्रयासों के बाद १ मार्च, १८८१ को ज़ार अलेक्सान्द्र द्वितीय की हत्या कर दी गयी। हत्या में भाग लेनेवालों को पकड़कर फांसी के तख्ते पर चढ़ा दिया गया, इसके बाद कई मुक़दमे भी चले। इसके साथ 'नरोदनाया

Scanned by CamScanner

वोल्या' की गतिविधियों का अंत हो गया। अपने सदस्यों के आत्मत्याग और अपूर्व शौर्य के बावजूद यह संगठन यदि अपना लक्ष्य पाने में असफल रहा, तो इसका कारण था उसका ग़लत सैद्धांतिक आधार तथा कार्यनीति और आम जनता के साथ व्यापक संबंधों का अभाव।

सामाजिक-जनवादी – यहां इशारा रूसी मार्क्सवादियों गे० वा० प्लेखानोव, व्ला० इ० लेनिन, आदि की ओर है, जिन्होंने १९वीं शताब्दी के नौवें तथा अंतिम दशकों में अपनी पुस्तकों और लेखों में नरोदवादियों की विचारधारा तथा राजनीतिक संघर्ष के उनके तरीक़ों की आलोचना की। – १७

12 **फ़्रांस के मंत्रालयवादी (मिलेरांवादी)** – फ़्रांसीसी समाजवादी अलेक्सान्द्र मिलेरां के अनुयायी, जिन्होंने १८९९ में वाल्देक-रूस्सो के प्रतिक्रियावादी बुर्जुआ मंत्रिमंडल में प्रवेश किया। – १७

13 **बर्नस्टीनवादी** – जर्मन और अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक-जनवाद में एक मार्क्सवाद विरोधी प्रवृत्ति के अनुयायी। यह प्रवृत्ति १९वीं शताब्दी के अंत में उत्पन्न हुई और उसके जन्मदाता संशोधनवादी विचारक एडुअर्ड बर्नस्टीन थे।

१८९६ – १८९८ में बर्नस्टीन ने जर्मन सामाजिक-जनवादियों की सैद्धांतिक पत्रिका *Die Neue Zeit (नया ज़माना)* में एक लेखमाला प्रकाशित की थी, जिसमें उन्होंने "आलोचना की स्वतंत्रता" की आड़ में क्रांतिकारी मार्क्सवाद की बुनियादी दार्शनिक, आर्थिक तथा राजनीतिक प्रस्थापनाओं में संशोधन करने (इसी से "संशोधनवाद" शब्द प्रचलित हुआ) और उनकी जगह पर वर्गीय विरोधों को घटाने तथा वर्ग सहयोग के बुर्जुआ सिद्धांत प्रतिष्ठापित करने का प्रयास किया था। जर्मन सामाजिक-जनवादी आंदोलन के दक्षिणपंथी धड़े ने और दूसरे इंटरनेशनल में शामिल अन्य पार्टियों में मौजूद अवसरवादी तत्वों ने बर्नस्टीन के विचारों का समर्थन किया। – १७

14 **रूसी आलोचक** – रूस में बर्नस्टीनवाद के अनुयायी, "क़ानूनी मार्क्सवादी" (स्त्रूवे, बुल्गाकोव, बेरदियायेव, आदि), जो

Scanned by CamScanner

"आलोचना की स्वतंत्रता" के नाम पर मार्क्सवादी सिद्धांत पर पुनर्विचार करने की मांग करते थे और समाजवाद, समाजवादी क्रांति तथा सर्वहारा अधिनायकत्व के लिए संघर्ष को निरर्थक मानते थे।—१७

15 **जुपिटर और मिनर्वा**—प्राचीन रोम के देवता-देवी। जुपिटर—आकाश का देवता, वज्रघोषी, रोमन राज्य का सर्वोच्च देवता। मिनर्वा—युद्ध की देवी और दस्तकारियों, विज्ञानों तथा कलाओं की संरक्षिका।—१९

16 **'विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों का संघ'** १८९४ में जेनेवा में 'श्रम-मुक्ति' दल की पहल पर स्थापित हुआ था। 'श्रम-मुक्ति' दल ही 'संघ' के सभी प्रकाशनों का संपादन करता था। मार्च, १८९८ में रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की पहली कांग्रेस ने 'संघ' को पार्टी का वैदेशिक प्रतिनिधि घोषित किया। किंतु आगे चलकर 'संघ' पर अवसरवादी तत्व—"अर्थवादी", या "तरुण" नामधारी—हावी हो गये। अप्रैल, १८९९ से 'संघ' *राबोचेये देलो* नामक एक पत्रिका निकालने लगा, जिसके संपादकीय कर्मचारियों में कई "अर्थवादी" भी थे।

'श्रम-मुक्ति' दल ने 'संघ' की अवसरवादी नीति का विरोध करते हुए उसके प्रकाशनों का संपादन करने से इनकार कर दिया।

'संघ' की दूसरी कांग्रेस (१९००) में उसका विभाजन हो गया। 'श्रम-मुक्ति' दल और उसके समर्थकों ने कांग्रेस का बहिष्कार करके 'सोत्सिआल-देमोक्रात' ('सामाजिक-जनवादी') नाम से अपना पृथक संगठन बना लिया। १९०३ में रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस ने 'संघ' को भंग कर दिया।—२१

17 ***ज़ार्या*** *(प्रभात)*—*ईस्क्रा* के संपादकमंडल द्वारा १९०१—१९०२ में स्टुटगार्ट में प्रकाशित मार्क्सवादी वैज्ञानिक और राजनीतिक पत्रिका। इसके कुल मिलाकर ४ अंक (तीन पुस्तकों में) निकले।

Scanned by CamScanner

ज़ार्या ने अंतर्राष्ट्रीय और रूसी संशोधनवाद की आलोचना की और मार्क्सवाद के सैद्धांतिक आधारों का समर्थन किया।–२२

18 **पर्वत दल और जिरौंद दल**–१८वीं शताब्दी के अंत में हुई फ़्रांसीसी बुर्जुआ क्रांति के काल में बुर्जुआ वर्ग के दो राजनीतिक दलों के नाम।

पर्वत या जैकोबिन नाम बुर्जुआ वर्ग के दृढ़तर प्रतिनिधियों को दिया गया था। यह उस समय का क्रांतिकारी वर्ग था। जैकोबिनों ने निरंकुश शासन और सामंतवाद के विनाश का समर्थन किया। **जिरौंदवादी** जैकोबिनों से इस माने में भिन्न रहे कि वे क्रांति और प्रतिक्रांति के बीच डगमगाते रहे; उनकी नीति राजतंत्र से सौदा करने की थी।

लेनिन ने सामाजिक-जनवादी आंदोलन की अवसरवादी प्रवृत्ति को "समाजवादी जिरौंद" की और क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादियों को सर्वहारा जैकोबिनों या "पर्वत" की संज्ञा दी। रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी के बोल्शेविकों और मेंशेविकों में विभक्त हो जाने के बाद लेनिन अकसर ज़ोर देकर कहते थे कि मज़दूर आंदोलन में मेंशेविक जिरौंदवादी प्रवृत्ति के प्रतिनिधि थे।–२२

19 **कैडेट**–संवैधानिक-जनवादी पार्टी–रूस में उदारतावादी-राजतंत्रवादी बुर्जुआ वर्ग की प्रमुख पार्टी–के सदस्य। यह पार्टी अक्तूबर, १९०५ में क़ायम की गयी थी। इसमें बुर्जुआ वर्ग, ज़मींदारों और बुर्जुआ बुद्धिजीवियों के प्रतिनिधि शामिल थे। वे किसानों का समर्थन पाने के लिए झूठी लफ़्फ़ाज़ी का सहारा लेते थे, ज़ारशाही के साथ सौदा करने का प्रयत्न करते थे, संवैधानिक राजतंत्र का नारा लगाते हुए उन्होंने जनतंत्र के नारे के विरुद्ध, ज़मींदारों का स्वामित्व क़ायम रखने के लिए संघर्ष किया। कैडेटों ने राजतंत्र को क़ायम रखने की कोशिश की। बुर्जुआ अस्थायी सरकार में प्रमुख स्थान ग्रहण कर उन्होंने जनता के विरुद्ध प्रतिक्रांतिकारी नीति चलायी। अक्तूबर समाजवादी क्रांति की विजय के बाद कैडेट सोवियत सत्ता के कट्टर दुश्मन बन गये।–२२

Scanned by CamScanner

20 **"बेज़्ज़ग्लाव्त्सी"** – रूसी बुर्जुआ बुद्धिजीवियों का एक अर्द्ध-कैडेट, अर्द्ध-मेंशेविक दल। १९०५–१९०७ की क्रांति के काल में इसकी स्थापना हुई थी। इसका नाम *बेज़ ज़ग्लाविया (शीर्षकहीन)* नामक राजनीतिक साप्ताहिक पत्रिका के नाम पर रखा गया था। यह पत्रिका प्रोकोपोविच के संपादकत्व में जनवरी से मई, १९०६ तक पीटर्सबर्ग में प्रकाशित होती रही। यद्यपि "बेज़्ज़ग्लाव्त्सी" दल अपने को ग़ैर पार्टी संगठन मानता था, फिर भी तथ्यतः वह बुर्जुआ उदारतावाद और अवसरवाद के विचारों का वाहक और रूसी तथा अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक-जनवाद के संशोधनवादियों का समर्थक था।–२२

21 **मेंशेविक** – रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन में अवसरवादी प्रवृत्ति के पक्षधर।

१९०३ में रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस में जब पार्टी के केंद्रीय निकायों के चुनाव हुए थे, तो क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादियों को, जिनके नेता व्ला० इ० लेनिन थे, बहुमत (रूसी में बोल्शिंस्त्वो) मिला था, जिससे वे "बोल्शेविक" कहलाये जाने लगे, और अवसरवादियों को अल्पमत (मेंशिंस्त्वो), जिससे उनका नाम "मेंशेविक" पड़ा।

१९०५–१९०७ की क्रांति के दौरान मेंशेविकों ने क्रांति में मज़दूर वर्ग की प्रधानता और किसानों के साथ मज़दूर वर्ग की संघबद्धता का विरोध किया और कहा कि उदारपंथी बुर्जुआ वर्ग के साथ समझौता कर लिया जाना चाहिए और क्रांति का नेतृत्व भी उसे ही सौंप दिया जाना चाहिए। क्रांति की विफलता के बाद शुरू हुए प्रतिक्रियावाद के नंगे नाच के दौर में अधिकांश मेंशेविक विसर्जनवादी बन गये: वे मज़दूर वर्ग की क्रांतिकारी पार्टी को भंग करने की मांग करने लगे, जिसे अब अवैध पार्टी की हैसियत से काम करना पड़ रहा था। फ़रवरी, १९१७ की बुर्जुआ-जनवादी क्रांति की विजय के उपरांत मेंशेविकों ने बुर्जुआ अस्थायी सरकार में सम्मिलित होकर उसकी साम्राज्यवादी नीति का समर्थन और समाजवादी क्रांति की तैयारियों का विरोध किया।

अक्तूबर समाजवादी क्रांति के पश्चात् मेंशेविकों की पार्टी खुलेआम प्रतिक्रांतिकारी पार्टी बन गयी और नवस्थापित

Scanned by CamScanner

सोवियत सत्ता का तख्ता उलटने के लिए षड्यंत्रों तथा विद्रोहों के आयोजन व क्रियान्वयन में भाग लेने लगी।—२२

22 **१८७१ का पेरिस कम्यून**—इतिहास में सर्वहारा अधिनायकत्व की स्थापना का पहला प्रयोग। पेरिस की सर्वहारा क्रांति के फलस्वरूप क़ायम हुई मज़दूर वर्ग की यह क्रांतिकारी सरकार ७२ दिन—१८ मार्च से २८ मई, १८७१ तक चली।—२४

23 **समाजवादियों के विरुद्ध असाधारण क़ानून** १८७८ में जर्मनी में बिस्मार्क की सरकार द्वारा पास किया गया। उसका उद्देश्य मज़दूर और समाजवादी आंदोलन का दमन करना था। इस क़ानून ने सामाजिक-जनवादी पार्टी के सभी संगठनों, मज़दूरों के जन-संगठनों और मज़दूर समाचारपत्रों पर पाबंदी लगा दी; समाजवादी साहित्य ज़ब्त कर लिया गया। सामाजिक-जनवादी गिरफ़्तार कर लिये गये तथा उनका निष्कासन किया गया।

समाजवादियों के विरुद्ध असाधारण क़ानून बढ़ते मज़दूर आंदोलन के दबाव के कारण १८९० में रद्द कर दिया गया।—२४

24 २७—२९ मई, १८७७ को गोथा में जर्मनी की समाजवादी मज़दूर पार्टी की नियमित कांग्रेस हुई। कांग्रेस में जब पार्टी के प्रेस के प्रश्न पर चर्चा हुई, तो कुछ सदस्यों ने (मोस्ट, वाल्टीख) ड्यूहरिंग के विरुद्ध एंगेल्स के लेख (जो बाद में १८७८ में *ड्यूहरिंग मत-खंडन। श्री यूजेन ड्यूहरिंग द्वारा विज्ञान में प्रवर्तित क्रांति* शीर्षक पृथक पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुए) प्रकाशित करने के लिए पार्टी के केंद्रीय मुखपत्र *Vorwärts (आगे बढ़ो)* की और तीक्ष्ण वादानुवाद के लिए स्वयं एंगेल्स की निंदा करने के प्रयत्न किये, जिन्हें विफल कर दिया गया।—२४

25 *Vorwärts (आगे बढ़ो)*—१८९१ से १९३३ तक बर्लिन से प्रकाशित दैनिक समाचारपत्र, जर्मन सामाजिक-जनवादी पार्टी का केंद्रीय मुखपत्र। एंगेल्स ने अवसरवाद की सभी अभिव्यक्तियों से लोहा लेने के लिए इस पत्र के कालमों का इस्तेमाल किया।

Scanned by CamScanner

एंगेल्स के निधन के बाद, पिछली सदी की अंतिम दशाब्दी के उत्तरार्द्ध में पार्टी के दक्षिण पक्ष ने समाचारपत्र को अपने क़ब्ज़े में कर लिया और उसमें क्रमबद्ध रूप से अवसरवादियों के, जो जर्मन सामाजिक-जनवाद तथा दूसरे इंटरनेशनल पर हावी थे, लेख प्रकाशित किये गये। पहले विश्वयुद्ध के दौरान *Vorwärts* ने सामाजिक-अंधराष्ट्रवाद का रुख अपनाया। – २४

26 **कैथेडेर-समाजवादी** – १९वीं शताब्दी के आठवें और नौवें दशकों में बुर्जुआ राजनीतिक अर्थशास्त्र की एक प्रवृत्ति के प्रतिनिधि। समाजवाद के बहाने वे विश्वविद्यालयों के ज्ञानपीठों (जर्मन में Katheder) से बुर्जुआ-उदारपंथी सुधारवाद का प्रचार करते थे।

कैथेडेर-समाजवादियों का कहना था कि बुर्जुआ राज्य वर्गोपरि है और वह पूंजीपतियों के हितों को नुक़सान पहुंचाये बिना तथा मेहनतकशों की मांगों को यथासंभव ध्यान में रखकर विरोधी वर्गों के बीच सुलह करवा सकता है और शनैः-शनैः "समाजवाद" ला सकता है। मार्क्स, एंगेल्स तथा लेनिन ने कई बार कैथेडेर-समाजवादियों के प्रतिक्रियावादी स्वरूप का पर्दाफ़ाश किया।

रूस में कैथेडेर-समाजवादी दृष्टिकोणों का "क़ानूनी मार्क्सवादियों" ने समर्थन किया (देखें टिप्पणी ३१)। – २४

27 **नोज़्द्योव** – रूसी लेखक नि० व० गोगोल की 'मृत आत्माएं' शीर्षक पुस्तक का एक पात्र, झगड़ालू ज़मींदार और कपटी। – २५

28 यहां व्ला० इ० लेनिन का संकेत जर्मनी की सामाजिक-जनवादी पार्टी की हैनोवर कांग्रेस (९–१४ अक्तूबर, १८९९) के 'पार्टी के मूलभूत दृष्टिकोणों और कार्यनीति पर हमले' शीर्षक प्रस्ताव की ओर है। अ० बेबेल ने इस प्रश्न पर आधिकारिक रिपोर्ट प्रस्तुत की। भारी बहुमत ने बेबेल का प्रस्ताव स्वीकृत किया, जिसमें सामाजिक-जनवाद के सैद्धांतिक और कार्यनीतिक आधार में संशोधन करने के प्रयत्न ठुकराये गये थे। फिर भी प्रस्ताव में बर्नस्टीनवादियों की तेज़ आलोचना नहीं

Scanned by CamScanner

थी, इसलिए बर्नस्टीन और उसके समर्थकों ने उसके पक्ष में वोट दिये।—२५

29 यहां व्ला० इ० लेनिन का संकेत जर्मनी की सामाजिक-जनवादी पार्टी की लूबेक कांग्रेस (२२—२८ सितंबर, १९०१) के बर्नस्टीन विरोधी प्रस्ताव की ओर है। प्रस्ताव का कारण यह था कि १८९९ की हैनोवर कांग्रेस के बाद भी बर्नस्टीन सामाजिक-जनवाद के कार्यक्रम और कार्यनीति पर अपने हमलों से बाज न आये, बल्कि उलटे अधिक तेज हमले करते रहे, यही नहीं, ग़ैर पार्टी लोगों के बीच अपने विचारों का प्रचार भी करते रहे। बहस के दौरान और बेबेल द्वारा प्रस्तुत तथा कांग्रेस में भारी बहुमत से स्वीकृत प्रस्ताव में बर्नस्टीन को सीधी-सीधी चेतावनी दी गयी। अवसरवादी हाइने का जवाबी प्रस्ताव ठुकरा दिया गया, जिसमें "आलोचना की स्वतंत्रता" की मांग की गयी थी और बर्नस्टीन से संबंधित प्रश्न को अनदेखा किया गया था। फिर भी लूबेक कांग्रेस ने यह सिद्धांत निश्चित नहीं किया कि मार्क्सवाद में संशोधन सामाजिक-जनवादी पार्टी की सदस्यता से मेल नहीं खाता।—२५

30 **जर्मनी की सामाजिक-जनवादी पार्टी की स्टुटगार्ट कांग्रेस** ३—८ अक्तूबर, १८९८ को आयोजित ऐसी पहली कांग्रेस थी, जिसने जर्मन सामाजिक-जनवादी आंदोलन में संशोधनवाद के प्रश्न पर चर्चा की। उसने उसमें अनुपस्थित बर्नस्टीन का एक वक्तव्य सुना। उक्त वक्तव्य में उन्होंने अपने उन्हीं अवसरवादी दृष्टिकोणों का प्रतिपादन और समर्थन किया था, जो पहले अनेक लेखों में प्रकाशित किये जा चुके थे। बर्नस्टीन के विरोधियों में कांग्रेस में मतैक्य नहीं था। अगस्त बेबेल, कार्ल काउत्स्की, इत्यादि ने बर्नस्टीन के विरुद्ध वैचारिक संघर्ष का और उनकी ग़लतियों की आलोचना का तो समर्थन किया, पर उनके विरुद्ध संगठनात्मक कार्रवाइयां करने पर सहमत नहीं हुए। रोज़ा लुक्ज़ेमबुर्ग के नेतृत्व में अल्पसंख्या ने बर्नस्टीनवाद का अधिक दृढ़तापूर्वक विरोध किया।—२५

31 **"क़ानूनी मार्क्सवाद"**—गत सदी के अंतिम दशक में रूसी

Scanned by CamScanner

बुर्जुआ-उदारपंथी बुद्धिजीवियों के बीच जन्मी एक सामाजिक-राजनीतिक प्रवृत्ति। इसके प्रवक्ताओं—स्त्रूवे, बुल्गाकोव, तुगान-बारानोव्स्की, आदि—ने अपने को मार्क्सवाद का अनुयायी बताकर मार्क्स की शिक्षा से सामंतवादी सामाजिक-आर्थिक विरचना के स्थान पर पूंजीवादी विरचना के आने की अवश्यंभाविता का सिद्धांत तो ग्रहण किया, किंतु मार्क्सवाद की "क्रांतिकारी आत्मा"—पूंजीवाद के अवश्यंभावी पतन तथा समाजवादी क्रांति के सिद्धांत—को पूर्णतः ठुकरा दिया। "क़ानूनी मार्क्सवादी" वैध पत्र-पत्रिकाओं के जरिए नरोदवादियों की आलोचना करते थे, जो रूस में पूंजीवाद के विकास को अनिवार्य नहीं मानते थे, और पूंजीवादी तौर-तरीक़ों की तारीफ़ के पुल बांधते थे। आगे चलकर "क़ानूनी मार्क्सवादी" मार्क्सवाद के शत्रु और बुर्जुआ कैडेट पार्टी के कार्यकर्त्ता बन बैठे।—२८

[32] **"लेखक, जिनका दिमाग़ चढ़ गया था.."**—मक्सिम गोर्की की एक कहानी का शीर्षक।—२९

[33] व्ला० इ० लेनिन का संकेत *रूस के आर्थिक विकास की समस्या से संबंधित सामग्री* शीर्षक लेख-संग्रह की ओर है, जिसकी २००० प्रतियां अप्रैल, १८९५ में क़ानूनी तौर पर प्रकाशित हुई थीं और जिसमें उनका *नरोदवाद का आर्थिक आशय और श्री स्त्रूवे की पुस्तक में उसकी आलोचना (बुर्जुआ साहित्य में मार्क्सवाद का प्रतिबिंब)* शीर्षक लेख भी छपा था। यह लेख "क़ानूनी मार्क्सवादियों" के विरुद्ध लिखा गया था।

जारशाही सरकार ने इसके वितरण की मनाही कर दी, एक वर्ष तक उसे दबा रखा, फिर ज़ब्त कर लिया और जला दिया। केवल १०० प्रतियां बच पायीं और ये गुप्त रूप से पीटर्सबर्ग और अन्य नगरों के सामाजिक-जनवादियों के बीच बांटी गयीं।—३०

[34] यहां बर्नस्टीन की पुस्तक *समाजवाद की पूर्वावश्यकताएं और सामाजिक-जनवाद के कार्य* की ओर संकेत है, जिसमें मार्क्सवाद का बुर्जुआ सुधारवाद की भावना में संशोधन किया गया था।

Scanned by CamScanner

१९०१ में निम्नलिखित शीर्षकों से यह पुस्तक रूसी में प्रकाशित हुई: १. *ऐतिहासिक भौतिकवाद*, २. *सामाजिक समस्याएं*, ३. *समाजवाद की समस्याएं और सामाजिक-जनवाद के कार्य*।

हेरोस्ट्रेटस—एक यूनानी, जिसने केवल प्रसिद्धि पाने के उद्देश्य से ३५६ ई० पू० में आएथिस स्थित आर्थेमिस के मंदिर को आग लगा दी। यह मंदिर प्राचीन कला का एक उत्कृष्ट नमूना था।—३१

35 ***रूसी सामाजिक-जनवादियों द्वारा विरोध*** लेनिन ने अगस्त, १८९९ में अपने निष्कासन-काल में लिखा था। यह "अर्थवादियों" के एक दल (से० नि० प्रोकोपोविच, ये० द० कुस्कोवा, इत्यादि, जो बाद में कैडेट बन गये) के घोषणापत्र *Credo* के विरुद्ध लक्षित था।

मिनुसीन्स्क क्षेत्र के येर्माकोव्स्कोये नामक गांव में लेनिन द्वारा बुलायी गयी सत्रह निष्कासित मार्क्सवादियों की बैठक में *विरोध* पर चर्चा हुई और उसे एकमत से स्वीकृत किया गया। तुरुखान्स्क और ओर्लोव (व्यात्का गुबेर्निया) में रहनेवाले निष्कासितों ने भी *विरोध* का समर्थन किया।

रूसी सामाजिक-जनवादियों द्वारा विरोध लेनिन ने विदेशों में स्थित 'श्रम-मुक्ति' दल के पास भेजा। १९०० के आरंभ में गे० वा० प्लेखानोव ने इसे *राबोचेये देलो* के संपादकों के लिए *Vademecum* (*मार्गदर्शिका*) लेख-संग्रह में पुनर्मुद्रित किया।—३२

36 ***बिलोये*** (*अतीत*) मुख्यतः नरोदवाद और उससे पहले हो रहे सामाजिक आंदोलनों के इतिहास विषयक एक पत्रिका थी, १९००—१९०७, १९०८-१९१२, १९१७-१९२६ में रूस और विदेशों में प्रकाशित होती रही।—३२

37 ***राबोचाया मीस्ल*** (*मज़दूरों का विचार*)—"अर्थवादियों" का यह समाचारपत्र अक्तूबर, १८९७ से दिसंबर, १९०२ तक प्रकाशित होता रहा। कुल मिलाकर इसके १६ अंक निकले।

लेनिन ने *ईस्क्रा* में प्रकाशित कई लेखों में और *क्या करें?*

Scanned by CamScanner

शीर्षक पुस्तक में *राबोचाया मीस्ल* के दृष्टिकोणों को अंतर्राष्ट्रीय अवसरवाद का रूसी नमूना कहकर उनकी आलोचना की।—३२

[38] **राबोचेये देलो के संपादकों के लिए** *Vademecum*। *'श्रम-मुक्ति' दल द्वारा गे० वा० प्लेखानोव की भूमिका सहित प्रकाशित सामग्रियों का संग्रह* (जेनेवा, फ़रवरी, १९००)। यह रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की क़तारों में अवसरवाद के विरुद्ध और मुख्यतया 'विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' के "अर्थवाद" और उसके पत्र *राबोचेये देलो* के विरुद्ध लक्षित था।—३२

[39] *Profession de foi* (आस्था का प्रतीक, कार्यक्रम, विश्वदृष्टिकोण का निरूपण)—रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की कीयेव समिति का अवसरवादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करनेवाला परचा, जो १८९९ के अंत में जारी किया गया था। बहुत-सी बातों में यह कुख्यात "अर्थवादी" *Credo* से मेल खाता था।—३३

[40] ***राबोचाया मीस्ल का विशेष परिशिष्ट***—*राबोचाया मीस्ल* के संपादकमंडल द्वारा सितंबर, १८९९ में प्रकाशित की गयी पुस्तिका। इस पुस्तिका ने और विशेषकर समाचारपत्र में र० म० के हस्ताक्षरों के साथ प्रकाशित *हमारी वास्तविकता* शीर्षक लेख ने अवसरवादी दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से प्रकट किया।—३६

[41] **'श्रम-मुक्ति' दल**—पहला रूसी मार्क्सवादी ग्रुप। गे० वा० प्लेखानोव ने १८८३ में जेनेवा में इसकी स्थापना की।

'श्रम-मुक्ति' दल ने रूस में मार्क्सवाद के प्रचार में काफ़ी हाथ बंटाया। उसने मार्क्स और एंगेल्स की रचनाओं का रूसी में अनुवाद किया, उन्हें विदेशों में छापा और फिर रूस में बांटा। इसके साथ ही उसने अपने प्रकाशनों द्वारा भी मार्क्सवाद का प्रसार किया। अपने कार्यकलाप से 'श्रम-मुक्ति' दल ने नरोदवाद पर करारी चोट की।

१८८३ और १८८५ में प्लेखानोव ने रूसी सामाजिक-जनवादियों के कार्यक्रम के दो मसविदे बनाये, जिन्हें 'श्रम-मुक्ति' दल ने प्रकाशित किया। यह रूस में

Scanned by CamScanner

सामाजिक-जनवादी पार्टी की स्थापना की दिशा में एक महत्वपूर्ण क़दम था।

'श्रम-मुक्ति' दल ने अंतर्राष्ट्रीय मज़दूर आंदोलन के साथ संपर्क क़ायम किये और १८८९ में दूसरे इंटरनेशनल की पहली पेरिस कांग्रेस से लेकर उसकी अन्य कांग्रेसों में भी रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन का प्रतिनिधित्व किया। परंतु 'श्रम-मुक्ति' दल ने उदारपंथी बुर्जुआ वर्ग की भूमिका को बढ़ा-चढ़ाकर और सर्वहारा क्रांति के रिज़र्व के रूप में किसान समुदाय की क्रांतिकारिता को घटाकर आंकने जैसी गंभीर ग़लतियां भी कीं। ये ग़लतियां आगे चलकर प्लेखानोव और दल के अन्य सदस्यों के मेंशेविक दृष्टिकोणों के रूप में अंकुरित हुईं। – ३७

42 **'रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' की तीसरी कांग्रेस** १९०१ के सितंबर के उत्तरार्द्ध में ज़ूरिच में हुई। इसने विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादी संगठनों के एकीकरण से संबंधित समझौते के मसौदे में संशोधन और अनुपूरक स्वीकृत किये। यह मसौदा जून, १९०१ के जेनेवा सम्मेलन में तैयार किया गया था। कांग्रेस ने *राबोचेये देलो* के संपादकमंडल के लिए निर्देश मंज़ूर किये, जो संशोधनवादियों को प्रोत्साहन देते थे। कांग्रेस के निर्णय 'संघ' के नेताओं के बीच अवसरवादी भावनाओं के प्रभुत्व के और जून सम्मेलन के निर्णयों की उन द्वारा अस्वीकृति के साक्षी थे। – ३७

43 ५ मई, १८७५ को लिखित विल्हेल्म ब्राके के नाम कार्ल मार्क्स का पत्र। – ३९

44 **गोथा कार्यक्रम** – १८७५ की गोथा कांग्रेस में जर्मनी की समाजवादी मज़दूर पार्टी द्वारा स्वीकृत कार्यक्रम। तब तक स्वतंत्र रूप से विद्यमान आइज़ेनाख़वादी और लासालवादी पार्टियां इस कांग्रेस में आपस में मिलकर एक पार्टी बन गयीं। वह कार्यक्रम सारसंग्रहवादी और अवसरवादी था, क्योंकि आइज़ेनाखवादियों ने अत्यंत महत्वपूर्ण प्रश्नों पर लासालवादियों के आगे घुटने टेक दिये थे और लासालवादियों के सूत्र स्वीकृत

Scanned by CamScanner

किये थे। का० मार्क्स और फ़्रे० एंगेल्स ने गोथा कार्यक्रम के मसौदे की कटु आलोचना की और उसे आइज़ेनाखवादियों के १८६९ के कार्यक्रम की तुलना में एक क़दम पीछे हटना बताया।—३९

45 **प्रूदोंवाद**—फ़्रांसीसी अराजकतावादी प्रूदों द्वारा प्रतिपादित एक मार्क्सवाद विरोधी, टुटपुंजिया समाजवादी मत। प्रूदों पूंजीवाद की कटु आलोचना करते थे, किंतु उसका विकल्प उन्हें पूंजीवादी उत्पादन की पद्धति के, जोकि अनिवार्यतः ग़रीबी, असमानता और मेहनतकशों के शोषण को जन्म देती है, खात्मे में नहीं, वरन पूंजीवाद के "संशोधन" में, कतिपय सुधार लागू करके उसकी कमियों और दोषों को दूर करने में ही दिखाई देता था। वह छोटे पैमाने के निजी स्वामित्व को शाश्वत बनाने के स्वप्न देखते थे और उन्होंने इसके लिए "सार्वजनिक" और "विनिमय" बैंक स्थापित करने का प्रस्ताव किया, जिनकी मदद से मज़दूर, उनकी राय में, अपने उत्पादन के साधन खरीद सकते थे, दस्तकार बन सकते थे और अपने मालों की "समुचित" बिक्री सुनिश्चित कर सकते थे। सर्वहारा की ऐतिहासिक भूमिका की बात प्रूदों की समझ में नहीं आती थी, इसलिए वर्ग संघर्ष, सर्वहारा क्रांति और सर्वहारा अधिनायकत्व के प्रति उनका रवैया नकारात्मक रहा। वह अराजकतावादी दृष्टिकोण से राज्य की आवश्यकता से भी इनकार करते थे। पहले इंटरनेशनल पर अपने दृष्टिकोण थोपने की प्रूदों की कोशिशों का मार्क्स और एंगेल्स ने निरंतर विरोध किया। प्रूदोंवाद के विरुद्ध उनके व उनके अनुयायियों के संघर्ष का समापन पहले इंटरनेशनल में मार्क्सवाद की पूर्ण विजय में हुआ।—४१

46 व्ला० इ० लेनिन का संकेत १८९६ में पीटर्सबर्ग के कपड़े कारखानों के मज़दूरों की बड़ी हड़ताल की ओर है, जो मिल मालिकों द्वारा मज़दूरों को पूरा वेतन देने से इनकार किये जाने के विरोध में हुई थी। २३ मई को कालीन्किन कारखाने में हड़ताल शुरू हुई। इस हड़ताल की लपटें बड़ी तेज़ी से पीटर्सबर्ग की मुख्य सूती और बुनाई मिलों तक और बाद में

Scanned by CamScanner

बड़े मशीन निर्माण कारख़ानों और दूसरी मिलों तक फैल गयीं। यह शोषण के विरुद्ध पीटर्सबर्ग के मज़दूरों की बड़े पैमाने की पहली कार्रवाई थी। ३०,००० से अधिक मज़दूर हड़ताल में शामिल हुए। हड़ताल का नेतृत्व पीटर्सबर्ग की 'मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करनेवाली लीग' द्वारा किया गया।

पीटर्सबर्ग की हड़तालों ने मास्को तथा रूस के अन्य नगरों में मज़दूर आंदोलन के विकास को बढ़ावा दिया और ज़ारशाही सरकार को कारख़ाना क़ानूनों में सुधार करने और २ (१४) जून, १८९७ को एक नया क़ानून जारी करने के लिए मजबूर कर दिया। इस क़ानून के अनुसार काम का दिन घटाकर साढ़े ग्यारह घंटों का कर दिया गया।—४५

47 **'मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करनेवाली लीग'**— व्ला० इ० लेनिन, अ० अ० वानेयेव, प० कु० ज़पोरोजेत्स, ग० मा० क्रजिजानोव्स्की, न० को० क्रूप्स्काया, यू० ओ० मार्तोव, आदि द्वारा पीटर्सबर्ग की कोई २० मार्क्सवादी मज़दूर मंडलियों को मिलाकर बनाया गया संगठन। लीग को गुप्त रूप से काम करना पड़ता था। उसका सारा कार्यकलाप केंद्रीयतावाद और कठोर अनुशासन पर आधारित था। वह मज़दूरों के आंदोलन का निदेशन करती थी और मज़दूरों के आर्थिक मांगों के लिए संघर्ष को राजनीतिक संघर्ष के साथ जोड़ती थी। लेनिन ने इस लीग को मज़दूर वर्ग की क्रांतिकारी पार्टी का भ्रूण-रूप कहा था।

दिसंबर, १८९५ में ज़ारशाही सरकार ने लेनिन और लीग के अन्य नेताओं को गिरफ़्तार करके साइबेरिया निर्वासित कर दिया। लीग का नेतृत्व अब "तरुण" कहलाये जानेवालों के हाथों में आ गया, जिनकी आस्था "अर्थवादी" विचारों में ही थी।—४८

48 ***रूस्काया स्तारिना*** *(रूसी प्राचीन काल)*—ऐतिहासिक मासिक पत्रिका, जो पीटर्सबर्ग में १८७० सें १९१८ तक प्रकाशित होती रही। पत्रिका मे मुख्यतया रूस के राजनीतिज्ञों और रूसी संस्कृति के प्रतिनिधियों के संस्मरण, डायरियां, टिप्पणियां और

Scanned by CamScanner

पत्र प्रकाशित हुआ करते थे। विविध प्रकार की दस्तावेज़ी सामग्री भी इसमें दी जाती थी।—४८

[49] यहां २७ अप्रैल (९ मई), १८९५ को यारोस्लाव्ल के बड़े कारख़ाने के हड़तालियों पर किये गये ज़ुल्म की ओर संकेत है। कारख़ाने के प्रबंधकों ने मज़दूरी की नयी दरें लागू कीं, जिससे मज़दूरों को नुक़सान पहुंचा। इसी कारण हड़ताल हुई, जो सख़्ती से कुचल दी गयी।

१८९५ की यारोस्लाव्ल हड़ताल के संबंध में लेनिन ने एक लेख लिखा था, पर उसकी प्रति अभी तक मिल नहीं पायी है।—४८

[50] ***संक्त-पेतेरबूर्गस्की राबोची लिस्तोक*** *(सेंट पीटर्सबर्ग का मज़दूर पत्र)*—पीटर्सबर्ग की 'मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करनेवाली लीग' द्वारा प्रकाशित समाचारपत्र। उसके दो ही अंक निकल पाये—पहला अंक फ़रवरी, १८९७ में रूस में छपा (उस पर जनवरी की तिथि मुद्रित थी) और दूसरा अंक सितंबर, १८९७ में जेनेवा में।—४९

[51] यहां ***रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी के घोषणापत्र*** की ओर संकेत है, जो १८९८ में उसकी केंद्रीय समिति द्वारा पार्टी की पहली कांग्रेस के आदेश पर तथा उसके नाम से प्रकाशित किया गया था। इस *घोषणापत्र* ने राजनीतिक स्वतंत्रता के तथा तानाशाही का तख़्ता उलटने के संघर्ष को रूसी सामाजिक-जनवाद के लिए सर्वप्रथम कार्यभार बना दिया और राजनीतिक संघर्ष को मज़दूर आंदोलन के सामान्य उद्देश्यों के साथ जोड़ दिया।—४९

[52] लेनिन द्वारा उल्लिखित "अनौपचारिक बैठक" पीटर्सबर्ग में १४ और १७ फ़रवरी (नये कैलेंडर के अनुसार २६ फ़रवरी—१ मार्च), १८९७ के बीच हुई। इसमें उपस्थित थे व्ला० इ० लेनिन, अ० अ० वानेयेव, ग० मा० क्रजिजानोव्स्की और पीटर्सबर्ग की 'मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करनेवाली लीग' के अन्य सदस्य—साइबेरिया में निष्कासित किये जाने से

Scanned by CamScanner

पहले तीन दिन के लिए जेल से रिहा किये गये "पुराने" सदस्य–और वे "तरुण" नेता, जिन्होंने लेनिन की गिरफ़्तारी के बाद 'लीग' की बागडोर संभाली।–५१

53 ***लिस्तोक 'राबोत्निका'*** *('राबोत्निक' का पन्ना)*–'विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' का अनियतकालिक पत्र। यह जेनेवा में १८९६ से १८९८ तक प्रकाशित होता रहा। कुल मिलाकर इसके दस अंक निकले। १-८ अंकों का संपादन 'श्रम-मुक्ति' दल ने किया। जैसे ही 'संघ' का बहुमत "अर्थवाद" की ओर झुकने लगा, 'श्रम-मुक्ति' दल ने 'संघ' के प्रकाशनों का संपादन करने से इनकार कर दिया। *लिस्तोक* के ९-१० अंकों (नवंबर, १८९८) का संपादन "अर्थवादियों" ने किया।–५१

54 व० इ० का लेख–"अर्थवाद" के एक नेता व्लादीमिर पाव्लोविच इवानशिन का एक लेख।–५२

55 ज़ार की राजनीतिक पुलिस के लोग नीली वर्दी पहनते थे।–५२

56 **व० व०**–गत सदी के अंतिम दो दशकों के उदारपंथी नरोदवाद के एक विचारधारा-निरूपक वसीली पाव्लोविच वोरोन्त्सोव का छद्मनाम। "रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन के व० व० जैसे महाशय" से लेनिन का तात्पर्य रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन में पाये जानेवाले अवसरवादी रुझान के प्रवक्ताओं, अर्थात "अर्थवादियों" से है।–५४

57 *Die Neue Zeit (नया ज़माना)*–जर्मन की सामाजिक-जनवादी पार्टी की सैद्धांतिक पत्रिका। यह १८८३ से १९२३ तक स्टुटगार्ट से प्रकाशित होती रही। कार्ल मार्क्स और फ़्रेडरिक एंगेल्स के कई लेख इसमें प्रकाशित हुए। एंगेल्स अकसर पत्रिका के संपादकों को सलाह दिया करते थे और मार्क्सवाद से भटक जाने के लिए उनकी कड़ी आलोचना करते थे। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक के उत्तरार्द्ध में पत्रिका

Scanned by CamScanner

ने संशोधनवादियों के लेख प्रकाशित करने शुरू किये। उनमें बर्नस्टीन की *समाजवाद की समस्याएं* शीर्षक लेख-माला भी थी, जिसने मार्क्सवादियों के खिलाफ़ संशोधनवादियों की मुहिम शुरू की।—५६

58 **आस्ट्रियाई सामाजिक-जनवादी पार्टी की वियेना कांग्रेस** २—६ नवंबर, १९०१ में हुई। इसमें पुराने हाइनफ़ेल्ड कार्यक्रम (१८८८) के स्थान में पार्टी का नया कार्यक्रम स्वीकृत किया गया। १८९९ की ब्रून कांग्रेस के निर्देशों पर एक विशेष समिति द्वारा तैयार किये गये नये कार्यक्रम के मसौदे में बर्नस्टीनवाद को महत्वपूर्ण रिआयतें दी गयीं।—५६

59 यहां तात्पर्य ज़ारशाही राजनीतिक पुलिस के कर्नल से० व० ज़ुबातोव की पहल पर राजनीतिक पुलिस के एजेंटों के नेतृत्व में "मज़दूर सोसायटियां" बनाये जाने के प्रयासों से है। इनका उद्देश्य था निरंकुश सत्ता के विरुद्ध राजनीतिक संघर्ष से मज़दूरों को विमुख करना। पहली "सोसायटी" मई, १९०१ में मास्को में 'मशीनी उद्योग के मज़दूरों की परस्पर सहायता सोसायटी' के नाम से स्थापित हुई थी। बाद में पीटर्सबर्ग, मीन्स्क, कीयेव और दूसरे नगरों में भी ऐसी सोसायटियां क़ायम की गयीं।

उनके प्रतिक्रियावादी स्वरूप को बेनक़ाब करते हुए क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादियों ने मज़दूर वर्ग के व्यापक हल्क़ों को निरंकुशतंत्र के विरुद्ध संघर्ष में खींचने के लिए वैध मज़दूर संगठनों का इस्तेमाल किया। १९०३ में क्रांतिकारी आंदोलन के उभार के कारण ज़ारशाही सरकार को मजबूर होकर ज़ुबातोवी सोसायटियों को भंग कर देना पड़ा।—५९

60 **हिर्श और डुंकेर ट्रेड-यूनियनें**—बुर्जुआ प्रगतिवादी पार्टी के नेता माक्स हिर्श और फ्रांज़ डुंकेर द्वारा १८६८ में क़ायम की गयी जर्मनी की सुधारवादी ट्रेड-यूनियनें। पूंजी और श्रम के हितों की "सुसंगति" के विचार का प्रचार करते हुए हिर्श और डुंकेर ट्रेड-यूनियनों के संगठक मानते थे कि ट्रेड-यूनियनों में मज़दूरों के साथ पूंजीपतियों को भी प्रवेश करने की अनुमति दी जा

Scanned by CamScanner

सकती है। हड़तालों की आवश्यकता से वे इनकार करते थे। उनका यह कहना था कि पूंजीवादी समाज में भी बुर्जुआ राज्य के क़ानूनों और ट्रेड-यूनियन संगठनों के ज़रिए पूंजीवादी शोषण से मज़दूरों को मुक्त किया जा सकता है। उनके मतानुसार ट्रेड-यूनियनों का मुख्य काम था मालिकों और मज़दूरों के बीच मध्यस्थता करना और धन-संग्रह करना। उनकी गतिविधियां मुख्यतया पारस्परिक सहायता संस्थाओं और शैक्षणिक क्लबों तक ही सीमित हो गयीं।—६०

61 **'मज़दूर वर्ग की आत्म-मुक्ति दल'**—पीटर्सबर्ग में १८९८ की शरद में "अर्थवादियों" द्वारा स्थापित एक छोटा-सा ग्रुप। कुछ ही महीनों के अपने अल्प जीवन में इसने अपने लक्ष्य प्रस्तुत करनेवाला एक घोषणापत्र (मार्च, १८९९; *नकानूने* नामक पत्रिका में जुलाई, १८९९ में प्रकाशित), नियमावली और मज़दूरों के बीच बांटने के लिए कई परचे प्रकाशित किये।—६२

62 ***नकानूने*** *(पूर्ववेला)*—लंदन में नरोदवादी प्रवृत्ति की एक मासिक पत्रिका, जो रूसी भाषा में जनवरी, १८९९ से फ़रवरी, १९०२ तक प्रकाशित होती रही। इसके कुल ३७ अंक निकले।—६३

63 **नरोदवाद**—रूसी क्रांतिकारी आंदोलन में एक टुटपुंजिया प्रवृत्ति। यह १९वीं शताब्दी के सातवें और आठवें दशकों में उत्पन्न हुई। नरोदवादियों ने निरंकुश सत्ता की समाप्ति और भूस्वामियों की ज़मीनें किसानों को देने की मांग की। वे अपने को समाजवादी मानते थे, लेकिन उनका समाजवाद काल्पनिक था।

उन्होंने यह बात अस्वीकार की कि रूस में पूंजीवादी संबंधों का विकास अनिवार्य है। इसीलिए उनकी धारणा थी कि मुख्य क्रांतिकारी शक्ति सर्वहारा नहीं, बल्कि किसान है। वे ग्राम-समुदाय को समाजवाद का भ्रूण-रूप मानते थे। उनकी गतिविधियां सक्रिय "नायकों" और निष्क्रिय "जन-समूह" वाले भ्रांतिपूर्ण सिद्धांत पर आधारित थीं। किसानों को निरंकुशतंत्र

Scanned by CamScanner

के विरुद्ध संघर्ष के लिए प्रेरित करने के प्रयत्न में नरोदवादी देहाती इलाक़ों में, जनता के पास (रूसी भाषा में "जनता" का मतलब "नरोद" है, इसी कारण ये लोग "नरोदवादी" कहलाये गये) गये, पर वहां उन्हें कोई समर्थन न मिला।

नरोदवाद का विकास क्रांतिकारी जनवाद से उदारतावाद तक की कई मंज़िलों से गुज़रा।

१९वीं शताब्दी के नौवें और अंतिम दशकों में नरोदवादियों ने ज़ारशाही के प्रति समझौतावादी रुख़ अपनाया, कुलकों के हित व्यक्त किये और मार्क्सवाद का विरोध किया।—६८

64 यहां *Der Sozialdemokrat (सामाजिक-जनवादी)* नामक अख़बार की ओर संकेत है। समाजवादियों के विरुद्ध असाधारण क़ानून के अमल के दौरान यह जर्मनी की सामाजिक-जनवादी पार्टी का केंद्रीय मुखपत्र था। अख़बार सितंबर, १८७९ से सितंबर, १८८८ तक ज़ूरिच में और फिर अक्तूबर, १८८८ से सितंबर, १८९० तक लंदन में प्रकाशित होता रहा।—६९

65 न० बेल्तोव के छद्मनाम से गे० वा० प्लेख़ानोव ने *इतिहास के अद्वैतवादी दृष्टिकोण का विकास* शीर्षक अपनी विख्यात कृति क़ानूनी तौर पर प्रकाशित की (पीटर्सबर्ग, १८९५)।—७१

66 यहां यू० ओ० मार्तोव की *अति आधुनिक रूसी समाजवादी का तराना* शीर्षक व्यंग्यात्मक कविता की ओर संकेत है। यह अप्रैल, १९०१ में *ज़ार्या* के पहले अंक में "नरसिस तुपोरीलोव" के हस्ताक्षरों के साथ प्रकाशित हुई थी। कविता में "अर्थवादियों" और उन द्वारा अपने को स्वतःस्फूर्त आंदोलन के अनुसार ढाले जाने का मज़ाक़ उड़ाया गया था।—७२

67 यहां 'विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' की ओर संकेत है (देखें टिप्पणी १६)।—८०

68 १८८९ में ज़ार की सरकार ने किसानों पर ज़मींदारों की सत्ता दृढ़ करने के उद्देश्य से जेम्स्त्वो (ज़िला बोर्ड) के

Scanned by CamScanner

अधिकारियों का प्रशासकीय पद स्थापित किया था। जेम्स्त्वो के अधिकारी स्थानीय अभिजात ज़मींदारों में से नियुक्त किये जाते थे और उन्हें किसानों के ऊपर न केवल प्रशासकीय, बल्कि न्यायिक अधिकार भी प्राप्त था, यहां तक कि वे किसानों को गिरफ़्तार कर सकते थे तथा शारीरिक दंड भी दे सकते थे।—८१

69 **बुंद—'लिथुआनिया, पोलैंड और रूस का सामान्य यहूदी मज़दूर संघ'**—यहूदी सामाजिक-जनवादी दलों की १८९७ में वील्नो में आयोजित संस्थापक कांग्रेस में क़ायम किया गया। यह मुख्यतः रूस के पश्चिमी प्रदेशों के अर्द्ध-सर्वहारा यहूदी कारीगरों की संस्था थी।

बुंद रूस के मज़दूर आंदोलन में राष्ट्रवाद और पार्थक्यवाद का वाहक था और इसने सामाजिक-जनवादी आंदोलन के मुख्य प्रश्नों पर अवसरवादी रवैया अपनाया।—८२

70 रूस में १९ फ़रवरी, १८६१ के भूदास प्रथा उन्मूलन क़ानून के अनुसार जो ज़मीन किसानों को मिली, उसके लिए उन्हें ज़मींदारों को **मुआवज़ा** देना ज़रूरी था। मुआवज़े की कुल रक़म ज़मीन की असली क़ीमत से कहीं अधिक थी। इस तरह किसानों ने न केवल ज़मीन के लिए, जिस पर वे बहुत समय से काश्त कर रहे थे, बल्कि स्वयं अपनी मुक्ति के लिए भी ज़मींदारों को मुआवज़ा दिया। मुआवज़े की रक़म बहुत अधिक और अधिकांश किसानों के बूते के बाहर होने के कारण असंख्य किसान ग़रीब और दाने-दाने के लिए मोहताज हो गये।

१९०५—१९०७ की पहली रूसी क्रांति के दौरान किसान आंदोलन ने ज़ार की सरकार को जनवरी, १९०७ से मुआवज़े की अदायगी रोकने पर बाध्य किया।—८७

71 १८९१—१८९२ से रूस में बार-बार अकाल पड़ रहा था। किंतु सरकार ने अकाल पीड़ितों को राहत पहुंचाने के बजाय उन सामाजिक संगठनों, ज़ेम्स्त्वो संस्थाओं, डाक्टरों और समाजसेवियों को सताना शुरू किया, जो अपनी ही पहल पर चंदा तथा अनाज इकट्ठा करके, भोजनालय तथा चिकित्सा केंद्र

Scanned by CamScanner

खोलकर और दूसरे भी कई अन्य उपायों से अकाल पीड़ितों की सहायता कर रहे थे। जब १९०१ में कई गुबेर्नियाओं में फिर अकाल पड़ा, तो ज़ारशाही सरकार के गृहमंत्री सिप्यागिन ने उन गुबेर्नियाओं के गवर्नरों के नाम एक गश्ती पत्र भेजा, जिसमें अकाल पीड़ितों को सामाजिक संगठनों तथा ग़ैर सरकारी लोगों द्वारा दी जानेवाली सहायता की आलोचना की गयी थी और कहा गया था कि इन संगठनों व लोगों की गतिविधियों पर कड़ी नज़र रखी जाये, क्योंकि "पूरी तरह पूर्ण न होनेवाली आवश्यकताएं, ऐसी हालत में अनिवार्यतः पैदा होनेवाली बीमारियां और आर्थिक गड़बड़ियां सरकार विरोधी आंदोलन के लिए काफ़ी अनुकूल ज़मीन तैयार करती हैं।" फलस्वरूप कई अकाल पीड़ित गुबेर्नियाओं में उनके गवर्नरों ने सार्वजनिक संगठनों और ग़ैर सरकारी लोगों द्वारा भोजनालय खोले जाने और राहत के दूसरे उपाय किये जाने पर पाबंदी लगा दी। — ८८

72 यहां आशय ज़ारशाही सरकार द्वारा १५ सितंबर, १९०१ को प्रकाशित **अस्थायी नियमों** से है, जो अकाल पीड़ित किसानों को रेलमार्गों के निर्माण, आदि कार्यों पर भेजने के लिए ज़ेम्स्त्वो के अधिकारियों को उत्तरदायी बनाते थे। इस दस्तावेज़ के अनुसार किसानों के अधिकार, जो वैसे भी कोई अधिक न थे, और सीमित कर दिये गये थे और आर्टेलों के मज़दूरों को निर्वासित लोगों की भांति विशेष अधिकारियों की देखरेख में काम की जगहों पर भेजने की व्यवस्था की गयी। — ८८

73 यहां आशय पीटर्सबर्ग, मास्को, कीयेव, खार्कोव, कज़ान, तोम्स्क तथा दूसरे रूसी नगरों में मज़दूरों तथा विद्यार्थियों द्वारा फ़रवरी — मार्च, १९०१ में आयोजित व्यापक राजनीतिक प्रदर्शनों, मीटिंगों, हड़तालों, आदि से है।

१९००—१९०१ का विद्यार्थी आंदोलन विशुद्ध विद्यार्थी मांगों को लेकर शुरू हुआ था, मगर शीघ्र ही उसने निरंकुश सत्ता की प्रतिक्रियावादी नीति विरोधी क्रांतिकारी राजनीतिक कार्रवाइयों का रूप ग्रहण कर लिया। सभी अग्रणी मज़दूर

Scanned by CamScanner

उसका समर्थन करने लगे। रूसी समाज के विभिन्न तबक़ों में भी उसकी अनुकूल प्रतिक्रिया हुई। फ़रवरी–मार्च, १९०१ के प्रदर्शनों तथा हड़तालों का तात्कालिक कारण यह था कि कीयेव विश्वविद्यालय के १८३ विद्यार्थियों को फ़ौज में जबरन भरती किया जाना था, क्योंकि उन्होंने विद्यार्थी सभा में भाग लिया था।

सरकार ने क्रांतिकारी कार्रवाइयों का क्रूरतापूर्वक दमन किया: पुलिस और कज़्ज़ाक सैनिकों ने प्रदर्शनों को तितर-बितर किया और उनमें भाग लेनेवालों पर डंडे बरसाये। सैकड़ों विद्यार्थियों को गिरफ़्तार और उच्च शिक्षा संस्थाओं से निष्कासित किया गया। उन लोगों पर तो बहुत ही अत्याचार ढाये गये, जिन्होंने पीटर्सबर्ग के कज़ान गिरजे के पास के मैदान में ४ (१७) मार्च, १९०१ को हुए प्रदर्शन में भाग लिया था।–९८

74 ***स्वोबोदा*** *(स्वतंत्रता)*–इसी नाम के दल द्वारा १९०१–१९०२ में स्विट्ज़रलैंड में प्रकाशित पत्रिका। यह दल मई, १९०१ में स्थापित हुआ और उसने अपने को "क्रांतिकारी-समाजवादी" दल कहा। पत्रिका के केवल दो अंक निकले: पहला १९०१ में और दूसरा १९०२ में। उक्त दल ने अपने प्रकाशनों में "अर्थवाद" और आतंकवाद के विचार प्रस्तुत किये और रूस के *ईस्क्रा* विरोधी दलों का समर्थन किया। १९०३ में इस दल का अस्तित्व समाप्त हो गया।–१०१

75 देखें कार्ल मार्क्स और फ़्रेडरिक एंगेल्स, *कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र* (का० मार्क्स, फ़्रे० एंगेल्स, संकलित रचनाएं, तीन खंडों में, खंड १, भाग १, मास्को, प्रगति प्रकाशन, १९७६, पृ० १६१)।–१११

76 **ज़ेम्स्त्वो**–१८६४ में ज़ारशाही रूस की मध्यवर्ती गुबेर्नियाओं में स्थापित स्वायत्त शासन संस्थाएं, जिनमें अभिजात वर्ग के प्रतिनिधियों को प्रमुखता प्राप्त थी। उनका अधिकार क्षेत्र शुद्धतः स्थानीय आर्थिक मसलों (अस्पतालों की व्यवस्था, सड़कों का निर्माण, आंकड़ा संकलन, बीमा, इत्यादि) तक ही

Scanned by CamScanner

सीमित था। गुबेर्नियाई गवर्नर और गृह मंत्रालय उनके कार्य पर निगरानी रखते थे और उन्हें सरकार के लिए अप्रिय निर्णय लेने से रोक सकते थे। उनके अधिकारियों में प्रमुख स्थान उदारमना बुद्धिजीवियों – डाक्टरों, कृषिविदों तथा अध्यापकों का था। २०वीं सदी के आरंभ तक उदारतावादी ज़ेम्स्त्वो अधिकारियों के विपक्ष आंदोलन में तेज़ी आने लगी। सभाओं में ज़ेम्स्त्वो संस्थाओं के अधिकार बढ़ाने के मसविदे, ज़ार के नाम ऐसे प्रार्थनापत्र स्वीकार किये जाते थे, जिनमें सुधारों की मांग की जाती थी, आदि। ज़ार सरकार ने इस आंदोलन के उत्तर में दमनचक्र चलाया। – १२२

[77] ज़ार अलेक्सान्द्र द्वितीय का रूस में भूदास प्रथा के उन्मूलन से संबंधित घोषणापत्र १९ फ़रवरी, १८६१ को जारी किया गया था। इस घटना की ४०वीं वर्षगांठ पर *ईस्क्रा* के अंक ३ में व्ला० इ० लेनिन का एक लेख छपा, जिसका शीर्षक था *मज़दूरों की पार्टी और किसान*। – १२५

[78] यहां अभिप्राय वित्तमंत्री से० यू० वीत्ते के गुप्त ज्ञापन से है, जिसे स्टुटगार्ट से निकलनेवाली पत्रिका *ज़ार्या* ने १९०१ में *निरंकुशता और ज़ेम्स्त्वो* शीर्षक से और र० न० स० (प० बे० स्त्रूवे) की भूमिका के साथ छापा था। ज्ञापन में वीत्ते ने, जो ज़ेम्स्त्वो की संस्था के घोर विरोधी थे, सिद्ध किया था कि ज़ेम्स्त्वो की संस्था निरंकुशतंत्र से क़तई मेल नहीं खाती। ज्ञापन में उल्लिखित तथ्यों से स्पष्ट था कि ज़ारशाही सरकार ज़ेम्स्त्वो की संस्था की स्थापना के समय से ही उनके अधिकारों को उत्तरोत्तर सीमित करने की नीति पर चल रही थी। स्त्रूवे ने अपनी भूमिका में ज्ञापन की बुर्जुआ उदारतावादी दृष्टिकोण से आलोचना की थी। – १२५

[79] यहां अभिप्राय ज़ारशाही सरकार द्वारा ८ जून, १९०१ को जारी किये गये उस क़ानून से है, जो साइबेरिया में ग़ैर सरकारी लोगों को सरकारी भूमि के आवंटन से संबंधित था। यह क़ानून साइबेरिया में भूमि ख़रीदनेवाले और उसे लगान पर लेनेवाले अभिजात लोगों को बड़ी-बड़ी रिआयतें देता था। *ईस्क्रा*

Scanned by CamScanner

के अंक ८ में लेनिन ने इस क़ानून के बारे में *सामंतवादी काम करते हुए* शीर्षक एक लेख छापा था।– १२५

80 ***रोस्सीया*** *(रूस)*– १८९९ से १९०२ तक पीटर्सबर्ग में प्रकाशित नरम उदारतावादी दैनिक पत्र।– १२५

81 ***संक्त-पेतेरबूर्गस्कीये वेदोमोस्ती*** *(सेंट पीटर्सबर्ग रेकार्डर)*– १७२८ से १९१७ तक पीटर्सबर्ग में प्रकाशित समाचारपत्र।– १२८

82 ***रूस्कीये वेदोमोस्ती*** *(रूसी रेकार्डर)*– १८६३ से १९१८ तक मास्को में प्रकाशित समाचारपत्र। वह नरम उदारतावादी बुद्धिजीवियों के दृष्टिकोण प्रस्तुत करता था। १९०५ से यह कैडेट पार्टी के दक्षिण पक्ष का मुखपत्र बन गया।– १२८

83 **वर्ग संघर्ष की ब्रेंतानो धारणा, "ब्रेंतानोवाद"**– एक उदारतावादी-बुर्जुआ मत, जो पूंजीवाद के दायरे में ही कारख़ाना क़ानून बनाये जाने और ट्रेड-यूनियनों में मज़दूरों के संगठन के ज़रिए उनके सवालों के हल किये जाने की संभावना का समर्थन करता है। म्यूनिख़ विश्वविद्यालय के राजनीतिक अर्थशास्त्र के प्रोफ़ेसर, कैथेडेर-समाजवादी मत के एक मुख्य प्रतिनिधि लूयो ब्रेंतानो के नाम पर इसका नामकरण हुआ है।– १२८

84 यहां संकेत पीटर्सबर्ग में १८९९ के वसंत में व० गुतोव्स्की द्वारा स्थापित **'श्रम बनाम पूंजी दल'** की ओर है। इस दल में कई मज़दूर और बुद्धिजीवी शामिल थे। पीटर्सबर्ग के मज़दूर आंदोलन से दल का घनिष्ठ संपर्क नहीं था और १८९९ की गर्मियों में लगभग सभी सदस्यों की गिरफ़्तारी के बाद वह टूट गया। इसके दृष्टिकोण "अर्थवादियों" के दृष्टिकोण जैसे थे।– १३६

85 **नरसिस**– पुराने यूनान की एक दंतकथा में एक बहुत ख़ूबसूरत युवक, जो पानी में अपने प्रतिबिंब के प्रेम में पड़ गया; आलंकारिक अर्थ में आत्मप्रेम में पड़नेवाला व्यक्ति।– १३९

Scanned by CamScanner

86 अक्सेलरोद की पुस्तिका *रूसी सामाजिक-जनवादियों के वर्तमान कार्यभार और कार्यनीति* के प्रसंग में N. N. (से० नि० प्रोकोपोविच) का उत्तर गे० वा० प्लेख़ानोव ने *राबोचेये देलो के संपादकों के लिए Vademecum* में १९०० में छापा था। अपने उत्तर में N. N. ने अक्सेलरोद की "अर्थवादी" दृष्टिकोण से आलोचना की।– १४४

87 यहां संकेत शायद लेनिन की अ० स० मार्तीनोव के साथ पहली भेंट की ओर है, जो १९०१ में हुई थी।– १४६

88 ज़ुबातोववाद के बारे में टिप्पणी ५९ देखें।– १४९

89 **स्त्रूवेवाद** – "क़ानूनी मार्क्सवाद"। देखें टिप्पणी ३१।– १५०

90 **अफ़ानासी इवानोविच और पुलख़ेरिया इवानोव्ना** – रूसी लेखक नि० व० गोगोल की कहानी *अतीत के ज़मींदार* में कूपमंडूक ज़मींदार पात्रों की जोड़ी।– १५१

91 यहां लेनिन का संकेत पीटर्सबर्ग के सामाजिक-जनवादियों ("पुराने" सदस्यों) के अध्ययन-मंडल की ओर है। इसके प्रधान लेनिन ही थे। वह १८९५ में 'मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करनेवाली लीग' की स्थापना का आधार बना।– १६४

92 **'ज़ेम्ल्या इ वोल्या' के सदस्य** – क्रांतिकारी नरोदवादियों के गुप्त संगठन के सदस्य। 'ज़ेम्ल्या इ वोल्या' ('ज़मीन और आज़ादी') १८७६ की शरद में पीटर्सबर्ग में स्थापित किया गया था।

यह संगठन घोर केंद्रीयकरण तथा अनुशासन के आधार पर बना था। अंतिम लक्ष्य के रूप में समाजवाद से इनकार न करते हुए इस संगठन ने "जनता की वर्तमान मांग" के, अर्थात "ज़मीन और आज़ादी" की मांग के अमल को निकटतम लक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया।

Scanned by CamScanner

'जेम्ल्या इ वोल्या' के सदस्य किसानों को रूस में मुख्य क्रांतिकारी शक्ति मानते थे और उन्होंने ज़ारशाही सत्ता के विरुद्ध संघर्ष के लिए उन्हें जागृत करने का प्रयत्न किया। रूस की कई गुबेर्नियाओं में उन्होंने आंदोलन किया।

किसानों के बीच असफल समाजवादी आंदोलन और बढ़ते हुए सरकारी दमन के परिणामस्वरूप १८७९ में 'जेम्ल्या इ वोल्या' संगठन में एक आतंकवादी दल तैयार हुआ। इसने किसानों के बीच क्रांतिकारी कार्य चलाने से इनकार कर दिया। इसका विश्वास था कि ज़ारशाही सरकार के सदस्यों के विरुद्ध आतंकपूर्ण कार्रवाइयां ही ज़ारशाही विरोधी संघर्ष का मुख्य साधन हैं। १८७९ में वोरोनेज में आयोजित एक कांग्रेस में 'जेम्ल्या इ वोल्या' दो संगठनों में विभक्त हो गया। ये थे 'नरोदनाया वोल्या' ('जन-संकल्प') और 'चोर्नी पेरेदेल' ('आम भूमि पुनर्वितरण')। पहले ने आतंकवादी मार्ग अपनाया, जबकि दूसरा 'जेम्ल्या इ वोल्या' का ही दृष्टिकोण अपनाये रहा। बाद को 'चोर्नी पेरेदेल' के अनुयायियों के एक दल—प्लेख़ानोव, अक्सेलरोद, ज़ासूलिच, डेयच, इग्नातोव—ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण अपनाया और १८८३ में विदेशों में पहला रूसी मार्क्सवादी संगठन—'श्रम-मुक्ति' दल—स्थापित किया।—१७४

[93] यहां संकेत ***पेरिस में १९०० में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी कांग्रेस के सामने प्रस्तुत की गयी रूसी सामाजिक-जनवादी आंदोलन विषयक रिपोर्ट*** की ओर है। यह रिपोर्ट 'रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' द्वारा १९०१ में जेनेवा में प्रकाशित की गयी। और उसे 'संघ' के निर्देश के अनुसार *राबोचेये देलो* के संपादकमंडल ने लिखा था।—१८६

[94] यहां लेनिन का आशय *राबोचाया मीस्ल के विशेष परिशिष्ट* के सितंबर, १८९९ के अंक में प्रकाशित र० म० के लेख *हमारी वास्तविकता* की उस वितंडात्मक टिप्पणी से है, जो अध्याय ३ के अनुच्छेद "ख" में उद्धृत की गयी है (देखें प्रस्तुत संस्करण पृ० १०३)।—१९२

Scanned by CamScanner

95 **यूज्नी राबोची** (*दक्षिणी मज़दूर*)—इसी नाम के एक दल द्वारा जनवरी, १९०० से अप्रैल, १९०३ तक ग़ैर क़ानूनी ढंग से प्रकाशित समाचारपत्र। इसके बारह अंक निकले। यह पत्र मुख्यतया रूस के दक्षिणी इलाक़ों में सामाजिक-जनवादी संगठनों में वितरित किया गया था।—१९३

96 यहां व्ला० इ० लेनिन के मन में *राबोचाया मीस्ल* द्वारा प्रकाशित *रूस के मज़दूर वर्ग की स्थिति के संबंध में प्रश्न* (१८९८) शीर्षक परचा और *रूस के मज़दूर वर्ग की स्थिति के संबंध में सामग्री एकत्रित करने के लिए प्रश्न* (१८९९) शीर्षक पुस्तिका है। मज़दूरों के रहन-सहन और काम की स्थितियों के संबंध में परचे में १७ प्रश्न थे और पुस्तिका में १५८।—१९६

97 १८८५ के हड़ताल आंदोलन ने व्लादीमिर, मास्को, त्वेर और औद्योगिक केंद्रवाली अन्य गुबेर्नियाओं में वस्त्रोद्योग के बहुत-से उद्यमों को अपनी लपेट में ले लिया था। जनवरी, १८८५ में ओरेख़ोवो-ज़ूयेवो स्थित साव्वा मोरोज़ोव की निकोल्स्काया मिल के मज़दूरों की हड़ताल (मोरोज़ोव हड़ताल) इनमें सबसे बड़ी थी। मज़दूरों की मुख्य मांगें थीं जुर्मानों में कमी, उजरत पर रखने की बेहतर शर्तें, इत्यादि। अग्रणी मज़दूरों ने हड़ताल का निर्देशन किया। मोरोज़ोव हड़ताल में लगभग ८,००० मज़दूरों ने भाग लिया। सैनिकों ने यह हड़ताल कुचल डाली। हड़ताल में भाग लेनेवाले ३३ मज़दूरों पर मुक़दमा चलाया गया और ६०० से अधिक मज़दूरों को निष्कासित किया गया। १८८५—१८८६ के हड़ताल आंदोलन के प्रभाव के कारण ज़ारशाही सरकार को ३ (१५) जून, १८८६ का क़ानून (तथाकथित 'जुर्माना क़ानून') जारी करना पड़ा।

१८९६ की हड़ताल के बारे में देखें टिप्पणी ४६।—१९७

98 **अवगी की घुड़सालें**—यूनानी पुराणकथाओं के अनुसार एलिस के राजा अवगी की बेहद बड़ी-बड़ी घुड़सालें, जो बहुत बरसों से गंदी पड़ी हुई थीं। हर्कुलीज़ ने उन्हें एक दिन से साफ़ कर डाला। तब से 'अवगी की घुड़सालें' शब्द किसी गंदी और अत्यंत

Scanned by CamScanner

अव्यवस्थित चीज को सूचित करने के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं।—१९९

९९ लेनिन ने यह फ़ुटनोट सेंसर से बचने के लिए दिया है। यहां तथ्यों का ठीक उसी क्रम में उल्लेख किया गया है, जिस क्रम में वे सचमुच थे।—२०३

१०० **'विदेशों में स्थित रूसी क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादी लीग'** १९०१ में लेनिन की पहलक़दमी पर क़ायम की गयी। *ईस्क्रा* का विदेशी संगठन और 'सोत्सिआल-देमोक्रात' क्रांतिकारी संगठन (इसमें 'श्रम-मुक्ति' दल भी शामिल था) लीग में शामिल हुए। लीग का कार्य था क्रांतिकारी सामाजिक-जनवाद के विचार फैलाना और जुझारू सामाजिक-जनवादी संगठन के निर्माण में सहायता देना। लीग विदेशों में *ईस्क्रा* संगठन का प्रतिनिधित्व करती थी। वह विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों के बीच में से *ईस्क्रा* के समर्थकों को एकजुट करती थी, *ईस्क्रा* के लिए आर्थिक सहायता जुटाती थी, रूस में समाचारपत्र भेजा करती थी और सुबोध मार्क्सवादी साहित्य प्रकाशित करती थी। लीग ने कई *बुलेटिन* और पुस्तिकाएं प्रकाशित कीं। रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस ने लीग को विदेशों में एकमात्र पार्टी संगठन के रूप में मान्यता दी। लीग के लिए यह लाज़िमी कर दिया गया कि वह रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की केंद्रीय समिति के निर्देश और नियंत्रण में काम करे।

दूसरी कांग्रेस (१९०३) के बाद मेंशेविक लीग में घुस गये और उन्होंने लेनिन तथा बोल्शेविकों के विरुद्ध संघर्ष आरंभ कर दिया। अक्तूबर, १९०३ में आयोजित लीग की दूसरी कांग्रेस में उन्होंने बोल्शेविकों को बदनाम किया और इसके बाद लेनिन तथा उनके समर्थक कांग्रेस से बाहर चले गये। मेंशेविकों ने रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस द्वारा मंज़ूर की गयी पार्टी की नियमावली के विरुद्ध नये नियम पास करवा लिये। इसके बाद लीग मेंशेविकों का गढ़ बन गयी और १९०५ तक बनी रही।—२०४

Scanned by CamScanner

101 *लिस्तोक 'राबोचेगो देला'*—*राबोचेये देलो* पत्रिका का अनियतकालिक परिशिष्ट, जो जेनेवा में जून, १९०० से जुलाई, १९०१ तक प्रकाशित होता रहा। कुल मिलाकर इसके आठ अंक निकले।—२२३

102 लेनिन का संकेत कार्ल मार्क्स द्वारा लिखित *लूई बोनापार्त की अठारहवीं ब्रूमेर* के निम्नलिखित भाग की ओर है: "हेगेल ने एक जगह कहा है कि विश्व इतिहास में सभी अत्यंत महत्वपूर्ण घटनाएं और हस्तियां, कहा जा सकता है, दो बार आविर्भूत हुई हैं। वह इतना और कहना भूल गये: पहली बार दुःखांत नाटक के रूप में और दूसरी बार प्रहसन के रूप में" (का० मार्क्स, फ़्रे० एंगेल्स, संकलित रचनाएं, तीन खंडों में, खंड १, भाग २, मास्को, प्रगति प्रकाशन, १९७८, पृ० १३०)।—२२३

103 नवंबर—दिसंबर, १९०१ में सारे रूस में विद्यार्थियों के प्रदर्शनों की लहर दौड़ गयी थी। मज़दूरों ने विद्यार्थियों का समर्थन किया था।—२२७

104 **जांनिसार**—१४वीं शताब्दी में तुर्क साम्राज्य द्वारा संगठित नियमित पैदल सेना के सिपाही। यही सुलतान की मुख्य पुलिस शक्ति थी। जांनिसार अपनी भयानक पाशविकता के लिए कुख्यात थे। व्ला० इ० लेनिन ने इस संज्ञा का प्रयोग ज़ारशाही पुलिस के लिए किया था।—२२८

105 **रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की पहली कांग्रेस** १ से ३ (१३ से १५) मार्च, १८९८ तक मीन्स्क में हुई थी। उसमें ६ संगठनों के ९ प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। उसने पार्टी की केंद्रीय समिति चुनी और एक *घोषणापत्र* निकाला। किंतु केंद्रीय समिति के सदस्य कांग्रेस के तुरंत बाद ही गिरफ़्तार कर लिये गये। स्थानीय संगठनों का एक संयुक्त पार्टी में गठन उस समय नहीं हो पाया था।—२३३

106 **अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी ब्यूरो**—दूसरे इंटरनेशनल की स्थायी

Scanned by CamScanner

कार्यकारिणी और समाचारपत्र समिति। इसमें इंटरनेशनल के अंतर्गत समाजवादी पार्टियों के प्रतिनिधि शामिल थे। अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी ब्यूरो में गे० वा० प्लेखानोव और बो० ना० क्रिचेव्स्की रूसी सामाजिक-जनवादियों के प्रतिनिधि थे। १९०५ में व्ला० इ० लेनिन रूसी सामाजिक-जनवादी 'मज़दूर पार्टी के प्रतिनिधि के रूप में अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी ब्यूरो के सदस्य बने। १९१४ में अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी ब्यूरो का अस्तित्व समाप्त हो गया।—२३७

107 '"**सोत्सिआल-देमोक्रात**" **क्रांतिकारी संगठन**' की स्थापना 'विदेशों में स्थित रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ' की दूसरी कांग्रेस में उसमें फूट पड़ जाने के बाद मई, १९०० में 'श्रम-मुक्ति' दल और उसी के समान दृष्टिकोण रखनेवाले लोगों ने की। '"सोत्सिआल-देमोक्रात" क्रांतिकारी संगठन' मार्क्सवाद की तोड़-मरोड़ के हर अवसरवादी प्रयत्न के विरुद्ध संघर्ष करता रहा। इस संगठन ने रूसी में *कम्युनिस्ट पार्टी का घोषणापत्र*, गे० वा० प्लेखानोव, कार्ल काउत्स्की के कई लेख, इत्यादि प्रकाशित किये। अक्तूबर, १९०१ में लेनिन के सुझाव पर यह विदेशों में स्थित *ईस्क्रा* संगठन के साथ मिल गया और इससे 'विदेशों में स्थित रूसी क्रांतिकारी सामाजिक-जनवादी लीग' का निर्माण हुआ।—२३८

108 देखें टिप्पणी ४।—२३८

109 यहां संकेत विदेशों में स्थित 'बोर्बा' ('संघर्ष') दल की ओर है। १९०० की गरमियों में पेरिस में इसकी स्थापना हुई और मई, १९०१ में इसका नाम 'बोर्बा' दल रखा गया। रूसी सामाजिक-जनवाद की क्रांतिकारी और अवसरवादी प्रवृत्तियों का समन्वय कराने के प्रयत्न में 'बोर्बा' दल ने विदेशों में स्थित सामाजिक-जनवादी संगठनों—*ईस्क्रा* और *ज़ार्या* के संपादकमंडल, 'सोत्सिआल-देमोक्रात' संगठन, बुंद की विदेश समिति और 'रूसी सामाजिक-जनवादियों के संघ'—के प्रतिनिधियों का जेनेवा सम्मेलन बुलाने की पहलक़दमी की (जून, १९०१) और "एकता" कांग्रेस के कार्य में भाग

Scanned by CamScanner

लिया (अक्तूबर, १९०१)। रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस में 'बोर्बा' दल को प्रवेश नहीं करने दिया गया, क्योंकि वह सामाजिक-जनवादी कार्यनीति और दृष्टिकोणों को तिलांजलि दे चुका था, विघटनात्मक गतिविधियां अपनाता था और रूस के सामाजिक-जनवादी संगठनों से संपर्क तोड़ चुका था। रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस के निर्णय के अनुसार 'बोर्बा' दल विसर्जित किया गया। – २३९

110 १० मार्च, १९०२ को *ईस्क्रा* ने अपने १८वें अंक में *पार्टी की ओर से* शीर्षक कालम में *ज़ार्या और Vorwärts के संपादकों के बीच का वाद-विवाद* शीर्षक एक छोटा-सा लेख प्रकाशित किया। इस लेख में उक्त मामले पर *ईस्क्रा* और *ज़ार्या* के संपादकों का दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया। – २४३

Scanned by CamScanner

नाम-निर्देशिका

अ

अक्सेलरोद, पावेल बोरीसोविच (१८५०-१९२८)–पिछली सदी के आठवें दशक से क्रांतिकारी आंदोलन में शामिल थे। १८८३ में पहले रूसी मार्क्सवादी संगठन–'श्रम-मुक्ति' दल की स्थापना करने में भाग लिया। १९०० से *ईस्क्रा* और *ज़ार्या* के संपादकमंडल के सदस्य। रूसी सामाजिक-जनवादी मज़दूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस (१९०३) के बाद मेंशेविक।–३९, ६३, ६४, ८९, १०३, १२२

अलेक्सेयेव, प्योत्र अलेक्सेयेविच (१८४९-१८९१) – बुनकर; पिछली सदी के आठवें दशक के एक रूसी क्रांतिकारी।–१३९

आ

आयर (Auer), इग्नाज़ (१८४६-१९०७)–जर्मन सामाजिक-जनवाद के विख्यात कार्यकर्त्ता।–१७२

इ

इलोवाइस्की, द्मीत्री इवानोविच (१८३२-१९२०) – रूसी इतिहासकार और पत्रकार; क्रांतिपूर्व काल में रूस के प्राथमिक और माध्यमिक स्कूलों की इतिहास की पाठ्यपुस्तकों के लेखक। इन पुस्तकों में इतिहास का वर्णन ज़ारों और सेनापतियों के क्रियाकलापों के रूप में किया गया था।–२३

इवानशिन, व्लादीमिर पाव्लोविच (व० इ०) (१८६९-१९०४)–सामाजिक-जनवादी और "अर्थवाद" के एक नेता।–५२, ६२, ६४, ६५, २३३

ए

एंगेल्स (Engels), फ़्रेडरिक (१८२०-१८९५) – वैज्ञानिक कम्युनिज़्म के एक संस्थापक, अंतर्राष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग के एक नेता तथा प्रशिक्षक, का० मार्क्स के मित्र और सहयोगी।–१९, २४, ३७, ४०-४३, ४७, ७६, १०९

Scanned by CamScanner

ओ

ओज़ेरोव, इवान ख़्रिस्तोफ़ोरोविच (१८६६-१९४२) – बुर्जुआ अर्थ-शास्त्री, मास्को और पीटर्सबर्ग विश्वविद्यालयों के प्रोफ़ेसर। – १४९-१५१, १५६

ओवेन (Owen), **राबर्ट** (१७७१-१८५८) – महान अंग्रेज़ कल्पना-वादी-समाजवादी। – ४२

क

काउत्स्की (Kautsky), **कार्ल** (**का० का०**) (१८५४-१९३८) – जर्मन सामाजिक-जनवादी आंदोलन और दूसरे इंटरनेशनल के एक नेता; आरंभ में मार्क्सवादी, लेकिन आगे चलकर मार्क्सवाद से ग़द्दारी करके अवसरवाद की एक धारा – मध्यमार्ग – के प्रतिपादक। – ५६, ५७, ९१, ९२, १८४, २४३

कात्कोव, मिखाईल निकीफ़ोरोविच (१८१८-१८८७) – प्रतिक्रियावादी पत्रकार। – ११८

कारेयेव, निकोलाई इवानोविच (१८५०-१९३१) – उदारवादी बुर्जुआ इतिहासकार और पत्रकार; समाजशास्त्र के आत्मपरक पंथ के एक प्रतिनिधि। – ७१

कुस्कोवा, येकातेरीना द्मीत्रियेव्ना (१८६९-१९५८) – सार्वजनिक कार्यकर्त्री और पत्रकार; "अर्थवाद" के अवसरवादी सारतत्व की अत्यंत स्पष्ट अभिव्यक्ति देनेवाले, बर्नस्टीनवाद के भाव के अनुसार लिखित *Credo* की लेखिका। – ३२

क्रिचेव्स्की, बोरीस नाऊमोविच (**बो० क्रि०**) (१८६६-१९१९) – सामाजिक-जनवादी, पत्रकार, "अर्थवाद" के एक नेता; *राबोचेये देलो* पत्रिका के संपादक। – २२, २३, २५, ६६, ६७, ७१, ८८, ११०, १३८, १४७, १७५, १९१, १९८, २१२, २२१, २३३, २३५, २४०, २४१, २४३, २४५

ख

ख़ाल्तूरिन, स्तेपान निकोलायेविच (१८५७-१८८२) – पहले रूसी क्रांतिकारी मज़दूरों में से एक। – १३९

ग

गेद (Guesde), **जूल** (१८४५-१९२२) – फ़्रांसीसी समाजवादी आंदोलन तथा दूसरे इंटरनेशनल के एक संस्थापक और नेता। – ९१

च

चेर्निशेव्स्की, निकोलाई गव्रीलोविच (१८२८-१८८९) – क्रांतिकारी जनवादी, वैज्ञानिक, लेखक और साहित्य-समीक्षक। – ४०

ज़

ज़ासूलिच, वेरा इवानोव्ना

Scanned by CamScanner

(**ब० ज०**) (१८४६-१९१९)– पहले नरोदवादी और फिर सामाजिक-जनवादी आंदोलन की सक्रिय रूसी कार्यकर्त्री।–१७७

जुबातोव, सेर्गेई वसील्येविच (१८६४-१९१७) – राजनीतिक पुलिस के कर्नल। १९०१-१९०३ में मजदूरों का ध्यान क्रांतिकारी आंदोलन से हटाने के उद्देश्य से राजनीतिक पुलिस की निगरानी में मजदूर सोसायटियों का संगठन किया।–३१, ५९, ६२, १४६-१५१, १५६

जेल्याबोव, अन्द्रेई इवानोविच (१८५०-१८८१) – क्रांतिकारी, 'नरोदनाया वोल्या' पार्टी के संस्थापक और नेता।–१३९, १८१, २२१

ड

डेविड (David), **एडुअर्ड** (१८६३-१९३०)–जर्मन सामाजिक-जनवाद के एक दक्षिणपंथी नेता, अर्थशास्त्री।–२६

ड्यूहरिंग (Dühring), **यूजेन** (१८३३-१९२१)–जर्मन दार्शनिक और अर्थशास्त्री। ड्यूहरिंग के दार्शनिक विचार भाववाद और बाजारू भौतिकवाद की सारसंग्रहवादी खिचड़ी थे।–२४

त

त्काचोव, प्योत्र निकीतिच (१८४४-१८८५) – क्रांतिकारी नरोदवाद के एक विचारक, पत्रकार और साहित्य-समीक्षक।–२२३

न

N. N.—देखें **प्रोकोपोविच, सेर्गेई निकोलायेविच।**

नदेज्दिन, ल० (**जेलेन्स्की, येव्गेनी ओसिपोविच** (१८७७-१९०५)– अपने प्रारंभिक राजनीतिक क्रिया-कलापों में नरोदवादी, १८९८ से सामाजिक-जनवादी; १९०० में स्विट्ज़रलैंड चले गये। अपनी रचनाओं में "अर्थवादियों" का समर्थन करने के साथ-साथ यह प्रचार भी किया कि आतंकवाद एक प्रभावशाली साधन है; लेनिन के *ईस्क्रा* का विरोध किया।–१९९, २०२, २०७, २१०, २११, २१३-२१६, २२३-२२६, २२८, २२९

नरसिस तुपोरीलोव–देखें **मार्तोव, ल०।**

नाइट (Knight), **राबर्ट**–ब्रिटिश ट्रेड-यूनियन आंदोलन के एक प्रमुख कार्यकर्त्ता।–१०९, ११०

प

पार्वुस (**गेल्फ़ांद, अलेक्सान्द्र लाजारेविच**) (१८६९-१९२४)–रूसी सामाजिक-जनवादी; रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस (१९०३) के बाद मेंशेविक।–२४२

Scanned by CamScanner

पीसारेव, द्मीत्री इवानोविच (१८४०-१८६८) – क्रांतिकारी-जनवादी, पत्रकार और साहित्य-समीक्षक; भौतिकवादी दार्शनिक। – २२२

पोत्रेसोव, अलेक्सान्द्र निकोलायेविच (स्तारोवेर) (१८६६-१६३४) – एक मेंशेविक नेता; १६वीं शताब्दी के अंतिम दशक में मार्क्सवाद के अनुयायी। – २७

प्रूदों (Proudhon), **पियेर जोज़ेफ़** (१८०६-१८६५) – फ़्रांसीसी पत्रकार, अर्थशास्त्री तथा समाजशास्त्री; टुटपुंजिया बुर्जुआ वर्ग के विचारधारानिरूपक, अराजकतावाद के एक प्रवर्तक। – ५८

प्रोकोपोविच, सेर्गेई निकोलायेविच (N.N.)(१८७१-१६५५) – बुर्जुआ अर्थशास्त्री और पत्रकार, "अर्थवाद" के एक प्रमुख प्रतिनिधि। – ३१, ३२, ५६, ८७, १४४, २३३

प्लेखानोव, गेओर्गी वालेन्तीनोविच (बेल्तोव न०) (१८५६-१६१८) – रूसी और अंतर्राष्ट्रीय मज़दूर आंदोलन के एक महान नेता और रूस में मार्क्सवाद के प्रथम प्रचारक, पहले रूसी मार्क्सवादी संगठन – 'श्रम-मुक्ति' दल के संस्थापक (१८८३)। लेनिन के साथ मिलकर *ईस्क्रा* समाचारपत्र तथा *ज़ार्या* पत्रिका का संपादन किया। बाद में मेंशेविक। – २२, ६४, ७१, ८६-६३, ११०, १३७, १३६, १४०, १८१, २२१, २४०

फ

फ़ुरिये (Fourier), **शार्ल** (१७७२-१८३७) – महान फ़्रांसीसी कल्पनावादी समाजवादी। – ४२

फ़ोल्मार (Vollmar), **गेओर्ग हेनरिक** (१८५०-१६२२) – जर्मनी की सामाजिक-जनवादी पार्टी के अवसरवादी पक्ष के एक नेता; पत्रकार। – १६

ब

बकूनिन, मिख़ाईल अलेक्सान्द्रोविच (१८१४-१८७६) – क्रांतिकारी, पत्रकार, जर्मनी की १८४८-१८४६ की क्रांति में भाग लेनेवाले, नरोदवाद और अराजकतावाद के प्रतिपादक और सिद्धांतकार; पहले इंटरनेशनल के सदस्य बने रहकर मार्क्सवाद के शत्रु रहे। १८७२ की हेग कांग्रेस में विघटन की कार्रवाइयों के कारण इंटरनेशनल से निकाल दिये गये। – ४१

बर्नस्टीन (Bernstein), **एडुअर्ड** (१८५०-१६३२) – जर्मन सामाजिक-जनवादी आंदोलन और दूसरे इंटरनेशनल के घोर अवसरवादी धड़े के नेता और संशोधनवाद तथा सुधारवाद के सिद्धांतकार। – १८, १६, २५, ३१, ३४, ६६, ८५, ८७

बो० क्रि० – देखें क्रिचेव्स्की, बोरीस नाऊमोविच।

Scanned by CamScanner

ब – व – देखें **साविन्कोव, बोरीस वीक्तोरोविच।**

बाल्लहोर्न (Balhorn), **जोहान** – १६वीं शताब्दी के एक जर्मन पुस्तकप्रकाशक। – ९२

बुल्गाकोव, सेर्गेई निकोलायेविच (१८७१-१९४४) – बुर्जुआ अर्थशास्त्री और दार्शनिक भाववादी। – ३५, २३३

बेबेल (Bebel), **अगस्त** (१८४०-१९१३) – जर्मन सामाजिक-जनवाद तथा दूसरे इंटरनेशनल के एक प्रमुख नेता। – २६, ९४, १५८, १७२, २२१

बेरदियायेव, निकोलाई अलेक्सान्द्रोविच (१८७४-१९४८) – दार्शनिक भाववादी, रहस्यवाद के प्रचारक, १९वीं शताब्दी के अंतिम दशक के सामाजिक-जनवादी आंदोलन के एक सहयोगी, शीघ्र ही मार्क्स की शिक्षा का संशोधन किया, बाद में मार्क्सवाद के शत्रु। – २३३

बेलींस्की, विसारिओन ग्रिगोरियेविच (१८११-१८४८) – रूसी क्रांतिकारी जनवादी, साहित्य-समीक्षक और पत्रकार, भौतिकवादी दार्शनिक। – ४०

बेल्तोव, न० – देखें **प्लेख़ानोव, गेओर्गी वालेन्तीनोविच।**

ब्रेंतानो (Brentano), **लूयो** (१८४४-१९३१) – जर्मन अर्थशास्त्री; "राजकीय समाजवाद" के पक्षधर, जिसके अनुसार पूंजीवाद के अंतर्गत सुधारों तथा पूंजीपतियों और मज़दूरों के हितों में मेल-मिलाप क़ायम करके सामाजिक समानता संभव है। मार्क्सवादी लफ़्फ़ाज़ी की मदद से ब्रेंतानो और उनके अनुयायी मज़दूर आंदोलन को बुर्जुआ वर्ग के हितों के अधीन लाने का प्रयास करते थे। – १२८

म

मार्क्स (Marx), **कार्ल** (१८१८-१८८३) – वैज्ञानिक कम्युनिज़्म के संस्थापक, अंतर्राष्ट्रीय सर्वहारा वर्ग के नेता और प्रशिक्षक। – ११, १९, ३८, ३९, १०९, २२१

मार्तीनोव, अ० (पीकेर, अलेक्सान्द्र समोइलोविच) (१८६५-१९३५) – "अर्थवाद" के एक सिद्धांतकार, मेंशेविज़्म के एक प्रमुख नेता। – ६७, ७५, ७७, ८०, ८४-९४, ९७-९९, १०२, १०३, १०६, १०९, ११०, ११३-११५, १२०-१२२, १३८, १४३, १४७, १९८, २१२, २२१, २३०, २३३, २३४, २४२, २४५

मार्तोव, ल० (त्सेदेरबाउम, यूली ओसिपोविच; नरसिस तुपोरीलोव) (१८७३-१९२३) – मेंशेविकों के एक नेता। पिछली शताब्दी के अंतिम दशक से सामाजिक-जनवादी आंदोलन में शामिल रहे। १८९५ में पीटर्सबर्ग में 'मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करनेवाली लीग' के निर्माण में तथा *ईस्क्रा* के प्रकाशन की तैयारी में शामिल थे, उसके संपादकमंडल के एक

Scanned by CamScanner

सदस्य। रूसी सामाजिक-जनवादी मजदूर पार्टी की दूसरी कांग्रेस (१९०३) के बाद मेंशेविकों के एक नेता।—७२, ८७

मिखाइलोव्स्की, निकोलाई कॉस्तांतीनोविच (१८४२-१९०४)—उदारतावादी नरोदवाद के विख्यात सिद्धांतकार, पत्रकार, साहित्य-समीक्षक, प्रत्यक्षवादी दार्शनिक।—७१, २३२

मिलेरां (Millerand), **अलेक्सान्द्र एत्येन** (१८५९-१९४३)—फ़्रांसीसी राजनीतिज्ञ; १९वीं शताब्दी के अंतिम दशक में समाजवादियों में सम्मिलित हुए; फ़्रांसीसी समाजवादी आंदोलन में अवसरवादी धारा के अगुआ रहे; १८९९ में प्रतिक्रियावादी बुर्जुआ सरकार में शामिल हो गये, जिसमें पेरिस कम्यून के हत्यारे जनरल गैलीफ़े के साथ काम किया।—१८, १९

मीश्किन, इप्पोलित निकीतिच (१८४८-१८८५)—नरोदवादी आंदोलन के प्रमुख कार्यकर्त्ता।—१३९, १८१

मेश्चेर्स्की, व्लादीमिर पेत्रोविच (१८३९-१९१४)—प्रतिक्रियावादी पत्रकार।—११८

मेहरिंग (Mehring), **फ़्रांज** (१८४६-१९१९)—जर्मनी के मजदूर आंदोलन के प्रमुख नेता, जर्मन सामाजिक-जनवाद के वामपक्ष के एक नेता और सिद्धांतकार।—६९

मोस्ट (Most), **जोहान जोज़ेफ़** (१८४६-१९०६)—जर्मन सामाजिक-जनवादी, बाद में अराजकतावादी।—२४, ६९, १५८

म्यूलबर्गर (Mülberger), **आर्थर** (१८४७-१९०७)—जर्मन टुटपुंजिया पत्रकार, प्रूदों के अनुयायी।—२४

र

र० म०—*राबोचाया मीस्ल* के *विशेष परिशिष्ट* में सितंबर, १८९९ में प्रकाशित *हमारी वास्तविकता* शीर्षक लेख के लेखक; इस लेख में "अर्थवादियों" के अवसरवादी दृष्टिकोण साफ़-साफ़ रूप से प्रकट हुए थे।—६८, ८७, ९४, १४२, २३३, २३४

रिट्टिंगहोसेन (Rittinghausen), **मोरित्स** (१८१४-१८९०)—जर्मन जनवादी।—१८४

ल

लफ़ार्ग (Lafargue), **पाल** (१८४२-१९११)—अंतर्राष्ट्रीय मजदूर आंदोलन के एक प्रमुख कार्यकर्ता, जूल गेद से मिलकर फ़्रांस की मजदूर पार्टी स्थापित की, मार्क्स और एंगेल्स के मित्र एवं सहयोगी।—९२

लावरोव, प्योत्र लावरोविच (१८२३-१९००)—नरोदवाद के प्रमुख विचारक, समाजशास्त्र की आत्मपरक धारा के एक प्रतिनिधि।—१७५

Scanned by CamScanner

लासाल (Lassalle), **फ़र्दीनांद** (१८२५-१८६४) – जर्मन टुटपुंजिया समाजवादी, वकील; 'आम जर्मन मज़दूर संघ' के संस्थापक। प्रशा के अधीन जर्मनी के "ऊपर से" एकीकरण के समर्थक, जर्मन मज़दूर आंदोलन में अवसरवादी धारा के संस्थापक। – ११, २४, ५६

लीबक्नेख़्त (Liebknecht), **विल्हेल्म** (१८२६-१९००) – जर्मन और अंतर्राष्ट्रीय मज़दूर आंदोलन के एक प्रमुख कार्यकर्ता, जर्मन सामाजिक-जनवादी पार्टी के एक संस्थापक और नेता, मार्क्स और एंगेल्स के मित्र एवं सहयोगी। – ६६, १०६, १५८

व

व० इ० – देखें **इवानशिन, व्लादीमिर पाव्लोविच।**

व० ज़ा० – देखें **ज़ासूलिच, वेरा इवानोव्ना।**

व० व० – देखें **वोरोन्त्सोव, वसीली पाव्लोविच।**

वसील्येव, न० व० (जन्म १८५५ में) – राजनीतिक पुलिस के एक कर्नल; ज़ुबातोव के "पुलिस समाजवाद" के समर्थक। – १४६

वाइटलिंग (Weitling), **विल्हेल्म** (१८०८-१८७१) – जर्मन मज़दूर आंदोलन की पहली मंज़िल में एक विख्यात कार्यकर्त्ता; दर्ज़ी; कल्पनावादी समतावादी कम्युनिज़्म के एक सिद्धांतकार। – ५८

वानेयेव, अनातोली अलेक्सान्द्रोविच (१८७२-१८९९) – सामाजिक-जनवादी; १८९५ में पीटर्सबर्ग में 'मज़दूर वर्ग की मुक्ति के लिए संघर्ष करनेवाली लीग' के एक संस्थापक। १८९७ में साइबेरिया में निष्कासित किये गये। – ४८, ५१

वाल्टीख़ (Vahlteich), **कार्ल जूलियस** (१८३६-१९१५) – जर्मन दक्षिणपक्षीय सामाजिक-जनवादी। – २४

विल्हेल्म द्वितीय (हाहेंज़ोल्लर्न) (१८५९-१९४१) – जर्मन सम्राट और प्रशा के बादशाह (१८८८-१९१८)। – १२६

वीत्ते, सेर्गेई यूल्येविच (१८४६-१९१५) – १९वीं सदी के अंत और २०वीं सदी के आरंभ के रूसी प्रतिक्रियावादी राजनेता। – १२५

वेब (Webb), **बीट्रिस** (१८५८-१९४३) तथा सिडनी (१८५९-१९४७) – प्रसिद्ध अंग्रेज़ सार्वजनिक कार्यकर्त्ता, ब्रिटिश मज़दूर आंदोलन के इतिहास और सिद्धांत पर कई किताबों के लेखक। – ८४, १८३

वोरोन्त्सोव, वसीली पाव्लोविच (व० व०) (१८४७-१९१८) – अर्थशास्त्री और पत्रकार; नौवें और दसवें दशकों के उदारवादी नरोदवाद के विचारधारानिरूपक। उन्होंने रूस में पूंजीवादी विकास को अस्वीकार किया, छोटे माल-

Scanned by CamScanner

उत्पादन की प्रशंसा की, ग्राम-समुदाय को आदर्शीकृत किया। – ५४, ५५, ६३, ६६, ७०

वोर्म्स, अल्फ़ोन्स एर्नेस्तोविच (१८६८-१९३७) – मास्को विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर, उदारतावादी। – १४९

वोल्टमान (Woltmann), **लुडविग** (१८७१-१९०७) – जर्मन समाजशास्त्री और नृवंशशास्त्री; मजदूर आंदोलन का प्रमुख कार्य आर्थिक संघर्ष मानते थे। – ६६

श

शुल्ज़े-डेलिच (Schulze-Delitzsch), **हेर्मन** (१८०८-१८८३) – जर्मन बाज़ारू अर्थशास्त्री, सार्वजनिक कार्यकर्त्ता, पूंजीपतियों और मजदूरों के वर्ग हितों के समन्वय का प्रचार किया। – ५६

श्चेद्रीन – देखें **सल्तिकोव-श्चेद्रीन, मिखाईल येव्ग्राफ़ोविच।**

श्रम्म (Schramm), **कार्ल अगस्त** – जर्मन अर्थशास्त्री। – ६६

श्वीट्ज़र (Schweitzer), **जोहान बैप्तिस्त** (१८३३-१८७५) – जर्मन सार्वजनिक कार्यकर्त्ता और लेखक, लासालवाद के प्रतिपादक, वकील। – ६६

स

सल्तिकोव-श्चेद्रीन, मिखाईल येव्ग्राफ़ोविच (श्चेद्रीन) (१८२६-१८८९) – लेखक व्यंग्यकार, क्रांतिकारी जनवादी। – १७१

साविन्कोव, बोरीस वीक्तोरोविच (ब – च) (१८७९-१९२५) – समाजवादी-क्रांतिकारी पार्टी के एक नेता, आतंकवादी। – १३५, १३८, १६५-१६७, १६९, १७१, १७९

सेंट-सीमोन (Saint-Simon), **आंरी क्लोद** (१७६०-१८२५) – महान फ्रांसीसी कल्पनावादी समाजवादी। – ४२

सेरेब्रियाकोव, एस्पेर अलेक्सान्द्रोविच (१८५४-१९२१) – नरोदवादी क्रांतिकारी, 'नरोदनाया वोल्या' पार्टी के सदस्य; १८८३ में जारशाही रूस छोड़कर विदेश चले गये; १८९९-१९०२ में लंदन में *नकानूने (पूर्ववेला)* पत्रिका प्रकाशित करते रहे। – १८१

स्तारोवेर – देखें **पोत्रोसोव, अलेक्सान्द्र निकोलायेविच।**

स्त्रूवे, प्योत्र बेर्नगार्दोविच (१८७०-१९४४) – रूसी बुर्जुआ अर्थशास्त्री और पत्रकार; १९वीं सदी के अंतिम दशक में "क़ानूनी मार्क्सवाद" के प्रमुख प्रतिनिधि। – २९, ५९, ६०, ८७, २२६, २३३

ह

हर्ज़ेन, अलेक्सान्द्र इवानोविच (१८१२-१८७०) – क्रांतिकारी जनवादी, भौतिकवादी दार्शनिक और लेखक। – ४०

Scanned by CamScanner

हिर्श (Hirsch), **मार्क्स** (१८३२-१९०५)—जर्मन अर्थशास्त्री और पत्रकार। अपनी रचनाओं में श्रम और पूंजी के बीच "समन्वय" के विचार प्रकट किये और सुधारवाद का समर्थन किया।—५४, ६०

हेगेल (Hegel), **गेओर्ग विल्हेल्म फ़्रेडरिक** (१७७०-१८३१)—महान जर्मन दार्शनिक, वस्तुपरक भाववादी; हेगेल का ऐतिहासिक योगदान यह है कि उन्होंने भाववादी द्वंद्ववाद का सर्वांगीण प्रतिपादन किया।—४१

हेर्ट्ज़ (Hertz), **फ़्रेडरिक ओटो** (जन्म १८७८ में)—आस्ट्रियाई अर्थशास्त्री, संशोधनवादी सामाजिक-जनवादी।—३६

हैस्सेलमैन्न (Hasselmann), **विल्हेल्म** (जन्म १८४४ में)—जर्मन सामाजिक-जनवादी, बाद में अराजकतावादी रुख अपनाया।—६९, १५८

ह्योख्बर्ग (Höchberg), **कार्ल** (१८५३-१८८५)—जर्मन दक्षिणपंथी सामाजिक-जनवादी, पत्रकार।—६९

Scanned by CamScanner

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिज़ाइन के बारे में आपके विचार जानकर अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। कृपया हमें इस पते पर लिखिये:

प्रगति प्रकाशन,
१७, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को ११९०२१, सोवियत संघ।

Scanned by CamScanner

रचनाएं

मार्क्स एंगेल्स लेनिन

प्रगति प्रकाशन मार्क्सवाद-लेनिनवाद की क्लासिकीय कृतियां विश्व की ५० से अधिक भाषाओं में प्रकाशित करता है। इनमें संपूर्ण ग्रंथावलियां, संकलित रचनाएं, विषयानुसार संग्रह और पृथक-पृथक कृतियां शामिल हैं।

इस पुस्तकमाला में विषयानुसार संग्रह तथा महत्वपूर्ण कृतियां सम्मिलित हैं, जिनमें मार्क्सवाद-लेनिनवाद की क्लासिकीय कृतियां प्रकृति, समाज तथा चिंतन के विकास के सिद्धांत प्रस्तुत करती हैं, पूंजीवाद के सामाजिक-आर्थिक संबंधों, समाजवाद के विकास की मुख्य नियमसंगतियों का अध्ययन करती हैं। इस पुस्तकमाला में जिन समस्याओं पर विचार किया गया है, वे आज भी प्रासंगिक हैं। सभी कृतियों के लिए समकालीन वैज्ञानिक टिप्पणियां और नाम-निर्देशिका हैं।

ISBN 5-01-002370-9

© प्रगति प्रकाशन · मास्को

Scanned by CamScanner